स्व० ब्र० सीतल स्मारक ग्रन्थमाला नं० ३

कविरत्न पं० हीरालालजी जैन बड़ौत नि० रचित—

श्री चन्द्रप्रभपुराण [illegible]

(छन्दोबद्ध)

प्रकाशक—

मूलचन्द किसनदास कापड़िया,

सम्पादक, जैनमित्र व [illegible] जैन,

मालिक, दिगम्बर जैन पुस[illegible] सूरत।

प्रथमावृत्ति] वीर सं० २४७७ [वि. सं. २००७

'जैनमित्र' के ५२वें वर्षके ग्राहकोंको ब्र० सीतल स्मारक ग्रन्थमालाकी ओरसे भेंट।

'जैनविजय' प्रि० प्रेस-सूरतमें मूलचन्द किसनदास कापड़ियाने मुद्रित किया।

मूल्य—पांच रुपये।
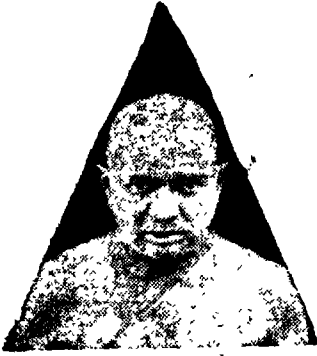
स्व० ब्र० सीतल स्मारक ग्रन्थमाला।

करीब ४० वर्षों तक जैनसमाजको व 'जैनमित्र' की अथक सेवा करनेवाले स्व० श्री जैनधर्मभूषण ब्रह्मचारी श्री शीतलप्रसादजीकी सेवाओंका स्थायी स्मारक करनेके लिये हमने आपके नामकी ग्रन्थमाला निकालनेको कमसे कम १००००) की अपील आपके स्वर्गवास पर वीर सं० २४६८ में की थी, लेकिन उसमें सिर्फ ६०००) ही इकट्ठे हुए, और इतने स्थायी रुपयोंमें आज क्या हो सकता है? तो भी हमने इस ग्रन्थमालाका कार्य वीर सं० २४७० से जैसे तैसे चालू कर लिया, और निम्न ग्रन्थ प्रकट करके जैनमित्रके ग्राहकोंको भेंटमें बांटे हैं—

१-स्वतंत्रताका सोपान—(ब्र० सीतलकृत) पृ० ४२५, मू० ४)

२-आदिपुराण—(पं० तुलसीरामजी, देहली निवासी कृत श्री ऋषभनाथ पुराण भाषा छन्दोबद्ध) पृ० ४०० मू० ४) और यह तीसरा ग्रन्थराज-श्री चन्द्रप्रभपुराण भाष छन्दोबद्ध प्रकट कर रहे हैं, और 'जैनमित्र' के ५२ वें वर्षके ग्राहकोंको भट दे रहे हैं।

आय अतीव कम व खर्च अधिक बढ़ जानेसे इसवार जैन-मित्रके ग्राहकोंसे एक २ रुपया अधिक लिया गया है, लेकिन चन्द्रप्रभ पुराण जैसा महान ग्रन्थराज 'मित्र' के ग्राहकोंको भेंटमें मिल रहा है यह कोई साधारण बात नहीं है।

यदि सीतलस्मारक फण्डमें अब भी कमसे कम ४०००) और मिल जायें तो १००००) पूरे होकर अधिक कार्य हो सकता है और प्रतिवर्ष उपहारग्रन्थ दिया जा सकता है। अतः 'मित्र' के सुज्ञ व दानी श्रीमानोंसे हम पुनः निवेदन करते हैं कि इस सीतलस्मारक ग्रन्थमालाको हराभरा करें जिससे यह हजारों रुपयेके ग्रन्थ भेंटमें बांट सकें।

निवेदक—

मूलचन्द किसनदास कापड़िया, सूरत।

—प्रकाशक।

प्रस्तावना।

दिगम्बर जैन समाजके ग्रन्थ भण्डारोंमें अभी तक ऐसे हजारों गद्य पद्य हस्तलिखित ग्रन्थ अप्रकट पड़े हैं कि उनमेंसे जिनोंका भी उद्धार किया जा सके थोड़ा ही है।

इनमें चौवीस जिन पुराणोंके प्रायः पद्य ग्रन्थ तो अप्रकट जैसे ही थे, अतः हमने ९ वर्ष हुए कविरत्न श्री नवलशाहजी (बुन्देलखण्ड) कृत श्री वर्द्धमान पुराण (महावीर पुराण) भाषा छन्दोबद्ध वीर सं० २४६८ में प्रकट किया था उसके बाद कोई ७-८ वर्ष पहले हमको देहलीके जैन साहित्यप्रेमी व प्रचारक तथा हमारे मित्र बा० हीरालाल पन्नालाल जैन अग्रवाल (बुकसेलर) से सूचना मिली कि देहलीके बड़े मंदिरके ग्रन्थ भण्डारोंमें कई हस्तलिखित पद्य ग्रन्थ तीर्थंकर भगवान्के पुराणोंके भी हैं। यदि आप उन्हें प्रकट करनेकी व्यवस्था कर सकें तो इन ग्रन्थ रत्नोंका उद्धार होकर उनका पठन पाठन घर २ हो सकता है। यदि आप स्वीकार करें तो उन ग्रन्थराजोंमेंसे प्रेस कॉपी तैयार करके मैं भेज सकता हूँ।

इस सूचनाको हमने सहर्ष स्वीकार किया और बा० पन्नालालजीसे देहली नि० कविरत्न तुलसीरामजी रचित श्री ऋषभ पुराण (आदिनाथ पुराण) भाषा छन्दोबद्ध तथा कवि श्री पं० हीरालालजी बड़ौत नि० रचित श्री चन्द्रप्रभ पुराण ये दो ग्रन्थ आपसे प्रेस कॉपी तैयार कराके मंगवाई। उनमेंसे हम श्री ऋषभनाथ पुराण (आदिनाथ पुराण) तो ३ साल हुए जैनमित्रके उपहारमें प्रकट कर चुके हैं, और यह चन्द्रप्रभ पुराण ग्रन्थ भी आज प्रकट कर चुके हैं।

हमारे ८ वें तीर्थंकर श्री चन्द्रप्रभस्वामीका यह कथानक एक ऐसा पुराण ग्रन्थ है जिसमें सभी तीर्थंकर नारायण प्रतिनारायण, बलभद्र, कालवर्णन, सागार अनगार वर्णन, जैन सिद्धांतका समस्त वर्णन एक ही ग्रन्थमें मिल जाता है। हां, इतना अवश्य है कि यह पद्य ग्रन्थ है और भाषा पुरानी है, तौ भी इस ग्रन्थका ध्यानपूर्वक वार वार पठन करनेसे इस ग्रन्थका वर्णन अच्छी तरहसे समझमें आ सकेगा।

यह कोई साधारण पद्य ग्रन्थ नहीं है, लेकिन कविश्री पं० हीरा-लालजीने तो इसकी रचनामें गजब ढा दिया है। क्योंकि आपने इसकी रचना दोहा, चौपाई, पद्धड़ी छंद, सवैया, इकतीसा, अडिल्ल छन्द, छप्पै, घत्ताछन्द, जोगीरासा, शशिवदन छन्द, सुन्दरी छन्द, परमाल ढाल, धनसिरी छन्द, सोरठा, वसंततिलका, शिखरिणी छन्द, काव्य, वंशस्थल छन्द, शार्दूलविक्रीडित, लावनी, मालिनी, गीताछन्द, ढाल, चंडी छन्द, त्रिभंगी, शंकर, इन्द्रवज्रा, चूलिका, मनहरण, आदि अनेक छन्दोंमें करीब ४००० श्लोकोंमें इसकी अपूर्व ऐसी रचना की है कि जिसे पाकर कविकी अजब कवित्वशक्तिका पता चल जाता है। क्योंकि इतने रागरागिनियोंमें रचना करना कुछ सहज कार्य नहीं है।

ग्रन्थकर्ता कविरत्न पं० हीरालालजीका परिचय।

श्री चंद्रप्रभपुराण भाषा छन्दोबद्धके रचयिता कविरत्न पं० हीरालालजी कब होगये, व कहांके थे? उनके वंशमें अब कोई है या नहीं, उनके गुरु कौन थे, और उन्होंने इस चंद्रप्रभपुराण ग्रंथकी रचना कब व कहां की होगी? यह जाननेके लिये हमारे पाठक अतीव उत्सुक होंगे, अतः इस विषयमें हमने बा० हीरालाल पन्ना-लालजी देहली, वाणीभूषण पं० तुलसीराम काव्यतीर्थ बडौत व पं० जुगलकिशोरजी मुख्त्यार सरसावासे पत्र व्यवहार किया तो मुख्त्यार साहबने लिखा कि मैं कवि हीरालालजीके विषयमें कुछ नहीं जानता हूं आदि। वयोवृद्ध वाणीभूषण पं० तुलसीरामजी काव्यतीर्थने लिखा कि पं० हीरालालजीके सम्बंधमें यहां बडौतमें किसीको कुछ पता नहीं है, न उनका कोई वंशधर ही अब यहां है। इतना पता तो चलता है कि वे यहांके थे और बड़ी ही साधारण स्थितिके व्यक्ति थे। मेरी समझमें यह श्री चन्द्रप्रभ पुराण ही उनके वंशका अवशेष है। यहां जितने भी जैन अजैन स्त्री पुरुष हैं उन सबसे मैंने पूछ लिया पर उनका समकालीन कोई भी नहीं है आदि।

अब हमारे मित्र भाई पन्नालालजी अग्रवालने इस विषयमें बहुत छानबीन की तो अन्तमें मास्टर उग्रसेनजी बड़ौतके जवाबमें सहारनपुरसे एक पत्र आया उसमें वे लिखते हैं कि—

सहारनपुरमें अतीव वयोवृद्ध ला० हीरालालमलजी अग्रवाल हैं वे कहते हैं कि चन्द्रप्रभ पुराणके रचयिता कवि पं० हीरालालजी और हम एक ही खानदानमें हैं। उनका और हमारा एक ही खानदान है। यद्यपि मेरी उम्र इस वक्त ८० साल हो चुकी है और ला० हीरालाल कविको करीब ७०-७२ साल फौत हुए हो गये हैं। अलबत्ता मैंने उनको देखा है और वह मेरी यादमें उस वक्त मेरी उम्र करीब ९-१० सालकी होगी। मैं उनके माता-पिताका नाम कैसे बतला सकता हूं? जब कि मैं अपने सगे पडबाबाजीका ही सिर्फ नाम जानता हूं जो जीसुखराय था। उनके मातापिताका भी नाम नहीं जानता हूं, जब कि वह मेरे पडबाबाजीके चचा ताऊजादभाई थे, और ला० हीरालालकी पैदायश और मौतकी तारीख कौन बतला सकता है? और उस खानदानमें इस वक्त एक मैं ही एक बदनसीब जिन्दा हूं। बड़ौतके अन्दर तो आजकल इस खानदानसे शायद ही कोई वाकिफ हो आदि?

अतः इस पत्रसे इतना तो पता चला कि कविश्रीके खानदानमें एक भाई हीरालालमलजी सहरानपुरमें ८० सालके मौजूद हैं। अब इस ग्रन्थराजके अंतमें १७ वीं संधि ३५ श्लोकोंकी है उसे पढ़नेसे ग्रन्थकर्ता कवि श्री हीरालालजीके विषयमें पता चलता है कि—

हस्तिनापुरसे पश्चिम दिशामें मेरठके पास बड़ौत (Baraut) नामक नगर है जहां सुन्दर चित्रकारीवाले दो जैन मन्दिर हैं, व अनेक प्राचीन प्रतिमायें व अनेक हस्तलिखित शास्त्र यहांके शास्त्र भण्डारमें हैं। यहांके जैनी दान धर्ममें बड़े विख्यात हैं—सातों क्षेत्रमें द्रव्य खर्च करते रहते हैं। यहां कई जातिके जैनी बसते हैं उनमें अग्रवाल जैनी अधिक हैं। इस अग्रवाल जातिमें गोयल व गर्गगोत्रमें मेरा जन्म हुआ है। मेरे वंशमें जिनदास, महोकमसिंह हुए, उनके चार पुत्र जैकंवार, धर्मसिंह, रामसहाय और रामजस हुए, उनमेंसे धर्मसिंहका पुत्र मैं (हीरालाल) हूं।

मैंने मेरे गुरू पंडित ठंडीराम जो बड़े विद्वान थे उनसे मैंने अध्ययन किया है। मैं न तो संस्कृत जानता हूं न मुझे

छन्द, अर्थ, पद. पिंगल मात्रा आदिका पूर्ण ज्ञान है तौ भी मैंने देव गुरु शास्त्रके प्रसादसे व सब पंचानकी सहायसे अंग्रेजी राज्यमें इस ग्रन्थकी पद्यमय रचना मुझ अल्पबुद्धिने छः वर्षोंके परिश्रमसे विक्रम संवत १९१३ भाद्रपद वदी १३ और गुरुवारके प्रातःकालमें पूर्ण की है, जिसमें ३४७७ श्लोक हैं। मैं अल्पबुद्धि हूं अतः इसमें जो भूलचुक हुई हों विज्ञजन इसे सुधारकर पढ़ें व पढ़ावें आदि।

ग्रन्थके अन्तमें इतना वक्तव्य होनेसे ही अब ठीक २ पता चल जाता है कि कविश्री हीरालालजीको हुए करीब १०० वर्ष होचुके हैं और आज आपके वंशमें सहारनपुरमें ला० हीरालालमलजी जैन ८० वर्षके मौजूद हैं। कविश्रीने चन्द्रप्रभपुराणके सिवाय और कोई ग्रंथकी रचना की हो, ऐसी प्रशस्तिसे मालूम नहीं होता, तौभी किसीको आपकी अन्य रचनाका हाल मालूम होजावे तो हमको सूचित करेंगे तो उसके उद्धारका भी हम प्रयत्न करेंगे।

यह श्री चंद्रप्रभपुराण ग्रन्थराज प्रकट होकर 'जैनमित्र' के ५२ वें वर्षके ग्राहकोंको उपहारमें दिया जा रहा है और सिर्फ इनी गिनी प्रतियां ही अलग निकाली गई हैं। अतः जो 'मित्र' के ग्राहक नहीं हैं वे इस ग्रन्थराजको अवश्य मंगा लेवें अन्यथा पीछेसे ऐसा प्राचीन ग्रंथराज नहीं मिल सकेगा।

अंतमें भाई हीरालाल पन्नालालजी जैन अग्रवाल देहलीका विना उपकार माने हम नहीं रह सकते हैं क्योंकि आपने इस ग्रन्थकी प्रेस कापी तैयार नहीं करदी होती तो, यह ग्रन्थ प्रकट नहीं हो सकता था।

इस प्रकार अन्य अप्रकट ग्रन्थराजोंका उद्धार होता रहे तो हमारा प्राचीन बहुतसा अप्रकट साहित्य प्रकाशमें आ सकता है।

सूरत—वीर सं० २४७७
विक्रम संवत २००७ माघ सुदी ५
ता० ११-२-१९५१

निवेदक—
मूलचंद किसनदास कापड़िया
—प्रकाशक।

विषय-सूची।

ॐ नमः सिद्धेभ्यः ।

श्री चन्द्रप्रभपुराण भाषा ।

(छन्दोबद्ध)

प्रथम संधि ।

दोहा—श्री चन्द्रप्रभ पदकमल, हाथ जोड़ि सिर नांय ।
प्रणम शारदा मातसु, गुरुके लागूं पाय ॥१॥

पद्धड़ी छन्द—वंदूं श्री रिषभ जिनेन्द्र देव, सुर नर मुन नम पद करैं सेव । वंदूं श्री अजित जिनेन्द्र चंद्र, कर जन्म न्होन शत इन्द्र वृन्द ॥ २ ॥ वंदूं श्री संभवनाथ तोह, भव भवके अघ नाशैं जु मोह । वंदूं श्रीअभिनन्दन जिनेश, भव्याब्ज विकासनको दिनेश ॥ ३ ॥ वंदूं श्री सुमति पदाब्ज दोय, जू सुमति सुबुधि परकाश होय । वंदूं पदम प्रभु पदम सार, संसार समुद्रसैं करत पार ॥ ४ ॥ वंदूं सुपार्श्व त्रियविधि त्रिकाल, पाऊं मनवांछित नमत भाल । वंदूं श्री चन्द्रप्रभु विशाल चन्द्रार्क वरन तन दुति रिसाल ॥ ५ ॥ वंदूं श्री सुविध जु दुविध नास, लहि लोक अन्त सिद्धाल वास । वंदूं श्री शीतल

चरन श्रेष्ठ, दुठ अष्ट नष्ट गुण पुष्ट ज्येष्ठ ॥ ६ ॥ वंदूं श्रियांस श्री मोक्ष कंत, कर कोह मोह भय लोभ अंत। वंदूं क्रम श्री जिन वासपूज, कल्याणक पण सुर असुर पूज्य ॥ ७ ॥ वंदूं श्री विमल जिनेन्द्र तोह, कर विमल सु आतमराम मोह। वन्दूं अनंतगुण अन्त नाहि, तो बरननकर सुरगुर थकाहि ॥८॥ वंदूं श्री धर्म जिनेन्द्र चन्द्र, पादारू वृन्द इन्द्रादि वन्द। वंदूं सुशांति कारण सुभाय, भये चक्र भक्र व्रत तप धराय ॥ ९ ॥ वंदूं श्री कुन्थ जिनेश्वराय, मम भवसागर गागर समाय। वंदूं श्री अरहन राग रोष, दग ज्ञान वीर्य सुख रत्न कोष ॥ १० ॥ वंदूं श्री मल्लि जिनेश सार, हे कृपासिन्धु गुण अमल धार। वन्दूं मुनि-सुव्रत व्रत विधान, सिंहानक्रीडताधिक बखान ॥ ११ ॥ वंदूं श्री नम ईकिसममाद, इकिस गुण गण ग्रेही लनाद। वन्दों जादों पति नेम बाल, ब्रह्मचारी रजमति तजि रिसाल ॥ १२ ॥ वन्दूं श्री पारस चरण दोय, मम लोहे करम सम कनक होय। वन्दूं सनमति पदकमल तास, ए चौविस बरतत भरौ आस ॥ १३ ॥ वन्दूं निर्बाणादिक अतीत, भावी महापद्मादिक विनीत। ए चौवस चौविस और वीस, सीमंद्रादिक नित नांय शीस। १४॥ दस जन्मातिशय दस ज्ञान होत, सुरकृत चौदस प्रतिहार्य द्योत। वसु नंत चतुष्टय धार देव, जै जै अरिहंतसु करूं सेव। १५॥ वसु कर्म नासि छिनवास कीन, वसु वसु गुण सम्यक्तादि लीन। वसु द्रव्य जजूं वसु अंग नांय, सो सिद्धदेव वसु जाम ध्याय ॥ १६ ॥ द्वादश तप दस धर्म पंच चार, थिर गुप्ति षडावश्यक धार

चार । वन्दौ विमुच अंग पूर्व जोय, गुण उपाध्याय तसु चर्ण द्दोय ॥ १७ ॥ धर पंच महाव्रत सुमत पंच, पंचेन्द्रिय रोधा-वस्य संच । भूसैं न न्होन विन वस्त्र तिक्त, कच लौंच लघु इकवार भुक्त ॥ १८ ॥

दोहा—मुखमैं दातन ना करै, ठाढे करै आहार ।
ए गुण जुत मुन पद नमूं, पंच परमेठ्ठी सार ॥ १९ ॥

सरस्वति स्तुति ।

नस्तु छन्द—नमूं माता २ भारती पद तोह । निपश्च प्रभ तैं झरी द्रह गणि त्रिगछानान ढली । बानी सीता भेद भूम-गज दंत श्रुत दधिमें रली । सप्त भंग तरंग उठत पाप ताप कर नास । सो त्रांजली सो तीर्थ जल पीवसु बुध परकास ॥ २० ॥

गणधर स्तुति ।

दोहा—वृषभसेन गणधर प्रमुख, गौतम गणधर चर्म ।
चौदै शत त्रेपन अधिक, वंदौ मन वच पर्म ॥ २१ ॥

गुरु स्तुति ।

सवैया—तृण हेम अरिहितु सम गिनै, निंदा थुत महल ममान दुख सुख मृत्यु जीवना । गिरपै ग्रीषम काल पावसमें तरु तले हिमरितु नदी तट सुधातम पीवना । ध्यानांजुली तिहु काल त्रिसा आए गिनै नांहि जद्यपि किरोध लोभ मोह तीनों खोवना । तथापि करम वृष शिवपै करत सदा ऐसें गुरु गुन जुत मेरे अघ सीवना ॥ २२ ॥

पंच इष्टकूं नमस्कार।

चौपाई—वंदौ पंच इष्टको सदा, ताकौ भेद सुनो सरवदा। वंदौ निज माताके पाय, जाकी कूख उपनौ आय ॥ २३ ॥ वंदौ पिता तने जुग चर्न, वैश्य वंश लियौ उत्तम वर्न। वंदू गुरु विद्या दातार, जातै प्रगट्यौ सुबुधाचार ॥ २४ ॥ वंदौ वर्तमान नृप जोइ, जाके राज चैन भयौ मोह। वंदौ अन्तम इष्ट निहार, जो रुजगार तनौ दातार ॥ २५ ॥

दोहा—देवमार दासु गुरकों, नमस्कार हम कीन।
इष्ट मनाकर ग्रंथकौं, कियौ आरंभ नवीन ॥ २६ ॥

पंडित लक्षण।

अडिल छन्द—जो होय ज्ञाता ग्रंथ षट मत धरम युत चुत हो सही, बाल नाना वृद्ध होहै नीतज्ञान नगो सही। सुविचार सुधाचार किरिया छिमायुत प्रश्नोत्तरं। तसु होय धारक श्रेष्ठ वक्ता जिन पदाब्जसु भृंगरं ॥ २७ ॥

श्रोता लक्षण।

छप्पै—देव शास्त्र गुरु भक्त धर्म वत्सल दातारं, पात्रापात्र विचार गुणागुण गहत समझिकर। काम क्रोध छल लोभ मान दुराग्रह छंडै, जिन वचनामृत स्वात बूंद चात्रग गुण मंडै। अरु जो वक्ता भूलै कदा, मिष्ट वचन तासू कहै फुनि विनय सहित निरणय करै, सो श्रोता सद्गुण लहै ॥ २८ ॥

कथा लक्षण ।

छंद पाइता चाल–अक्षेपणी कथासुजानं, विक्षेपणी बहुरि सुमानं । संवेगणी तीजी सोहै, निर्वेदनी तूर्य सु मोहै ॥ २९ ॥ सुन अर्थ सु इन ए भातं, थापै हेतु दिष्टांतं । धुन स्यादवादमें जोहै, अक्षेपणी कथा जु सोहै ॥ ३० ॥ मिथ्यात दिशा सब जामें, पूरवापर विरुद्ध सु तामें । ताको उत्थापन करई, विक्षेपणी सो मन हरई ॥ ३१ ॥ तीर्थंकर आदि महानां, पुराण पुरुष कथाख्यानां । वृष २ फल वरनन जामें, संवेग नीती जो तामें ॥ ३२ ॥ संसारभोग थित लक्षण, कारण वैराग ततक्षण । निर्वेद चतुर्थनि येही, ए लक्षण कथा वरेही ॥ ३३ ॥

ग्रंथ महिमा ।

छप्पै–मिथ्या कुंजर सिंह मोह पादप कुठार वर, पाप तापको इंदु ध्वांत अज्ञान दिवाकर । क्रोध नागको मंत्र मान गिरको वज्रोपम, माया सफरी जाल लोभ घनको सुपोन सम । आगल समान है कुगतको, स्वर्ग मुक्तिको श्रेणिवर । शुभ ऐसो ग्रंथ महान यह, पढ़त सुनत आनंद धर ॥ ३४ ॥

कवि लघुता ।

अडिल्ल–चंद गहै जू बाल रुपकडै नागको, चुलुवन सागर चार करै संख्याजको । नगपै चढ़ै जु पंगु बन फल तोडई, बाउतनो त्यो ग्रंथकी भाषा जोडई ॥ ३५ ॥

चौपाई–सज्जन हांसी करो न मोह, सोधो भूल जहां कहु

होइ। करो क्षमा हम शठता देख, तुमस्यौ विनय करूं यह पेख ॥ ३६ ॥ वंदेहं चंद्रप्रभ सदा, तत्पुराण वक्षेहं मुदा। पूर्व क्रमेण सुनो जन सही, जूं गोतम श्रेणिक प्रति कही ॥ ३७ ॥ जिन गुण कथन अगम असमान, बुध बल कौन लहै अवसान। गणधरादि आचार्य महंत, बरनन कर पायो नहीं अंत ॥ ३८ ॥ तो अब अल्प बुद्धिको धनी, गिनती कौन करै तिन तनी। जो बहु भार न गजपै चलै, सो क्यौं दीन सुसक ले चले ॥ ३९ ॥ यथा द्रव्य जो रवि दरसाय, ताहि दीप क्यौं ना दिखलाय। कठिन मार्ग जो इमिदल मिलै, तित मृग छावा सुखसू चलै ॥ ४० ॥ त्यौं मैं भणुं गुरु कथित विलोय, मन वच काय सुनो सब कोय। महापुराण त्रिषष्ठी जान, गुणभद्राचारज सु बखान ॥ ४१ ॥ तामै देखि कथा विस्तार, हम अपने मन ऐसैं धार। बड़े ग्रंथ लखि आलस होय, समय पाय बांचत है कोय ॥ ४२ ॥

तातैं चन्द्रप्रभु पुराण, जुदो होय बांचै तुछ ज्ञान। बाल गुपाल पढ़ै नर नार, सुनते पुण्यरु हर्ष अपार ॥ ४३ ॥ धर्म अर्थ काम अरु मोक्ष, ए चव दाता गुण मण कोष। पढ़ै सुनै न बुद्ध बलहीन, ये निश्चै जानों परवीन ॥ ४४ ॥ सब द्वीपन मधि जम्बूद्वीप, ज्यूं सब जनमें दिपै महीप। जोजन लक्ष तास विस्तार। ताक्त तुंग मेरु मधि धार ॥ ४५ ॥ दक्षिण भरत कुसम चन्द, छहो खण्ड संयुक्त अमंद। दव तट मध्य आर्ज खण्ड वसै, मगध देश देशनकौं हंसै ॥ ४६ ॥ धन कन कंचनको भंडार, श्रीमुनि आर्य करे विहार। पर्वत नदी ताल उद्यान,

पेड़ २ पे श्री जिन थान ॥ ४७ ॥ पुर पंकति मनु मुक्तन माल, सजन भरे मनु झलक विसाल। सो माला चक्रीसम वेस। धरै कंठकर लज्जित सेस ॥ ४८ ॥ ग्रामधि राजगृहीपुर बसै, दाम मघ जू धुक धूंकि लसै। बाग कूप पोखर बावरी, ता जुत-पुर अति शोभा धरी ॥ ४९ ॥ कोट स्वंग धोला गिर बनो, परिखा सजल लो नदध मनो। चहुंदिश सुन्दर बारा द्वार, सूरज कंगूरादिक छबि धार ॥ ५० ॥ बारै जोजनको विस्तार, बन्दौं नगर सो बलियाकार। मंदिर कुंज सघन बाजार, बीच बीच जिन मंदिर सार ॥ ५१ ॥ शिखरबन्द वेदो जगमगै, कोटिक शंख सूर दुति भगै। ऐसे श्री जिनबिंब मनोग, देखत हरै जनन अघ सोग ॥ ५२ ॥ भविजन न्होन करै त्रियकाल, पूजा कर रू पढ़ै जयमाल। आगम श्रवण सुगुरु पद सेव. धरै शीलव्रत दान करेव ॥ ५३ ॥ इन्द्रपुरी सम शोभा धरै, श्रेणिक नृपत राज तहां करै। मानो इन्द्रतनो अवतार, बुद्ध विधाता तन छबिमार ॥ ५४ ॥ धीरण वीर भानु परताप, लक्ष्मीवंत धनिंद जू आप। दाता सुर तरु गुण गण कोष, कुल अरु जात पक्ष निरदोष ॥ ५५ ॥ सज्जन कुमुद प्रकाशन वेस, नगहर वंशमाहि निस्सेस। जन चकोर लख लखन त्रिपंत, कीर्ति चन्द्रका दधि परियंत ॥ ५६ ॥ चतुरंग सेना बल भरपूर, हयगय रथ पायकगण सूर। छहो वर्ग संयुक्त नरेश, तिनको वरनन सुनो विशेष ॥५७॥ देश अनेकमैं जाकी आन, कोष भरो मनु हाटक खान। दुर्ग सुगढ़ दुर्गम्य विसेष, अन्य

नाँहि अरि मन परवेस ॥ ५८ ॥ तुर्य सुभट रणमें अति धीर, जंगम गिर सम गजगण भीर। जो बढ चलै पवनतै जोर ऐसे अश्व वर्ग पट जोर ॥ ५९ ॥ भोगी भोगभूमिया जिसो, लक्षण लक्षित शोभित इसो। मणिन जड्यो कलिधौत जु हार, ऐसो उपश्रेणिक सुत सार ॥६०॥ गुण अनेक नृप वरणे कोय, होनहार तीर्थंकर सोय। मंडलीक पदवी संयुक्त, ताको भेद कहूं जिन उक्त ॥ ६१ ॥

अथाष्टभेद राजा यथा कडका छंद—कोट पूर्व ईश राजा सोई जानिये। पंचशत भूप नुत अर्द्ध राजा सहस नृप नमत जिसै सो महाराज है॥ दुगुब फुन नमत मंडलाधिप राजा। दुगुब फुन नमत मंडलीश राजा वही। महामंडलीश वसु नमते दुगुन फुन नमत चक्रार्ध राजा वही॥ चक्रीको सहस बत्तीस नमते ॥ ६२ ॥

चौपाई—चोरनको षडिशा बल वार, मारनको चोपडकी सार। बंध नाम है बंधन मार, दंड सु एक छत्रमें धार ॥ ६३ ॥ ताडन नाम वृक्ष ताडको, पालन कइ तिल तिल कारको। जाके राज प्रजा सब सुखी। ईत भीत ना कोई दुखी ॥६४॥ रूपवंत धनवंत विवेक, कलावंत विज्ञान विशेष। चारो वरन वसै परवीन, अप अपने मत सम्यक लीन ॥६५॥ ता राजाकै नार अनेक, पटराणी चेलना सु एक। जास रूप रोहणी रत रती, सुगुण सुलक्षण शोभित सती ॥ ६६ ॥ पूजा दान विषै अति चाव, गुरु सेवामें रत अति भाव। जती व्रतीको आदर

करै, साधरमीसू वातसल धरै ॥ ६७ ॥ शीलांकित सुंदर सर्वंग, क्षायिक सम्यक धरै अभंग । इत्यादिक शुभ लक्षण धार, मानो इंद्राणी अवतार ॥ ६८ ॥ राजा राणी सुगुण विशाल, सुखमैं जात न जानै काल । इक दिन सभा मध्य सुनरेश, निवसै मानौ सुरग सुरेश ॥ ६९ ॥ नृप सुत मंत्री अभयकुमार, समय पाय तब वचन उचार । अहो तात यह नर अवतार, जिव चरचा बिन अफल असार ॥ ७० ॥ श्री जिनेन्द्र पद सीस न नमै, सो थोथे नरियल सम पमै । नैन पाय जिन दरसन हीन, मानो चित्र चितेरे कीन ॥ ७१ ॥ श्रोत पाय नहीं सुनै पुरान, तन मंदिरके छिद्र समान । जो निजमुख प्रभु थुत ना करै, नाग जीभ विल वच विष भरै ॥७२॥ पूजा दान विना कर जास, वटडाढ़ी वत शोभा तास । जाको हृदा दयावृष विना, पाहन खंड बराबर गिना ॥ ७३ ॥ जो निज पद सुतीर्थ ना करै, तास भारतै भू थरहरै । वपु सुंदर व्रत संयम बिना, चर्म वृक्ष विव नानै ठना ॥ ७४ ॥ इत्यादिक भव कारण बना, देव धर्म गुरु सरधा बिना । इंद्र धनुषवत शोभा धार, यातै गहो श्रावकाचार ॥ ७५ ॥ पंच उदंबर तीन मकार, सप्त विसन त्यागो निरधार । अनछान्यो जल ना आचरो, बाईस अभक्ष संधानो हरो ॥ ७६ ॥ जल घृत तेल हींग पकान, चून ए चर्म सपर्शत हान । पंचाणुव्रत गुणव्रत तीन, चव शिक्षाव्रत धारै लीन ॥ ७७ ॥ सामायक तिहु पण आदरै, पूजा दान सील व्रत धरै । चारो प्रोषध कर उपवास, अभय कुवार इत्यादिक

मास ॥ ७८ ॥ राजा आदि सभाके लोय, धन २ कवर कहै यह जोय। ताहि समय आय वनपाल, षट रितुके फल फूल रिसाल ॥ ७९ ॥

दोहरा–भेट धार नृपको नयो, सीस नांय कर जोर।
आए सनमति विपुलगिर, लेहु वधाई मोर ॥ ८० ॥

कुसुमलता छंद—जाके पुन्य प्रतापलता तरु षटरितुके इकबार फरे, जाति विरोधी जीव मृगी हरहर मयूर मिल प्रीत धरे। तीन कोट द्वार इक इक चो मानसथंभ चुवेदि धरै, द्वादश सभा मध्य सिंहासन चतुरानन प्रभु दर्श करै ॥ ८१ ॥ सुनत वचन हरष्यो नृप ततछिन सिंहासन तै उतर चलो, सप्त पैंड गिर सनमुखत ह्व नुत कर परोक्ष दे दान भलो। वस्त्राभरण मालीकूं दीनें पुरमें आनंद भेरि दई। सुनकर सब नरनारी हरषे दरसनकी उर चाह ठई ॥८२॥ कर असनान पहर पीतांबर अंग अंग आभर्ण धरै, ऐसें नरनारी सब सजकर आय रायकै द्वार खरै। हय गय रथ शिबका बहुसजि सज तूर मृदंग निशान बजे, नृत्य होत आखाड़े चाले दरशनको सब साज सजे ॥ ८३ ॥ मानस थंभ विलोकि मान तजि वाहन ठहाने पांव चले, समोसरणका आदि पोल पै लख मंगल द्रव आठ भले वीथी तृण महलकी पंकित चैत वृक्ष फल वारिजकों, सोभा देखत जात चले सब सभा मध्य नृप जाय ढिको ॥८४॥

आर्य छन्द–प्रभु सनमुख कर जोड़े, सीस न्याय जे जै

सनमति स्वामी। गए अनंत भव मोरे, ले पुष्पांजलि क्षेप नृप नामो॥ ८५॥

इति पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

एकाक्षर श्री नामछंद-त्वं, कं, जै, मैं, जलं॥ ८६॥

दुअक्षर छंद-नाम, श्री गंधा, लिधा, रज्जे, जज्जे। चंदनं॥ ८७॥

त्रिअक्षर छंद नाम-नारीय, लेसालं, मथाल, जैदेहीं अक्षतं॥ ८८॥

चतुक्षरा छंद-नाम कन्या, नानफूलं, कामाशूलं, नासलीनो, पूजाकीनो। पुष्पं॥ ८९॥

पंचाक्षरा छंद-भो भूखं वीरं, सो तू मैं चीरं, नैवेद्यं, ताजे, तुम भेटं साजे। चरु॥ ९०॥

षष्टाक्षरा छंद नाम-दीपं रत्नं जोतं, मोहाधं है होतं। सो ले पूजा कीने, स्वइं ज्ञानं दीनै। दीपं॥ ९१॥

सप्ताक्षर छंद-नाम सार्षात्यं-कृष्मा नारं ले आयो, खेवत धुवां फैलाओ। मानो छायो मोदाभृं, पूजत् नासं विघ्नाभं। धूपं॥ ९२॥

अष्टाक्षरा छंद-विद्युन्माला नाम! एलाकेला आदि लीनो। हेमा थाल मैं भारीनो। पूजूं थांके पाद्दै पंकं, दीनोहं सुष्कं निष्कलंकं। फलं॥ ९३॥

नवाक्षरा छंद-नीरौ गंधो क्षीरं तंदुलं, पुष्पाढ्यं पक्वान्नं दीप्पुलं। धूपाद्यं फलार्घं भर थालं, त्वै पादोद्दैज ज्येन्यामालं। अर्घं॥ ९४॥

अथ जयमाल।

घत्तानंद छंद—जै जै तन कंचन मृगपति लक्षन सप्तहस्त वपु त्वंग बनौं। ज णाण दिवायर गुण रैणा यर मंगलाष्ट प्रतिहार्य ठनौ ॥ ९५ ॥

छन्द पद्धड़ी—अहि भूत खगेंद्र नरेंद्र इन्द, गणधर मुनिंद्र रवि चन्द्र जिंद। तीर्थांत वीर तुम पाद पद्म, वंदत सदीव लहि सुख्य सद्म ॥ ९६ ॥ जै चौतीस अतिशय विराजमान, जै नंत चतुष्टय गुण निधान, ज क्षायक दर्शन आदि लब्ध। नव लही सु तुम छालीस गुणब्ध ॥ ९७ ॥ जग बंधू पितामह पूज देव, लख तन मन हरष्यौ करूं सेव। जै ब्रह्मा विष्णु महेश ईश, तुम सम नहीं जगमें हे जगीश ॥ ९८ ॥ मम सीस सफल भयो नमत तोहि, तुम दर्शन कर द्रग सफल मोहि। कर सफल भये पूजा करंत, पग सफल भये आयो तुरंत ॥ ९९ ॥

दोहा—इत्यादिक अस्तुत विविध, कर श्रेणिक भूपाल।
हाथ जोड प्रभुको नमैं, जोता भाग विशाल ॥१००॥

इति पूजा।

कवित्त—गणधर गौतम बहुर मन कर, फुन मुन आर्या वंदे पाय। करै सभा सु इत उत देख, मानुष कोठे बैठो जाय ॥ पूरव पुंण्य कियौ नृपनै, अति ता फल परतिक्ष जिन लख सार। गुणभद्राचारज यों भाषै, हीरालाल सु निश्चै धार ॥१०१॥

इति श्रीचन्द्रप्रभपुराणे गुणभद्राचार्यप्रणीतानुसारेण पीठिका वा वीरपूजा श्रेणिक कृत वर्णनो नाम प्रथमसंधिः संपूर्णम् ॥ १ ॥

द्वितीय संधि।

दोहा—चौतीसौं अतिसै सहित, प्रातिहार्य फुनि आठ। नंत चतुष्टय धारकै, नमत खुले हिय पाठ ॥ १ ॥ गुणभद्राचारज प्रनम, संस्कृत कियो बखान। नर नारी मन लायकर, भाषा सुनौ सुजान ॥ २ ॥

चौपाई—अब श्री वीर दिव्यधुनि खिरी, सर्व देस भाषा विस्तरी। रसना अधर तालु हालै न, सब्द घोर घन इछाहै न। छह २ घडी त्रिकाल खिरंत, साढेबारह कोड बजंत। सुर दुदभी रु देवी देव, नृत करै मन हर्षित सेव ॥ ४ ॥ चात्रिग सम सु समाजन जान, धर्मामृतकी चाह महान। इंद्र अवधतैं सब मन जान, प्रश्न करो प्रभु तबै बखान ॥ ५ ॥

कवित—चारों गति पण अक्ष काय छ जोग तीन त्रि वेद प्रमानं। वेद ज्ञान वसु संयम सात चार दरसन परवानं ॥ छ लेस्या भव्याभव जुग छै समकित जुग सैनी सनानं। आहारक अनहारक दो फुन चौदे मारग रण गुण ठानं ॥ ६ ॥ षट परजाय प्राण दस संज्ञा चौ समास उन्नीस सुभाय। द्वादस है उपयोग परुपण बीस ध्यान चव आश्रव थाय ॥ लाख चौरासी जया जोन सब दो कोडाकोडी कुल कोड। आधा ल... इ घट यामैं चौविस ठाणो यह सब जोड ॥ ७ ॥ सप्त ... भेद सुनौ अब जीव तत्त्व पहलौ इक जान। सिद्ध एक संसारी २ द्वै भेद बखान ॥ इक थावर पण भेद कहे इक त्रसके

भेद पुमान ॥ इक विकलत्रय एक पंचेंद्रिय, पंचेंद्री फुन दोय सुमान ॥ ८ ॥ एक असैनी सैनी इकमें, मिथ्याती समद्रष्टी दोय । समद्रष्टीके लक्षन सुन अब, तीन काल षट द्रव्य जु सोय ॥ लेस्या काय छै काय अरु पण, वृत अरु सुमति गति अरु ज्ञान । पंचाचार पदारथ नव सब निकट भव्य यह कर सरधान ॥ ९ ॥ शुभके उदै होत चहुं गतमैं, अशुभ उदै दुख खान सुनेय । नारक पंच दुष्प करि संजुत, भूख प्यास पशु दुष्य सहेय ॥ मानुष नेक विपत कर संजुत, देव सेव परमर दुख ठान । ऐसा जीव चेतना सत्ता, लक्षन है उपयोग महान ॥ १० ॥

काव्य—पंचकाय संजुक्त भेद सुन आदि औदारिक, नर पशु गतिमैं होय नर्क सुर वैक्रिय धारिक। अंमित्रान अहारक तन मुनि क्रोधी तेजस, कारमान तन कर्म पिंड सूक्षम२ लख॥ ११॥

कवित्त—चार प्राण धारक जीवै था, जीवे है जीवेगा मान । सुख सत्ता चेतन बोधना जीव चेह नये अरु वसु जान । अस्त वस्त परमेह अगुरुलघु द्रव्यप्रदेस चेतना मूर्त । पंच ज्ञान धारक ए लक्षन, जीवतत्व इम लखकर सूते ॥ १२ ॥

अजीव तत्वमें पुद्गलद्रव्य वर्णन ।

एक अजीव तत्व भेद पण पहलो पुद्गल दोय प्रकार, अणुऽस्कंध फुन छै भेद है, सूक्षम २ अणु विचार । फुन सूक्षम है कारमान तन, सूक्षम थूल विषय रसनान । फरस आठ गंध दो रंग पण, सब्द सात बाईस ए जान ॥ १३ ॥ थूल रु सूक्षम धूप छांय है, थूल थीव जल तेल रु क्षीर, थूल २

पृथ्वी गिर काठ सु, ए छ भेद बहु २ सुन वीर। धूप छांह चांदनी अंधेरा, शब्द अकाश थूल तुछ बंध। खुलत भेद इम दस पुद्गलकी, है परजाय जान परबंध ॥ १४ ॥

धर्माधर्म द्रव्य वर्णन।

अडिल्ल—जैसे मीन चलै न सहाई वार है, जीव चलन सहाई त्यौं वृष सार है। छान बुलावै पंथीको लख थित करै, जिय सहाय त्यौं अवृष जिहतिह थित धरै ॥ १५ ॥

आकाश द्रव्य वर्णन।

कवित्त—सर्व द्रव्यकौं ठौर देत है, द्रव्य अकास गुण परकास। ताके दोय भेद तुम जानौं, लोकाकास अलोकाकास। पुद्गल धर्म अधर्म जीव जम, पंच जहां सो लोकाकास। पंच द्रव्य बिन एक सुन्न नभ, सो अलोक ए भेद प्रकाश ॥ १६ ॥

कालद्रव्य वर्णन।

असंख्यात समै इक आवलि असंख्यात आवलि इक स्वांस, सैतीस सतक तिहत्तर स्वांसको एक महूरत तीस जु रास। ताको एक दिवस दिन तीसको एक मास जुग रितु षट वर्ष, लाख चुरासीको पूर्वांग सु लाख चुरासी पूरव दर्स ॥ १७ ॥

सवैया—पूर्वांग परवरु नयुतांग नयुतरु कुमुदांग कुमदरु पदमांग, पदमा नलिनांग नलिनरु कमलांग कमलरु तूटीतांग तूटीतरु अटटांग पंद्रमा। अटटरु अममांग अममरु हा हा अंग हाहाफुन हुहुअंग हुहु बाईसदमा। बिदुलता गुरु फुन बिदुलता महालतांग महालता गुने करै सीर्ष प्रकंपदमा ॥ १८ ॥

दोहा—हस्त पहेलक अचलात्मक, ए सब उनतीस जान।
ऊपरले जुग मिलि भये, इकतीस भेद प्रमान ॥१९॥
कर चौरासी लाख गुण, भिन्न २ सब ठौर।
सबके अंत प्रमान इम, आगै अंक निहोर ॥२०॥

सवैया—चार चार नव चार दोय, पण षट षट तीन एक। चार नव तीन वसु पांच है, चार षट एक नव सात। पांच दोय नव पांच पांच षट, षट आठ एक राच है। आठ आठ सात पांच एकषट दोय सात, पांच एक षट सुन्न षट पण माच है। दोय षट सात दोय चार पांच एक षट, नव षट सुन दोय सात दोय साच है ॥ २१ ॥

दोहा—तीन आठ चव अंक ए, माठ रु नव्वै सुन्न।
अचलात्मकके भेदसै, संख्या अंक सउन्न ॥ २२ ॥

लौकिक गिणती।

सवैया—सुन कुंड तीन भेद सलाका रु दूजा प्रतिसलाका तीसरा महासलाका ए सु माच है। जंबूद्वीप सम गोल जोजन सहस औंडे चौथे अनवस्थ कुंडता ही सम राच है॥ तामैं सरखप भर तुंग दीप सिखावत ताकी संख्या छियालीस अंक मित साच है। एक नव नव सात एक दोय तीन आठ चार पांच एक तीन पांच है ॥ २३ ॥

दोहा—एक षष्ट रु सकल मिल, षोडश अंक सु चीन।
चंदरै वर तापै बहुर, छतीस २ कीन ॥ २४ ॥ इम छालिस

असुरकार ऐसे दोय भाग हैं॥ खरभाग सोलै छात सहस सहसकी है किन्नर किंपुरुष महो रग पाग है। गंधरव यक्ष भूत पिसाच ए आद्सत आगै भेद भवनपती जु नव भाग हैं ॥ १४५ ॥ सात कोड़ बहतर लाख जिन भवन सब आदिमैं असुर लाख चौसठ सदन हैं। दूजे बाकी नव भाग तामैं नाग-कुमार चौरासी लाख अगार बहत्तर लाख सुवर्न है ॥ दीपोदध मेघदिग अगनि विद्युतकुमार छहत्तरलाख भिन्नाभिन्न है। पवन-कवार लाख छियाणवे असुरन आव एकदध कछु अधिक कथन है ॥ १४६ ॥ नागकारी तीन पल्ल है अढाई पल्ल बाकी डेढ पल्ल सबकी है उतकिष्ट जानियै। जघिन हजार दस तन तुंग असुख पचीस धनुष और दस चाप मानियै॥ भवन वितर दोय हर प्रतिहर दो दो पंचेद्री मनुष पसु होय सुर जानियै। देव मर पांच गत पावक भू जल तरु नर पसु एही जान भवन-पती ठानियै ॥ १४७ ॥

छप्पैछंद—एक एक जिन सदन सदन प्रतिबिंब वसु सुत। सतपण धनु तनु तुंग तुंग जोजन सु पौनसत॥ सत आया मरु व्यास अर्द्ध अभि ममोसरण सब। सब रचना आधार धार हीरा सु लाल कवि॥ कर हाथ जोड जिनवर नमि, नमि गुण-भद्राचार्य वर। वर सप्ततत्व अधोलोक सब, सवि कथन श्रवणमें भव्य धार ॥ १४८ ॥

इतिश्री चंद्रप्रभपुराणे सप्ततत्व अधोलोकवर्णनोनाम द्वितीय संधिः समाप्तम्।

तृतीय संधि।

दोहा--सनमत सनमत देत हो, नमो नमों गुणभद्र।

गौतम गणधर कहत हैं, सुण श्रेणिक चितभद्र ॥ १ ॥

चित्राभूमि तले जु सब, कियो संछेप बखान।

अब मध्य ऊरध लोकको, कहूं सु तुछ कहान ॥ २ ॥

चौपाई–मध्य मेरु तै गिनत प्रबंध, एक सहस जोजन अस कंध। दस सहस नठ्वै अध व्यास, गोल त्रिगुण कछु अधिक सुभास ॥ ३ ॥ वसु प्रदेस गोस्तन तल जोय, क्षेत्र प्रवर्त आद भू सोय। जीव जनम धारै नह थान, मरकै चौरासी भटकान ॥ ४ ॥ वार अनंत कल्प जिम फिरै, तौ कछु संख्या नांही धरै। आद जनम भूमिके कनै, जनमद्वूरै तो गिणती ठनै ॥५॥ त्यौंही तीनलोक परदेस, सबमैं जम्मन मरन द्वूरेस। लगत्त लगत तो गिणती आय, अंतर कछु संख्यामैं नाय ॥ ६ ॥ त्यौंही दरब काल व भाव, चारौंहीको लेहु फलाव। वार अनंती जीवन करी, पंच परावतन भव धरी ॥ ७ ॥ चित्रापै दस सहस सु मेर, भद्रसाल बन बहुदिस घेर। पणसतपै नंदनवन सार, चारौ दिस जिन मंदिर चार ॥ ८ ॥ चार चैत छत्तीस हजार, सुमन सबन चैत्याले च्यार। साढेबासठ सहस उत्तंग, पांडुक चार चैत्याले संग ॥ ९ ॥ विदिसमैं पांडुक सिल चार, जिह जिन जनम न्होन विस्तार। मध्य चूलिका चालीस तुंग,

चाला तरु जू जान अभंग ॥ १० ॥ जोजन लाख सु जम्बूद्वीप, दखन उत्तर सुनो महीप। सप्त क्षेत्र षट पर्वत जान, पुरवा परव देह मन आन ॥ ११ ॥

सवैया ३१–दखनदिसातैं संख्या भरत चौडाई पानसै छब्बीस जोजनास उनीस अधिका। आगै दून दून सुन हिमवन हिमवंत महा हिमवन हर निषध विदेहका ॥ आगै आधोआध भव नीलगिर रम्य क्षेत्र रुकमी हिरन्यवत सिखरे छ नगका। ऐरावत क्षेत्र सात नग आभा हेमरूपा सुधा हेमकी कंठरुप हेम रंगका ॥ १२ ॥ सम मूलापुर द्रह पदम पदम महा त्रिगच्छ केसरी महापुंड पुंडरीक है। जोजन हजार लांबे आधे चौडे दस ऊंडे एक फूल दूना दून आधोआध ठोक है ॥ कवल कवल प्रति मंदिरमें देवी नाम सिरी हिरी धीर्त कीर्त्ति बुधलछमीक है। आयु एक एक पल्ल कुछक अधिक जात सामानक परिषत माता सेवनीक है ॥ १३ ॥

छप्पै–पदम द्रहैसे निकसि नदी गंगारु सिंधवर, भरतमांहि विस्तार साडे बासठि जोजन धार। दुगुनम फिर रोहित रोही-तास्या सहरदुहर ॥ कांता सीता सप्त सीतोदा अर्द्ध अर्धकर, नारी नरकांता स्वर्णकुल रूपकुला रक्ता सुघट। रक्तोदा ऐरावत विषे भरत जेम विस्तार रट ॥ ४ ॥

अडिल–सातजोट दोदो सु[illegible]रवगई। [illegible]किप छम भई लोन दध मिलि गई। चौदे चौरह [illegible] सिधुमें [illegible] ॥ [illegible]ठाईस छप्पन सहस चोपनी [illegible] ॥

दोहा—अर्द्ध अर्द्ध छप्पन सहस, मूल सु चोदै जान।
साठ सहस पण लाष सब, यह परवार प्रवान ॥ १६ ॥
भरत ऐरावतके विषै, काल फिरन है जान।
उत्तम मध्यम जघिन है, भोग भूम पण थान ॥ १७ ॥

सवैया ३१—भरत मध्य रूपाचल जोजन पचास चौडा आधी वसु भाग जड द्व आयाम। दस ऊंचै श्रणी दोय दस दस चौडी जहां दषण पचास साठ खगेन्द्र तना गाम॥ त्यौंही और ऊंची चौडो दूजी पै व्यंतर वाम फेर पांच ऊंची दस चौडी जहां आराम। तहां नव कूट जान आठमैं असुर गेह मध्यमै जिन सधाम ताको मम प्रणाम ॥ १८ ॥

छंद त्रिभंगी—हिमवंत क्षेत्रमैं जघन भोग भू एक कोस तन थित इक पल्ल। मध्यम भोग भूमि हर माही तीजी मेर तलै लख मल्ल॥ दूनी दूनी आय काय है वसू मनुष सबही जो अंत। तैसैही उत्तरकी दिसमैं मेर आदि ऐरावत अंत ॥ १९ ॥

दोहा—दोदो नील रु निषद तट, देव कुरुत्तर धूम चार। कनकगिर दोय तरु जामनसै भल झूम ॥२०॥ दुतियक्षेत्र मध-नाभगिर, जू विदेहमैं मेर। चार भोग भूचार है, दोदो नदीसु फेर ॥ २१ ॥ सदा सुथिर भूकायसो, सहंस२ तासंग। मूल वज्र पन्नासु दल, फलजुत फूल सुरंग ॥ २२ ॥ पूरब साखा तासपर, अवनासी जिनधाम। अष्टोत्तर सत विंबजुत, सुरपंग जनहु नमाम ॥२३॥ सोय विदि सफुलि दंतगंज, चार आठ दिग्गाज। आठो दिसा सुमेरकी, स्वयं सिद्ध सब साज ॥ २४ ॥

चौपाई—पूरव दिसा वेदिकातले, दोनौ तट सीतासे चलै।
नील नीषधलो चोडे जान, दो देवारण वण परवान ॥ २५ ॥
पूरवतै पश्चमकी ओर, तीन सहस ठंतर विनजोर। ता आगै
वदेह लंवाय, बाईस सततेरै अधिकाय ॥२६॥ अष्टमांस जोजन
एक ऊन, आग्र वषार पंचद्रै सून। आगे ते ता दूजादेस, आगै
नदी विभंगावेस ॥ २७ ॥ इकसो पच्चीस चौडी जान, त्यौं
त्रियनदी च्यार नगमान। अष्ट विदेह मध्यरूपस्त ॥ देस समान-
लंव परसस्त, ॥ २८ ॥ तह सब रचना भरत समान, ऐठै नगर
दूतर्फ समान। आठ वषारनदी षटदेस, षोडस पूर्व दिश गिर
रुवेस ॥ २९ ॥ इक इक दिशमैं गंगा सिंध, चौदै चौदै सहस
मिलंध। ठाईस सहस विभंगासंग, सीता मांहि मिलीसु अभंग
॥ ३० ॥ तेइस सहस क्षेत्रमैं जान, यह रचना माखी भगवान।
आगै बाईस सहस प्रमान, भद्रसाल वन सुनो बखान ॥ ३१ ॥

सवैया २३-दो सरता वन दो तटमैं लख पंच सरोवर
सोहै। एक सरोवरके तट सुंदर कंचन अद्रि दसोदिस जो है॥
एकिक अदनपै इक मंदिर एकिक बिंब अकृत्यम सोहै। दो
सतक कंचनके गिर ए सबसे रतने जुग ही दिस हो है ॥३२॥

सुन्दरी छन्द—सर्व बत्तीस विदेह रु भरत है, ऐरावत मिल
चौतीस करत है चौतिस रूपाचल मध जानिये, खंड छैह
छैह नदीसु ठानिये ॥ ३३ ॥ राजधानी इक इक आर्जमैं,
चौतिस वृषमाचल सु अनार्जमें। चौसठि गंगा सिंधु विदेहमें,
विभंगा द्वादस फुनि तेहमें ॥ ३४ ॥ चारै लाख बत्तीस हजार

है, यह परवार तहां विस्तार है। मूल नव्वै सुन परवारको, लाख सतैरवणवै हजारको ॥ ३५ ॥ अठतर मंदिर जिन सासते, चार तीर्थ विदेहमें राजते। यही जम्बूद्वीप समान है, देख ग्रन्थवशेष महान है ॥ ३६ ॥ वर्तुलकृत वज्रमु कोट है, तुंग वसु जोजन जहां ओट है। चार गोपुर चौदिसमें बने, नाम विजयादिक अति सोहने ॥ ३७ ॥

कवित्त—आगै दोय लाख जोजनको चोडो सिंधु कुंडलाकार। तटपै मक्षु पक्षुका सम जलमध्य भाग ग्यारै हजार ॥ तहां कूप चार चौ दिसमें लाख उदर जड मुख दस सहस। उदर विदस जोजन हजार दस जड मुख एक अन्तर सहस ॥ ३८ ॥

दोहा- एक उदर जड मुख शतक, आठों अन्तर जान।
एकेकसो पचीस सब, सहस आठ सब जान ॥ ३९ ॥

ढाल परमादी—तलै अगन मध पौन, उपर जल सु भरे है। एक एकमें तीन भाग इस भांत परे हैं ॥ यामें दोनों उर अंतर दीप परे हैं। कुल गिर भुजपर और भूम कुभोग भरे हैं ॥ ४० ॥ मीठी मृतका नीर घास सम काल विराजै। पावस हिम और उष्ण तहां बाधा नहीं छाजै ॥ कान दीर्घ इक ढंग नर तन पशु मुख केई। पशु तन नर मुख कोप ऐसे जीव घनेही ॥ ४१ कुपात्र दान फल एह मुनि श्रावक द्रव्य लिंगी। भक्ति भावसे दान देय मन वच तन चंगी ॥ अथवा कुपात्र सु दान देय नर्क जावै। अथवा पशु परजाई मर मर जनम धरावै ॥ ४२ ॥ लवनोदध या नाम लवनो सम जल अति खारी। आगे धातकी दीप

च्यार लाख विस्तारी ॥ लवनोदधको वेढअर तुलकार विराजै। पूरव पछिम भाग मेर जुग मध्य छवि छाजै ॥ ४३ ॥ दोनों दिसके मांहि रचना भिन्न सु भिन है। जंबूद्वीप समान भाख्यो यो श्री जिन है ॥ दखन उत्तर यांहि इष्वाकार पहारा। दोय मेर यह सीम जिन मंदिर सिर धारा ॥ ४४ ॥ एकसोठावन ग्रहे श्रीजिन अष्ट शाश्वते। फुन कालोदध सिंधु लाख वसु वार रासते ॥ रचना सिंधु सु आदि सोई सब यामें। आगै पुष्कर द्वीप मानुषोत्तर मध तामें ॥ ४५ ॥ जोजन सोलहलाख उर ले आधे मांही। धातकीखंड समान रचना धर मनमाही॥ मेर जुगमधा मांहि चारों मेर समाने। जोजन सहस उतंग चौरासी परवाने ॥ ४६ ॥

दोहा—सत्रासै इकीस तुंग, मानषोत्तर जड पात्र।
दससै बारस चारु सत, चौवीस जुगम चुडात्र ॥ ४७ ॥
अपर चार जिनेस घर, मानुष हद नग थाय।
मानुषोत्तर यातै कहै, उपन नवाहर नाय ॥ ४८ ॥
मनुष जाय सोलै जगै, इकनोर कचो अमर।
पशु पंचींद्री विकलत्रय, थावर पण नर अजर ॥ ४९ ॥
आवै तेरै थानतै, थावर तेज रु वात।
सिद्धाले मैं जायने, आवै कबहु न भ्रात ॥ ५० ॥
मानुष विन मुनि पद नहीं, मुनि विन सिव पद नांहि।
शिव नहीं सम्यकदृष्टि विन, समकित विन भटकाय ॥ ५१ ॥

सवैया ३१—सामान मनुष कही पदवी धारक, सुन सुरग नरक जिन आए शिव पाय है। चक्री अर्द्ध चक्री हली कुलकर मात, तात जिन मार कलहप्रिय रुद्र सुर आय है। जिन तात हली मार सुरगवा शिव, जाय कुलकर निज मात सुरगमैं जाय है। दोनों अद्ध चक्री रुद्र नारद नरक जाय, चक्र तीनों थान नर्क सुर्ग शिव माय है॥ ५२॥

अडिल—जंबूदीपतै लवनोदध चौवीस गुण, बहुरि धातकी दीप चवालीस सत गुणा। छही बहतर गुणा कालुदध जंबूसे, ग्यारासे चोरासी पुसकर जंबूसे॥ ५३॥ लाख पैतालीस लंबो चौडो जानियै, सहस दोय पचीस खंडमो ठानियै। लाख लाख जोजनके भिन्न बनाईये, जंबूदीप समान सबै मन लाईये॥ ५४॥

दोहा—मानुषको परदेस इक, याके बाहर कोय।
समुदघात विन जान ही, ए निश्चै मन जोय॥ ५५॥
मानषोत्र आगै कह्यो, आधो पुष्कर दीप।
फुनि पुष्कर दधवारिणी, दीपोदध सु समीप॥ ५६॥
क्षीर दीप फुन क्षीर दध, घृत वर दीप समुद्र।
इक्षुवर दीप समुद्र फुन, नंदीसुर सुन भद्र॥ ५७॥

छप्पे—इकसो त्रेसठि कोट लाख चोरासी जोजन, व्यास दीप मध अंजनगिर चव दिस २ प्रति उन। गिर गिर दिस दिसताल लाख जोजन मध दधमुख। सर प्रति विदिसाको नव तिस रत कर ऊरध रुष, सब सहस चौरासी दस इक।

जोजन समतल ऊपर सब बावन जिन मंदिरन जुत, गोलनाम सम रंग धरै ॥ ५८ ॥

कवित्त—अरुण दीप दध ६समो अरुणोद्भास ग्यारमो जान, कुन्डल दीप मध्य कुन्डलगिर कुन्डलकार चार जिन थान। चहुर कुन्डलोद्धरु संखवरु दीपोदध फुन रुचक सु दीप, मध्यरु चकगिर गोल चौदिसमें चार जिनाले जान महीप ॥५९॥ रुचकार्णव सु आद ए तेरह और असंख दीप दधमान, अन्त तीन देवदूदुवर सिंभूरमण दीप दधमान ए सब सोलै दीपोदध है तेरै आदि अंत त्रयक है। इनिकै मध्य सर्व दीपोदध सुभ नाम जिनेस्वर कहै ॥ ६० ॥ लवनोदध जल खार लवन सम वारुणि वर जल मदिरा जेम। घृतवर नीर स्वाद घीव सम क्षीर सिंधु तोयपै तेम॥ काल्लोदधरु सिंभू रमणार्णव मिष्ट जेम गंगाको नीर। पुष्कर जलध सहत सम पाणो और इक्षुरस सवे सुनार ॥ ६१ ॥

दोहा—लौनोदध कालोसु दध, अंत स्वयभू खन्न।
इनमें जलचर जीव फुन, अरु जलकाय सुवन्न ॥ ६२ ॥

सवैया ३१—दीप सिंधु रमण जो मध्यमें नागेंद्र नग ताके ऊरै त्रिघन सुभोगभूमि रीत है। भूचर खेचर पसु मरल है मोनत्रक जलचर विकल रु नाही जीत है॥ आधे पुष्कराद्ध आगै सर्व दीप रीत एही नागेंद्र पहाड़ आगे पंचमांतरीत है। मेर मध्यभाग आदि अंतोदव अंत तट आधे राजू मांहि सब गिनती पुनीत है ॥ ६३ ॥ नंदीस्वर दीप परै वारुणी सु दोप

और वरुण समुद्र तामें महा अंधकार है। ब्रह्म स्वर्ग ताई फैलो बडी रिद्ध धारी जाय हीन रिद्ध देवनको नहीं अधिकार है॥ कुंडल सु दीप मांहि कुंडलसु गिर जड एक ऊंचो बयालीस भू दसहजार ह। चौडा अंत चौ हजार छिनवै जोजन सर्व रावढी आकार सब दधनको वार है॥ ६४॥ चार दिस चार चार कूल सोलै नग बजार देवनके सुंदर महल कर सोहतै। तेरमो रुचक फुनि दीपमें रूचकगिर जोजन हजारकंद चौरासीरवं मोहतैं॥ ब्यालीस सहस चौडा चार ओर चार कूट तहां दिगपाल रहे आठ आठ औ तैं। चारौं दिसा मांहि कूट दिग कवारी देवी रहै गरभ अगाऊ जिनमाता दासी होय है॥६५॥ विजयादिगारी स्वस्तकादशी साइलादिपै छत्र धारै चोर ठोरै लंबुकादि आठं। फुन चार कूट और दिसानमें चार देवी चित्रादि विद्युतकवारी बात करै ठाठं। रुचकादि विदिसामें चार चार और जुदी विजियादि मातासेवै जनम उछाठाठं। जुदे जुदे कूट भोन तिनमें सु देवार है सो त्रित रुचकगिर ऐसे सो महाठाठं॥६६॥ ऐसे मध्यलोक महादीप दध असंख्यात बहुरि जिनै संख्या यौ बताइयै। पचीस जु कोडाकोडि पल्ल कूजी औ धारजो रोम सब जेते तेते दीपोदध पाईये॥ अंत सिभू रमणमें मछ सहस जोजनको ताके मुखमांहि जीव आवै और जाय है। वाकै राग दोष नाहि वाके कान मांहि लघु मछयो विचारै देखो मूढ़ नहीं खाय है॥६७॥ खानेकी सकत नांह भावनके पर भाप सातवें नर्क जाय मर्थ भाव देखपै।

चक्रवर्तिकी विभूति तामें रतनाह जु जल जजल न्यारो पै ताहीमें नित पेखवै ॥ पूछै सिख कैसे जीव छोटो बड़ो होय सोई करो भेद संसै छेद सुन सोविसेसपै। आगनको संगजे सोई धनको होय ते सोही फलाव त्यौंही जीव काय लेखपै ॥ ६८ ॥ जम्बूद्वीप नाथ अनावृत आगे लवन दध जल षोडस हजार एक हूंगा भूमांही। स्वासता ऊंचौ भूदस कृष्ण सेतु पक्षमांही पांच घटै बदै एक तीजा अंश दिनही ॥ ठारै परै ब्यालीस बहत्तर हजार सुर नाग कार तरग सु थावै सुनियोग है। स्वस्तित अधिष्ट एक धातकीमें दोय सुर प्रभास रूप दर्स आगै दो दो जोग है ॥ ६९ ॥

दोहा–कालोदध पत काल सुर, महाकाल पुष्कार।

पदम पुंडरीक रु युगम, ऐसे सब निरधार ॥ ७० ॥

चौपाई–ढाई आदि रु आधा अन्त, इनमें त्रय पशु जीव अनंत। पंचइंद्री पन्द्रैमें जाय, चार देव पण थावर काय ॥७१॥ विकलत्रय पसु नरक मनुष्य, इनहीमें तैं आवै दष्य। विकलत्रय दस त्याग स्थावर, विकल पशु नर इति ॥ ७२ ॥ नर्क बिना चोदै तै आय, भू जल तरु ह्वै थावर काय। देव बिना दस तै आविना, तेज वाय लहनो नर बिना ॥ ७३ ॥ यह महि मंडल तुछक थान, अब कछु जोतस पटल बखान। चित्रा भू ऊँच सत सप्त, नव्वै जोजन तारै लिप्त ॥ ७४ ॥ फुन दस भान अस्सी पैचंद, चार निषत बुध चार अमंद। शुक्र गुरु कुज शनि प्रमाण, तीन तीनपै नोसव जान ॥ ७५ ॥ एकसो दस

जोजन नभमांहि, मोटी छात अधर फैलांइ। सोम इन्द्र प्रति इन्द्र दिनेस, गृह अठासी ठाईस रीखेस ॥ ७६ ॥ छासठ सहस पिछतर कहे, नोसै कोडाकोडी लहे। उडगण ए सब संख्या धार, एक इन्दुको यह परवार ॥ ७७ ॥ जम्बूद्वीपमें दोय निसेस, लवण चार धातकी बारेस। बयालीस कालांबुध पुष्प, अर्द्ध और बहत्तर दुष्प ॥ ७८ ॥ ए नित मेर प्रदक्षना ठान, तिन कृत काल विभाग प्रमान। बाहर थिर सब घटा-कार, रात दिवसको भेद न धार ॥ ७९ ॥

सवैया ३१—उधर पुष्कर भाग लाख लाख जोजनाठ गोलाकार भिन्न ससि इम भांति रट है। मानसोत्तर तट बलै तामें एकसो चवाली आगै चारचार जादै बारैसै चौसठ है॥ आगै पुष्करमें तावत वले बत्तीस आदमें अचोके दूने ससितिम भाईये, सब संख्या ससि धार दो सत ग्यारै हजार आगै दीपोदध मांहि ऐसे ही फैलाईयै ॥ ८० ॥

चौपाई—आयुष पंक पल्लइके वर्ष लाख अर्क सहस पल वर्ष। सत इक पल्ल शुक्र गुरु पौण, आध पल्ल कुज बुध शनि जोन ॥ ८१ ॥ तारे पाव पल्ल सु भाग, उत्तम जघिन आयु संभाग। जोजनास इकसठ ससि जान, छप्पन अड़तालिस सरवमान ॥ ८२ ॥ कोस एक शुक्र गुरु पौण, ग्रह सब अद्धरु तारे जोन। अर्द्ध पाव अर सप्तम भाग, लघु गुरु जोजन सहस सु लाग ॥ ८३ ॥ सूरज बुध सनि स्वर्ण समान, निस पति गुरु फटिक मणी जान। शुक्र रजित अरु मंगल रक्त, राहु

केत स्याम मण जुक्त ॥ ८४ ॥ इक इक जोजनके विस्तार, रजनी पति रवी तलै निहार। चौडा राजु एक प्रमान, उन्नत जोजन लाख सुजान ॥ ८५ ॥ मध्यलोक यह कथन सु पेख। अब कछु ऊरध लोक विशेष ॥ ८६ ॥

सवैया ३१–चित्रा भूसै डेढ डेढ आध आध षट ठौर अन्त एक राजू सातमै नो धारयै, घनाकार साडे उनीस रुसाडे सतीस दो २ साडे सोलै आगै घाट दो दो अन्त जारिये। षटल इकतीस सात चार दोय एक एक तीन तीन बावन छ राजु स्वर्ग धारियै, ग्रैवकमै तीन तीन तीन एकनुतमै पिचोतर एक सब त्रेसठ समारियै ॥ ८७ ॥

अडिल–स्वर्ग सौधर्म इशानरु सनतकवारजी, बहुरि महेंद्ररु ब्रह्म ब्रह्मोत्तरसारजी। बतीस–ठाईस बारै आठरु चारजी. लाख इक इक मांहि अन्त आगारजी ॥ ८८ ॥ लांतव अरु कापिष्ट शुक्र महाशुक्रजी। स्वर्ग सतार सहश्रार माहिसु अनुक्रजी, सहस पचास सचालीस छत्रिप जोटमें। आनत प्रानत आरण अचुत गोटमें ॥ ८९ ॥ सात सतक फुनि त्रिक त्रिक त्रिक नवग्रीवमें, सो ग्यारै सो सत्त वियणे धर जीवमें। नोनषोतरा पंच पिचोत्तर ईस है, लाख चौरासी सहस सताणु त्रिनीस है ॥ ९० ॥

सवैया ३१–त्रेसठ पटल मांहि इंद्रक त्रेसठ आदि बासठ २ श्रेणि बंध चार और है, दोसै अडतालीस रु आगै चार घाट अन्त चार सब संख्या ठत्तरसै सोरहै। उत्तर पटल एक बीच एक इंद्रक है दिशाचार श्रेणि बन्ध प्रकीर्णक चार है, अठेताई

बासठमें चार चार घटे अन्त चार और पिछोत्तर मांहि चार सार है ॥ ९१ ॥

चौपाई—सहस निनाणवें सोलै लाख, तीन सतक अस्सी गुरु भाष। जोजन सो संख्यात प्रमाण, इंद्रक श्रेणी बुध सु जान ॥ ९२ ॥ अरु परकीर्णक भी कछु आइ, बाकी असंख्यातके मांहि। इक इकमें जिन मंदिर जान, रतन बिंब सत आठ प्रमान ॥ ९३ ॥

सवैया ३१—आदि दूजै स्वर्ग मांहि मइ लले ढाई पीठ ग्यारासै इकीस सब जोजन प्रमानियै, आगै दो दो नाक मांहि निनाणवै घाट घाट फुन मोन चोडे आदि दिन दोमें जानियै। जोजन सतक बीस आगे दोमै सतक है फुन दो दो मांहि दस दस घाट ठानियै, तैसे तीनों त्रक मांहि निरोत्तरे पिछोत्तरे दोनोंमें जोजन पांच पांच व्याम मानियै ॥ ९४ ॥ पहले जुगल ग्रइ छसत जोजन ऊँचे दूजे जुगपान सत आगे पांच जोटमें, पचास पचास घाट पचीस पचीस आगे घाट घाट सब ठौर अतताई गोटमें। मंदरोंकी नीव आदि जुगम जोजन साढ दूजे जुगमें पचास आगे षट जोटमें, पांच पांच घाट फुन त्यौंही तीनौं त्रक मांहि आगे चौदह थान मांहि ढाई ढाई आटमें ॥ ९५ ॥

छंद छप्पै—आदि जुगलमें पंचरतन मय मंदिर दूजे कृष्णारवन बिन बहुर नील बिन चौथे तीजे, पंचक छठे जुगलके [illegible] पीत [illegible]। [illegible] [illegible]में [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]-

समण, वसु जुगलमें बारे इंद्र है। जुगल चार वसु चार चव, है दक्षन उत्तर षटरु षट सुरी जान षट लाख चव ॥ ९६ ॥

दोहा–पहले दूजे सुरगमें, निज नियोगनी जान।
दक्षण उत्तर श्रेणी सुर, ले जावे निज थान ॥ ९७ ॥
आदि पंच दो दो अधिक, बारह तक सुरी आव।
सात सात तुरी अन्त सब, पचपन पल्ल गिनाव ॥ ९८ ॥

अडिल्ल–भवनतिरक जुग सुरग भोगनर नारसो, दोमैं फरस चारमें रूप निहारसो। चारमें सबद सुने मन विकलप चारसों, आगै सहज सील अहमिंदर धारसौ ॥ ९९ ॥ आदि जुगल दध दोय सप्त दूजे त्रयै, दस चौदह तुरी जुगलरु दो दो अधि किये नवग्रीवक दो उत्तर ग्यारै थानमें, इक इक अधिकरते तीस अंतम थानमे ॥ १०० ॥ देवन काया त्वंग सप्त कर आदमें, षटकर दूजै जुगल पंचत्रय चारमें। पंचजुगल कर चार षष्ठ कर होट ही, सात आठ त्रय हाथ देह जोट ही ॥ १०१॥

सोरठा–अर्द्ध अर्द्ध कर हीन, त्रय ग्रीवक इम उत्र जुग।
पात्र पात्र कर हान, देवनके दस भेद सुन ॥ १०२ ॥

सवैया ३१–पुरंदर तथा तुल्य सो सामान समान जात दूजे तीजे जुगराज जैसे उमरावसे चौथे। चाकरसे पांच छठे कोतवाल अनीककी सात सेना हाथी घोडे रथ पयादे चोथे ॥ गायन बजंत्री नृत सातमीके सात भेद आटमे रयै तनो मैं गजादि वाहन हैं। दसमें चंडाल ऐसे दप जात देवनकी जित्र खग दोमैं मंत्री लोकपाल बिन है ॥ १०३ ॥ अनंत पंचाम्नी

भवन तिरक जाय परम व्राजक दंडी पांचमें सुरगमें। परमती परमहंस अणुव्रती तिरजंच बारमें सुरग जाय सोलमें सुरगमें ॥ श्रावक श्राविका जाय द्रव्यलिंगी नवग्रीव भावलिंगी मुनि जाय उपर सरवमें। पंचइंद्री पशु और मानुष सुरग जाय जाकी सुभ भावनतें भवन तिरकमें ॥ १०४ ॥ देव पंचगति जाय भू जल हरत काय नर पसु दूजे नाक ऊपर था वरना। बारमें उपर जाय मरिकै मानुष होय उत्तरके इंद्र षट विनयादि वरना ॥ एक दोय भवमांहि सिद्धालेमें जाय सोइ दखनके सक्र षट सर्वारथ सिद्धके। सोधरम हर सची लोकपाल लोकांतक एक भव माहि जाय भोगै सुख सिद्धके ॥ १०५ ॥

अडिल्ल–प्रश्नोत्तर लोकांतक सुर कहा इम कह्यौ। ब्रह्म-स्वर्ग लोकांतक पाड़ौ बन रह्यौ ॥ ब्रह्म रीषीस्वर रहै सीलव्रत धार है। अष्ट प्रकारन नार तत्त्वार्थ विचार है ॥ १०६ ॥

छप्पै–जोजन बारै परै सिला सरवारथ सिद्धतैं। वसु मोटी मध व्यास पैतालिस अधिक कटिकतैं ॥ ता ऊपर शिव क्षेत्र अंत तन वातवलयमें। तहां सिद्ध भगवान नंत सिद्ध इक इक तनमें ॥ सो श्रेणिक तुम कल्यान कर, गौतमगण इम कहतवर। कर दिव्य वचन गुणभद्र युत, धनसुत कुंदे नीज सुघर ॥ १०७ ॥

इतिश्री चंद्रप्रभपुराणमध्ये मध्यलोक ऊर्ध्वलोक वर्णनो नाम तृतीय संधिः संपूर्णम्।

असुरकार ऐसे दोय भाग हैं॥ खरभाग सोलै छात सहस सहसकी है किंनर किंपुरुष महो रग पाग है। गंधरव यक्ष भूत पिसाच ए आदसत आगै भेद भवनपती सु नव भाग हैं ॥ १४५ ॥ सात कोड़ बहतर लाख जिन भवन सब आदिमैं असुर लाख चौसठ सदन हैं। दूजे बाकी नव भाग तामैं नाग-कुमार चौरासी लाख अगार बहत्तर लाख सुवर्न है ॥ दीपोदध मेघदिग अगनि विद्युतकुमार छहत्तरलाख भिन्नभिन्न है। पवन-कवार लाख छियाणवे असुरन आव एकदध कछु अधिक कथन है ॥ १४६ ॥ नागकारी तीन पल्ल है अढाई पल्ल बाकी डेढ पल्ल सबकी है उतकिष्ट जानियै। जघिन हजार दस तन तुंग असुख पचीस धनुष और दस चाप मानियै ॥ भवन वितर दोय हर प्रतिहर दो दो पंचेद्री मनुष पसु होय सुर जानियै। देव मर पांच गत पावक भू जल तरु नर पसु एही जान भवन-पती ठानियै ॥ १४७ ॥

छप्पैछंद—एक एक गिन सदन सदन प्रतिबिंब वसु सुत। सतपण धनु तनु तुंग तुंग जोजन सु पौनसत ॥ सत आया मरु व्यास अर्द्ध अधि समोसरण सब। सब रचना आधार धार हीरा सु लाल कवि ॥ कर हाथ जोड जिनवर नमि, नमि गुण-भद्राचार्य वर। वर सप्ततत्व अधोलोक सब, सवि कथन श्रवणमें भव्य धर ॥ १४८ ॥

इतिश्री चंद्रपभपुराणे सप्ततत्व अधोलोकवर्णनोनाम द्वितीय संधिः समाप्तम्।

तृतीय संधि।

दोहा--सनमत सनमत देत हो, नमो नमों गुणभद्र।
गौतम गणधर कहत हैं, सुण श्रेणिक चितभद्र॥ १॥
चित्राभूमि तलै जु सब, कियो संछेप बखान।
अब मध्य ऊरध लोकको, कहूं सु तुछ कहान॥ २॥

चौपाई–मध्य मेरु तै गिनत प्रबंध, एक सहस जोजन अस कंध। दस सहस नव्वै अघ व्यास, गोल त्रिगुण कछु अधिक सुभास॥ ३॥ वसु प्रदेस गोस्तन तल जोय, क्षेत्र प्रवर्त आद भू सोय। जीव जनम धारै नह थान, मरकै चौरासी भटकान॥ ४॥ वार अनंत कल्प जिम फिरै, तौ कछु संख्या नांही धरै। आद जनम भूमिके कनै, जनमद्वारै तो गिणती ठनै॥५॥ त्योंही तीनलोक परदेस, सबमें जम्मन मरन द्वरेस। लगत लगत तौ गिणती आय, अंतर कछु संख्यामें नाय॥ ६॥ त्यौंही दरब काल व भाव, चारोंहीको लेहुं फलाव वार अनंती जीवन करी, पंच परावतन भव धरी॥ ७॥ चित्रापै दस सहस सु मेर, भद्रसाल बन बहुदिस घेर। पणसतपै नंदनवन सार, चारौं दिस जिन मंदिर चार॥ ८॥ चार चैत छत्तीस हजार, सुमन सबन चैत्याले च्यार। साडेबासठ सहस उत्तंग, पांडुक चार चैत्याले संग॥ ९॥ विदिसमें पांडुक सिल चार, जिह जिन जनम न्होन विस्तार। मध्य चूलिका चालीस तुग,

चाला तरु जू जान अभंग ॥ १० ॥ जोजन लाख सु जम्बूद्वीप, दखन उत्तर सुनौ महीप । सप्त क्षेत्र षट पर्वत जान, पुरवा परव देह मन आन ॥ ११ ॥

सवैया ३१–दखनदिसातैं संख्या भरत चौडाई पानसै छवीस जोजनास उनीस अधिका । आगै दून दून सुन हिमवन हिमवंत महा हिमवन हर निषध विदेहका ॥ आगै आधोआध सब नीलगिर रम्य क्षेत्र रुकमी हिरन्यवत सिखरे छ नगका । ऐरावत क्षेत्र सात नग आमा हेमरूपा सुधा हेमकी कंठरुप हेम रंगका ॥ १२ ॥ सम मूलापुर इह पदम पदम महा त्रिगच्छ केशरी महापुड पुडरीक है । जोजन हजार लांबे आधे चौडे दस ऊंडे एक फूल दूना दून आधोआध ठीक है ॥ कवल कवल प्रति मंदिरमें देवी नाम सिरी हिरी धीर्त कीर्त्त बुधलछमीक है । आयु एक एक पल्ल कुछक अधित जात सामानक परिषत् माता सेवनीक है ॥ १३ ॥

छप्पै–पदम द्रहैसे निकसि नदी गंगारु सिंधवर, भरतमांहि विस्तार साडे बासठि जोजन धार । दुगुनम फिर रोहित रोही-तास्या महद्रुहर ॥ कांता सीता सप्त सीतोदा अर्द्ध अर्धकर, नारी नरकांता स्वर्णकुल रूपकुला रक्ता सुघट । रक्तोदा ऐरावत विषे भरत जेम विस्तार रट ॥ ४ ॥

अडिल्ल–सातजोट दोदो सुपूर्व पूरबगई । अंत किप छम गई लोन दध मिलि गई । चौदे चौदह हजार गंग सिंधुमें मिली ॥ ठाईस छप्पन सहस चौरासी आगली ॥ १५ ॥

दोहा—अर्द्ध अर्द्ध छप्पन सहस, मूल सु चौदैं जान।
साठ सहस पण लाष सब, यह परवार प्रवान ॥ १६ ॥
भरत ऐरावतके विषै, काल फिरन है जान।
उत्तम मध्यम जघिन है, भोग भूम पण थान ॥ १७ ॥

सवैया ३१—भरत मध्य रूपाचल जोजन पचास चौडा आधो वसु भाग जड दष आयाम। दस ऊंचे श्रणी दोय दस दस चौडी जहां दषण पचास साठ खगेन्द्र तना गाम॥ त्यौंही और ऊंची चौडी दूजी पै व्यंतर वास फेर पांच ऊंची दस चौडी जहां आराम। तहां नव कूट जान आठमैं असुर गेह मध्यमै जिन सधाम ताको मम प्रणाम ॥ १८ ॥

छंद त्रिभंगी—हिमवंत क्षेत्रमैं जघन भोग भू एक कोस तन थित इक पल्ल। मध्यम भोग भूमि हर माही तीजी मेर तलै लख मल्ल॥ दूनी दूनी आय काय है वसू मनुष सबही जो अंत। तैसैही उत्तरकी दिसमैं मेर आदि ऐरावत अंत ॥ १९ ॥

दोहा—दोदो नील रु निषद तट, देव कुरुत्तर धूम चार। कनकगिर दोय तरु जामनसै मल झूम ॥२०॥ दुतियक्षेत्र मध-नामगिर, जू विदेहमैं मेर। चार भोग भूचार है, दोदो नदीसु घेर ॥ २१ ॥ सदा सुथिर भूकायसो, सहंस२ तासंग। मूल वज्र पन्नासु दल, फलजुत फूल सुरंग ॥ २२ ॥ पूरब साखा तासपर, अवनासी जिनधाम। अष्टोत्तर सत बिंबजुत, सुरषंग जनहु नवाम ॥२३॥ सोध विदि सफुनि दंतगंज, चार आठ दिगगाज। आठो दिसा सुमेरकी, स्वयं सिद्ध सब साज ॥ २४ ॥

चौपाई—पूरब दिसा वेदिकातलै, दोनों तट सीतासे चलै।
नील नीषधलों चोडे जान, दो देवारण वण परवान ॥ २५ ॥
पूरवतै पश्चमकी ओर, तीन सहस ठंतर विनजोर। ता आगे
चदेह लंवाय, बाईस सततेरै अधिकाय ॥२६॥ अष्टमांस जोजन
एक ऊन, आग्र वषार पंचट्ठे सून। आगे ते ता दूजादेस, आगे
नदी विभंगावेस ॥ २७ ॥ इकसो पचीस चौडी जान, त्यों
त्रिथनदी च्यार नगमान। अष्ट विदेह मध्यरूपस्त ॥ देस समान-
लंव परसस्त, ॥ २८ ॥ तह सब रचना भरत समान, ऐठै नगर
दूतर्फ समान। आठ वषारनदी षटदेस, षोडस पूर्व दिश गिर
रुवेस ॥ २९ ॥ इक इक दिशमें गंगा सिंध, चौदै चौदै सहस
मिलंध। ठाईस सहस विभंगासंग, सीता मांहि मिलीसु अभंग
॥ ३० ॥ तेइस सहस क्षेत्रमें जान, यह रचना भाखी भगवान।
आगै बाईस सहस प्रमान, भद्रसाल वन सुनो बखान ॥ ३१ ॥

सवैया २३-दो सरता वन दो तटमें लख पंच सरोवर
सोहै। एक सरोवरके तट सुंदर कंचन अद्रि दसोंदिस जो है ॥
एकिक अदनपै इक मंदिर एकिक बिंब अकृत्यम सोहै। दो
सतक कंचनके गिर ए सबसे रतने जुग ही दिस हो है ॥३२॥

सुन्दरी छन्द—सर्व बत्तीस विदेह रु भरत है, ऐरावत मिल
चौतीस करत है चौतिस रूपाचल मध जानिये, खंड छैह
छैह नदीसु ठानियें ॥ ३३ ॥ राजधानी इक इक आर्जमें,
चौतिस वृषभाचल सु अनार्जमें। चौसठि गंगा सिंधु विदेहमें,
विभंगा द्वादस फुनि तेहमें ॥ ३४ ॥ चारै लाख बचीस हजार

है, यह परवार तहां विस्तार है। मूल नव्वै सुन परवारको, लाख सतैरवणवै हजारको ॥ ३५ ॥ अठतर मंदिर जिन सासते, चार तीर्थ विदेहमें राजते। यही जम्बूद्वीप समान है, देख ग्रन्थवशेष महान है ॥ ३६ ॥ वर्तुलकृत वज्रमु कोट है, तुंग वसु जोजन जहां ओट है। चार गोपुर चौदिसमें बने, नाम विजयादिक अति सोहने ॥ ३७ ॥

कवित्त–आगै दोय लाख जोजनको चोडो सिंधु कुंडलाकार। तटपै मृत्सु पक्षुका सम जलमध्य भाग ग्यारै हजार ॥ तहां कूप चार चौ दिसमें लाख उदर जड मुख दस सहस। उदर विदस जोजन हजार दस जड मुख एक अन्तर सहस ॥ ३८ ॥

दोहा–एक उदर जड मुख शतक, आठों अन्तर जान।

एकेकसो पच्चीस सब, सहस आठ सब जान ॥ ३९ ॥

ढाल पामादी–तलै अगन मध पौन, उपर जल सु भरे है। एक एकमें तीन भाग इस भांत परे हैं ॥ यामें दोनों उर अंतर दीप परे हैं। कुल गिर भुजपर और भूम कुभोग भरे हैं ॥ ४० ॥ मीठी मृतका नीर घास सम काल बिराजै। पावस हिम और उष्ण तहां बाधा नहीं छाजै ॥ कान दीर्घ इक ढंग नर तन पशु मुख केई। पशु तन नर मुख कोय ऐसे जीव घनेही ॥ ४१ कुपात्र दान फल एह मुनि श्रावक द्रव्य लिंगी। भक्ति भावसैं दान देख मन वच तन चंगी ॥ अथवा कुपात्र सु दान देय नर्क जावै। अथवा पशु परजाई मर मर जनम धरावै ॥ ४२ ॥ लवनोद्ध या नाम लवनो सम जल अति खारी। आगै धातकी दीप

च्यार लाख विस्तारी ॥ लवनोदधको वेढवर तुलकार बिराजै। पूरव पछिम भाग मेर जुग मध्य छवि छाजै ॥ ४३ ॥ दोनों दिसके मांहि रचना भिन्न सु भिन है। जंबूद्वीप समान भाष्यो यो श्री जिन है ॥ दखन उत्तर थांहि इष्वाकार पहारा। दोय मेर यह सीम जिन मंदिर सिर धारा ॥ ४४ ॥ एकसोठावन ग्रहे श्रीजिन अष्ट शाश्वते। फुन कालोदध सिंधु लाख वसु वार रासते ॥ रचना सिंधु सु आदि सोई सब यामें। आगै पुष्कर द्वीप मानुषोत्तर मध तामें ॥ ४५ ॥ जोजन सोलहलाख उर ले आधे मांही। धातकीखंड समान रचना धर मनमाही ॥ मेर जुगमया मांहि चारों मेर समाने। जोजन सहस उतंग चौरासी परवाने ॥ ४६ ॥

दोहा—सत्रासै इकीस तुंग, मानषोत्तर जड पात्र।
दससै बाइस चारु सत, चौवीस जुगम चुडात्र ॥ ४७ ॥
अपर चार जिनेस घर, मानुष हद नग थाय।
मानुषोत्तर यातै कहै, उपन नवाहर नाय ॥ ४८ ॥
मनुष जाय सोलै जगै, इकनोर कचो अमर।
पशु पंचींद्री विकलत्रय, थावर पण नर अजर ॥ ४९ ॥
आवै तेरै थानतै, थावर तेज रु बात।
सिद्धाले मैं जायने, आवै कबहु न भ्रात ॥ ५० ॥
मानुष विन मुनि पद नहीं, मुनि विन सिव पद नांहि।
शिव नहीं सम्यकदृष्टि विन, समकित विन भटकाय ॥ ५१ ॥

सवैया ३१–सामान मनुष कही पदवी धारक, सुन सुरग नरक जिन आए शिव पाय है। चक्री अर्द्ध चक्री हली कुलकर मात, तात जिन मार कलहप्रिय रुद्र सुर आय है। जिन तात हली मार सुरगवा शिव, जाय कुलकर निज मात सुरगमें जाय है। दोनों अर्द्ध चक्री रुद्र नारद नरक जाय, चक्र तीनों थान नर्क सुर्ग शिव माय है ॥ ५२ ॥

अडिल–जंबूदीपतै लवनोदध चौवीस गुण, बहुरि धातकी दीप चवालीस सत गुणा। छहौ बहतर गुणा कालुदध जंबूसे, ग्यारासे चोरासी पुसकर जंबूसे ॥ ५३ ॥ लाख पैतालीस लंबो चौडो जानिये, सहस दोय पचीस खंडसौ ठानियै। लाख लाख जोजनके भिन्न बनाईये, जंबूदीप समान सबै मन लाईये ॥ ५४ ॥

दोहा–मानुषको परदेस इक, याके बाहर कोय।
समुद्घात विन जान ही, ए निश्चै मन जोय ॥ ५५ ॥
मानषोत्र आगै कह्यौ, आधो पुष्कर दीप।
फुनि पुष्कर दधवारिणी, दीपोदध सु समीप ॥ ५६ ॥
क्षीर दीप फुन क्षीर दध, घृत वर दीप समुद्र।
इक्षुवर दीप समुद्र फुन, नंदीसुर सुन भद्र ॥ ५७ ॥

छप्पै–इकसो त्रेसठि कोट लाख चोरासी जोजन, व्यास दीप मध अंजनगिर चव दिस २ प्रति उन। गिर गिर दिस दिसताल लाख जोजन मध दधमुख। सर प्रति विदिसाको जब तिस रत कर ऊरध रुप, सब सहस चौरासी दस इक।

जोजन समथल ऊपरौ सब बावन जिन मंदिरन जुत, गोलनाम सम रंग धरै ॥ ५८ ॥

कवित्त–अरुण दीप दध ८ समो अरुणोद्भास ग्यारमो जान, कुन्डल दीप मध्य कुन्डलगिर कुन्डलकार चार जिन थान। बहुर कुन्डलोदधरु संखवरु दीपोदध फुन रुचक सु दीप, मध्यरु चक्रगिर गोल चौदिसमें चार जिनाले जान महीप ॥५९॥ रुचकार्णव सु आद ए तेरह और असंख दीप दधमान, अन्त तीन देवदूंदुवर सिंभूरमण दीप दधमान ए सब सोलै दीपोदध है तेरै आदि अंत त्रयक है। इनिकै मध्य सर्व दीपोदध शुभ नाम जिनेस्वर कहै ॥ ६० ॥ लवनोदध जल खार लवन सम वारुणि वर जल मदिरा जेम। घृतवर नीर स्वाद घीव सम क्षीर सिधु तोयपै तेम ॥ कालोदधरु सिंभू रमणार्णव मिष्ट जेम गंगाको नीर। पुष्कर जलध सहत सम पाणी और इक्षुरस सवे सुनार ॥ ६१ ॥

दोहा–लौनोदध कालोसु दध, अंत स्वयभू स्वन्न।
इनमें जलचर जीव फुन, अरु जलकाय सुवन्न ॥ ६२ ॥

सवैया ३१–दीप सिंभु रमण जो मध्यमें नागेंद्र नग ताके ऊरै जिवन सुभोगभूमि रीत है। भूचर खेचर पसु मरल है मोनत्रक जलचर विकल रु नाही जीत है ॥ आधे पुष्करार्द्ध आगै सर्व दीप रीत एही नागेंद्र पहाड़ आगे पंचमांतरीत है। मेर मध्यमाग आदि अंतोदव अंत तट आघे राजू मांहि सब गिनती पुनीत है ॥ ६३ ॥ नंदीस्वर दीप परै वारुणी सु दोव

और वरुण समुद्र तामें महा अंधकार है। ब्रह्म स्वर्ग ताई फैलो बड़ी रिद्ध धारी जाय हीन रिद्ध देवनको नहीं अधिकार है॥ कुंडल सु दीप मांहि कुंडलसु गिर जड एक ऊंचो बयालीस भू दसहजार हं। चौडा अंत चौ हजार छिनवै जोजन सर्व राबढी आकार सब दधनको वार है॥ ६४॥ चार दिस चार चार कूल सोलै नग कवार देवनके सुंदर महल कर सोहतै। तेरमो रुचक फुनि दीपमें रूचकगिर जोजन हजारकंद चौरासीच्चं मोहतैं॥ ब्यालीस सहस चौडा चार ओर चार कूट तहां दिगपाल रहै आठ आठ ओ।तैं। चारौं दिसा मांहि कूट दिग क्वारी देवी रहै गरभ अगाऊ जिनमाता दासी होय है॥६५॥ विजयादिगारी स्वस्तकादशी साऽलादिपै छत्र धारै चौर ठौरै लंबुज़ादि आठं। फुन चार कूट और दिसानमें चार देवी चित्रादि विद्युतक्वारी बात करै ठाठं॥ रुचकादि विदिसामें चार चार और जुदी विजियादि मातासेवै जनम उछाठाठं। जुदे जुदे कूट भोन तिनमें सु देवार है सो त्रित रुचकगिर ऐसे सो महाठाठं॥६६॥ ऐसे मध्यलोक महादीप दध असंख्यात बहुरि जिनै संख्या यौ बताइयै। पच्चीस जु कोडाकोडि पल्ल दूनी औ धारजो रोम सब जेते तेते दीपोदध पाईये॥ अंत सिभू रमणमें मक्ष सहस जोजनको ताके मुखमांहि जीव आवै और जाय है। वाकै राग दोष नाहिं वाके कान मांहि लघु मछयौ विचारै देखो मूढ़ नहीं खाय है॥६७॥ खानेकी सकत नांह भावनके पर भाय सातवें नर्क जाय मर्थ भाव देखपै।

चक्रवर्तिकी विभूति तामें रतनाइ जु जल जजल न्यारो पै ताहीमें नित पेखवै ॥ पूछै सिख कैसे जीव छोटो बड़ो होय सोई करो भेद संसै छेद सुन सोविसेसपै । आगनको संगजे सोई धनको होय ते सोही फलाव त्यौंही जीव काय लेखपै ॥ ६८ ॥ जम्बूद्वीप नाथ अनावृत आगे लवन दध जल षोडस हजार एक ढूंगा भूमांही । रवासता ऊंचौ भूदस कृष्ण सेतु पक्षमांही पांच घटै बढ़े एक तीजा अंश दिनही ॥ ठारै परै ठ्यालीस बहत्तर हजार सुर नाग क्कार तरग सु थावै सुनियोग है । स्वस्तित अधिष्ट एक धातकीमें दोय सुर प्रभास रूप दर्स आगै दो दो जोग है ॥ ६९ ॥

दोहा– कालौदध पत काल सुर, महाकाल पुष्कार ।

पदम पुंडरीक रु युगम, ऐसे सब निरधार ॥ ७० ॥

चौपाई– ढाई आदि रु आधा अन्त, इनमें त्रय पशु जीव अनंत । पंचइंद्री पन्द्रैमें जाय, चार देव पण थावर काय ॥७१॥ विकलत्रय पसु नरक मनुष्य, इनहीमें तैं आवै दृष्य । विकलत्रय दस त्याग स्थावर, विकल पशु नर इति ॥ ७२ ॥ नर्क विना चोदै तै आय, भू जल तरु ह्वै थावर काय । देव विना दस तै आविना, तेज वाय लहनो नर बिना ॥ ७३ ॥ यह महि मंडल तुछक थान, अब कछु जोतस पटल वखान । चित्रा भू ऊंच सत सस, नव्वै जोजन तारै लिस ॥ ७४ ॥ फुन दस भान अस्सी पैचंद, चार निषत बुध चार अमंद । शुक्र गुरु कुज शनि प्रमाण, तीन तीनपै नोसत जान ॥ ७५ ॥ एकसो दस

जोजन नभमांहि, मोटी छात अधर फैलांह। सोम इन्द्र प्रति इन्द्र दिनेस, गृह अठासी ठाईस रीखेस ॥ ७६ ॥ छासठ सहस पिछतर कहे, नोसै कोडाकोडी लहे। उडगण ए सब संख्या धार, एक इन्दुको यह परवार ॥ ७७ ॥ जम्बूद्वीपमें दोय निसेस, लवण चार धातकी बारेस। बयालीस कालांबुध पुष्प, अर्द्ध और बहत्तर दृष्य ॥ ७८ ॥ ए नित मेर प्रदक्षना ठान, तिन कृत काल विभाग प्रमान। बाहर थिर सब घटाकार, रात दिवसको भेद न धार ॥ ७९ ॥

सवैया ३१—उधर पुष्कर भाग लाख लाख जोजनाठ गोलाकार भिन्न ससि इस भांति रट है। मानसोत्तर तट बलै तामें एकसो चवाली आगै चारचार जादै बारैसै चौसठ है ॥ आगै पुष्करमें तावत वले बत्तीस आदमें अघोके दूने ससितिम भाईयै, सब संख्या ससि धार दो सत ग्यारे हजार आगै दीपोदध मांहि ऐसे ही फैलाईयै ॥ ८० ॥

चौपाई—आयुष पंक पल्लइके वर्ष लाख अर्क सहस पल वर्ष। सत इक पल्ल शुक्र गुरु पौण, आध पल्ल कुज बुध शनि जोन ॥ ८१ ॥ तारे पाव पल्ल सु भाग, उत्तम जघिन आयु संभाग। जोजनास इकसठ ससि जान, छप्पन अड़तालिस सरवमान ॥ ८२ ॥ कोस एक शुक्र गुरु पौण, ग्रह सब अद्धरु तारे जोन। अर्द्ध पाव अर सप्तम भाग, लघु गुरु जोजन सहस सु लाग ॥ ८३ ॥ सूरज बुध सनि स्वर्ण समान, निस पति गुरु फटिक मणी जान। शुक्र रजित अरु मंगल रक्त, राहु

केत स्याम मण जुक्त ॥ ८४ ॥ इक इक जोजनके विस्तार, रजनी पति रवी तले निहार। चौडा राजु एक प्रमान, उंचक जोजन लाख सुजान ॥ ८५ ॥ मध्यलोक यह कथन सु पेख। अब कछु ऊरध लोक विशेष ॥ ८६ ॥

सवैया ३१–चिम्रा भूसे डेढ डेढ आघ आघ षट ठौर अन्त एक राजू सातमै नो धारयै, घनाकार साडे उनीस रुसाडे सतीस दो २ साडे सोलै आगै घाट दो दो अन्त जारिये। पटल इकतीस सात चार दोय एक एक तीन तीन बावन छ राजू स्वर्ग धारियै, ग्रैवकमै तीन तीन तीन एकनुतमै पिचोतर एक सब त्रेसठ समारियै ॥ ८७ ॥

अडिल–स्वर्ग सौधर्म इसानरु सनतकवारजी, बहुरि महेंद्ररु ब्रह्म ब्रह्मोत्तरसारजो। बतीस–ठाईस बारै आठरु चारजी, लाख इक इक मांहि अन्त आगारजी ॥ ८८ ॥ लांतव अरु कापिष्ट शुक्र महाशुक्रजी। स्वर्ग सतार सहश्रार माहिसु अनुक्रजी, सहस पचास सचालीस छत्रिप जोटमें। आनत प्रानत आरण अचुत गोटमें ॥ ८९ ॥ सात सतक फुनि त्रिक त्रिक त्रिक नवग्रीवमें, सो ग्यारै सो सत्त कियणे धर जीवमें। नोनषोतरा पंच पिचोत्तर ईस है, लाख चौरासी सहस सताणु त्रिनीस है ॥ ९० ॥

सवैया ३१–त्रेसठ पटल मांहि इंद्रक त्रेसठ आदि बासठ २ श्रेणि बंध चार और है, दोसै अडतालीस रु आगै चार घाट अन्त चार सब संख्या ठत्तरसै सोरहै। उत्तर पटल एक बीच एक इंद्रक है दिशाचार श्रेणि बन्ध प्रकीर्णक चार है, अठेताई

चासठमें चार चार घटे अन्त चार और पिछोत्तर मांहि धार सार है ॥ ९१ ॥

चौपाई—सहस निनाणवै सोलै लाख, तीन सतक अस्सी गुरु भाष। जोजन सो संख्यात प्रमाण, इंद्रक श्रेणी बुध सु जान ॥ ९२ ॥ अरु परकीर्णक भी कछु आह, बाकी असंख्यातके मांहि। इक इकमें जिन मंदिर जान, रतन बिंब सत आठ प्रमान ॥ ९३ ॥

सवैया ३१—आदि दूजे स्वर्ग मांहि मह लले ढाई पीठ ग्यारासैं इकीस सब जोजन प्रमानियै, आगै दो दो नाक मांहि निनाणवै घाट घाट फुन भोन चोडे आदि दिन दोमें जानियै। जोजन सतक वीस आगै दोमै सतक है फुन दो दो मांहि दस दस घाट ठानियै, तैसै तीनों त्रक मांहि निरोत्तरे पिछोत्तरे दोनोंमें जोजन पांच पांच व्याम मानियै ॥ ९४ ॥ पहले जुगल ग्रह छसत जोजन ऊँचे दूजे जुगपान सत आगै पांच जोटमें, पचास पचास घाट पचीस पचीस आगै घाट घाट सब ठौर अतताई गोटमें। मंदरोंकी नीव आदि जुगम जोजन साढ दूजे जुगमें पचास आगै षट जोटमें, पांच पांच घाट फुन त्योंही तीनों त्रक मांहि आगै चौदह थान मांहि ढाई ढाई ओटमें ॥ ९५ ॥

छंद छप्पै—आदि जुगलमें पंचरतन मय मंदिर दूजे कृष्णरतन बिन बहुर नील बिन चौथे तीजे, पंचरु छठे जुगलके मांही पीत स्वेतमय। सातं आठमें जुग अहमिंद्र एक स्वे-

तमण, वसु जुगलमें बारे इंद्र है। जुगल चार वसु चार चव, है दक्षन उत्तर षटरु षट सुरी जान षट लाख चव ॥ ९६ ॥

दोहा–पहले दूजे सुरगमें, निज नियोगनी जान।
दक्षण उत्तर श्रेणी सुर, ले जावे निज थान ॥ ९७ ॥
आदि पंच दो दो अधिक, बारह तक सुरी आव।
सात सात तुरी अन्त सब, पचपन पल्ल गिनाव ॥ ९८ ॥

अडिल्ल–भवनतिरक जुग सुरग भोगनर नारसो, दोमें फरस चारमें रूप निहारसो। चारमें सबद सुने मन विकलप चारसों, आगै सहज सील अहमिंद्र धारसौं ॥ ९९ ॥ आदि जुगल दध दोय सप्त दूजे त्रयै, दस चौदह तुरी जुगलरु दो दो अंधि किय। नवग्रीवक दो उत्तर ग्यारै थानमें, इक इक अधिकरते तीस अंतम थानमें ॥ १०० ॥ देवन काया त्वंग सप्त कर आदमें, षटकर दूजै जुगल पंचत्रय चारमें। पंचजुगल कर चार षष्ठ कर होट ही, सात आठ त्रय हाथ देह जोट ही ॥ १०१ ॥

सोरठा–अर्द्ध अर्द्ध कर हीन, त्रय ग्रीवक इम उत्र जुग।
पाव पाव कर हान, देवनके दस भेद सुन ॥ १०२ ॥

सवैया ३१–पुरंदर तथा तुल्य सो सामान समान जात दूजे तीजे जुगराज जैसे उमरावमे चौथे। चाकरसे पांच छठे कोतवाल अनीककी सात सेना हाथी घोडे रथ पयादे चोथे ॥ गायन बजंत्री नृत श्रातमीके सात भेद आटमे रयै तनो मैं गजादि वाहन हैं। दसमें चंडाल ऐसे दस जात देवनकी वित्र खग दोमैं मंत्री लोकपाल बिन है ॥ १०३ ॥ अनंत पंचागनी

भवन तिरक जाय परम श्रावक इंडी पांचमें सुरगमें। परमती परमहंस अणुव्रती तिरजंच बारमें सुरग जाय सोलमें सुरगमें ॥ श्रावक श्राविका जाय द्रव्यलिंगी नवग्रीव भावलिंगी मुनि जाय उपर सरवमें। पंचइंद्री पशु और मानुष सुरग जाय जाकी सुभ भावनतें भवन तिरकमें ॥ १०४ ॥ देव पंचगति जाय भू जल हरत काय नर पसु दूजे नाक ऊपर था वरना। बारमें उपर जाय मरिकै मानुष होय उत्तरके इंद्र षट विनयादि वरना ॥ एक होय भवमांहि सिद्धालेमें जाय सोइ दखनके सक्र षट सर्वारथ सिद्धके। सोधरम हर सची लोकपाल लोकांतक एक भव माहि जाय भोगै सुख सिद्धके ॥ १०५ ॥

अडिल्ल–प्रश्नोत्तर लोकांतक सुर कहा इम कह्यौ। ब्रह्म-स्वर्ग लोकांतक पाड़ौ बन रह्यौ ॥ ब्रह्म रीषीस्वर रहे सीलव्रत धार है। अष्ट प्रकारन नार तत्वार्थ विचार है ॥ १०६ ॥

छप्पै–जोजन बारै परै सिला सरवारथ सिद्धतें। वसु मोटी मध व्यास पैतालिस अधिक कटिकतैं ॥ ता ऊपर शिव क्षेत्र अंत तन वातवलयमें। तहां सिद्ध भगवान नंत सिद्ध इक इक तनमें ॥ सो श्रेणिक तुम कल्यान कर, गौतमगण इम कहतवर। कर दिव्य वचन गुणभद्र युत, धनसुत कुंदे नीज सुघर ॥ १०७ ॥

इतिश्री चंद्रप्रभपुराणमध्ये मध्यलोक ऊर्ध्वलोक वर्णनो नाम तृतीय संधिः संपूर्णम्।

चतुर्थ संधि।

दोहा—वर्धमान गुणभद्र नमूं, देह दान निज ज्ञान।
गौतम गणधर कहत हैं, सुन श्रेणिक बुधवान ॥ १ ॥
यह त्रलोक सु प्रश्नको, कह्यो संक्षेप बखान।
अब कछु वरनन कालकी, कहुं रीत परवान ॥ २ ॥

चौपाई—नरक सुरग दोयोदधि माहि, जैसी रीत जहां कछु आहि। तैसी सदा रहैगी सही, भरत ऐरावत विन सब मही ॥३॥ प्रभुजी भरतमैं कैसी होय, ताकी रीत बतावो मोय। कालचक्र तामाहीं फिरै, नंतानंत कल्प विस्तरै ॥ ४ ॥ बीते नंत होय नंतानंत, ऐसो भेद जान बुधवंत। एक कल्प दो भेद सुजान, सर्पणी उत्सर्पणी यह मान ॥ ५ ॥ जैसैं एक मास दोय पक्ष, कृष्ण शुक्ल दीसै परतक्ष। चन्द्रकलाजूं घट बढ़ होय, निगलै उगलै तैसैं सोय ॥६॥ एक सर्पणी भेद सुनेय, दस कोड़ाकोड़ी- दध नेह। तामै षट काल मरजाद, कोड़ाकोड़ी चार सुआदि ॥७॥ सुषमा सुषमा उत्तम सोय, भोग भूमिकी रीत सु होय। मनुष तिर्यंच पंचेन्द्री होय, भोग दसांग भोगवै सोय ॥ ८ ॥ तीन पल्लकी आयुष कही, तीन कोस तन उन्नत सही कल्प- वृक्ष दस पृथ्वीकाय, पुन्न प्रमानो रचे सुराय ॥ ९ ॥

सवैया ३१—दस जात कल्पवृक्ष आद जोतगांग जेम रवि ससि प्रभा दूजो ग्रहांग भाजनदे। प्रदीपांग दीप जोत तुरजांग बाजे देवै भोजनांग भोजन दे भाजन भाजन दे ॥ पाटांग अंबर देवै मालांग सुमनमाल भूषनांग गहने दे मद्यांग हैं दस यौ।

दस विध वस्तु देवै जाचे इन पास आय, पावै सोई मन चाये दान फल लसियो ॥ १० ॥

पद्धड़ी—षट उदै जोत नरनार रूप, सुंदरिता अति जानो अनूप। तीजै दिन भोजन चाह होय, बद्री फल सम कर ग्रास सोय ॥ ११ ॥ तिनतीके नरनारी तिर्यंच, नहीं घाट बाढ़ इक होय रंच। नव मास आयु बाकी रहाय, तब नार गर्भ धारै अघाय ॥ १२ ॥ जब ही बालकको जन्म होय, तब ही पितु जननी मरै सोय। सो तात छींक आए पलाय, अरु मात जंभाई कर नसाय ॥१३॥ इन तन कपूर वत खिर सोय, ए जुगल मरै अरु जुगल होय। चूसै अंगुष्ट फुन भूम लोट, बैठन सुसक्ति फिर चलै जोट ॥ १४ ॥ फुन कला निपुन फुन गुण निधान, फिर जोबन पावै अति अमान। ये सात सात दिन मांहि जान, फिर करै निरंतर भोग मान ॥ १५ ॥ दिन उनचास पाछैहू साथ, तब सम्यक पावै नारनाथ। है सरल सुभावरु आर्जभाव सुषमै सुखप्रापति सुगणराव ॥ १६ ॥

दोहा—प्रथमकालकी रीत, आय काय क्रम हीन।
अब कछु दूजो वरनऊं, कोडा कोडी तीन ॥ १७ ॥

बेसरा—दो पल्ल आयु काया दो कोस स्वंभ माया, दो दिनांतरे भोजन। फल बहेड़ा समो मन ॥ १८ ॥ जम सुष्यमा सु जान, अब द्रितीय भेदमान। दो कोडा कोडि सागर, इक पल्ल थित नागर ॥ १९ ॥ एक कोस तन उत्तंग, आहार दिनके भंग। फल आंवले समान, सुक्ख दुक्खमा सु जान

॥ २० ॥ पल अष्टमांस रहिया, तब भोग भू नसैया। सुर वृक्ष जोत मंद, भए रीत कुल करंद ॥ २१ ॥

दोहा—श्रेणिक पूछै कोन है, कैसे कुलकर होय।

इन्द्रभूत भाषै सुनौ, कुल रीत करै नृप सोय ॥ २२ ॥

छंद नाराच—गंगा सिंधु मध्य आरज खंडमांहिकी सुरीत, सम जुगम भूप होय आदि प्रतश्रुत नीत। पूर्वजन्म याद नासि तासके समै निहार, चंद्र सूर्य अस्त जन्म देष जगत भूमं धार ॥ २३ ॥ पूर्णमासि सांझ काल सर्व जाय पूछ भूप, जोतषी सुदेव जान भूम भान मान रूप। पल्ल भाग धर्म आयु भोग स्वर्ग लोक जाय, दूसरा सनमत निछत्र जोतगी बताय ॥ २४ ॥

सोरठा—पलके अस्सी भाग, काल रहो भयौ तब सु यह। पलकै सौमे भाग, याकी आयु सुजानियौ ॥ २५ ॥ पल्ल भाग पचबात, अष्टम दस दस भाग कर। तेरै जगै सुजान, बाकी जब कुलकर भये ॥ २६ ॥ दस दसवां कर भाग, पल्ल तनौ तेरै नगै। तेती २ भाग, आयुष्य कुलकर सबनकी ॥ २७ ॥ कुलकर काया तुंग, ढारै-तेरै आठसत। पचीस २ भंग ए प्रवान सब तन धनु ॥ २८ ॥

छंद धनासिरी—कुलकर छेमंकर तीजा छेम करता है सिंह व्याघ्र क्रूर भये विश्वास न कीजियै। चौथा छेमंधर हर व्याघ्र महा क्रूर भये ताके दूर करवेकूं लाठी हाथ लीजियै ॥ पांचमा श्रीमंकरके समै सुर तरु हेत सब लडै तरु वढ़ै सीमंधर छुटमें। भूमादिक सीम बांधी विपुल वाहन तानै वाहन गजादि भाषै चक्षुष्मान अठमें ॥ २९ ॥ ताके समै पुत्र भये नोमा यसेस्वीकू

सबै पुत्रनका नाम धारो अभिचन्द्र दस वो। ताके समै बाल रोके गोदमें खिलावत ले तथा जलकुंड माँहि ससि देख हसियो ॥ ग्यारमें चंद्राभ समैं पुत्रन सहत जिये बारमाहे मस देवताके समैं लसयो। जलवन गिर क्रीडा नावादि तरंड भये भेव वृक्षते धर्मेंद्र सेन जित वसयो ॥ ३० ॥

दोहा—जरे सहत बालक भये ताको कह्यो उपाय।
नाम नरे सुर चौदमें, नाम नाल जुत थाय ॥ ३१ ॥
ताह देख डापे सु जन, कुलकर रीत बताय।
ये चेहन सुदर सकल, होय करम भूमांहि ॥ ३२ ॥
बहु वरषातें अन्न सब, भई औषधि सु अपार।
कल्पवृक्ष जांते रहे, क्षुधावंत दुख धार ॥ ३३ ॥

चौपाई—तब सब मिलि गये नृपके द्वार, जाय नये प्रभु अरज निहार। हमरी दया करो मन लाय, क्षुधावंत हम सब बिललाय ॥ ३४ ॥ कुलकर भणै सुणोरे भाय, साठन खेत बड़े अधिकाय। तुम सब ताह तोड़कर लेहु, अरु निचोर रसकू पीलेहु ॥ ३५ ॥ तुरत क्षुधास ईक्षुतें हरो, तब इक्ष्वाक वंस उचरो। कोड़ पूरब आय तनु तुंग, धनुष सवार पच सतरंग ॥ ३६ ॥ कंचन वरण सबै सुखदाय, ऐसे नाभराय गुण गाय। तानृपके मरुदेवी नार, जुवति गुणन मुष्य सिंगार ॥ ३७ ॥ कछुक काल सुख भोगत गये, प्रथम सुरेन्द्र अवधि चितये। होनहार तीर्थंकर जान, भेज्यो धनिद भगति उर आन ॥३८॥ [illegible] नगर निमापो सही, कौसल देश अयुध्या ठई। हेम कोट

सुंदर बाजार, बीच बीच जिनवर आगार ॥ ३९ ॥ कथ सु आय महिपति भौन, सुर मंदिर ता आगै कौन । इकमासी वन परम विसाल, चित्र विचित्र लटक फुलमाल ॥ ४० ॥ श्री जिन भक्ति धनिद उर फूल, पंचाश्चर्य करत सुख मूल । रत्नवृष्टि साढ़े दस कोड़, तीन बार साढ़े दस कोड़ ॥ ४१ ॥ इक इक दिनमैं नृपके गेह, बरसै मानौ आनंद मेह । इक दिन मरुदेवी पतसंग, सोवत रैन भई बहु अंग ॥ ४२ ॥ चौथे जाम सुपन अशेष, तज सरवारथ सिद्ध विशेष । गर्भ मांहि लीनौ औतार, उठी मात कीनौ सिंगार ॥ ४३ ॥ प्रातः असाढ़ दूज कलिदिना, पतिसै प्रश्न कियो सुत मना । छप्पनदेवी सेवै माय, जन्म चैत बदि नवमी थाय ॥ ४४ ॥ सुना सुगुर मेर कियो न्हौन, तांडवनृत्य अर भौ भौन । तीन ग्यान जुत भये वृषंक, एक दिन नाभिराय भूरि अंक ॥ ४५ ॥ करो व्याह गृहस्तकी आदि, चलै रीत बाढ़े मरजाद । प्रभु मुसकाय अधो मुख कियौ, जानी तात अनंदित भयौ ॥ ४६ ॥ कच्छ सुकच्छ अवनिपति सुता; नंद सुनंदा बहु गुण जुता । आदि कुंवर परणी संयोग, मनवांछित भोगवै सु भोग ॥ ४७ ॥ शत सुत सुता दो तिनके भये, जगत रीत सब उपदेशये । तीन वरण षट करम सु किये, क्षत्री वैश्य शूद्र निरमये ॥ ४८ ॥ सो क्षत्री परजा प्रतिपाल, वणज करौ सु वैश्य गुणमाल । शूद्रमाहि तेतीसो जात, कांहि मसि कृषि विद्या विख्यात ॥ ४९ ॥ वणज शिल्प बही परकार्म, असि वणजादिक मे धर्म । कर त्रयाहि अक तिलक विराग,

कृष खेती अरु वणज अगाद ॥ ५० ॥ विद्या सीखन बहुत प्रकार, सिल्पी धंधा किये अपार। ॐ नमः सिद्ध भण अंक, अकारादि सुर सोलै अंक ॥ ५१ ॥ ककारादि करे पैंतीस, व्यंजन मांहि लीये तेतीस। लक्ष बिना सब विंजन होय, क क ख ख ऐसी संज्ञा जोय ॥ ५२ ॥ क का कि की कु कू के कैं, को कौ कं कः संग्या दई। ऐसे बारै बारै मान, एक एकके भेद सु जान ॥ ५३ ॥ क कि कु ए त्रिय लघु अनादि, नव दीरघ और जुतका आदि। पुलत घनी देर जु उच्चार, तेतीस चारौ रूप निहार ॥ ५४ ॥ ओं एक सोलै सुर वर्ण, पैंतीस मात्रा बारै सर्ग। ए सब चौसठ अंक सु जान, चौसठ विद्याकरी बखान ॥ ५५ ॥ लिखन क्रिया इत्यादि बताय, भरतादिक शत पुत्र पठाय। वंश चार क्षत्रिनके किये, नगर सु बांट राज सब दिये ॥ ५६ ॥ कुरुवंसी कुरु जंगल देश, गजपुर सोम श्रेयांस नरेश। काशी देश बनारसी ग्राम, नाथ सु वंश अकंपन मान ॥ ५७ ॥ उग्र वंश कच्छ महाकच्छ, आप इक्ष्वाक वंश परतच्छ। इत्यादिक अनेक भू कंत, किये आदनाथ भगवंत ॥ ५८ ॥ लाख तिरासी पूरवकाल, सुखमें बीत गयो सु विशाल। प्रथम इंद्र चिंतै मनमांह, प्रभु कैसे वैरागहि थांह ॥ ५९ ॥ तुछ आयु नीलंजस सुरी, कर सिंगार लायो भूहरी। नृत्यारंभ सभामैं कीन, रागरंग वृषभेश्वर चीन ॥६०॥ नाचत नाचत गई पलाय, तत छिन और रची सुरराय। नृत्य भंग नहीं जानै कोय, विश्वनाथ तब सब अवलोय ॥६१॥

इसतैं विरस भये सब आस, लख २ त्यौं सब जग पास ।
इत्यादिक शुभ भावन भाय, राज दियो सुत भरत बुलाय ॥६२॥
तब लौकांत आय सुर नये, संबोधनमये सुत कछु ठये । तत छिन
बहुरि इंद्र पालकी, लाय चढे प्रभ चले वर थकी ॥ ६३ ॥
पोंहचे अरन प्रयाग मंझार, चार सहस राजनकी लार । वस्त्रा-
भर्ण उतारे सर्व, पद्मासन दिश मुख कर पूर्व ॥६४॥ मुष्टीपंच
उपारे केस, नमः सिद्ध भण सुन्दर भेस । षट मास योगासन
लियौ, जनमदिना नृप सुत मुन भयौ । ६५ ॥ कछादिक विधि
जानै नांहि, प्रभुकी भक्त थकी मुन थांह । कोय चार दिन
बीत जु गये, क्षुधा तृषा कर पीड़ित भये ॥ ६६ ॥ तिनमें
भरत पुत्र इक नीच, मिथ्याती अति दुष्ट मरीच । ताकी
आज्ञातै सब जना, वन सुफलादिक भोजन खना ॥ ६७ ॥
अरु तलाव जल पीवन करै, तब नभमें सुर बच उच्चरै । ऐसो
काज करै या भेष, ताकौ हम मारेंगे देख ॥ ६८ ॥ तब सब
झरकर छालके पट्ट, पहरे भिष्ट भये सब दुष्ट । मत वेदांत नैयाय
विशेष, सांख्य बोध इत्यादिक भेष ॥६९॥ आप अपनी इछावश
खंड, तीन सतक त्रेसठ पाखंड । भये और सुण श्रेणिकसार,
प्रभु साले नमि विनमि कवार ॥७०॥ मांगै राज सुथिन पे आय,
सबकूं दियो हमैं बिसराय । तब धनेश आसन कंपियो, आयराज
रूपाचल दियो ॥ ७१ ॥ पूरण जोम असनके हेत, उठे स्वयंभू
मुन पद चेत । ग्राम रु नगर फिरे नही लाह, भोजन विधि कोउ
जानै नांह ॥ ७२ ॥ निरख भूप बहु आदर करै, कन्या हयगय

मेट सु धरैं। अंतराय लख फिर वन गये, चार सतक दिन बीतत मये ॥ ७३ ॥ विहरत विहरत आए कहां, कुरु जंगल हथनापुर जहां। पुरमै आवत देखे भूप, सोम श्रेयांस नाम सुत रूप ॥७४॥ जातिसुमरण भयो श्रेयांस, वज्रजंघ श्रीमती भतांस। मुनको दान ताल पै दियो, सो सगरी विध जानत भयो ॥७५॥

दोहा—इन सु भवांतरको कथन, आमैं सुन नर नाह।

सो कषाय परसंगमैं, संधि पंदरमी माह ॥ ७६ ॥

चौपाई—ततछिन कर नमोस्तु पडगाह, सुद्ध इक्षु रस कन घट मांह। सप्त गुण जुत नोधा भक्त, प्रभु करांजुलिमें विधि युक्त ॥ ७७ ॥ दियो लियो भये पंचाश्चर्य, बतीस अंतराय कर वर्जे। छालीस दोष बिना हुयो हार, श्री श्रेयांस दानेश्वर सार ॥ ७८ ॥ सुदि वैशाख तीज तिथ दिना, अक्षय तीज तब सब जग मना। दान तना फल क्षय नहीं होय, कारण पायन नासै जोय ॥ ७९ ॥ पोंहची भरत कनै यह सार, ऋषभदेवको भयो अहार। तुरत श्रेयांस पास तब गयो, तुम किम वाको मरम सु लह्यो ॥ ८० ॥ कथा भवांतरकी सब कही, भरत भणै धन धन तुम सही। फेर अजुध्या आय सुभात, तासु भेद सब कह्यो विख्यात ॥ ८१ ॥

बसंततिलका छंद—माता सुमोह मत रोय पुकार हा हा, काली सुदेव भरतेश्वर दुष्ट महा। मो पुत्र बुद्ध नहीं लीनी राज्यमातो, किंवे नरेस कव केवल बातु रातो ॥ ८२ ॥

छंद सविपदन—जननि लेजाऊं दरस दिखाऊं लख सुत भावै तब सुख पावै ॥ ८३ ॥

सोरठा—बीते वरस हजार, तब केवल ग्याना लियो। फागुन तिथ अलि ग्यार, समोसरण धनपत रच्यो ॥ ८४ ॥

चौपाई-तीन पुरुष एक ही बार, दई वधाई भरत कंवार। एक कहै प्रभु केवली भयो, एक कहै सुपुत्र उपजयो ॥ ८५ ॥ एक कहै आयुध ग्रह-थान, उपज्यौ चक्र रतन वर मान। सुन नृप चितै वृष जग सार, आनंद भेरि दे नगर मझार ॥ ८६ ॥ स्यदन दुरद पयादे तुरंग, पर पुरजन सज रंग सुरंग। चलै धुजा सु दूरतें देख, तव माता मन हरष विशेष ॥ ८७ ॥ जब सुभ भाग्य भये अधिकाय, ग्रान त्याग्यकर सुरग सिधाय। फिर तज सोक हरष जन भरे, निकट जाय लख अचरज करे ॥८८॥

सवैया ३१-पैडी हाथ हाथ ऊंची चढ़कै सहस वीस तहां चैत भूमि देख आदि धूलिसाल है, गोल पौल चारौ दिशा मांहि चार मानस थंभ थंभ प्रतिवापी चार वापी दो दो ताल है॥ खाई जल भरी फूल वाडी फुन कोट हेम विदिशामें बाग चार धूजा नाटसाल है। आगे रूपाकोट फिर तूप नो नो धर्मसाला सभी भूमि गंधकूटी लख न्यारो माल है ॥ ८९ ॥

चाल त्रिभुवन गुरुकी-जै जै जिनस्वामीजी, त्रिभुवन पति नामीजी। शतइंद्र करै शुभ सेव पदाब्जकीजी ॥९०॥ सिंहासन सोहैजी, अंबुजमन मोहैजी। तापै प्रभु अन्तरीक्ष विराजे वेजी ॥ ९१ ॥ इत्यादि अपाराजी, थुत भरत कंवाराजी। करकै मानुष कोठे मैं थिर ठयोजी ॥ ९२ ॥ प्रभु दिव धुन वानीजी, खिरी सब सुख दानीजी। समझै सब ही निज निज भाषा विषैजी ॥ ९३ ॥

चौपाई-श्री जिनभाषे धर्म सुसार, नर सुरेन्द्र शिव पद दातार। दया आद महाव्रत मुनधर्म, त्रेपन क्रियासु श्रावक धर्म ॥ ९४ ॥

छप्पै-अष्टमूल गुणधार बार व्रत नव सुलख्खा, कर तप शक्ति समान बार विधि तत्त्व सुभख्खा। प्रतिमाग्यारै धार दानविध चार शक्ति सम, जल छाणै विधि जुक्त, असन निस्य त्यागनेम जम। कर जिनेन्द्र दरसन बहुरि, शास्त्र सुने मन लाय कर ॥ चारित्र धरै विधि जुक्ति फुनि, क्रिया श्रावक त्रेपन सुकर ॥९५॥

चौपाई-इत्यादिक सु बहोत वृष भेद, भाखै रिषभ सुभे विन खेद। पूछै नृप संसैकर सोध, याकी दया कौन विध होय ॥ ९६ ॥ जीव दरव विध मूरत लखो, गत संबंध परजाय सुभखो। सो परजा है छ परकार, हार वपु इंद्री पण चार ॥९७॥ सासो-स्वास वचन मन येह, अब सुन हार भेद छ जेह। कर निरास ग्रह मुखमें धरै, कवलाहार रु गुज्जिम करै ॥९८॥ अंडा सेवै पंछी दक्ष, तीज्जो लेप खैंच जलवृक्ष। कर्म नरगना नरकन मांहि, चौथो और सु भोजन नांह ॥ ९९ ॥ मनसा पंचम देवनके है, षष्टम नव क्रम केवलिके है। तज परजाय अन्न गति जावै, अनहारक अंतरमें लावै ॥१००॥ तीन समै उत्कृष्ट रूपा छै, तनको ग्रहण हार सोई लाछै। सो नोकर्म हार तुम जानो, अब तन पांच सुनौ बुधवानो ॥ १०१ ॥

छंद अडिल-पकरै पकरा जायरु छेदा छिदत है, गलै सडै नर पशु उदारिक धरत है। इक तनके तन दोय चार बहु बनत

है, लघु गुरु सुर नार नारकसो वैक्रिक घात है॥ १०२॥ मनके संसै निमित भालतें नीसरै, धूम्र पूतला मनुष जेम तनु विस्तरै। उज्जल फटिक समान सुहारक भ्रम हरै, फुन तेजस तन अक्ष दिप्त रव जू करे॥ १०३॥

सोरठा—कारमान तन सोय, कर्म पिंड संग आतमा। जाय भवांतर जोय, सूछम सूछम आदतें॥ १०४॥

सवैया ३१—पांच इन्द्री भेद सुन, भूजल पन जै वायु नित्य इतर निगोद लाख सात सात है। जीवजो अनादि काल सेती वहां रहत है सोई नित्य इतर विन्हार आव जात है॥ कंदादिक भेद जान हरित पत्येक दस फास बावनलाख एकेन्द्रीकी जात है। संख्यादिक दोय इन्द्रीजूं लीकादिते इन्द्री है मख्वी भौंरा चौइन्द्रीय लाख दो दो ख्यात है॥ १०५॥

सोरठा—पंचइन्द्री सुरनारकी, चार चार पशु लाख। चौदे लाख मनुष्य है, सब चौरासी लाख॥ १०६॥ मात पक्ष सो जात है, पितापक्ष कुल जान। होनहार चक्री सुनौं, अब कुल कोड बखान॥ १०७॥

छप्पै—भूम काय बाईस सात जल अगनि त्रिवायव सम हरित ठाईस विकलत्रय सात आठ नव साडे बारा वार जीव जलचर नभचर गन चतुपद दस नव सिरी सर्प नारक पच्चीस ठन सात लाख कोड चौदै मनुष अरु देव छबीस सुजानियै। कुल कोड़ाकोड़ी दोय सब अर्द्ध लाख विन मानिये॥ १०८॥

चौपाई—या चौथावर तन परमान, जोजन सहस अधिक

कछु जान। तन जुगाक्ष द्वादस जोजना, उत्कृष्ट संख्यादिक तना ॥१०९॥ त्रिय इंद्री तन मित्त त्रिय कोस, चतुरिंद्रिय जोजन मित पोस। पंचइन्द्री जोजन हज्जार, यह उत्कृष्ट देह विस्तार ॥११०॥

सवैया ३१—प्रथ्वी कायके सुजीव मसुर समान जलकाय मोती सम गोल अग्निकाय जीवजे। सूईकी अणी समान पोनकाय धुजाकार अनेक अकार और तरुकाय जीवजे ॥ पांचौंके फरस इक दो इन्द्रीके फर्स मुख ते इन्द्रीके फर्स मुख नाक चौ इंद्रीवजे ताके फर्स मुख नांक आंख पंचइंद्री फर्स मुख नाक नैन कान सुन वीसै सीवजे ॥ १११ ॥

छप्पै—फरसै च्यापसै चाप जीभ चौसठ सो वासा। द्रग जोजन उनतीस सतक चठपन क्रम भाषा॥ दुगन असैं नीलोरु श्रवन वसु सहस धनुष फुन। सैनी सपरस विषै कह्यौ नो जोजन श्रीमुन नो रसन घ्राण वो चक्षु फुन॥ सैतालीस हजार गति दोसै त्रेसठ बारह श्रवन विषै क्षेत्र परवान मनि ॥ ११२ ॥

सवैया ३१—पांचौ इंद्रीको आकार भरत भूपार सुन फरस है डंडाकार खुरपीसी रसना। सरसोंको फूल जिसो नासाको आकार तीसो दृग है मसूराकार जौंकी नाली श्रवना॥ ऐसे षट काय जीव सांसो स्वांस ले सदीव पोनको ग्रहन त्यागि त्रस बोलै वचना। जीव पुद्गल संग सबदकी उतपति और सैनी मनयुत गर्भ सैओ उपजना ॥ ११३ ॥

दोहा—एही छै परजाय है, एकेन्द्रीके चार।
पांच असैनी विकलत्रय, सैनी षट ही धार ॥११४॥

छंद शिखरणी–प्रजा पूर्ण धारै, चवपणछहो पर्जयपतासे अपर्यापत्ता है एक जुग धरै पूर्ण करसो अलब्धा सो जानो एक जुग धरै नास लहता असैनी जीवादिकके लब्ध अलब्धा काय लहता ॥ ११५ ॥

चौपाई–यह परजाय धरत है जीव, ताकी हिंसा त्याग सदीव। कैसी हिंसा कहिये सोय, प्रान पीडनो हिंसा होय ॥११६॥

दोहा–कोन प्रान पंचा क्षत्रिय, बल रु स्वांस फुनि आय।
आयु प्रान प्रभु कोन विध, सुनो भेद मन लाय ॥११७॥
बंदीखाने देहमें, बस है थित मरजाद।
सोई आयु प्रमान है, सुण मन नृप अहलाद ॥ ११८ ॥

सवैया ३१–उतकिष्ट आयु सुन प्रथ्वी दोय भेद मांहि बार पाहन बाईस सताईसकी। पोनतीन दस रु सरफ बयालीसरु बहतर खग सब हजार हजारकी ॥ अग्नि तीन उनचास तेइंद्री दिवस षटमास चोइंद्रीरु दोय इंद्री वर्ष बारकी। सोरी सर्पनो पूर्वांग नर मछ कोट पूर्वकर्म भूममांहि फुन मध्य नाना धारजी ॥११९॥

दोहा–भोगभूमि त्रिय पल्ल थित, मनुष तिर्यंच निहार।
तेतीस सागरकी जु थित, देव नारकी धार ॥१२०॥
भोगभूम ये जीव सब, सुर नारका निहार।
सूछम थावर सर्व ही, ए अखंड थित धार ॥१२१॥

चौपाई–ऐसी आयु धरै ए जीव, ताकी हिंसा होत सदीव। खनैरु ताप छेद अरु भेद हिंस्या कारणके थे भेद ॥ १२२ ॥ हिंस्याका है केतेक पाप, ताको भेद कहो प्रभु आप। मेर समान हेमकी रास, कोडो दान करे अन तास ॥ १२३ ॥ एक

जीव फुन हिंस्या करै, तो यह पाप अधिक सिर धरै। इत्यादिक और कथन अपार, कियो आदनाथ विस्तार ॥ १२४ ॥ सोम श्रेयांसादिक मुन भये, जय आदिक निज सुत नृप किये। ब्राह्मी आदि आर्जिका भई, भरतादिक श्रावकपद लई ॥१२५॥ केइयक सम्यकदृष्टी भये, कर नमस्तु निज निज घर गये। भरतपुत्र जन्मोत्सव किया। चक्रपूजि मनमें हरखिया ॥१२६॥ छहौ खंड साधनके हेत, चालौ दलसुख डांग समेत। सुर खग गज रथ हय भृत येह, मानौं साहृत गाजत मेह ॥ १२७ ॥ पूरब दिश साधे सुर आदि, और अनेक महीपत साध। दक्षण जे फुनि पछिम और, जीत मलेछखंड सुबठोर ॥१२८॥ आय अजुध्यापुर परवेष, चक्र सु धसत नांह लवलेस, चक्री चिंता करै मिसाल। जीते छहु खंड भूपाल ॥ १२९ ॥ तब सैनेम भणे जे कुमार, प्रभु भाई नहि आज्ञा धार। तब सब ही पै दूत पठाय, आज्ञा पत्र वांचि सब भाय ॥१३०॥ अठाणवे बाहुबल विना, वृषभसेन आद मुन ठना। बाहुबल नहि मानी आन, तब चक्री कियौ जुध समान ॥ १३१ ॥ बाहुबल भी भयौ तयार, तब मंत्रिननै कियौ विचार। दृग जल मल्ल युद्ध त्रय येह, निज निज ठाला करो सु तेह ॥१३२॥ अब अपने नृपकूं समझाय, दोनौ उठत वरण भू आय, प्रथम नैन जुध होरा होर। देखै पलक मुंदै यह खोर ॥ १३३ ॥ पांच सतक धणु भरत सरीर, पचीस अधिक बाहु बलवीर। चक्री उर्ध अधो मकेस, भरत नैन जल भरो सु लेस ॥ १३४ ॥

सवैया ३१–बाहूबल जात भई फुन सर मांहि दोनों जल जुध करत सु भरत सहारियो, फुन जुधके अखाडे मांहि दोनों ठाडे भये बाहुबल भरतको पौंचिसे अभारियो। तीनों बार भरतेस हारो जीतो बाहुबल बडे वीर विनै त्यागी धृगहू विचारियो. केसको उखार तव दिक्षा धार जोग दियो वर्ष एक हार त्याग ध्यान सुभ धारियो ॥ १३५ ॥

दोहा–नंदा सुत जुत कर भणे, धन बाहूबल सूर।
　　कर नमोस्तु घरकूं चलो, बाजे मंगल भूर ॥ १३६ ॥

सवैया ३१–चक्रीकी विभूति सुन नवनिध चोदै मण दंती रथ लाख है, चोरासी कोट पायक अठारै क्रोड़बाजी छाणवे सहस नारी बत्तीस हजार देखते नृप नायक इत्यादि। विभो अपारता मांहि अलिप्त ईसो जलमें कमल निसो सुध बुध लायक एक दिनमें, विचार करत भरत ऐसें दयावान जाने स्रास्त्र अब धायका। १३७ ॥ बैठो निज धाम जाय भमे हरित काय पेखो द्वार दी खुलाय टेरै सब जनकों, मयासें रहित गये दयावान ठाडे रहे शुद्ध भावके मारग बुलाये सबनको। उनको आदर कीयो जैनी हो जनेऊ दियो 'दरसग्यान' चारित यों कहत वचनकों। तीनो लंड कंध धार बामते दखन द्वार कटताई लंब कार जनीयो सुपनको ॥ १३८ ॥

चौपाई–यौं ब्रह्मचारी भये सुविप्र, चौथो वरण भरथ कियो छिप्र। और सुनो वानारसी भूप, नाम अंक पनसुता अनूप ॥ १३९ नाम सुलोचन कन्याहेत, रचो स्वयंवर मंडप चेत। भरत पुत्र इक

अजै कवार। आये बहुत भूप तेह वार ॥१४०॥ मंडप मै सज सब भूपार, आए मानो देव कंवार, सब दासी करके सिंगार। ल्याय सलोचनकूं ततकार ॥ १४१॥ अलंकारलंकृत सुंदरी, मानौ सुकव काव्य रसभरी। अथवा पूण्यो उगत चंद, सब नृप नेत्र कवलनीवृंद ॥ १४२ ॥ लख लख फूल गये तेहवार, आई कन्या सभा मंझार। दक्षन करमें वर फुल मार, बाम सहचरी कर गहलार ॥ १४३ ॥ देखत जाय सखी तब भणै, वंस नाम कूल पुर नृप तणे। अर्ककीर्ति युध्यापत पूत। वंस इक्ष्वाक सुगण संयूत ॥ १४४ ॥ इत्यादिक बहु भूप कवार, आगै जाय लखौ जैकवार। गजपुर सोम पुत्र कुरुवंस, सोहै सबमें जू खगहंस ॥ १४५ ॥ वरमाला डारी गलतास, अर्ककीर्ति तब रोस प्रकास। भयौ युद्ध दोऊकौ जबै, चक्री सुतकौ बांध्यौ तबै ॥ १४६ ॥ ब्याह सलोचन जै घर गयौ, बहोर सुजाय भरतकौ नयौ। भूप कहै धन धन जै सही, अर्क-कीर्ति अपकीर्त सु यही ॥१४७॥ फुन बाहुबलकी सुध काज, गयौ समोश्रतमें नरराज। तुभ्यं नमः श्री वृषभेस, फिर नाभि वृष वसुसेन गणेश ॥ १४८ ॥ नर कोठै नरिंद्र थित करी, द्वादशांग मुन संख्या करी। गणधर भणै भेद पद तीन, अर्थ प्रमाण रु मध्यम चीन ॥ १४९ ॥

सवैया ३१—अरथ सुपद यह जेते अंक अर्थ होय फुन परमाण पद अंक चार है। मध्यम सुपद अंक सोलासै चौतीस कोर तिहतर लाख फुन सप्त हजार है ॥ आठसै अठासी अंक

ऐसे द्वादसांग पद एकसो बारे करोड़ असी लाख धार है। बावन सहंस पांच कियो विस्तार सब श्रुत ज्ञान मांहि सार मंत्र नमोकार है ॥ १५० ॥ पराकृत वचनमें छंद गाहारूप सोय पैंतीस वरन मात्रा इकसट जानिये। लक्षवार अपै ताहि मन वच तन लाय तीर्थंकर पद पाय एकासन ठानियै ॥ और जगकार जजेताकी गिनती सुकौन तातैं गहू जोग एह यासैं हित मानियै। इत्यादिक कथन सुन जैयादिक मुन भये तब समै पाय कर भरत बखानियै ॥ १५१ ॥

छंद शिखरनी—किये ब्रह्मनंसा, दया ताल हंसा अर्जी ये भला है। तथा कुलचास है ॥ १५२ ॥

चौपाई—गणधर भाखै सुनो नरिन्द्र, दसमे तीर्थ समै हो भ्रष्ट। सुणो खेदकर भरत विचार, कैसे हो इनको संवार ॥ १५३॥ मनपरजय ज्ञानी गणधार, नृपके मनकी जाणी सार। अहो भूप ये खेद निवार, होणहार यों ही निरधार ॥ १५४ ॥

कवित्त—भणे गणेशा काल वशेसा सर्पणि उत्सर्पणी असंक, बीत जाय तब हुंडासर्पणी काल आय एक अति बंक। परै करै विपरीत बहोतसी भरत ऐरावतमें सोजान, काल तीसरेमें होवै जिनश्री जिनवरके सुता बखाण ॥ १५५ ॥

चौपाई—सुरतरु नसे रु वृष्ट पसाय, विकल त्रिय उपजै अधिकाय। चक्री विकल्प जिन त्रियवर्ग, सप्त चरम जुगको उपसर्ग ॥ १५६ ॥

कवित्त—तीन सतक त्रेसठ पाखंडरु विजै भंग चक्री दुनवंस। दुर्षकालमें पुरष सलाका के ठावन होवै नरहंस ॥ अंतराल

सुविधादि सात जिन चार पल्लमें धर्म विनासै। मोलेन्द्र संद्रकै पंचमजथर्मै जिनमतमें बहु भेद प्रकास ॥ १५७ ॥ और तुरकमत होण्हार बहुतातैं खेद करो मन भूप। सुनकर हाथ जोड़ चक्री फुन पूछै बाहुबलको रूप : धर्मचक्र मांथैं चक्री सुन एक वर्ष तिम तजो अहार। प्रभू केवल क्यों नाहीं उपज्यौं नृप तो मनमें सल्ल निहार ॥१५८॥ कैसी रुल्ल कौण विध नासै भरत महि ये सूक्ष्म सल्ल। तेरे नमन करत सो नासैं पावै अवचल ग्यान सुनल्ल ॥ तुरत कैलास जाय नृप देखी वेल जाल बेठौ गिर जेम। मृगबालके तनैप अहि मंदिर करसै दूर करै तन हेम ॥ १५९ ॥ नखत वंदन कर स्तुत भण धन्य २ धारज यह ध्यान। प्रहू भूमिपै भये भूप बहु मेरी मेरी करै अज्ञान ॥ सो सब नास भये पृथ्वी थिर तातै मो अपराध खिमाय इम थुत कर घरकूं गयो तब ही शुकलध्यान सुन बाहु ध्याय ॥१६०॥

बसन्तथल छंद–लह्यो सु केवल त्रिकाल थिर पदा। सु देस बतील हजार सर्वदा॥ विहारते अष्टापद्र आइयौ। जोड़ संख्या तब संघ थाइयौ ॥ १६१ ॥

चौपाई–सात प्रकार मुनी सुर भेस, चौसठ ऋद्ध धरै सु गणेश। चौरासी सु वृषभसेनादि, सो प्रभुको सुपुत्र ही आदि ॥ १६२ ॥ सैतालीसै और पचास, एते पूरब धारी भास। इकतालीसै और पचास, सिष्य मुनी कर सूत्राभ्यास ॥१६३॥ अवध ज्ञानयुत नौहजार, केवलज्ञानी वीसहजार। छैसैवीस सहस वैक्रियी, रिधधारी मुन मन परजयी॥ १६४॥ चौबीसै

सहस प्रमाण, फुन तेतेबांदी रिष जानें। अरजका सु पचास इजार, तीनलाख श्रावक व्रत धार ॥ १६५ ॥ पांच लाख श्रावकनी जान, असंख्यात देवी सुन मान। संख्याते तिरजंच सु कहो, एही संघ च्यार बिध भयो ॥ १६६ ॥ बहुत भव्य-जनको वृष पोष, गिर कैलासथकी लह मोख। तीन बरष और सतरे पक्ष, तीजे काल मांहि रहे दक्ष ॥ १६७ ॥ चौदस माघे अलि तिथ दिना, शिव कल्याणक सुरपत ठणा। गीत नृत्य जग्यादि विधान, करकर देव गये निज थान ॥ १६८ ॥ सुणी भरत तब भयो सुचेत, भू निर्वाण वंदना हेत। चालो संग सहित कैलास, जानत पूजा करी हुलास ॥ १६९ ॥

छंद काव्य—करवायो जिन भोन एक तामेंसु बहत्तर, मिण गण ग्रहजेम समोश्रत रचन महत्तर। तीन चुवीसी बिंबरगतनं उभरु लक्षन, पंचरतनमें कर रु भरत घर गयो तत्क्षन ॥१७०॥

चौपाई—कारण पाय वैरागी भयो, सुतकों राज देय मुन थयो। अंत महूरतमें लह्यो ज्ञान, केवल बहुरि गये निरवान ॥ १७१ ॥ गोतम भाखे सुण बुध कूप, ए सब धर्म प्रवर्तक भूप। कर्मभूमि प्रवर्तन कह्यो, अथवा श्रीजिने थुत ए गह्यो ॥ १७२ ॥

दोहा—आदिपुराण संक्षेप यह, गुरु वसेन वखान।
जिनसेना सिख कहत इम, ठंडीराम सिष्यमानि ॥ १७३ ॥

इतिश्री चंद्रप्रभपुराणमध्ये श्री रिषभदेवचरित्र वर्णनो नाम
चतुर्थ संधिः संपूर्णम् ॥

पञ्चम संधि।

दोहा—वंदौ वीर जिनेस वर, फुन गुणभद्रा सूर।

वीरनंद मुनि भारती, करौ बुद्ध मोहि भूर ॥ १ ॥

चौपाई—गणधर भाखै सुणो नरिंद, बहुरि अजित संभव अभिनन्द। सुमत रु पद्म सुपारस चंद, तब विभ्रम युत हर्ष अमंद ॥ २ ॥ गौतम गणधर कूं सिर नाय, श्रेणिक प्रश्न करै हरषाय। प्रभु श्री अष्टम जिन सुखकार, वाको चरित कहौ विस्तार ॥३॥ इंद्रभूत कहे सुणो नरेस, श्री चंद्रप्रभ चरित्र विसेस। त्रितीय दीपमें आदि गिरेस, अपर देह सुगंधा देस ॥ ४ ॥ शीतोदा उत्तर दिस जान, कहीं गिर तुंग कहीं जल थान। कहिं सरिता कहीं कानन चंग, तामैं वृक्ष पलै अति तुंग ॥ ५ ॥ आम्र रु सुग निबु नारंग, खिरनी खारक श्रीफल चंग। लौंग लायची पिस्ता दाख, जावत्री रु जायफल भाख ॥ ६ ॥ दाड विजामन सैवल सेव, इत्यादिक फल फले अभेव। फूले फूल सु नाना भात, मरुवा मोलश्री विख्यात ॥ ७ ॥ चंपाराय बेल चंबेल, करना केतकी नागरबेल। गुल गुलाब आदिक महकाय, मंद मंद तहां पवन सुहाय ॥ ८ ॥ देस नाम सत्यारथ पाय, बहुत जीव तहां केल कराय। सेही सार्दूल सुडाल, अष्टापद गैंडा मृग स्याल ॥ ९ ॥ हंस परेवा कीरसु मोर, बुलबुल मैना करै जु सोर। मानो देस तणे गुण गाय, तहां मुनीस्वर ध्यान लगाय ॥१०॥ करै आत्माको चितौन, कै स्वाध्याय तथा धर मौन। शुद्ध

दोष चुत चारित मुदा, अन्न कलिंगी नाहीं कदा ॥ ११ ॥
काल चतुर्थ जहां नित रहे, वरण तीन दुज बिन सर-दहै । विना सर्म हो धान अपार, रितु इक ससि रसवै सुखकार ॥ १२ ॥ लाभ सर्व ही पुन्य संयोग, द्रव्य सुहाण दानमैं होय । उन्नत जिनपद सबही नमें, और निचाई इक नाममें ॥ १३ ॥ कोमल अंग सबै नरनार, कठनपणो तिय कुचन मझार । चंचलता इक द्रगमैं लहै, अचल वचन सब ही मुख कहै ॥ १४ ॥ दंड सु एक तुलामें आह, तिक्षण बुद्ध सबनके मांहि । शब्द शास्त्रमें है अपवाद, एक बंध जल सर मरजाद ॥ १५ ॥ मारक नाम विन नही आन, भगे दोष कृष करै किसान । उष्म दिसा पावक ही धार, तापकता रवि किरण मझार ॥ १६ ॥ धीर वीर जन सहज सुभाव, कायरता हिंसामें भाव । क्रोध कषाय न कबहु धरै, अहि मणि धार क्रोध विष भरै ॥ १७ ॥ मान रूप जुवती मन धरै, तिनके घरघर ससि नित फिरै । निज कलंक धोवनके काज, मायाचार धरै गिरराज ॥ १८ ॥ अंदर कठन ऊपर मृदु होय, बेल जाल तरु वेष्टित सोय । दया पालनेमें इक लोभ, अवर न कहुं लोभको क्षोभ ॥ १९ ॥ धर्म जन नहीं दूजो जहां, श्री जिन बिंब विना नहीं तहां । जहां एकांत वाद ना होय, जैनागम जानै सब कोय ॥ २० ॥ नर नारी सुर सुरी समान, देव जन्म चाहे जहां थान । इत्यादिक तिस देस मझार, सोभा और अनेक निहार ॥ २१ ॥

भूमंडल नव मंडल मनो, तहां समस्त उडगाणसे भनो। नर नार्यादि भरे बुध धरे, तिनकी छवि लखि सुर पुर हरै ॥ २२ ॥ ग्राम नगर पुर पट्टन द्रोन, करवट खेट मटंव सुभोन। संवाहन इत्यादिक थान, कुरकट उडवत अंतर जान ॥ २३ ॥ तिनमें श्रीपुर ससिसम लसै, मानों इन्द्र लोकको हंसै। सकल वस्तुको आकर पर्म, समदृष्टी सुर चय लहै जन्म ॥ २४ ॥ नर पद लहै पुरुषारथ साध, तिनमें धर्म विशेष अराध। मोक्ष काज नहीं स्वर्ग निमित्त, घर २ मंगल गीतरु नृत्य ॥ २५ ॥ तहां पुरको प्राकार उतंग, हेम रत्न मय मंदिर संग। परिखा सजल पौल अतिसै, देखत सब जन मन हुलसै ॥ २६ ॥ कूप तड़ाग बावनी बनी, वन उपवन कर सोभै घनी। लक्ष भरो पुर कमल समान, नगर नाम सत्यारथ जान ॥ २७ ॥ राज करै श्रीषेण नरिंद, सोहै मानो दूजो इंद। प्रजा कंज विगसावन सूर, अरिगण निरखत छिपै लखसूर ॥२८॥ अथवा सीसं नायके रहे, बहोत भूप तसु आज्ञा लहै। हय गय रथ चरगण अति भीर, गुणरासी त्यागी रणधीर ॥ २९ ॥ प्रातकाल सामायक करै, कर स्नान पूजा विस्तरै। साध पोषकै करै अहार, दीन दुखी पै करुणा धार ॥ ३० ॥ जस उज्वल जिम ससि चांदनी, तहां देससें फैली घनी। नष्ट विक्रिया जार समान, संका धार बैठी निज थान ॥ ३१ ॥ तारा जाके रानी भनी, श्रीकांता राज्ञीन सिरमनी। हर घर कला ससी रोहणी, क्या सोभा बरनूं ता तनी ॥ ३२ ॥

कुंडलिया—मृदु स्निग्ध लंबे धुने, वक्र केश अलि संग। रानीके मुख कमलकी, ले मकरंद अभंग। ले मकरंद अभंग भाल ससि लुक्क अष्टमो। भ्रकुटी चाप कृष भृंग मघन अति पुष्टसो ॥ मृग दृग जलजकु सेयना, कशुक मयो चुद्रसो। बिंबोष्टी रद हिरा पांत मृदु गंडाऽमगयसो ॥ ३३ ॥ चौ० गिरदाकार बन्या मुखचंद, ठौडी भाल कामको फंद। कंठ गूढ त्रिवली ग्रीवास कंचन कुम्भ तुंग कुच जास ॥ ३४ ॥ विटल स्यामसुख अंबुज जुक्त। सुंदर उदर त्रिवलि संजुक्त ॥ तासमकूप कामको धाम। कट कंठीरव नृपका वाम ॥ ३५ ॥

छप्पै—जंघ केलजु थंभ घुटनटकुने नितंमसु। गूढ कुरम कीलंक चाण करण कर पत्र वेल लसु ॥ स्थनको भार अपार लचक अति गतमरालसो। पिक बच कोमल अंग अंग आभरण भारसो ॥ वस्तर सिंगार संयुक्त इम मनो भारती आप है। ऐसी नरेस तिय चतुर अति सब सोभा कविको कहै ॥ ३६ ॥

चौपाई—नृपकी आज्ञाकारणी सोय, संग चलै छाया जु लोय। लज्जा दया शील बृत धरै, मानौ रतन त्रय आचरै ॥ ३७ ॥ भूषण भूषित सोभित ऐसे, तारन मध्य चंद जु लसै। वसन युक्त तन दुत सु अखंड, मानौ घनमें दामिनी दंड ॥ ३८ ॥ नवजोवन दंपति सुकुमार, भोगै भोग पुन्यफल सार। संवत्सर इक दिन समजाय, सुखसैं काल गमावै राय ॥ ३९ ॥ इक दिन निज मंदिरपै चढो, नृप तिय दृग दिस निरखै ठढो। बालक क्रीड करैन विहार, के आपसमें केंद्र लघार ॥ ४० ॥

तिनै देख मन भयो उदास, नैन नीर भर आयो जास। जो मेरे सुत होतो कोय, केल करत लख अति सुख होय ॥४१॥ पुत्र विना सूनो संसार, पुत्र विना तिय आवै गार। पुत्र विना सज्जन क्यों मिलै, पुत्र विना कुल कैसे चलै ॥ ४२ ॥ जैसे फूल विना मकरंद, कवल नैन संज्ञा दृग अंध। पंडित बिन जू सभा असार, चंद विना जू निस अंधियार ॥ ४३ ॥

कविता—कवल बिना जल जल विन सरवर सरवर विनपुर पुर विन राय। राय सचीव विन सचिव विना बुध बुध विवेक विन सोभ न पाय ॥ विवेक विना क्रिया क्रिया दया बिन दया दान बिन धन बिन दान। धन बिन पुरुष तथा विन रामा राम विन सुत त्यौं जग मान ॥ ४४ ॥

चौपाई—सघन छाह तरु फूलो घनो, रूपादिक संपत यो बन्यौं। फल विन सोभा पाये नाहि, विना पुत्र तिय त्यौं जग मांहि ॥ ४५ ॥ ताको बांझ कहै सब लोय, अरु तसु आदर करै न कोय। विकल अंग जग दुर दुर करै, दुख दलिद्र सब औगन धरै ॥ ४६ ॥ ऐसी महिला सुतको जनै, ताको सब जग ऐसे मनैं। धन्न जन्म याको अवतार, पुत्तर सहित भई यह नार ॥ ४७ ॥ मूरछा खाय धरनपै परी, ह्वै सचेत नीचे ऊतरी। परी सेजपै चित कराय, जू हिमतै वल्ली झुरकाय ॥४८॥ एतेमें नृप घर आईयो, राणीको लखी विस्मै भयो। पूछे राव कोन दुख दियो, सो अब मुगतै अपनो कियो ॥ ४९ ॥ राणी कछु जवाब नहीं दियो, तब दासीनै इम भाषियो। चढी सदन दिख

देख न लगी, पर सुत देख सोगमें पगी ॥ ५० ॥ सुण राजा मन भयौ उदास, राणी लेवे छेऊ स्वांस। रुदन करे अति ही अकुलाय, तब भूपतने उरसूं लाय ॥ ५१ ॥ संबोधनमें वचन उचार, हे कृसोदरी हिया सहार। भावी लिख्या सो निश्चै होय, ताहि निवारि सकै नहीं कोय ॥ ५२ ॥ होनहार सोई परवान, पूरव कृत्य सुभासुभ जान। हे प्यारी तेरे दुख दुखी, मेरे दुखकर परजा दुखी ॥ ५३ ॥ हे ससि वदनी सोक निवार, ज्यौं सबकू हो सुख अपार। जब सन्तोष भयौ सा नार, तब नरेन्द्र गयौ सभा मंझार ॥ ५४ ॥ कर कपोल धर सोच कराय, तब मंत्री पूछें सिर न्याय। कैको नृपति भयो प्रतिकूल, कैको सजि आयौ अरि भूल ॥ ५५ ॥ कै काहू आग्या निरवार, कैको देस साधनौ हार। मनको भेद कहो महाराज, जो जाने तौ करै इलाज ॥ ५६ ॥ हम मंत्रिनको यही सुभाव, तब प्रधानसे बोले राव। और चित नहीं मेरी कोय। पण मम नारी दुखी अति सोई ॥ ५७ ॥ सुतकी चिंता करै अपार, नातर बांझ कहै संसार। ताको भेद कहो मंत्रीस, कहै सचिव हो सुनो महीस ॥ ५८ ॥ पूज कुदेव कुगुरकी सेवा, हिंसा धर्म सुमानै एव। देव धर्म गुरु निंदा करै, सो निहचै बंझा अवतरै ॥ ५९ ॥ पुष्पवती जिन मंदिर जाय, पुत्रवती कुलख खुनसाय। सुत विहीन लख आनंद धरै, सो निश्चै बंझा अवतरै ॥ ६० ॥ पर सुत मरयौ सुनै हरषाय, हरी गयो सुन अति विगसाय। बांझ तिया लख हर्ष सु करै, सो निश्च बंझा अवतरै

॥ ६१ ॥ इत्यादिक पुन्न भव करै, ताको फल प्रभु ऐसो धरै।
ताके लछन कहु बखान, जान भेद नव उपजत थान ॥ ६२ ॥

कवित–सचित जीव जुत नर तिरजंचरु अचित जीव विन सुर नारकी। सचित अचित मिल मिश्र जोन कोउ सीत छठे सातवे नारकी ॥ उष्म आद् पंचम नारक को सीत उष्म मिल मिश्र सु होय। संवृति जान नजर नहीं आवै विवृत प्रगट लखे सब कोय ॥ ६३ ॥

दोहा–कछु दीसै कछु नाहि जो, मिश्र मूल तव एह।
उत्र चुरासी लाख है, फुंन उतपत सुन लेह ॥ ६४ ॥

कवित–गरभज गरभ सेतीसो उपज, तीन भेद ताके पहचान। जरायु जेर सहित इक होवे अंडज अंडेसै इक जान ॥ पोतज विना लेप ही उपन, ऐसे केहर जिनवर होय। नर तिरजंच होय ऐसैं ए, गर्भज भेद जानिये सोय ॥ ६५ ॥

दोहा–फुन उतपाद् सु जानिये, देव नारकी होय।
वाकी सन्मुर्छन जु सब, सभी थानमैं सोय ॥ ६६ ॥

कवित–पहलैं सचित जोन जो भाषी मनुष तिर्यंच तनी सो जान। मानुषनीमैं तीन भेद हैं, संख कुरम वंसा पहचान ॥ संख समान जोन जासकी, सो निश्चै वंझा तिय होय। वंसा पत्र वंसके सम भगत तहां समान मनुष सब होय ॥ ६७ ॥

दोहा–कर्म काछवा पीठ सम, जोन होय जासार।
तीर्थंकरादि महान जन, उपज जास मझार ॥ ६८ ॥

चौपाई–वंस जोन नारी जग मांहि, तामैं सौ वंसा बहु

आहि। त्रिश्री वंझा फल सु विना, कोऊ पुष्प सहित ही गिना ॥ ६९ ॥ ताके भेद सुनो मन लाय, भिन्न २ भाखूं हूं राय। जो जाने तो करे इलाज, सभा सहित सुन हो महाराज ॥७०॥

छप्पै-उठै जोनमैं सूल होय ज्वर अवैं जु श्रोणित तुछ पलासके, फूल रंगके सूभं सु सुशोभित। कवल भरा जल होय सीस दुखै रति करतो ॥ वायु भरे तेलंक सरदतैं कुछरत करतो। ये सर्व दोष कहे वायुके। बहुरि पितके सुन सकल होकर पद् उदरमजलन अति गरमी है तनमें सकल ॥ ७१ ॥ लहु कष्टतै श्रवै धार मोटी जामन सम कवल उष्म अति होय तन स्वेत दूध सम। अब कफके सुन भूप तामैं शूल उठै अति अति पीडा तन मांहि, शून्य पातादि रोस जित जिहरक्त सुपेदी लिये घनो श्रवै, सु मोटी धार अति फुन सुन त्रिदोषतै तीव्र ज्वर। कुछ जो विकटि पीठ अति ॥ ७२ ॥ सूल नीद् अति होई हो यह फूटणि तनमैं। चढौ कवलपै मांस कँप उठै भोगतमैं ॥ स्तमैं दूखै उदर कवलमैं कीडा जानो। पडत वीर्य भख जाय इही विध बांझ पिछानो ॥ फुन व्यक्त निसुन सप्रमेह बाद स्वेत धार जितही झरै। लहुसे ज्या वंझा नारितैं बहुता कवि थोरा झरै ॥ ७३ ॥ वंझा सुत्रती रूप फिरै तन संकुच दुरबल भोग करत जल श्रवै त्रिमुखी भोजन रति परबला गर्भश्रावि सो जान जातका गिरै अधूरा। बालक जीवै नांहि मृत्यु वंझा कहै सूरा ॥ फुनि एक होय ना दोयही फिर होय नांहि लख देखिये। सब काक वंझ वाकूं कहै, वीर्यहीन नर एक ए ॥७४॥

चौपाई—इन सबमें दुषण एकहू नांहि, तो ग्रह दूसण है नर नाहू। जन्मपत्र सन्मधि मिलाय, ऊंच नीच ग्रह देखो राय ॥ ७५ ॥ रवि ससि भोम बुध गुरु शुक्र, शनि राहु केतु ग्रह चक्र। इनके शांति हेत कर यज्ञ, जिनमतके अनुसार बुधज्ञ ॥ ७६ ॥ श्री जिन सिद्ध सूर गुरु साध, वृष श्रुत ग्रह जिन विंब अराध। वासुर छुद्र उपद्रव करै, शांति करै पूजा विस्तरै ॥ ७७ ॥ ए सब दोष साध्य ही जान, अब असाध्यको करूं बखान। पुष्प सु रहित होय जो नार, अथवा रक्त सेत लिये जार ॥ ७८ ॥ आठ दसैं दिन देय दिखाय, बकी वांझ ए लक्षन थाय। मगसे जल मत झरै कबलनी, ए सबही असाध्य लक्षनी ॥ ७९ ॥ इम सब भेद कह्यौ मंत्रीस, अति आनंद भयौ सु महीस। बनमें केल करन चित चह्यो, रुत वसंत लख नृप उमह्यौ ॥ ८० ॥ बाजे भेर मृदंग निसान, पर पुरजन तिय नृपति दिवान। नटी नटत चाले वन मांहि, सुंदर बेलरु तरुकी छांह ॥ ८१ ॥ कहीं लता मंडप बन रहे, कहीं सघन फूल खिल रहे। कहीं ताल जल कंज सु भरै, नंदनवन सम सोभा धरै ॥ ८२ ॥ मंद सुगंध चलै तहां वाय, सबही केल करै मन चाय। क्रीडा कर जब घरकू फिरे, नमतै मुनि आवत दिठ परे ॥ ८३ ॥ जेह अनंतवीरज है नाम, अवधज्ञान धारी रिष धाम। आय भूमपै तिष्ठे सोय, नृप थुन करै सु हर्षित होय ॥ ८४ ॥ धन्य मुनीस्वर हो संसार, दुद्धर तप धारौ अनगार। सहो परीषह धीरज धरो, आप तिरो पर कूंले

तिरो ॥ ८५ ॥ फुनि पंचांग कियो डंडोत, हस्तांबुज गोडन मध होत । भूमि सपरस नमस्तग न्याय, ए पंचांग नमन विध थाय ॥ ८६ ॥ धर्म्मवृद्ध दीनी रिष जबै, धर्म्म भेद प्रभु भाखौ अबै । जीवदया सौ धर्म्म सरूप, जीव समांस कहुं सुन भूप ॥ ८७ ॥

छप्पै–दोय भूमि जल अगनि पवन, नित इत रस धारन। सप्त सप्तलघु गुरु चतुर दस दूव लता गन, तरु लघु गुरु जड पंच जुत निगोद सुपर तिष्ठत । त्रिन निगोद अप्रतिष्ठ विकल-त्रय विधि भूं तिष्ठत, गत जल थल नभ सन्मूर्छ त्रय सैनी असैनी षट ध्रु ढिक । सत्रपर्ये अपर्ये अलब्ध कर, तेतीसके सत हीन इक ॥ ८८ ॥ फुन पण इंद्री जलचरादि त्रय फुन गर्भज षट, उत्तम मध्यम जघन भोग भूं थल नभचर षट । तीन भोग कुभोग भूमि मर आर्ज अनारज, उणचास पातडे नरक सुर त्रेसठि द्वारज । दस भवनपति व्यंतर वसु पंच जौतिसी सर्व मिल, सत त्रेपन पर्य अपर्ज कर तीन सतक षट भय सकल ॥८९॥

काव्य छंद–भये च्यारसै पंच छठो अलब्ध तेरमा, नारि भग कुच कूख नाम नर मूत मै रमा । फुनि मुरदेमें होय असैनी ए विध जानौ, तीनकी दया सु पाल, मुनि ए भांति बखानौ ॥ ९० ॥ त्रस संसार असार पारदिछा कवि है है, नृपके मनकी जान मुनि ए भांतिक है है । होय प्रव्रज्या पुत्र होय वसु राज देय जब, अन्तराय क्यों भयों तासुको भेद जो अब ॥ ९१ ॥ देवानंद एक वैश्य नार श्री कुक्ष सु जाके,

सुता सु नंदा जासु भई कल्यानी मद ताकि। एक दिन अन्य सु नारि गर्भनी देखी तानैं, सिथल संकुचित नजर मंद गत खेद सु तानै ॥ ९२ ॥

चौपाई-ए विध देख सुनंदा डरी, फिर निदान बांध्यो तिह धरी। तरुणपणे ऐसो गत हो, हो उन ही जिन नम हु तोहि ॥ ९३ ॥ धर्मध्यानसे तन तज दिया, उपजी दुर-जोधनके धिया। सो यह तुमरी भई पटरनी, आगे और सुनो भू धनी ॥ ९४ ॥ होनहार तीर्थंकर जोय, ऐसो पुत्र तिहारे होय। इम मण मुन नम भग करगोन, तब राजा आयो निज भोन ॥ ९५ ॥ पूजा दान सु करते भयो, कंचनमई जिनग्रह निरमयो। रतनमई चित्राम विसाल, स्वर्ग मध्य और पाताल ॥ ९६ ॥ कही स्वप्न देखे जिनमाय, कही न्हवन विधि सुर गिर जाय। कही सु दिक्षा दान विधान, कही समोसरण मंडान ॥ ९७ ॥ कही जम्बु कहि ढाई द्वीप, कही सु तेरै दीप महीप। कही सु सिद्धक्षेत्र चित्राम, देखत मोहै सुरनर बाम ॥ ९८ ॥ इत्यादिक सोभा सु अपार, जब जिनमंदिर भयो तयार। सुवरण रतनमई बिंब कराय, करी प्रतिष्ठा संघ बुलाय ॥ ९९ ॥ सो मैं कथन कहां लो कहूं, थिरता नांहि बुद्धि किमं लहूं। फिर अष्टाह्निक आयो पर्व, भूपालादि हर्ष भयो सर्व ॥ १०० ॥ तब प्रभुको कर वर अभिषेक, कीनी नृपने हर्ष विशेष। अष्ट द्रव्यसो पूजा करी, पुन्य भण्डार भरयो तिहु घरी ॥ १०१ ॥ इत्यादि [illegible] विधान, फिर [illegible]

महान । सो अष्टाह्निक कथा मझार, देख लेहु ताकी विस्तार ॥१०२॥ एक दिना राणी निस सेख, गज पंचानन कमला देख । सुपनांतर जागी सो नार, तब ही गर्भ धर्यो सुखकार ॥ १०३ ॥ इन चेहमतें कर निरधार, आलस जंभा अरुचि विकार। कुच मुख स्याम रु लज्जा धरी, भूषण भार सहै नहीं खरी ॥१०४॥ मन्द वचन मन निरधन दान, तब दासी भेजी नृप थान। गोप वचन सुन हरख्यो राय, जू रवितें सु जलज विकसाय ॥ १०५ ॥ बहुजन संग गयो तिय धाम, तब सुपनन फल पूछे वाम । गजतें पुत्र होय बुधवान, हरतें होय अधिक बलवान ॥१०६॥ कमलातें नृप पद अभिषेक, करवावै राजा सु अनेक। इम सुन देवी भई अनन्द, दिन २ गर्भ बढौ जिम चंद ॥१०७॥ सुख सू मास बीत नव गया, इक दिन कछु खेद उपनया। तब शुभ घड़ी जन्म सुत भयो, मानो पुन्य पुंज उपजयो ॥ १०८ ॥ काहु जाय कह्यो दरबार, तब नृप लियो गणिक हंकार। आय जोतसी पूछे राय, कैसो पुत्र भयो सु बताय ॥ १०९ ॥

छप्पै—गणिक विचारो लगनमे खेचर मांहि भयो है, जन्मथान रवि बुद्ध द्विती ससि शून्य क्रिया है। तूर्य गुरु पण केत षष्ट विन सप्त शनि लख, शून्य अष्ट नव दशे भूमि फुनि राह रुद्र अब। भृगु अंत उच्च पट ग्रह सु है, रवि ससि कुज रु बृहस्पत। फुनि शुक्र ससि मध्य मंत्रिय, मध्यम तिमको कहणत ॥ ११० ॥

कवित–सूर्य बुद्ध देखै सप्तम घर वीस विश्व हो तेज अपार। चंद्र आठमें घर कूदेखै, तातैं द्रव्य सुहोय विचार ॥ शुक्र छठा घरकू तिहु देखै, जग्य दानमैं धन अति खर्च। गुरु अष्टम बारम घर देखै हो सुख मात देख हो सुर्च ॥ १११ ॥ प्रथम पंचमे घरकू देखै मंगलतै सु पितासै तेज। प्रथम तीसरेकू शनि देखै तातै तिय सुख नित हो सेज ॥ सप्त पंच तीजे बारम घर देखै राहु शत्रुतै जीत। केतु प्रथम ग्यारस नवमै षट घर देखै ह्वैय पुत्र विनीत ॥ ११२ ॥

चौपाई–इम विचार जोतिसी करौ, मानौ सुश्रीकंत गुण भरौ। तातै श्री ब्रह्मा धर नाम, घनसम दान दियौ नृप ताम ॥११३॥ घर घर गावै सुदर नांर, घर घर भयौ मंगलाचार। दिन दस राय वधाई करी, नितप्रत जिन पूजा विस्तरी ॥११४॥ दिन दिन बाल बढै जिम चन्द, मात पिता मन होय अनंद। क्रम २ करि सिसु भयौ कुमार, पढ़ लीनी विद्या सब सार ॥ ११५ ॥ तर्क रु छंद कोस व्याकर्ण, हय गय वाहन अरु जल तर्ण। बत्तीस लक्ष बल छित काय, ताको भेद सुनो मन लाय ॥ ११६ ॥

काव्य छंद–घट बढ़ होय न अंग जहांके तहां, चिह्न सब प्रथम प्रमाण सु जान रु शुक्रित पुन्य करै सब, रूपवंत कुलवंत सील पालै अति जोधा, सत्य वचन मुख चवै सोचत नमनकू सोधा ॥ ११७ ॥ चित प्रसन्न बुधज्ञान चतुर बहु ग्रन्थ पढ्या है, परदारा पर त्याग मान जन मांहि बढ्यो है। धर सन्तोष

विवेक चतुर अरु मनख सु सज्जन, तुच्छ काम कटवंत सुगुन पूजित सब सज्जन ॥ ११८ ॥ मात भक्ति पित भक्ति भक्ति गुरुजन गुरु आदिक पर उपकारी दान भोगिनीतैं मन आदिक। सदा धर्ममें लीन नित्य पूजै जिननायक। तुच्छ हार तुच्छ नींद चिह्न बत्तीस सुखदायक ॥ ११९ ॥

दोहा—पूरन पुन्य विपाकतैं, बत्तीस लक्षण होय।
श्री ब्रह्मा इस कवरमें, भये इकट्ठे सोय ॥ १२० ॥

चोपाई—नरनारी मनाम्बुजको भान, नृप मंदिर सुन कलस समान। राज धिया संग सिसुको ब्याह, भयो मंगलाचार उछाह ॥ १२१ ॥ रूप शील लावन्य अपार, करैं केल जैसे रतसार। ताके संग सुनाना भांत। जीवन सफल करै दिन रात ॥ १२२ ॥ इक दिन सभा मध्य सु नरिंद, निवसै मानो स्वर्ग स्वरिंद। ताही समै आय वनपाल, षट ऋतके फल फूल रिसाल ॥ १२३ ॥ भेट धार विनवै कर जोर, श्रीप्रभ तीर्थंकर पुर ओर। समोसरण जुत आए आप, सो प्रभु तुमरे पुन्य प्रताप ॥ १२४ ॥ सप्त पैंड जिन सनमुख जाय, करी परोक्ष वंदना राय। आनंदभेरि नगरमें दई, सबहीके दरसन रुच भई ॥ १२५ ॥

छंद इन्द्रवज्रा—तुरंग हस्तीरथ आदि साजा, नारी नर संग मिलाय राजा। चलो पताका लख तजसंवारे, भये समोसर्न विषैं विथारे ॥ १२६ ॥ जलादि द्रव्याष्ट ले तीर्थ पूजौं,

सिद्धादि अष्ट सुगुणत्व हूजो। अनंतदर्शादि चतुष्ट धारी, नमो सु तुभ्यं थुन यौं उचारी ॥ १२७ ॥

नर्गाष्टककी चाल—नर कोठे थित कर भूप सुनि जिनवर वानी, तब प्रश्न कर्यो सु अनूप नर सुर हरषानी। प्रभु जीव तना गुन कोन ताको भेद कहो, मैं पूछत हो कर तौन संसै कुंज दहो ॥ १२८ ॥ प्रभु खिरी दिव्य धुनि सार, भाषा सब देखी सुन सभा हर्ष उर धार तत्वन उपदेसी। यह जीव जिसो गुणधार तिसो थानक पावैं, सो गुण ठाणो निरधार छुणतैं भ्रम जावैं ॥ १२९ ॥

काव्य छंद—गुण थानक ए नाम प्रथम मिथ्या सासादन, दुजा अव्रत सम्यक्त तुर्य पण देस व्रतागन। षट प्रमत अप्रमत अपूर्व कर्म आठमा, नव अनिवृत सु करण सूक्ष्म संपराय दसमा ॥ १३० ॥ हर उपसांत कषाय क्षीण चक्रा संयोगी, फुनि अयोग है अन्त भिन्न भिन्न करो संयोगी। इन गुण ठाणे मांहि भिन्न बतीस ए धरिये, गत इन्द्री अरु काय जोग फुनि वेद सु भरिये ॥ १३१ ॥

सवैया ३१—षष्टम कषाय ज्ञान संयम दर्स लेस्या भव्य द्रग सैनी फुन आहारक मानियै, जीवके समास फिर परजाय प्राण संज्ञा उपयोग ध्यान मिल बीस भेद आनियै। आश्रव रु बंध उदै उदीरणा सत्ता भाव जया जौन कुल—कोडि चाल गुन ठानियै, जीव संख्या आयु मृतु गतादी बतीस भेद ठाणे पै लगाय सब जन्तरमें जानियै ॥ १३२ ॥

चौपई—ए सब जीव विवहार स्वरूप, निहचै आप आतमा रूप। दृष्टि अगोचर शुद्ध विहार, अरु अजीव है पंच प्रकार॥ तामें पुद्गल पहले आन, ताके संग विभाव महान। सो विभाव है आश्रव द्वार, होय एकठा बंध निहार॥ शुद्ध भावतैं ताको रोक, सो संवर जानो भव थोक। तप करि बंध खिरै निर्जरा। मोख शिवालयमें थित करा॥ १३३॥ एही सप्त तत्व है राव, द्रव्य दृष्टसैं ध्रौव्य सुभाव। परजयतैं उतपति अरु नास, जैसैं कंचन चूड़ी भास॥ १३४॥ छाप बनाई तोरा करा, एउ तगत वय तन विस्तरा। सत्य ज्ञान सरधा सम भाव। सत्य भणै समकित परभाव॥ १३५॥ चौगतिमें सैनीकै होय, सो सम्यक जानो विधि दोय। इक निसर्ग अधिगम्य सु एक, होइ सु भाव निसर्ग सु टेक॥ १३६॥ देव शास्त्र गुरुको उपदेश, ए अधिगम्य तनो ही भेष। फुनि छह भेद सुनो मतिवंत, आदि मिथ्यात अनादि अनंत॥ १३७॥ द्वितीये सासादन दृग थाय, समकित वम मिथ्या मय आय। ज्यूं तरु तै फल गिर भू परै, अन्तर सासादन थित धरै॥ १३८॥ याको ऐसो जान प्रसाद, खीर भये च्युत आवै स्वाद। त्रिय मिश्र दृग मिथ्या मिलो, ज्यूं षटरस मिठरस मिलि गयो॥ १३९॥ चौथो उपशम सम्यक जान, तीन मिथ्यातरु चव नंतान। सो मिथ्यात कौन विध देव, भो नृप ताको सुनिये भेव॥ १४०॥

अडिल—जो सरदहे औरकी वोर मिथ्यातजू, अग्रहित इक गृहीत एक विख्यात जू। अग्रहित सब मति प्रकाशको

होत है, ... मानुष गति माहि उद्योत है ॥ १४१ ॥
कुगुरु कुदेव कुधर्म पूजि अरु मानि जू, एक समय इक समय प्रकृति इम जान जू। नरक पशुगति मांही ए नाहीं कहा, सबै मिथ्यात इम जान मनुष सबमें लहा ॥ १४२ ॥

दोहा–समय प्रकृति जिन मत विषैं, यह जानो निरधार।
शांतीक पूजा करो, होवै शांति अपार ॥ १४३ ॥

कवित्त–क्रोध लाख पाहन पाहन थम मान वंस छल विडारु लो: लाभ रंग सम अनंतानु चव तीन मिथ्यात करै जब छोभ नरकमांहि ले जाय सातए इन उपसम जू अहिको मंत्र जथा अहिकू बंध कियो जू खुले दुःख देवै सुअनंत ॥१४४॥

चौपाई–पंचम छयो उपमम सरधान, एक दोय तीन चव जान। छह २ करै रु उपसम और, सो क्षयोपसम सम्यक दौर ॥ १४५ ॥

दोहा–जो सातांकूं छय करै, सो छायक पहचान।
समकित जुत जो वृत धरै, सोई व्रत परमान ॥ १४६ ॥

अडिल–हिंस्या झूठरु चोरी नारी परिगृहे। पांच पापको त्याग सोई वृतको गृहैं। एक देस जो त्याग सोई है अणुव्रती ॥ जोय सर्वथा त्याग सोई है महाव्रती ॥ १४७ ॥

दोहा–पांच पांच है भावना, इक इक व्रतकी जान।
सो रक्षाके कारणे, नगर कोटवत मान ॥ १४८ ॥

अडिल–वचन रु मन दो गुप्त देखके भू चले। देख उठावै धरै समित ए दो मिलै ॥ भोजनादि जो खाय अलादिक लख

सुज्ञान ॥ १५८ ॥ प्रभु वंदन कर घर आईयो, राजभिषेक सुजन मिल कियो। तब चतुरंगी चमू मिलाय, विजयकरण चालो हरषाय ॥ १५९ ॥ पूरब पच्छम दक्षन उत्र, च्यारूं दिसके जीते शत्रु। भेट लेय नृप घरकूं आय, सुखसूं राज करै हरषाय ॥ १६० ॥ या विध सुखसू काल विताय, इक दिन उतम समै सु आय। पून्यम शुक्ल अषाढ़ सुपर्व, करि उपवास जजै वसु दर्व ॥ १६१ ॥

दोहा—श्री जिनकी थुत कर विविध, भई अठाई अन्त।
पुन्य उपाय सुमहल पर, तिष्ठत हर्षत वंत ॥१६२॥
दसौं दिशा अविलोकना, उलका पातल खंत।
तब अनित्य संसारकूं, जानत भयौ तुरंत ॥१६३॥

जोगीरासा—तन धन राजपुत्र पर जन श्रय, देखत देखत नासै। यातै अथिर जानिये चेतन, कर अनुभव अभ्यासै। इन्द्रादिक थिर नाहीं जगमैं, सरण कौनकी ठानों। विवहारे परमेष्टि सरण है, निश्चै आतम जानौ ॥ १६४ ॥ अरु संसार मांहि ये प्राणी परकूं आपा हेरै, ए अचरजकी बात देखियै। वाहन गहि मणि गेरै, आदि अनादि एकला चेतन। तीनलोक तिहुकाला। भिन्न सदा पुद्गलमें वसि है, जूं लोहेमें ज्वाला॥१६५॥ सात धात उपधात सात तन असुचि अपावन न्यारा। आश्रवमें वह भेद कहे हैं राग द्वेष मोह भारा ॥ तामैं तेरे ठगनित ढग हैं गृहस्थ पनेमें माई। जूवा आलस शोक भयकू कथा कुतूहल आई ॥ १६६ ॥ कोप कृमण अज्ञानता भ्रम निद्रा

मद मोही । दूजा चोर, तन मंदिर बैठे, पंच रतन ले खोही ॥ धर्म कर्म शुभ सुजस बडाई, अरु धन प्रगट चुरावै । आलस ठग उद्यमकूं लूटै, सिथल अंग हो जावै ॥ १६७ ॥ ए विध बाहर बहुर अन्तर धर्म वासना नासै, शोक संताप तीसरा ठग है । यातैं वृष विधि नासै, रोवै पातिक तेरे दिन तग आठ बर्स तक मर है । यातैं घाट मरै जो कोई, तास विसेस उचर है ॥ १६८ ॥

दोहा-दस नव आठ रु सात षट, पंच चार अरु तीन ।
एक २ दिन बस अति, घटत घटत इम चीन ॥१६९॥

जोगीरासा-सूतक दिन दस तकका जानौ, शुद्ध समान कुटम्बा । त्रिय साख तक कह्यौ बराबर, दसम न्हवन अविलंबा ॥ चौथो भय ठिग सुलकू लूटै, उर कंपे ता आये । सात प्रकार जानिये भाई, धर्मोंय मन सिजाये ॥ १७० ॥ पणमू चोर मिथ्या घुन कर है, जबलौ मग्र सुयामें । धर्म ध्यान वासना रंचिक, कबहु न पावै तामें । छठौ काठियो कौतूहल है, विभ्रम सु हरषावै । मृषा वस्तुकू सतकर जानै, सत्यारथ नस जावै ॥ १७१ ॥ सप्तम क्रोध अग्नि सम आतम, आपापरकू दाहै धर्म कर्म दोनों ही नासैं, जगमे निंदा लाहै कृपन बुद्ध अष्टम रट पारो, प्रघट लोभ ही भासै । लोभमांहि ममता ममतामें, धर्म भावना नासै ॥ १७२ ॥ नवमें ठग अज्ञान उदै तै, हो अपराध अपारा । जो अपराध पाप है सोई, जिन अघ तिन वृष छारा । दसमो भ्रम वासि अशुभ कर्म कर, सो

दुर्गति पूर नासै। इम ठम नींद उदै नहीं चीजै, मन अब इम मद भासै ॥ १७३ ॥ आरम मद वसु मिथ गुठे, ०१, ऐ करि हो सो करि है। जिनै रतनको नास होय जब तब कुयाधि अब सरि है। भरम मोह सुविवेक विनासै, नर पशु धर्म न धारै। इमै रत्नत्रय पातै जगदिप, तेरै तीव निहारै ॥ १७४ ॥ इत्यादिक आश्रव बहु जानौ, फुनि संवरकूं भावै। राग दोष शोक ममता गहै, कर्माश्रव रुक जावै ॥ पिछले कर्म खिरैं सु ध्यान तप, केवलि निर्जर होई। चौदे राजू ऊंच लोकमैं भिन्न आतमा होई ॥ १७५ ॥

दोहा—ज्ञान आतमा चिह्न है, अगनि चिह्न जू धूम्र।
चेतन विन कहूं ज्ञान ना, तेजी बिन नव संदु ॥ १७६ ॥

सवैया ३१—आठ जवका अंगुल अंगुल असंख्य भाग तन ज्ञान अंकके असंख भाग धरै है। छासठि सहस फुनि तीनसै छतीसवार अंतरमहूरतमैं जन्म मृत्यु करै है॥ एक स्वास मांहि ठारै ताके स्वास छतीसपै पञ्चार्मीरु कीजा अंग तहां दुख भरे है। नंतानंत काल ऐसी निगोदमै निकसि कै भू जल अगनि वायु तरु तुछ गुरहै ॥ १७७ ॥ कठन कठन वे ते चौ इंद्री जनम पायो दुल्लभ असैनी तातैं सैनी तन लहोजी। जल थल नभचर नरक असुर नर म्लेच्छ आरज नीच ऊंच कुल लह्योजी ॥ कठिन कठिन तामें जैन धर्म सैली ज्ञान शुभ ही सु पाय तातैं गुरु ऐसैं कह्योजी। समझि समझि त्याग अवधिवै भोगनिकूं तातै तुम बहुरि निगोद दुख सह्योजी ॥ १७८ ॥

छंद पद्धड़ी–इत्यादि भावना भूप भाय, तब ही हरषित चालो सु आय। वर भेट जोर कर सीस न्याय, आए श्रीप्रभ जिन नृप सहाय ॥ १७९ ॥ तब हर्षयुक्त नृपरथों प्रचार, प्रभु थुन कर पूजे बसु प्रकार। थित नर कोठै कर सुनो धर्म, तब गयो मोह अरु सकल भर्म ॥ १८० ॥ फुनि श्रीकांति सुतको बुलाय, दियो राजभार ताको सुगाय फुनि राजनीत जगरीत होग, समझाई ताको त्रिविध सोय ॥ १८१ ॥

छंद छप्पै–सिथल मूल दृढ करै फूल चूंटै जल सींचै। ऊरधडार निवाय भूमिगत ऊरध खिचैं ॥ जे मलीन मुरझाय टेकदे तिन्हैं संवारै, कूडा कंटक गलित पत्र बाहर चुन डारै। लघु वृद्धि करै भेदै जुगल वाडि समारै फल भखै, माली समान जो नृप चतुर सो विलसै संपति अखै ॥ १८२ ॥ पुनः प्रात धर्म चितवै सहज हित मंत्र विचारै, चर चलाय चहुं वोर देसपुर प्रजा संभारै। रागद्वेष दोऊ गोप वचन अमृत सम बोलै, समै ठौर पहचान कठिन कोमल गुण बोलै। निज जतन करै संचै रतन, न्याय मित्र अरिसम गिनै। रणमें निसंक ह्वै संचरै, सो नरिंद्र रिपुदल हनै ॥ १८३ ॥

दोहा–इत्यादिक सज्झाय सुन, श्रीप्रभक्कू सिर नाय।

जग अगाध दधि मैं तरी, दिक्षा यौ जिनराय ॥१८४॥

चौपाई–[illegible] धन्य हे राय, ये परचक्र [illegible] [illegible]। [illegible] जोड़ नृप [illegible], केर [illegible] महा–

व्रत धार ॥ १८५ ॥ तेरह विधि चारित आदरौ, दुद्धर तप कर वपु कृस करौ। सही परीषह धर सन्यास, श्रीप्रम गिर पर परम हुलास ॥ १८६ ॥ देह त्याग लिय सुर्ग सु धर्म, श्रीधर नाम विमान सुधर्म। श्री प्रमदेव भयौ तिह थान, प्रभा पुंज जूं दामिन मान ॥ १८७ ॥ उठौ सेजसैं सब दिस ताक, चक्रत चित्त निमेष दृग थाक। है प्रत्यक्ष धो सुपना एह, सुन्दर नरनारी बन गेह ॥ १८८ ॥ तब ही अवधिज्ञान सू जान, तप तरु सुफल फलौ यह आन। जाय जिनालय पूजा करी, धन्य जन्म मानौ तिहि घरी ॥ १८९ ॥ अणिमादिक वसु रिद्ध सु पाय, ताको नाम अर्थ सुन राय। अणीमा सैं तन अणु सम करैं, महिमा तै तन नग सम धरैं ॥ १९० ॥ लघिमा देह तूल सम राच, गिरिमा भारी उठै न कदाच। प्राप्ति तैं भूतै थित होय, मेर चूलिका फरसै सोय ॥ १९१ ॥ प्राकामित तनै परभाव, गिरपै चलै जसै नभ मांह। जलपै थलवत थल जल जेम, सुन ईसत्व सप्तमी येम ॥ १९२ ॥ हरि फनेप चक्री सम ठनै, वा त्रिलोकपति आपहि बनै। वसुता तै सब बस करै, चाहै जो नर सुर रहसिरै ॥ १९३ ॥ इम सुर पद पायौ सुखराम, दोय पक्षमें ले उस्वांस। दोय सहस बरस गये चाह, भोजन भुंजै मनके मांहि ॥ १९४ ॥ अनुपम अमृतमई अंकार, तासु तृपै देव कवार। दो दध आयु प्रथम भू औध, तावत करै वैक्रि दध ओघ ॥१९५॥ काय मोता नर नार समान, लेश्या पीत भाव

पहचान। पूरव पुन्य उदैतैं एव, भोगै भोग सु श्रीधर देव ॥ १९६ ॥ सुनि श्रणक ए धर्मप्रभाव, कहा स्वर्ग हो शिवको राव। पुत्रार्थी श्रीषेण नरिंद, वृष सेवत लह्यौ सुत गुण वृन्द ॥ १९७ ॥

दोहा—तातैं मन वच काय कर, सेय धर्म जिनराज।
गुणभद्राचारज कहै, सुत संपत पद राज ॥ १९८ ॥
लहै स्वर्ग अरु मुक्ति फुनि, या सम नहिं जग और।
वीरनंद मुनिराज वच, हीरालाल निहोर ॥ १९९ ॥

इतिश्री चंद्रप्रभपुराणे प्रथम भव श्रीब्रह्मराज द्वितीयभव प्रथमस्वर्ग श्रीधरदेवः वर्णनो नाम पञ्चमः संधिः संपूर्णम् ॥

षष्ठम संधि।

दोहा—षष्ठ गुणी वय वृद्ध सुत, वंदूं सिद्ध महान।
सुनो भव्य चित लायकर, षष्ठम संधि कथान ॥ १ ॥
गुणभद्राचारज प्रणम, वीरनंदि मुनिराज।
भणि चन्द्रप्रभ काव्यमें, या विधि कथन समाज ॥२॥

चौपाई—गौतम गणधरकूं सिर न्याय, श्रेणिक प्रश्न करै हरषाय। स्वामी सो सुर चय कित होय, ताको भेद सुनावो मोय ॥ ३ ॥ गणधर भाखै सुन भूपाल, दीपधातुकी खण्ड विशाल। विजय मेरु तै दक्षण भरत, छहो खंड मंडित मन हरत ॥४॥ तामें आरज खंड मंझार, सर्पिणी उत्सर्पिणी अपार। बीते काल कल्प सो नंत, इक सर्पिणी छह भेद धरंत ॥ ५ ॥ चार तीन दो कोड़ाकोड़, सहस बियालीस दिन इक और। इकीस इकीस सहस प्रमान, ऐसे छहों काल थित जान ॥६॥ भोग सुभूमि आदि त्रियकाल, उत्तम मध्यम जघन्य विशाल। तीन दोय इक पल्ल सुआय, तावत तुंग कोस है काय ॥ ७ ॥ कल्पवृक्ष दस घर २ दिखै, दान तनो फल सब ही चखै। ऐसैं भोगभूमि या जान, तीन काल यह रीति पिछान ॥ ८ ॥ चौथो काल आय जब परै, कर्मभूमि सब विधि विस्तरै। तब ही पुरुष सलाका होय, धर्म कर्म विधि जानै सोय ॥ ९ ॥ अरु मुनि श्रावक वृष विस्तरै, इम आरज खण्ड रचना धरै। तामधि कौसल देस ललाम, मानो भूमि

तिलक अभिराम ॥ १० ॥ ताकी उपमाको कवि कहै, वन उपवन कर सोभा लहै। तहां जंतु बहु केल करंत, आम्र केसरी जुत सोभंत ॥ ११ ॥ किरत सुकिरत विहग मुख धरै, तिस गज गण मद झरना झरै। फैली सकल आण मकरंद, आवे मधुर वृंद आनंद ॥१२॥ बैठ कपोल करै झंकार, तिन सुन शब्द उठै किलकार। मुक्ताफल तिन मस्तकमाहि, ऐसे गजन जूथ विचरांहि ॥ १३ ॥ केसावलि जुक्त कटि छीन, लाबी पूछ सीस धर लीन। ऐसे केहर धुन सुन करी, भजै पवनतैं जू घन टरी ॥१४॥ वेल जाल विष्टन कहूं भूम, मानो कंचुकी धारै झूम। जल निशाण कहुं विस्तरो, मानो नाम काम जल भरो ॥१५॥ नदी वहै मनु सुन्दर हार, पर्वत कुच इव सोभा धार। भाल तिलक सू‍ज सुन्दरी, भू तिय सुर नर पसु मन हरी ॥ १६ ॥ इत्यादिक सोभा जुत देस, तामै नगर अजुध्या वेस। स्वर्ग सुलोक हर्ष कर मनो, करी सुभेट भूमिपुर ठनो ॥ १७ ॥ पाषासाल द्वार कंगूरे, सजल तुंग सुंदर मद जरे। जिनमंदिर जनमंदर भरी। नरनारी मानौ सुर सुरी ॥१८॥

सार्दूलविक्रिडित छंद—है राजा अजितंजय अरिजय मक्रेश-कांत। विद्यावान निधान धीर अजरं॥ इत्यादि सोभा लिपु मंत्री फौज भंडार दुर्ग सबलं। चातुर्य सोभा सही तारा मागुण धाम धाम सकल मुकुटंगु राजसाल ही ॥ १९ ॥

चौपाई—नाम अजितसेना अति लसैं, रतिसम रूप सची वचि खिसैं। भोग भोगमें मनके चाव, हसि हसि पियसे बात

कराय ॥ २० ॥ फुनि कछु बात सुनो विख्यात, सुतकी चाह धरै दिन रात। स्वाति बूंद ज्यूं चात्रग चहै, तब निज पतिसे ऐसे कहै ॥ २१ ॥ मो पापिनी संग तैं पिया, पुत्र बिना तुमकू दुख हुया। तब नरेस तांसू इम कहै, पुन्य उदै विन कैसे लहै ॥ २२ ॥ कैसो पुन्य कोन विधि होय, अरु ताको फल कैसा होय। पूजा दान करै अधिकार, व्रत नाना विधि पालै नारि ॥ २३ ॥ इत्यादिक है पुन्य अपार, विखै कषाय करै परिहार। दया क्षमारु धरै वैराग, या विध पुन्य करै अनुराग ॥ २४ ॥ धन अरु धान्य पुत्र संपदा, स्वर्ग रिद्ध फुनि गद हर तदा। इत्यादिक सुपुन्य फल जान, सुन राणी सुहर्ष उर आन ॥ २५ ॥ धर्म विखै मन वच तन लाय, पूजा करै जिनालय जाय। दान देय मन वांछित सदा, शक्ति समान गहै व्रत तदा ॥ २६ ॥ षट रुत संबंधी जे भोग राजा राणी पुन्य संजोग, भोगै कामदेव रति यदा। मन वंछित सुख भोगै सदा ॥ २१ ॥

मालिनी छंद—इक दिन निसि मांही दंपत मध्य सिज्या, मगन युगम भोग रात्र बहु तीसु छिज्जा। चिर रतिवन खेदं सुप्त निसांति मांही, लखत सुपन सप्त हर्ष राणी लहांही ॥२८॥

चाल छंद—सो श्रीधर देव चया है, इन गर्भमें आय रहा है। उदयाचलपै रवि आया, तब ही अंधियार नमाया ॥२९॥ भयो प्रात गान सुन रानी, उठि सामायिक विध ठानी। फिर न्हवन विलेपन कीनो, शोने अंबर पहरीनो ॥ ३० ॥ आभूषण

सब ही साजे, जु ससि समीप रिष राजे। इम कर सिगार दरबारे, गई सखीय संग ततकारे ॥ ३१ ॥ लखि आदर भूपति कीनों, अर्धासन बैठन दीनों। कर जोड़ नई मातको, फिर पूछे फल सुपनाको ॥ ३२ ॥

श्लोक—करिंद्र वृषभं सिंहं, चंद्र सूर्यं च संखयं। कुंभोदिकं मया दृष्ट्वा, कथितांत शुभाशुभं ॥ ३३ ॥

लावनी छंद—गज देखतैं होय पुत्र जू, वृष जिन दर्शनतैं। गौ सुतके देखें तैं गुण, निधि बलि हर दर्शनतैं। ससितैं सोम तेजस्वी रवितैं सुपनावली जैसा कहै, भूप सुंदरी सुनौं इन सुपनन फल ऐसा ॥ ३४ ॥ संख लखन तैं चक्री, पद फुनि संख चक्र तनमैं। इत्यादिक सुभ लक्षन होवै, लखन हर्ष मनमैं। जल पूरन घट देखनतैं, द्रय निध नायक जैसा। कहै भूप सुंदरी सुनौं इन सुपनन फल ऐसा ॥ ३५ ॥ गर्भ वृद्ध जूं शुक्लपक्ष दधि निसदिन सुखमैंजी, वीत गए सुमास नव ऐसे सुभ दिन घडिमैंजी ॥ जन्म भयो सुत दान दियो नृप घन वर्षा जैसा। कहै भूप सुंदरी सुनौं इन सुपनन फल ऐसा ॥ ३६ ॥ दस दिन राय बधाई कीनी को उपमा देरी। घर घर मंगल चार बधाई गावै तिय टेरी ॥ हर्षे सब सज्जन मन धुर धुन धर्म खडो जैसा। कहै भूप सुंदरी सुनौं इन सुपनन फल ऐसा ॥ ३७ ॥

दोहा—फिर नृप गणि बुलाइयो, लगन सोधि भाषंत।
अजितसेन भणि नाम फुनि, सब ग्रह उच्च लसंत ॥ ३८ ॥
द्वितीया ससि सम तन कला, बढत बाल दिन रैन।
ओं आदि विद्या सकल, पढी सज्जन सुख दैन ॥ ३९ ॥

चौपाई—एक दिना नृप सभा मंझार, बैठे मानो शक्र निहार। मंत्री आदि सकल उमराव, बैठे मानो निज्जर राव ॥ ४० ॥ ऐते नरनायक सुत आय, मानो मारि तनुज सुखदाय। देखत विनय करै सब जना, हर्ष अमंद आनंदित मना ॥ ४१ ॥ ता छिन सोभा कौन कहाय, इंद्र सभा मानो बैठी आय। तब इक चंद्ररुची सुर कोय, आय सभा लखि चकित होय ॥ ४२ ॥ पूरब वैर प्रसंग सुपाय, मोहित करी सभा जुत राय। निद्रामैं घूमैं अरु गिरै, सुध बुध कछु नाहीं दीठ परै ॥ ४३ ॥ तब सुरनै ऐसे लिख लियौ, भूप तनुजकूं हर ले गयौ। पिछै सकल सुचेत लहांहि। देखै राजा नंदन नांहि ॥ ४४ ॥ मूर्छा खाय धरनपर परौ, मानौ चेतन ही नीसरौ। तब कीनो सीतल उपचार, भयौ चेत नृप करै पुकार। हा हा कुंवर गयौ तू काय, तो विन मोकूं कछु न सुहाय। सिर छाती कूटै अकुलाय, सुनत सभा सब रुदन कराय ॥४६॥ तबही खबर गई रणवास, सुण राणी तब भई उदास। परी भूमिपै मृतक समान, चंदन छिरक रू पवन सुठान ॥४७॥ जब सुध आय सु रोवन लगी, अंबरफाड सोकमैं पगी। उदरकूट तन नखन विदार, जित तित रुधिर चमक दुति धार ॥४८॥ कंचन तन जूं मानक जरैं, अश्रुजन करि गंगा विस्तरै, करि पुकार सुत को ले गयौ। मोहीकूं सुंमारि किन गयौ ॥ ४९ ॥ हा निरदई दया छिटकाय, ठूंठी खडग चलाई आय। नाजी ईन गई जमधाम, ऐसे रुदन करै नृप वाम ॥ ५० ॥

छप्पै—वा पूरब भव मांहि कीर लाली फलाल भज। मृग पति मृग हय वृषभ मेख कूकॅट कूकर अज॥ पारेवा मयूर हंस मंजार मगेरा, नाग व्याघ्र कपि नवलरीछगे डान रहेरा। इम एक दोय बासबनके बाल विछोवा मैं कियो॥ सो पाप बंध उदय आय अब मो पुत्र विछोवा इम भयो॥ ५१॥

चौपाई—यूं तिय नृपति करे अफसोस, निज २ कर्मनकूं दे दोस। नृप समझायो बहु परधान, होणहार याही विधि जान॥ ५२॥ याते सोक करो मति राय, देखो नभ में मुनवर जाय। चारण रिध धारी है सही, नाम तपो भूषण गुण मही॥ ५३॥

दोहा—वाही क्षण उतरे जती, राजा भक्ति भराय।
ओढी वस्त्र उतारिके, भूपर दियो बिछाय॥ ५४॥
आय साध तिष्ठे जहां, तब नरिंद्र कर जोर।
सीस नांय गुरु चरण ढिग, थुत कीनी सुबहोर॥ ५५॥

काव्य—धन्य २ मुनिराज दर्स देखत सुख होहे। षटभूषण विन सरल चित्त जूं बालक सोहै॥ बन ही नगर समान कंदरा महल अनूपम। विकट कठिन भू सेज कंटक कर सु फूल सम॥ ५६॥ समता सखी समान सुबुध नारी अति सुंदर। नाना अर्थ विचार करै जिम भोग पुरंदर॥ दीपक ससिकी किरण मित्र सारंगसु जानो। तपमई असन करत नीर है निर्मल ज्ञानो॥ ५७॥ अंबर चारित युक्त मूलगुण भूषण सोहै। उत्तरगुण सिंगार सहित सुरनर मन मोहै॥ बेन कवच सखी अंग ध्यान

आयुत्र जु सभारै। तीन काल रणभूमि मांहि विधि अरि संघारे ॥ ५८ ॥

दोहा—इत्यादिक अस्तुत विविध, इंद्र करै चिर कार।

तो उन तुम गुण पार लहि, हम पावै किम पार ॥ ५९ ॥

पद्धडी—तब धर्मवृद्ध मुनवर सुदीन। कर जारि भूप पूछन सुकीन ॥ प्रभु धर्मतनो करिये बखान। गुरु कहै सुनो नृप बुधवान ॥ ६० ॥

ढाल दोहामें—दान सील तप भावना पूजा आदि विधान। धर्मतने बहु भेद हैं, करहे जे बुधवान ॥ दर्श करो जिनबिंबको ॥ ६१ ॥ चितवन प्रोषध सहस फल लख प्रोषध चालंत। कोटि जिनालयमें गए, कोडाकोडि अनंत ॥६२॥ दर्श करो० ॥ साध वंदनाको कह्यौ, पोषध सहस प्रमाण। तातैं सहसगुणो सुफल, गणधरको जुत ठाण ॥६३॥ दर्श करो० ॥ तातैं सहस गुणो सुफल, केवल दर्शन जान। तातैं सहस गुणो सुफल तीर्थंकर भगवान ॥ दर्श करो० ॥ ६४ ॥ तातै सहस गुणो सुफल वंदन सिद्ध ठनंत। तातैं सहस गुणो सुफल नमि जिन बिंब कांत ॥ दर्श करो० ॥६५॥ वंदक सुरनर सुख लहै, क्रम क्रम शिव पुर जाय। निंदक दुःख पसु नर्क लहै, बहुरि निगोदै जाय० दर्श० ॥ ६६ ॥ मनवच काया तै करै, प्रोषध एक जु कोय। नरक पसु गति छाडिकै, सोपावै सुर लोय ॥ दर्शकरो० ॥ ६७ ॥ पुनः त्रसजु व इन्द्री आद ही, परै असनमें आय। सूछम दिठ नाहीं परै, भखत उदरमें जाय। निसि भोजन बुध

त्यागिये ॥ ६८ ॥ खादम अन्यादिक विविध, फुनि लौंगादिक स्वाद। लेय सु चटनी चाटनी पेजल दूध सु आदि, निसि भोजन बुध त्यागिये ॥ ६९ ॥ दोय घड़ी दिनके चढ़े, दोय घड़ी दिन अंत, तावत भोजन कीजिये। पीछे सुबुद्धि तजंत ॥ निसि० ॥ ७० ॥ अधिक अंधेरे जु दिन विखै, घन आंधी संजोग, अथवा गृह अंदर विखै। भोजन नांही जोग, निसि भोजन बुध त्यागिये ॥ ७१ ॥ बाल भखे सुर भंग हो, माखी वमन कराय। जूतैं रोग जलंधरो, मकड़ी कुष्ट उपाय ॥ निसि० ॥ ७२ ॥ ए दुख नैना देखिये, याही भव मांहि। पर भव नर्क निगोद है, नाना दुख लहाय ॥ निशि० ॥ ७३ ॥ पुनः जल छाणो ही पीजिये, बिन छानों नहीं लेय। तामैं जीव जिनंदनै, भाखे सो सुन लेय ॥ श्रावक जल इम आचरौं ॥ ७४ ॥ एक बूंदमैं जीव जे, धरै कबूतर जोन। जंबूदीप नमावही, अधकी भाखै कौन ॥ श्रावक जल इम आचरौ ॥ ७५ ॥ कोट औषध इकठी करै, ताकौ अरख निकार। तामैं तृण भरि लीजिये, सबको अंस निहार ॥ श्रावक० ॥ ७६ ॥ इम थावर जलबूंदमैं, फुनि त्रिस जीव अपार। सूछम दिठ नाही परै, केई दिष्ट निहार ॥ श्रावक० ॥ ७७ ॥ छतीस अंगुल लंब पट, चौडो चोवीस जान। दिढ दोहेसे कर छानिये, जतनसूं हे बुधवान ॥ श्रावक० ॥ ७८ ॥

दोहा—श्रावककी त्रेपन क्रिया, मुख्य तीन ए जान।
केतेक दिनमें पुत्र नृप, मिलसी हे बुधवान ॥ ७९ ॥

इम कहि मुनि नभ मग चले, नृपतिय धर संतोष।
आगे श्रेणिक भूप सुन, कहुं कथन कछु जोष॥ ८०॥

चौपाई—निर्जर राजकंवर ले गयो, महा भयंकर बनमें गयो।
तहां सरोवर एक निहार, तामें बालक दीनो डार॥ ८१॥
नीट नीट निज पुन्य वसाय, निकसि बाल वन देखि डराय।
बेल जाल कहीं वृक्ष उतंग, सिक्काथल कहुं भू भृत चंग॥८२॥

पद्धड़ीछंद—कहुं जल निवाण कहु अस्त पुंज। कहुं २ त्रण पल्लव पत्र पुंज॥ कहुं मुक्ताफल विखरे अपार। सो रक्तयुक्त नैनन निहार॥ ८३॥ मानो नभमें मंगल विमान। कहुं सुष्क वृक्षपै काक आन॥ दुर शब्द करै तमचर अनेक। मग भगे फिरै गजहर अनेक॥ ८४॥ मार्तंड लखत जूं तम पलात। वौं मृग छौनाकी कौन बात॥ मय भरे सुनी धुनि सार दूर। इत्यादि जीव तहां भरे क्रूर॥ ८५॥ इम देख सुवन झरझर चलंत। तब इक डूंगर सुंदर लखंत॥ जब वा देखन चढने लगोय। तब एक पुरुष आयो सु कोय॥ ८६॥ हय काल वरण विकराल रूप। नख कच कठोर मानो जम सरूप॥ द्रग लाल कीये मगरोकिलीन। अरु कहैं बालसैं अरे दीन॥८७॥ तु कौन कहाकू जाय मूढ। सुर खचर पशु जे सबल मूढ॥ ते नगपै जाय सकै सुनांहि। तौ तू कैसे समरथ लहाहि॥८८॥ अरु जो तू बल भारै अपार। तौ मोसै जुद्ध सु कर अबार॥ इम कठिन वचन सुन राजपुत्र। तब बहुरि तासकू देय उत्र॥८९॥ कहावके सुदुप लख स्वाम जेम। मो आगे तू कीटक सु तेम॥

मम भुजा पराक्रम लख अपार। तातैं पहले तू कर प्रहार ॥९०॥

कवित्त–अजितसेनके वचनते, लसे लगत क्रोध दव उठो अनंत भीच अधर दसनन मध तब ही। मुष्टि प्रबल अति दृढ बांधत इम वनचरनै दई कुंवरकै भयो सब्द चपलाजू परी। अजितसेन तब युद्ध करो अति टस्यो नांहि जैसे भूधरी ॥९१॥

चौपाई–मानो जमके बालक दोय, भिरै परस्पर डरै न कोय। भुजबल सेती राजकुमार, कियो युद्ध चिरकाल अपार ॥९२॥ खेद खिन्न वाकूं बहु कियो, जीत्यो कुंवर दुष्ट हारियो। तब उन पुरस रूप तज दिया, दिव्यरूप निज सुर कर लिया ॥ ९३ ॥ नमस्कार कीयो पग लाग, फुनि थुत कीनी है बडभाग। धन्न धीर धीरज है तोहि, धन्न सुबल तै जीत्यो मोहि ॥ ९४ ॥ धन्न सु मात तात धन वंस, निजकुल कवल सरोवर हंस। मैं संतुष्ट भयो सु अवार, यातैं कछु वर मांग कंवार ॥ ९५ ॥ देवे जोग कहारे कूर, पुन्यवानके सर्व हजूर। अरु मुझकूं कुछ इच्छा नांहि, तबही निर्जर हर्ष लहाहि ॥९६॥ फिर सुर कहै सुनो भूपाल, मैं निज कथन कहुं तुम नाल। हम तुम पूरवभव सम्बंध, पुष्करार्द्ध वर दीप अमंध ॥ ९७ ॥

दोहा–ताके पूरव मेरुतै, पछम सार विदेह।
सीतोदा उत्तर विषै, देस सुगंध कहेय ॥ ९८ ॥
तुम थे श्रीपुरके विषै, श्री ब्रह्मा भूपाल।
रवि ससि दोय प्रहस्त हम, रवि धन ससि जु निकाल ॥९९॥

झगड़त आए तुम निकट, न्याव कियौ बुधवान।
सूरज धन दिलवाइयौ, दुखत भयौ ससि जान ॥१००॥

चौपाई–फिर अकाम निर्जरा पाय, मरे भये दोनौ सुर राय। ससिचर चंद्ररुचि सुर भयौ, तुम चुराय कैसौ ल्याइयौ ॥ १०१ ॥ रविचरमैं सु कनकप्रभ भयौ, नृपचर अजितसेन तू भयौ। जब तुम याद करौ भूपाल, तबही मैं आऊं दर हाल ॥ १०२ ॥ इम कहि देव अदृसि हो गया, तब ही नृप चक्रति चित भया। ए प्रतक्ष अथवा सुपना, अजितसेन इम संसै ठना ॥ १०३ ॥ पाछै जाती सुमरण भया, तब संदेह सकल मिट गया। सब वृतांत पिछले भव यथा, लखो आरसीमैं मुख तथा ॥ १०४ ॥ फिर सुचेत ह्वै आगै गयौ, बहुत पुरष भागत लख लियौ। तब इक जन टेरौ नृप बाल, तासौं पूछौ सकल हवाल ॥ १०५ ॥ अहो भ्रात क्यूं भागै लोग, कहौ सकल ताकौ संजोग। तब उन कह्या सुजानत नही, कहा गगनतैं आयौ सही ॥ १०६ ॥ तेरौ वचन सत्य परमान, मैं नभतैं आयौ उठ जान। तब जन कहै सुनौ भूपाल, एही अरिंजय देस विसाल ॥ १०७ ॥ जनकुल वार भरो जल थान। धन धान्यादिक बल अधिकान। फैली कीर्ति सुगंध अपार, सुरगण भृङ्ग रमै असरार ॥ १०८ ॥ देसन मध्य भान सम दिपै, अन्य देस उडगण छवि छिपै। निज भाकर जीते सब देस, सत्य अरंजय नाम सुवेस ॥ १०९ ॥ तामैं नगर अनेक सु वसै, सुन्दरता सब ही दुत लसै। तिन मध्य एक विपुल पुर जान,

सोभाकर जीते सुभ थान ॥ ११० ॥ तित जय ब्रह्मा नृप दुति-वंत, भुजबल करि अरिगण जीतंत । कोस देससे नागढ भूर, तेजीयुत जूं उगत सूर ॥ १११ ॥ श्री जिनदेव नमैं तिहुं काल, सेवै गुरु भव्य गुणमाल । राजा सम परजा अनुसरै, सब ही जैन धरम आचरै ॥ ११२ ॥ ता तिय जयश्री तन दुतिहेम, पुत्री चन्द्रप्रभा रति जेम । नृप महेंद्र तेजस्वी सोय, दई नही सुधि आयौ वोय ॥ ११३ ॥ देख उजाड़ रुधेरी पुरी, यातै सब परजा दुखभरी । भागे लोग जाय यू देव, राजकंवर सुण जाणो भेव ॥ ११४ ॥

दोहा—हार तार वाकूं दियौ, भयौ अनंदित सोय ।
हार लेय घरकूं चलौ, और सुनो मुद होय ॥ ११५ ॥

छप्पै—साधरमीकूं कष्ट जानि तब साहस कीनौ । चलौ बाल जू सिंह अरीगण गज भयभीनौ, चमू मध्य नृपसदन गगनके ॥ मैं जित जाकर सुन महेंद्र रे दुष्ट वचन मेरे बुध आकर । अब छांड सुहठ निज गच्छ घर ॥ नाहक जममुख क्यौं परै । इम सुन महेंद्र कोप्यौ अधिक अरे दुष्ट किम उच्चरै ॥ ११६ ॥

पद्धडी—तब भयै युद्ध इकलोक वार, अरु नृप महेंद्र सेना अपार । जूं हरकूं घेरै मृग अनेक, सो हर न सकै तम रवि सुलेख ॥ ११७ ॥

छप्पै—केई चरणसे खूंद केई गोठनसै मोरें । बहु चोटसे मार कोई हाथनसे मारें ॥ केई कहोनीन गिराय केई भुज

जंगमें परे। केई खगनसूं हने केई पग पकरिसु चीरे॥ इम देख पराक्रम कंवरको, केई चित्रवत हो रहे। केई भागे भागे फिरत इम, अभ्र पटल पवन जु लहे॥ ११८॥ नृप महेन्द्र जब आय तासते जुद्ध कियो अति कटुक वचन आलाप शस्त्र छाडे घन-बलवत। कियो जुद्ध चिरकाल भयो निरबल महेन्द्र नृप, भयो भाग तत्काल ऊलू द्रग जूं रवि लख छिप॥ तब जीत भई नृप पुत्रकी हुओ आनंद अपार ही। फिर जय ब्रह्मा नृपके कने किनही जा सब एक ही॥ ११९॥

चौपाई—सुनकर चलो हितू अति जान, जाय कियो आदर सन्मान। मिले परस्पर आनंद बढ़्यो, शुक्लपक्ष ज्यूं दधि उमक्यो॥ १२०॥

छप्पै—साधरमी वय अधिक जान यो अजितसेन तसु। नृप उपगारी मान अंक भर लियो भनत जसु॥ कर उछव ले भयो नगरमें राय ततक्षन भयो हरष पुर मांहि सकल नर नारी इम भन। धन धन्य कंवर ए जात है अंग अनंग समान छबि, नृप अरि भगायो छिनकमें लघुवयमें गुण धरत सब॥ १२१॥

चौपाई—इम सो राजभवनमें गयो, आनंदसे तहां रहतो भयो। राजकाज सब सौंप्यो ताहि, राजा हरख्यो अंग न मांही॥ १२२॥ अजितसेन नृप सदन रहंत, निस दिन सुख मांही बीतंत। इकदिन जय ब्रह्मा भूपाल, सुखमें सोवत निस विच नाल॥ १२३॥ नृप तनुजाकी सखी जु आय, भूपतिकूं इम गिरा सुनाय। जा दिनसैं अरि जीतनहार, कुंवरी देखो

नैन निहार ॥ १२४ ॥ तबतें खान पान सिंगार, छांडि दियो तन काम विचार। मलियागिर लागे अगनि समान, कर कपोल धरि सोच महान ॥ १२५ ॥ उष्न स्वांस लंबे अति लेय, सून्य रूप मनु मूरत एह। वचन भणै नहीं संज्ञा करै, मदन धनंजय तैं नित जरै ॥ १२६ ॥ अवर कहां भाखू भूपाल, तुम सब जानतहो गुणमाल। तब नृप तनुजा मनकी जान, प्रात सभामें जा बुधवान ॥ १२७ ॥ कियो मंत्र मंत्रीसें राय, तब ही निमती लियो बुलाय। सुभ दिन लगन महूरत जोग, कर विवाह तनुजा संजोग ॥ १२८ ॥ मंगल चार बधाई करी, जिनपूजा विध सब विस्तरी। अजितसेन संग ससिप्रभा। भोगे भोग पुन्यफल लभा ॥ १२९ ॥ विपत पड़े तै संपत होय, ए जानो सु पुन्य फल सोय। आगै और सुनो व्याख्यान, जो कछु पूरव श्रुतमें जान ॥ १३० ॥ भरत मध्य रूपाचल जहां, आदितपुर दक्षिन तट तहां ॥ राज धारणी केत करंत, खगगणसे दिनकर सोभंत ॥ १३१ ॥ सो है श्रेणिको चक्रीस, तसु आज्ञा धारे खग सीस। इकदिन ताकी सभा मंझार, आयो क्षुल्लक व्रिषभ्रष सार ॥ १३२ ॥ ताहि देख नृप आदर कियो, उठि स्तुति करि सिर न्याइयो। इम क्षुल्लक सुन हर्षित भयो, वचनालाप नृपतिसे ठयो ॥ १३३ ॥ सो राजाको भाई जान, भ्रात मोहि वसि आयो मानि। धर्म कर्म संबंध कथान, कीयो बहुत क्षुल्लक सुवखान ॥१३४॥ तेरे भले हेत हे राय, आयो मैं सुनिये चित लाय। कर्म मोहनी प्रेरयो आय, मोहकर्म जीवन दुखदाय ॥१३५॥

छंद रोडक—देस अरिंजय नगर विपुलपुर नृप जयवरमा। जयश्री नारि प्रमा ससि पुत्री तसु गुण सरमा। ॥ जो उस वरै तोहि मारेगो फुनि है चक्री। क्षुल्लक धारणी धुन सुन मन भयौ चक्री ॥ १३६ ॥ खेदखिन्न अति भयौ सु पूछै क्षुल्लक सेती। हे दयाल कहिये उपाय अब मम हित हेती ॥ मुनिन यूं उच्चरा पुन्य तुमरेको प्रेरयौ। आय कह्यौ मैं सोय भूप सुन चिंता हेरौ ॥ १३७ ॥

छंद कामनी मोहनी—धर्म्म पियैसु क्षुल्लक गयो गगन मग। मंत्रिसै मंत्र कीयौ तबै नृपति खग ॥ दूत उदतारूछ जयब्रह्मपै भेजियौ। तुरत सो जाय जयब्रह्म नृपको नयौ ॥ १३८ ॥ दूत कर जोरिकै वचन कह भूप सुनि। एही विजियार्द्धकी श्रेणि दक्षन सुमुनि ॥ तत्र आदित्यपुर धारणी धुज नृपं। तिन्है मोहि भेजियौ तुम कनै हे नृपं ॥ १३९ ॥ चंद्रपरभा सुता दई जानै बिना। जाति कुल वंस पुर देस तसु कथा ठना ॥ सो हमें दीजियै नाहि रणकू करो। तबहि जयब्रह्म कह ढील क्यौं विस्तरौ ॥ १४० ॥

दोहा—दूत जाय निज नाथसूं, भाख्यौ सकल हवाल।

सुन राजा अति क्रोध कर, टेरौ सचिव सुहाल ॥१४१॥

छप्पै—खेचरेस कियौ मंत्र सचिवसै रणकूं तरुही। मंत्री कियौ प्रणाम दई रणभेरी जबही ॥ धुन सुन सूर अपार गये अपने अपने मंदिर। न्हाय जजै जिनराज हर्ष धरै दिल अन्दर ॥ सो भोजन कर अंबर पहर, फुन भूसनादि फूलमाल। अरु गंध

विलेपन तन कियौ, भोग करै तिय नाल ॥१४२॥ केई रावत तिय बोधि केई रोतानी पतिकूं। एतै जीत सु आय रात घारौ तुम सतकूं ॥ जीत शत्रु तन घाव सहित आए देखूं जब। करू पूजा जिनदेव फूल ले कनकमई तब ॥ जो सुनूं मृत्यु ना पीठ दे, तौ निहचै दीक्षा धरूं। इम जोधा तियके बचन सुन, भणै सु ऐसी क्यूं करूं ॥१४३॥ कर इम वचनालाप विदा ह्वै निज, निज घरतैं। चले सूर सजि भूर लिये तरकस भरि सरतैं ॥ कर कमान असि कूंत गदा तोमरु दंड लिये। गये सकल दरबार देखि नृप मुदत हुयौ हिय। केई हयगय रथरु विमान केई बहु सजि सजि चले अपार, इम मानौ नमदध उमड्यौ सब सोभा जुत सार ॥ १४४ ॥ आयुध झलझलाट रवितैं जुलहर पवनतैं, धुजा किंकनी जुत विमान रथ भरे खगनतैं। मानौ चले जिहाजग्राहसे कुंजर सोहै, नक्र चक्र सम तुरी मीनसे किंकर मोहै। जे भवण सुसेवावर्त है, वाजत धुन है ही सना। अरु रथ विमान झणकार बहु गन गरजनसो गरजना ॥१४५॥

दोहा—इम सेना खगकी चली, फुनि जय वर माहाल।

सुण श्रेणिक चित लायके ताकौ सकल हवाल ॥१४६॥

दूत गये पीछे नृपति, रण वाजित्र बजाय।

धुनि सुनि आए सूरगणि हरषे अंग नमाय ॥ १४७ ॥

चौपाई—अति कोलाहल पुरमें भयो, सुनिकै कंवर सभामें गयो। प्रथम भूपकूं कियौ जुहार, जैसो कछु राजन विवहार ॥१४८॥ पूछे कवर सुकारण कहा, रणको साज बनायौ महा।

नृपने भाष्यौ दूत हवाल, तुम ताकी करियौ प्रतिपाल ॥१४९॥
हम जुधकूं जावें ले सैन, तब ही कंवर भणै वच ऐन। मो होतें
तुमकू नहीं जोग, तुम तो सदन करो सुख भोग ॥ १५० ॥
मैं ही जाय जुद्ध अति करूं, सकल पराक्रम ताकौ हरूं।
अति हट राजा ताकी जान, सेना संग दई फरमान ॥१५१॥

कवित्त—जगंमभू भूतसे करेंद्रमण चंचल अस्व पवन सम
चाल। सुर विमानसे रथ किंकनी जुत धुजादंड लूबै फूलमाल।
चरकर माहि धरै बहु आयुध खेट धनुष फर्सी अरिकाल॥
नेजा तूपक कवचि फुनि पहरे तिनकौ संघट है अमराल ॥१५२॥

कामनी मोहनी छंद—कवर जुद्धको चलो सैन ले संग ही,
जाय नृप धारणी धुज सु कियो जंग ही। अस्वतैं अस्व गज
गज व रथ रथनसे, भृत भृत लरत कर शस्त्र जिनके लसे ॥१५३॥
भूचर धमसान कर खग भगाये सबै, भगत लखसैन निज
धारणी धुज तबै। उठ्यो कर क्रोध मनमोद धर जुद्धकू, सबै
भूचर भगाये सुधर बुद्धकूं ॥१५४॥ सैन निज भागती देषिके
कवर जब, चढो सुसाहस कर धीर दियो सबन जब। धारणी
धुजके सनमुख भयो ततछिना, देख खग भूपरसै क्रोध करि
इम भना ॥ १५५ ॥

काव्य—हम विद्याधर सुर समान सुर हमरे सेवग, विचरै
गजन मंझार सेवक रहै भूचर खग। विद्या बल भोगवै भोगमन
वंछित सारे, तुमकूं दुर्लभ कूर क्यों न निज सक्ति संभारे ॥१५६॥
दोनों श्रेणी भूप जीते वेताडतने, सब जीते इक छिन मांहि सीस

न्यावै मोकूं सब। मम भुज बल उद्योत जोत दीपक सम सोहै, तू पतंगवत परै प्रान अपने क्यों खोवै॥ १५७॥ तब कुवार उचार अरे क्या कां कूंकरहै, तू खग काग समान राशि संग्या सुखचर है। हिनाहनाय मृत सभै अरे मूरख त्यों गरजै, भूचर भूप महान तहां ए पद्वी परजै॥ १५८॥ तीर्थंकर चक्रीस हर प्रतिहर बल हो है, भूमि गोचरी मांहि इत्यादिक पद्वी सो है। कटुक वचन इत्यादि भास फुनि सस्त्र चलायो, हस्त चरण सिरगिरे केई केई घाव सुखायो॥ १५९॥ सूंडि पूंछ पग कान गिरे गज तथा अश्व मुख मांस, कीचवत भई रक्त सरिता सम दे दुख। हयगय भृत केई फसे केई बह गये सु तामें, कायर लख भयभीत होय जोधा सुख पामै॥ १६०॥ सर वरषै जलधार वाज सम असि चमकाई, वाजत धुन घनघोर घटा मानों जुर आई। दुप गरजै तुरि हिन हिनाट रथ गण झणकारैं, जोधा अरि ललकार कान सुनि येन पुकारै॥१६१॥ वघर दिशा दश भई जुद्ध कीनों चिर पलवल, अजितसैननै लूनै सीस धारणि धुज कोमल। पर्यो धरणि पर आय तब सेना जु पलाई, जब भूचर दई अभै घोष निज फेरि दुहाई॥ १६२॥ जय वामा निजपुर सिंगार परवेस कंवरको, करवायो पुरमांहि भयो आनंद सबनको, नरनारी जस भनै भाट वृद्ध बलि भाषै, नारि वरी अरि जीत पुन्य महिमाको भाषै॥ १६३॥

चौपाई—इम चिरकाल रह्यो तिह थान, भोगै भोग पुन्य

फल जान। इक दिन मातपिता कर याद, निजपुर चलन चहौ अह्लाद ॥ १६४ ॥ जाय सुमरसू विनती करी, आग्या देय जाय निजपुरी। कहै भूप यह वचन न भणै, विरह लाय दह हिरदे घणौ ॥ १६५ ॥ तब अति आग्रह करी कैवार, कहै भूप तुमको अखत्यार। हम कैसैं आज्ञा दे लाल, करौ सोय जो सुख हो हाल ॥ १६६ ॥ सुभ दिन चलन महूरत कार्यौ, पुत्रीसै रामणी उचर्यौ। सास ससुरकी आज्ञा बहु, और सुगुरुजन पग गहइ रहु ॥ १६७ ॥ पतिकी छाया वति चालियौ, भूल न उत्तर दे दिजियौ। राजा सौ वौ दियौ अपार, अस्व दिये नाना परकार ॥ १६८ ॥ शखरका रचो वमष तूल, गजगण अबारी जुत झूल। कंचनके रथ रतननजरे, नाना रंग धुजा फरहरे ॥ १६९ ॥ मृग २ पति गज अस्वन जुरे, झरन २ इम दुंदभि घुरे। बहुरि सुखासन अरु चंडोल, शिवका दई सुंदर बहु मोल ॥ १७० ॥ चवर छत्र सिंहासन तूर, रतजडित आभूषण भूर। जरिबाफाके वस्त्र अपार, दियौ संग दल बहु परकार ॥ १७१ ॥ चालत मिलत नैन जल भरौ, मानौ कछु दोम जो करौ। दृग जल मिसकरि निकसौ वार, चलौ कंवर तब ह्वै असवार ॥ १७२ ॥ केतेक दूर कंवर पहुंचाय, फिर राजा निज घरकूं आय। कंवर कूंच मुकाम करेय, केतेक दिनमें पहुंचौ गेह ॥ १७३ ॥ जननी जनक मिल्यौ हरषाय, जु बसंत रुत कामी पाय। चात्रग जथा स्वात जल लहै, पुरजननं किसान मुद गहै ॥ १७४ ॥ त्र सहित सु अरिंजय भूप,

करै राज आनंद सरूप। विविध विबुधवत भोगै भोग, पुन्योदित सब पायौ जोग ॥ १७५ ॥ कलमल रहित न्याय विस्तरै, सबकूं धर्म देसना करे। इकदिन सभा मध्य भूपार, गजोलोभ जाय पतिमा भार ॥ १७६ ॥ ततछिन आय सुवन पति कूल, धारे भेट राय अनुकूल। सीस न्याय कर जोर सु भनै, आए स्वयम्प्रभ पुर कनै ॥ १७७ ॥

दोहा—समोसरणु लछमी सहित, तीर्थंकर भगवान।
सुन राजा हर्षित भयौ, नगर घोषना ठान ॥ १७८ ॥

ढाल सीमंधर स्वामीकी—पुरजन परजन सहित नृप जगसार हो करी वंदना जाय मुनि आर्जा फुनि वंदिकै जगसार हो। नरकोठे थिर थाय ॥छंद॥ थिर थाय धरम वखान सुनियौ सप्त तत्वादिक सबै कर जोर सीस निवाय प्रभुसों प्रश्न कियौ नृप तबै॥ अजि साध श्रावक भेद कहिये दिव्य धुनि प्रभुकी खिरी। सो सुनत संसय सब भागौ बहुरि गणधर विस्तरी ॥ १७९ ॥ बाईस अभख गृहीत जो जगसार हो। वोला श्रव घन मांहि घोल वड़ा पालर किया जगसार हो ॥ राईलुन धलाय। सोध-लाय पानीमें उठायौ करौ पीठी वेसनी सो वडा पकौडी आद ही फुनि रात्र भोजन वर्जनी। फुनि भिन्न नाही बीज गुदा सु बहुबीजा जानियै फुनि ताहुतैं अति नष्ट वैगन सूं जुदा सु बखानियै ॥ १८० ॥ भक्षन तज संधानको जगसार हो। अष्ट-पहर उपरंत, लौजी आम्रसु आदही अमसार हो ॥ तामैं त्रस उपजंत। उपजंत जंत अचार मांही व मुरब्बा मिष्टसो। पच

उदंबर फल न भखिये, देख त्रस तहां वृच्छसौं। अनजान फल नहीं खाइये, अरु कंद मूलादिक तजो॥ मृतक विषफल त्यागिये सो जीव वधकर उपजो॥ १८१॥ विष्टा माखी वमनही जगसार हो, अंडादिक संयुक्त छत्ता तोडि निचोडिये जगसार हो। ऐसो महत निरुक्त। निरुक्तदग लखि पडै त्रस तहां जीव जम मंदिर लहै॥ मधु त्याग इम फुनि त्याग माखनसो प्रमित विन गुर कहै। फुनि छाल गुड औटाय खैंचै क्रम पडै महता जबै सो छिये सुचिता जाय तजिये, अरख आदिक मद सबै॥१८२॥ साधारण बहुकाय है जगसार हो। फल अति तुछ सुजान, तुसार सुहिम रुत जल जमैं जगसार हो तज है सो बुधवान, बुधवान त्यागै चलत रस जो स्वाद अपना पलट है॥ अभख बाईस जानियै ए, तजै जे भव सुलट है फुनि साक पुष्प सु त्यागिये। अरु वडा फल पेठादि जो, फुन चरम फरस तहो तजो जल आदि अरु पक्वान जो॥ १८३॥ चरम होइ जा जीवको जगसार हो। उपजै ताही जात जीव चरम घृत फरसतै जगसार हो॥ सूछम दृष्टि न अन्तर दिखै न प्राणी प्राण तनधर जन्म पावै ततछिना जिम नार जोनरु कुच विषै जिव सोई मानुष कुल गिना, तिहु ताय जात सुजान जीव सु त्याग चर्म स्पर्शको। असन च्यार प्रकार जिस तजि भनै, श्री जिन जननकों॥ १८४॥ वंस नालमैं तिल भरे जगसार हो। लाल कियो गज लोय दियो नालमैं तिल जलै जगसार हो॥ एक बचे नही कोय, नहीं बचै जैसे एक तिलभी त्यौंहि रत करनासो

अनंतानंत जगमैं जीव है सब मरै एकै वारसौं । इम जानियें तिय संग त्यागै धन्य ते संसारमैं तथा पर्व दुगत्र त्यागै ते विवेक विचारमैं ॥ १८५ ॥ स्वदाराका पाप ए जगसार हो न्याय रीत इस मांहि अघ अनंत पर तिय रमैं जगसार हो । सो अन्यायके मांहि, अन्यायसेती जगत भंडै ॥ दंड देवै नृप घना स्याम मुख कर खर चढावै फुनि धिकारै सब जना । सिर नाक छेदि सुदेसतैं कर बांझ फुनि देखै घनी ॥ दुठ वचन भाखै हाथ बांधे मार शिरमैं पगतनी ॥ १८६ ॥ ए दुख इस भौमैं लहै जगसार हो परभौ नरक मझार लोहपूतली लाल करै जगसार हो लावै अंग मंझार । लावैं सु तनमैं वचन भाखै दुष्ट नरभवके विषै परनार सेई एक अथवा घनाति कप किन चखै ॥ तातै सु श्रावक जोग किरिया करौ जैनी सब जना । धरम दुद्धर है मुनीको नगन मुद्रा सोभना ॥ १८७ ॥

सोरठा—सुनि अजितंजय भूप मन वैराग्य चढायकै । निकसन भवांध कूप तवै सार दिक्षा धरी ॥ १८८ ॥

चौपाई—है उदास बनवासा लियौ, तजि मंदिर कंदिर चित दियौ । दुद्धर तप बारै विधि कियौ, तजि उपसम छायक मग लियौ ॥ १८९ ॥ राग दोष मद मोह निवार, इछा विन सोहं उचार । अंतमहुरत सुक्लसु ध्यान, तावत पायौ केवलज्ञान ॥ १९० ॥ चतुरन काय अमर तक आय, गंधकुटी रचि पूजे पाय । प्रभु धुन खिरी मधुर घनघोर, सुन हरषित नाचै मव मोर ॥ १९१ ॥ बहुरि केवली कियो विहार । बहुत भव्य-

जनकौं उद्धार। फुनि इक समै मांहि निर्वान, पायौ लोक अंत सुख खान ॥ १९२ ॥ अब सुन अजितसेन का कियौ, सरधा-जुत श्रावक व्रत लियौ। प्रभु नुत कर निज घरकूं गयौ, राज पाय सुख करतौ भयौ ॥ १९३ ॥ पुन्ययोग आयुध ग्रह जहां, उपजौ चक्र रतन वर तहां। सहस धार किरनावलि लिये, सहस रस्मि छवि छीनसु किये ॥ १९४ ॥ किंकर आय बधावा दियौ, शस्त्र सुथान चक्रमणि जयौ। सुनकर वस्त्राभरण उतार, दिये भृत्यकूं हर्ष अपार ॥ १९५ ॥ जाय चक्रकी पूजा करी, चलौ जीतनै छह खंड अरी। हय गय रथ चर सुर खग जेय, ये खडांग सेना संग लेय ॥ १९६ ॥ आरजखंड भूप सब जये, भेट देय चक्रीकौ नये। कन्या मणि हय गय इत्यादि, फुनि मलेछखंड पांचौ साधि ॥ १९७ ॥ ठारै सहस भूप मद छोर, पायन परे दोय कर जोर। पुत्री आदिक नजर करेहि, आग्या मानि रहे निज गेह ॥ १९८ ॥ मागधादि सु असुर बहु जीत खचरादिक वस किये पुनीत। छहों खंड वरती नृप देव, दानव दैत करैं सब सेव ॥ १९९ ॥ इम दिग विजय करी चक्रेस, फिर निज नगर कियौ परवेस। बढ़ी संपदा पुन्य प्रभाव, भोग भोगवैं जूं सुर राव ॥ २०० ॥ ता विभूत अब वरनन सुनौं, जैसैं कछुक ग्रंथमैं भनौ। सहस बत्तीस सासते देस, धन कन कंचन भरे असेस ॥ २०१ ॥

छप्पै—कटक वाडि सहित ग्राम छाणवै कोड सब, पुरी बहत्तर सहस कोटि प्रति पौल च्यारि फब। लगै पंचसत ग्राम

भिन्न अटंब सहस तुरि, नग सरिता मद खेट सहस षोडस प्रमान कर ॥ चोवीस सहस कर वट सकल गिर वेढे जानौ प्रबल, फुनि दुने पट्टन मन सकल रतन जहां उपजै अतुल ॥ २०२ ॥

सवैया ३१—द्ब तट द्रौण मुख सहस निन्यावै रु संवाहन भूदरपे चवदै हजार है। तातैं दुगने दुर्ग रिपु मनको न परवेस उपदधिमव दीप छप्पन हजार है ॥ रत्नाकरि छवीस हजार सार वस्तु खान कुछ सम सत मणिधरा औ अगार है। जैन धाम धर्मीजन भरे सो सुवस वसै मारु थलि सम बन ठाईस हजार है ॥ २०३ ॥

चौपाई—हय गय रथचर नृप अरुनार, भरथ समान सबै निरधार । नृप मलेछ आरज खग सुता, बत्तीस सहस भिन्न गुण जुता ॥ २०४ ॥ नख सिख सुभग सुंदराकार, रूप जलध वेला उन हार। सहस बत्तीस नृत्य कालनी, हाव भाव विभ्रम रस सनी ॥ २०५ ॥ लय जुत मुलक मुलक नृत करै, अमरी सम चक्री चित हरै। अरु गण बद्ध जातके देव, सोलै सहस करै नित सेव ॥ २०६ ॥ तीन कोडि गोकुल परवान, लाख कोडि हल सहित किसान। खिती साल नाना प्राकार, पौलि भवंतौ भद्र निहार ॥ २०७ ॥ वैजयंत रहनेको धाम, डेरा नियावर्त ललाम । दिगसुस्तक सुसभा ग्रहनाम, पुष्कर वर्त चांदनी धाम ॥ २०८ ॥ कूट सुधारा गार अगार, ग्रीषम रितमै सुख दातार। पावस रितु ग्रह कूटक जोन, वर्द्धमान सब रितु सुख भोन ॥ २०९ ॥ सो चौरासी षणौ उतंग, मेरु

अंब सत सोभा चंब। दिस देखन गृह कूटक गेह, जीमूतक मंजन घर नेह ॥ २१० ॥ देव रम्य सुवर प्रको धाम, वसुधारा कोठार सुनाम। सर्व वस्तुको आकर धाम, सुकुबेर कांत भंडार सु नाम ॥ २११ ॥ अवतंसक नामा मणिमाल, सुविध नाम आमा सु विसाल। देव छंद नामा सुभ हार, एक सहस वसु लडि विस्तार ॥ २१२ ॥ एक कोडि माजन दुतिसेत, दाल भात रांधनके हेत। एक कोड़ कंचनके थार, त्रयैसत माठि रसोइदार ॥ २१३ ॥ एक सहस चावलको ग्रास, चक्री भोजन करै हुलास। एक ग्रास चक्रीको जोय, नारि सुभद्रा तृपै सोय ॥ २१४ ॥ एक ग्राममैं त्रप्ते घने, अति गरिष्ट भोजन रस सने। नृप कितेक ग्राप भखि जाय, ऐसो बल चक्री में आय ॥ २१५ ॥ छहो खंड भूपति बल रास, तिनसैं अधिक देह बल जास। आदि सरीर आदि संस्थान, तिनको भेद सुनो बुधवान ॥ २१६ ॥

सवैया ३१—वज्र कीले हाड़ चाम वज्र वृषभ नाराचि आदि संधंनन तन दूजो वज्र नाराच। चाम वज्र बिना जास फुन तीजो नाराच रु चामकीले वज्र बिना चौथो अर्द्ध नाराच ॥ अर्द्ध वज्र कीली जामें और सब सामानताकी लोकमें कीली हड़ और सु अनाराच। हाड हाड सौं मिलाय नसा चामसौं लपेट सोई सफाटिक तन संघनन साराच ॥ २१७ ॥

दोहा—सहंनन नाम है हाडको, गत गुणठाणे काल।
कौन कौन संहननमैं, ताको सुनौ हवाल ॥ २१८ ॥

छंद छप्पै—छहो तीसरे जाय पच चौथे पंचमलग ।

च्यारि संघनन छठे एक सातवे नरक मग ॥ छहो आठवे स्वर्ग पंच बारमधुर जावे, च्यारि सोलवे स्वर्ग तीन नव ग्रीवक पावे ॥ फुन संघनन उतरे एक पंच पंचोत्तरे, इक चरम शरीरी शिव लहै सन्मति धुन इम विस्तरै ॥ २१९ ॥ पुनः प्रथम दुतीय तृतीय कालमैं पहला जानो, चौथे षट संघनन पंचमैं तीन प्रवानो । करम भूमि तिय तीन एक छट्ठेके मांहि, विकुल चतुकमें एक एक इन्द्रीकै नांही ॥ षट कहे सात गुण ठाण लौ तीन ग्यारैं लौ लह्यो, इक छपक श्रेणि गुण तेरवै । श्रेणक इस विधि सरदह्यो ॥ २२० ॥

चौपाई–जैसो जहां चाहिये अंग, तैसो तहां होय सरवंग । अंगोपांग ललित सब होय, समच चतुर संस्थान सु जोय ॥ २२१ ॥ ऊरध थूल अधोगति छीन, सुनिग्रोध पर मंडल चीन । हेठ थूल ऊपर क्रम होय, सात्विक नाम कहावै सोय ॥ २२२ ॥ कूबड सहित नक्रतन जास, कुब्जक नाम कहावै तास । लघु शरीर वामन संस्थान, विकल अंग हुडक परवान ॥ २२३ ॥ इम छह•२मैं पहलो जोय, अजितसेन चक्री लह्यो सोय । जूकन मुकट पंच मणि जरो, लक्षन व्यंजन कर यूं भरयो ॥२२४॥ नवनिधि नाम रु गुण आकार, सुणि श्रेणिक तिनको विस्तार । प्रथम काल निधि पुस्तक देय, फुनि असि मसि सामग्री जेय ॥ २२५ ॥ ए सब महा काल निधि देय, फुनि नव सर्प्व यूं भाजन गेय । पांडुक चोखी असन सु देत, पद्म पंचमी वस्त्र निकेत ॥ २२६ ॥ मानव देय शस्त्र बहु भांति,

पिंगलदे भूषन विख्यात। दे वाजित्र अष्टमी संख, सर्व रतन मणि देय असंख ॥२२७॥ ए नवनिधि सब सटकाकार, लखी नव बारह विस्तार। वसु जोजन औंडी चौकोर जुत वसु चक्र चसै नभ ठौर॥ २२८॥ एक एकके रक्षक देव, सहस२ भाखे जिन देव। अब सुन चौदै रतन नरेश, नाम सु गुण उतपति कह देस॥ २२९॥

अडिल—षट खण्ड साधन हेत सुदर्शन चक्र है, सो नंदक असि चण्ड वेग दंड वक्र है। चरम वज्रमय उतपति आयुध सालमैं, रवि प्रभ क्षत सुदोय मलेचन आलमैं ॥२३०॥ चरम बिछाय रु छत्र उपर विस्तार है, नव बारै जोजन मध सेना धार है। वरषै पाहन खंड अगनि जल धारजू, कछु उपद्रव सेनामें न निहारजू॥ २३१॥ षट चूडामणि रत्न कांकनी सम जूं, करै गुफामें शशि रवि सम दो दीसजूं। ए तीनो उपजै श्रीदेवी ग्रेहमें, जीव रहित ए सात रत्न लख नेहमें ॥२३२॥ फुनि अजोध सेनापति जयकर है सदा, बुध सागर प्रोहित प्रवीन बुध सर्वदा। थपित भद्र मुख नाम सिलावढि चतुर है, काम वृष्टि ग्रहपति ग्रह कारज अति रहै॥ २३३॥ चक्रीपुर उतपति इनि च्यारनकी कही, नाम विजयगिर गज पवनंजय तुरंग ही॥ हयपै चढि सैनिक दंड करमें धरै। खोलै कंदर द्वार अगनि तहां नीसरै॥ २३४॥ ऊलटे पग हय हटै सु जोजन द्वादश। मास षटमें होय अगमु सांतिसं॥ मणिकरचूर सुभद्रा तिय साथिया करै। घर आवै कर विजय आरती पति

करै ॥ २३५ ॥ रत्नदीप घर थाल सुहर्षित अंगमैं। या सम नहि जग और नार गण संगमैं ॥ इन तीनोंकी उतपति खग-गिरपै कही। जीव सहित ए सात मनुष्य चोदै सही ॥२३६॥

चौपाई—सहस सहस सेवे सुर यक्ष, अब कछु अवर सुनौ नृप लक्ष। सिंहवाहनी सेज मनोगि, सिंहारूढ चक्रवै जोग ॥ २३७ ॥

गीताछंद—विष्टर अनुत्तर नाम रतनन जड्यो सुंदर सोहनो। गंगा तरंग समान नूपम चवरनामि ममोहनो॥ फुनि दोय कुंडल मणिनिके हैं वज्र सम अति दुति भगै। वर कवच जान अभेद नाम सुत्रान रिपुको ना लगै॥ २३८॥ अरु पादुका विषमोचनी जग विष हनै पदपद विषै। अजितंजय रथ सुभग जलपै चलै जैसे थल विखै। अरु वज्रकांड सु धनुषबान अमोघ नामा अति लह्यौ, फुनि वज्र तुडा विकट शक्ति कुंत सिंहाटक कह्यौ ॥ २३९ ॥ लोह वाहनी छुरी संज्ञा मनोवेग सु कवणहै, फुनि भूत मुख है ढाल संज्ञा एहु आयुध वरण है वर ढोल वज्र सुघोष बारै मरि आनंद नतिति, सरवग मी रावत दूने बारै जोजन धुनगत ॥ २४० ॥

दोहा—वृषमादिक चेहन धरैं, नाना वर्ण सुजान।
सम अठतालीस कोढ मित, संख्या केत प्रमान ॥२४१॥
रतन रु निधि रानी नगर, सिज्या आसन फोज।
भांड भुक्त वाहन सुदस, चक्री भोगै सोज ॥२४२॥

भोगादिक संपति विविध, जो उत्तम भूलोक।
चक्री विना न और घर, यूं जानो बुध थोक ॥२४३॥

चक्री नृपकी संपदा, कहै कहांलो कोय।
ज्यूं ज्यूं मत विस्तारिये, त्यूं त्यूं अधिकी होय ॥२४४॥

गौतमस्वामी कहत है, सुण श्रेणक भूपाल।
पुन्य वेलि पूरब वोई, फली सघांनी हाल ॥२४५॥

इह विभूति सब भूतसी, गिनै धन्य नर सोय।
गुणभद्राचारज भणी, 'हीरा' हर्षित होई ॥२४६॥

इतिश्री चंद्रप्रभचरित्रे अजितसेन तृतीयभव चक्रपदग्रहणवर्णनोनाम
षष्टम संधिः समाप्तिम् ॥ ६ ॥

सप्तम संधि।

दोहा—महासेन सु तन मन कर, गुरु गुणभद्र मनाय।
गौतम स्वामी यूं कहै, सुण श्रेणिक मन लाय ॥ १ ॥

चौपाई—अब सो अजितसेन चक्रेस, सिंघासन थित जू अमरेस। सभा लोक सब देव समान, तब नृप करै धर्म्म व्याख्यान ॥२॥ प्रथम सुभेद मुनी सुर धर्म्म, दूजो श्रावकको गुण पर्म। ताको भेद सुनो अब लोय, मन बच काय बखानू सोय ॥ ३ ॥ चक्की चूल्हा उखली तोय, सूनी दर्प उपार्जन सोय। ये षटकर्म करत अघ ठना, सब ही करै गृहस्थीजना ॥४॥ ताके पाप सांतके हेत, सुगुरु भणै षटकर्म सुचेत। प्रथम जिनेन्द्र जग्य विस्तरै, विविध द्रव्य सुंदर अनुसरै ॥ ५ ॥ मन बच तन उज्जल कर करै, मनवांछित फल सो अनुसरै। सचित्त भणै संसय उर आन, बिंब अचेतन घात परवान ॥ ६ ॥ पूजकको फल कैसे करै, तब नरेंद्र ऐसैं उच्चरै। नख सिख ललित नार को रूप, चित्रमई देखै बुध कूप ॥ ७ ॥ तेहुं राग तने बस थाय, ताको फल नरकादि कषाय। तोसु अज्ञाननकी वो वात, त्यौं जिनबिंब लखत विख्यात ॥ ८ ॥ उपजै भाव परम वैराग्य, ताको फल सुरगादिक लाग। श्री जिनप्रतिमा फटक समान, जीवन भाव डाकिवत जान ॥ ९ ॥ जैसी डाक फटिक संजोग, तैसो रंग लखै सब लोग। फुनि दर्पणवत जिम छवि धरै, सकल वस्त्र देखे मुख करै ॥ १० ॥ पूजक भव सबमें

सुख लहै, क्रम २ करत मोक्षपद गहै। निंदक भव भवमें दुख पाय, नर्क निगोदादिक भटकाय ॥ ११ ॥ फुनि गुरु सेवा करनी जोग, त्रिविध भांति सो पुन्य नियोग। फुनि जिन ग्रंथ पढै अरु सुनै, जासै वृष उपजै अघ हनै ॥ १२ ॥ संयम नाव आरूडी अहै, जम अरु नेमरूप संग्रहै। तप बारह विधि सकती समान, करै दान च्यारयौं बुधवान ॥ १३ ॥ औषध शास्त्र अभै जु अहार, तजै कुदान सु दस परकार। भ्रमादिक मिथ्या मत कहै, जासै दुख नरकादिक लहै ॥ १४ ॥ ए षट कर्म धरो बुध सर्व, सप्त क्षेत्रमैं खरचो दर्व। ताको भेद सुनो मनलाय, जिन मंदिर अति तुंग कराय ॥ १५ ॥

नर्क स्वर्ग दीपोदधि चित्र, तथा भोगभू रचै विचित्र। कंचन कलस उद्ध जगमगै, तामैं द्रव्य असंख जु लगै ॥ १६ ॥ स्वर्ण रतनके बिंब भराय, द्रव्य लगावै मन वच काय। करै प्रतिष्ठा संग समेत, तामैं धन खरचै बुध चेत ॥ १७ ॥ ग्रंथ लिखाय जिनालय देय, तथा श्रमणकी भेट करेय। दान देय पात्रहि पहचान, ताको भेद सुनो मतिमान ॥ १८ ॥ नव जु सुपात्र कुपात्र त्रिजान, तीन अपात्र पंच दस मान। उत्तम मुन मध्यम ग्रह व्रती, अरु कनिष्ट द्रग जुत अव्रती ॥ १९ ॥ उत्तम मैं उत्तम जिनराज, मध्यम गणधरादि आचार्य। जघन्य समान्य मुनी सिष्यादि, अब सुण मध्यम त्रिविध अनादि ॥ २० ॥ श्रावक प्रतिमा ग्यारै भेद, क्षुल्लक अईलक आदि निवेद सात आठ नव मधमैं मध्य, मधमैं लघु षट श्रावक लख्य ॥ २१ ॥

लघुमें उत्तम क्षायिकवंत, बहुरि छयोपसम मध सोमंत। जघन जघनमें उपसमवत, ए तीनों सम्यक धारंत॥ २२॥ द्रव्य लिंगी कुपात्र मुनिराय, तिनके सिष्य मोक्षकूं जाय। सहैं परिषह मन वच देह, कनिका चलिवत डिगै न तेह॥ २३॥ मध्यम श्रावक प्रतिमावंत, जघन द्रव्य सम्यक धारंत। इनकै समकित नाही गिना, अरु अपात्र दृग् चारित विना॥ २४॥ से अनेक विध नाना भेष, जूं वरषा रुत हरित विशेष। इन सब दान तनौ फल एह, कह्यौ जिनागम सो सुनि लेह॥२५॥

कवित–उत्तम पात्र दान फल जानौ, उत्तम भोग भूमि सुखदाय। मध्यम पात्र दान फल जानौ, मध्यम भोग भूमि सुख पाय॥ जघन पात्र दान फल हो है, जघन भोग भूमि सुख लाध। और कुपात्र दान फलकै, सुख क्षेत्र कुभोग भूमि सो अगाध॥ २६॥

चौपाई–अरु अपात्र दान फल इसा, पाहन भूमि बोइयो जिसा तिथा। तथा नदी तट लेय वहाय, यथा अग्निमें दियो जराय॥२७॥ दान तनो सुद्रव्य खो दियो, तथा सुफल ह्व गति निगोदियो। तामें द्रव्य लगे सु अपार, तबको पूछै संसै धार॥ २८॥ कणहड आदि ग्रास बत्तीस, यासै बाढ न लेय मुनीस। बहु धन कैसैं किम इत लगै, याहि भेद सुन संसै भगै॥२९॥ प्रथम सुमुनि पडगाहै जबै, भोजन गृह आवै गुरु तबै। अष्ट प्रकारी पुजा करै, माणिक मुक्ताफल थाल सुभरै॥ ३०॥ कर निछावर मुन पद कनैं, भोजन करवावै विध सनैं। फिरवै रतन

सुदान करेय, दुखित भुखित आदिक जनदेय ॥ ३१ ॥ षष्ठम तीर्थंकर केवली, आचारज फुनि मुनि मंडली। तथा पंच-कल्यानक भूम, सिद्धक्षेत्र आदिक करिधूम ॥३२॥ संघ चलावै बंधन काज, सो संगीका है बुधराज। तामैं चित्त लगावै घना, सप्तम पंचकल्याणक मना ॥ ३३ ॥ तासु क्षेत्रमैं जिन मंद्रादि, तथा प्रतिष्ठा कर अह्लाद। सिद्धक्षेत्रमैं वीत्यौं करै, नर सुर भोग मोक्ष अनुसरै ॥ ३४ ॥ इत्यादिकमैं द्रव्य लगाय, ताकौ फल होहै अधिकाय। बीज बोय वट तरु जो फरै, ऐसैं आचारज उच्चरै ॥ ३५ ॥

फुनि इकीस गुण धारै जांय, उत्तम श्रावक जाणो सोय। प्रथम सुलज्या उरमैं धरो, करुणा सुजल हियै सर भरो ॥३६॥ सदा प्रसन्न वदन सौं रहैं, तूर्य प्रतीत सभी जन गहैं। पंचम करै सुपर उपगार, गोप करै पर दोष निहार ॥ ३७ ॥ सोम मूर्ति देखे हय प्रीत, अष्टम गुण ग्राही शुभ नीत। मान रहित मार्दव गुण धरै, सब जनतै सुमित्रता करै ॥ ३८ ॥ न्याय पक्ष गह तज अन्याय, मधुर वचन सबकौ सुखदाय। तेरम करै सुदीर्घ विचार, बहुरि कुवादी खंडनहार ॥ ३९ ॥ सज्जन सुभाव सुगुण पंद्रमो, पूजादिक जुत धर्म्मातिमो। भली बुद्ध धारै सत्रमो, जोगा जोग आन ठारमौं ॥ ४० ॥

दीनोद्धत बिन मध्य सुभाव, सहज विनै धारै गुण राव। शुभ शुभ क्रिया गहै बुधवंत, इकईस गुण गृही धरंत ॥ ४१ ॥ सवारे नेम चितारे रोज, जारत भजै पापकी फौज। अजादिके

भोजन मरजाद, मिष्टादिक रस पान जलादि ॥४२॥ चंदनादि लेपन ले द्रव्य, सुंघनादि पुष्प जे सर्व । नागवेल गीतनृत्यादि, फुनि अब्रह्म करै मरजादि ॥ ४३ ॥ हुवन अभूषन वस्त्र अनेक, वाहन सिज्या आसन टेक । सचित वस्तकी संख्या करै, संख्या नेम सतरमो धरै ॥ ४४ ॥ एती वस्तु आज रष लई, अरु सब बाकी त्याग-सु दई । ऐसै चक्री दियो उपदेश, सभा भणै धन धन्य नरेश ॥ ४५ ॥

एतेमें वन पालक आय, हाथ जोडि कर सीस निवाय । भेट धार भाषै अरणेस, आए स्वयंप्रभ तीर्थेस ॥ ४६ । सुन नृप आनंदभेरि दिवाय, सबकै भयौ सुदर्शन चाव । परजन पुरजन संग मिलाय, वंदन हेत चल्यौ हरषाय ॥ ४७ ॥ जाय प्रभुकी पूजा करी, अष्ट प्रकारसे थुति उचरी । फुनि गणेश मुनि वंदे पाय, फिर गणनीको सीस नमाय ॥ ४८ ॥ तब नर कोठे मैं थित करी, जब प्रभुकी दिव्य धुनि खिरी । सप्त तत्व गर्मित जीवादि । फुनि उतपादवय ध्रुव सादि ॥ ४९ ॥ नाम थापना द्रव्य रु भाव, इत्यादि अरु जीव प्रभाव । जीव आतमा-तीन प्रकार, बहरातम अंत्रातम धार ॥ ५० ॥

अरु परमातमको सुन भेद, बहरातंमा लहै जगखेद । मन संबंध तनी जो जोन, ता आपा मानै बुध गोन ॥ ५१ ॥ तीजे ठानै तक है दौर, ताको तजै सुबुध सिरमौर । सिद्ध समान शुद्ध अभी लोक, आपे मांहि आपकू जोक ॥ ५२ ॥ ताहीकी सरधा दृढ़ धरै, ताकी गृहन सु मन वच करै । चतुर

आदि बारम गुण ठान, सोई अंतर आतम जान ॥ ५३ ॥ परमातमको ध्यान धरंत, नास अघाती हो अरहंत। केवल आदि सिद्ध परजंत, सोई नंत चतुष्टयवंत ॥ ५४ ॥ ए विधि परमातमा सरूप, बहरातम सुविभाव विरूप। सो संसार मांहि भी फिरै, पंच परावर्तन सो करै ॥ ५५ ॥ ताको भेद कहूं चक्रेश, विविध भांति सो कहूं विशेष। पूरब ग्रंथ तणे अनुसार, याको कथन जान निरधार ॥ ५६ ॥

कवित्त—राज दोष भावकर आतम गह पुद्गल परमाणू एक। ताहि छोडि नंत भव भटकै फिर वाहीको गहै सुटेक ॥ एक एक परमाणुको योबार अनंतनंत गह त्याग। सो गिणतीमें नाही आवै लगत लगत गह लेखै लाग ॥ ५७ ॥

दोहा—जीव राशितैं जानिये, पुद्गल प्रमाणु अनंत।
द्रव्य प्रवर्त्तन नाम इस, पुद्गल वीमाधंत ॥ ५८ ॥
सम्यक उपसम फर्म तज, जीव इसो जो कोय।
पुद्गल प्रवर्त्तन अर्द्ध ही, रहै जगतमैं सोय ॥ ५९ ॥

इति द्रव्य प्रवर्त्तन।

सवैया ३१—लोकमैं प्रदेस आठ मेरै तलै गोऽस्तन आदि पुव्व दिमकन आदि भव पायौ है। बहुरि अनंत भव भटक्यौ अनंतवार फिर तहां जन्म लियौ गिनति न थायो है ॥ लगत दुनै प्रदेश मांहि जन्म पायौ जब तब दुनै क्षेत्र देस गिणतीमैं आयौ है। ऐसै सर्व लोकके प्रदेसमैं जनम पायौ लगत २ गिनौ वृथान्य गवायौ है ॥ ६० ॥

दोहा—क्षेत्र प्रवर्त्तन जीवनै, करी अनंती वार।
आगे काल प्रवर्त्तको, सुनो भूप विस्तार ॥ ६१ ॥

इति क्षेत्र प्रवर्त्तन ।

छप्पै—उत्सप्पणी जम आदि समयमें जनम भया जब, काल कलपमें भम्या भवावलि नाहिं गिना तब। फिर उत्सर्प्पणी आय तासके दुतिय समेमैं, लियो जनम त्यों मर्ण अन्य समयमें ॥ इम कालकलपके समय सब, लगन लगत पूरण किये। एक काल प्रवर्त्तन जीवनैं, करत करत दुख कुगतिये ॥ ६२ ॥

इति काल प्रवर्तन ।

छप्पै—अप्रयाप्त लब्ध देह सूक्षम निगोद धर भिन्न करता-वत भव धर मर। फेर इक एक समय भव वधत वधत हो जब सो गिनै गिननही ना अधिक तिरयगगत इम सुगत है ॥ फुन समय सहस दस वर्ष मित तिते सुभव इम थित लहै ॥ ६३ ॥ फिर इकिक समय धर अधिक२ तेतिस जलनिध तक हीनाधिक नहीं गिनो नाकी लहन समजक। फुन तिम सरगन लहै जलध इकतीस समैवत। अंत्र महूरतमैं अमित भव लह किर नागत फिर समै २ थित अधिक लह तीन पल्ल तक पूर्ण कर जो हीनाधिक सो ना गिनो अनुक्रम मित इति भव सुधर ॥ ६४ ॥

इति भौ प्रवर्तन ।

छप्पै—भाव प्रवर्तन इम निगोदको सूछम तन लह। अलब्धि अपर्जसु ज्ञान अंकसु असंख भाग गह ॥ ज्ञानयुक्त इम मरै नंत भवमैं जो भटकै। वा निगोद बहु ज्ञानसो न थिणतीमैं

अटके॥ जो फिर निगोदका तन गहै। ज्ञान अंस इकर बधे॥ इम लगत लगत बहु भव विषे। केवल ज्ञान लहै॥ ६५॥

इति भाव प्रवर्तन।

दोहा–द्रव्य प्रवर्तन तें कही, क्षेत्र अनंती जान।

तातें क्रम भव भाव फुनि, नंत नंत गुणि मान॥ ६६॥

चौपाई–पंच प्रवर्तन ए भुपार, करी जीवने नंतीवार। सो मिथ्यात उदैसै जान, सम्यक लब्धि लह्यो नहि ज्ञान॥ ६७॥ सोई लब्धि पंच परकार, थावरगतिमें भ्रम्यो अपार। कर्म्म क्षयोपसम मंद कषाय। तब जिय सैनी पंचेद्री पाय॥ ६८॥ सोई षयोपसम पहलो लब्धि, बहुरि विसोई सुनौ बुध लब्ध। सुभ कर्मोदय पूजा दान, संयम सील जप तप व्रत ठान॥६९॥ फुनि सुभ उदै सुगुरु उपदेश, ता कर तत्वज्ञान लियो बेस। सोय देसना तीजी मुनौं, प्रायोगमन चतुर्थी सुनो॥ ७०॥ सुकाल पाय महाव्रत धरै, पख मासादि सु प्रोषध करै। ता बल छीन करै बहु कर्म्म, कोडाकोडी थित रहै पर्म॥ ७१॥ अंतम ए जानौ निरधार, च्यारुं लही अनंती बार। सो मिथ्यात उदयतें कह्यौ, कारज कछु सिद्ध नहि भयो॥ ७२॥ फुनि मिथ्यात जबै अवसान, करनलब्धि लही तीन प्रधान। अधो अपूरव.अनव्रत करन, चौथौ निश्चै सम्यक धरन॥ ७३॥ तबही अनंतानु चौकरी, तीन मिथ्यात तुरत छै करी। चौथे ठाणे कीनो वास, सप्तम तीन आयुका नास॥ ७४॥ मानुष बिन जानो चक्रेस, फिर नवमेंमें कियो प्रवेस। ताके भाग सु

नवके मांहि, छतीस प्रकृति सु नास कराहि ॥ ७५ ॥ पहलेमें सोलह कर क्षीण, पंच नीदमैं नष्ट सु तीन । नर्क पशुगति पूर्वी आन, इक बे ते चौइंद्री हान ॥७६॥ थावर आताप उद्योत विनास, सूक्षम साधारण ए नास । दुतिय अंसमै वसु निरवार, अप्रत्या चौ प्रत्याचार ॥ ७७ ॥ तीजे वेद नपुंसक चूर, चौथे नार वेद कर दूर । पणमै षट हासादिक हणी, छटै पुरुषवेद मर्दनी ॥७८॥

सप्तम क्रोध हनो संज्वलन, अष्टम मान हनो संज्वलन । नवमे छल संज्वलन विनास, फिर दसमे गुणठाणे वास ॥७९॥ तिस संज्वलन लोभ चकचूर, रुद्र लंध बारमै हजूर । तेरहवे अंसम षोडस हान, निद्रा प्रचला पहले जान ॥ ८० ॥ ज्ञान दर्शनावरणी जोय, पंचरु नव चव दै हनु सोय । इम छह त्रेसठि बारिम अंत, होय तेरमे मैं अरिहंत ॥ ८१ ॥ फिर द्वै भाग चौदमै जान, बहत्तर तेरै तित हान । असाता वेदनी सुघात, पंच वपु बंधन संघात ॥ ८२ ॥ आंगोपांग त्रियुक्त दसष्ट, षट संस्थान संहनन षष्ट । पण पण रस त्रण वसु फासोय, दोय गंध सुरगत पूर्वीय ॥ ८३ ॥ इक इक अगुरु लघु उस्वास, इक इक पर अपघातक नास । इक विहाय इक असुभ सुगोन, इक प्रतेक थिर अथिर सु दोन ॥ ८४ ॥ बहुर एक शुभ इक दुर्भाग, इक सुस्वर दुस्वर इक त्याग । आदर विन इक अपजस कीच, इक निरमान गोत इक नीच ॥ ८५ ॥ हनी बहत्तर दूज आय, मनुष आयुगत जुग मनसाय । मनुष आन पूरवी एक, जात पंचेद्री नासी एक ॥ ८६ ॥ त्रस बादर परजापत

तीन, शुभग रु आदर गोत त्रिलीन। जसकीरत तीर्थंकर नाथ, ए तेरै हनि सिवपुर वास ॥ ८७ ॥ पंच भाव जुत सो जयवंत, फिर चक्री पूछै विहसंत। ताको भेद कहो भगवान, तब जिन बोले अविरलि वान ॥ ८८ ॥ हे नृपेंद्र सुन भाव विसेस, पहलै उपसमके द्वय भेस। समकित चारित उपसम रूप, छाइक भेद सुनौ नव भूप ॥ ८९ ॥ छाइक दर्शन छायक ज्ञान, छाइक सम्यक्‌चारित दान। छाइक लाभ भोग उपभोग, वीरज ए नव छाइक जोग ॥ ९० ॥ छयोपसम अष्टादस जान, मति श्रुति अवधि कुज्ञान सुज्ञान। मनपर्यय अरु दर्सन तीन, सम्यकचारित संयम लीन ॥ ९१ ॥ पंच लब्धि जुत ठारै भेद, फुनि उद्दीक इकिस त्रिन खेद। वेद रु गति कषाय रु लेस, कुज्ञान मिथ्यात असंमय वेस ॥ ९२ ॥ असिध तीन परनामिक जान, भव्य अभव्यरु जीवत मान। इस विधि त्रेपन भाव सु संच, तिनमांही सिद्धनकै पंच ॥ ९३ ॥ छाइक समकित दर्सन ज्ञान, वीरज पंच एक परमान। इत्यादिक तत्वन व्याख्यान, फिर मुनिधर्म विशेष बखान ॥ ९४ ॥ श्रावक क्रिया विविध परकार, भाखी श्री जिन सब सुखकार। सुरनर सुनत मुदित असरार, देव दुंदभी बजे नगार ॥ ९५ ॥ अजितसेन चक्री गुणरास, जिन नुतकर आयौ आवास। नानाविध सुख भोग करंत, पूरव पुन्य उदै दिये संत ॥ ९६ ॥ कंचनमय सिंहासन चित्र, पंच रतनमय जडो विचित्र। रश्मि सूर्यसम प्रभा अपार, इक दिन नृप तापै थित धार ॥ ९७ ॥ विष्टर प्रभाकंब दक जेम, नानाविध

विराजै एम। नृप कलिकावत सोहै मनो, चंद्र समान छत्र सिर बनो ॥ ९८ ॥ मुक्ति झालरी किरण लुवाय, मानो सुजस रह्यौ नृप छाय। दो तट चंवर भूपकै ढुरै, मेर निकट मनु झरना झरै ॥ ९९ ॥ चक्री मध्य चंद्रमावली, सभा बनी तारामंडली। नरनारी मन नैनक मोद, लख लख विगसैं करै प्रमोद ॥१००॥

भूप अनेक आय नुत करै, चक्री चरण मुकट निज धरै। मानो कंवल अंजुली क्षेप, अथवा मणदुतिंस भूलेप ॥ १०१ ॥ इत्यादिक सोभा गुण गेह, मानो दूजो सक्रो एह। सभा लोग सम विबुध समान, आगै और सुनो व्याख्यान ॥ १०२ ॥ ताही समय सभा मध्य एक, आयो हस्ती बली विशेख। क्रीडा करै अधिक विहसाय, चक्रत भये सभा जुत राय ॥१०३॥ पकरो याही भूप इम कह्यौ, तब केइक जोधा उमह्यौ। देख पराक्रम गए पलाय, ठाडो एक सूर हरषाय ॥ १०४ ॥ ता संघ लीला करी अघाय, पकरौ चहै सुघात चुकाय। कुंजर वि बहु लीला करै, चोट चलाय मृत्य नहीं करै ॥ १०५ ॥ घणी देरमैं गह सुंडाल, नृपके तट आयौ ततकाल। सूर जोर कर थुत उचरी, लीजै राय आय यह करी ॥ १०६ ॥ लंबोदर लख हार्‍यो राय, देखत ही गण गयो पलाय। तब राजा चिंतै मन मांहि, यूं ही सब जग जाय पलाय ॥१०७॥

ढालवीर जिनंदकी—जीव जगत वनके विखैजी, भ्रम तन आवै वोर। जनम जरामृत अगनि सैजी, पावै दुख चिर घोर रे भाई ए संसार असार ॥ १०८ ॥ वसो अनाद निगोदमैं जी,

काल लब्धि कर गौन। कर्म क्षयोपसमतै लहीजी, थावर त्रस पसु जोन रे भाई। बध बंधन भयकार ॥ १०९ ॥ फिर तित पाप कियौ घनौजी, तावस नरक मंझार। सो दुख जानै केवलीजी, सहो अनंती वार रे भाई यह जानौ निरधार ॥११०॥ निकसौ कर्म संजोग सूं जी, लहै नरगति कुल नीच। कर अग्यान तप सूं भयौजी, विबुध सुरगके बीच रे भाई। सुंदर जगत मंझार ॥ १११ ॥ नारि रिद्ध भोगादि सुखजी, पय पर सेव नियोग। मरनसमैं मुरझाय है जी, माला आयु संजोग रे भाई। करत सु हाहाकार ॥ ११२ ॥ दधि दो कोडा कोडिमैं जी, जो सीझै तुझ काम। नातो फिर ह्वै थल लहै जी, जो निगोद दुख धाम रे भाई। ऐसे सुगुरु उचार ॥ ११३ ॥ पाप जबरतै नरक लहइजी, पुन्य दीर्घ तै स्वर्ग होय बराबरि पुन्य अघजी। तब लह मानुष वरग रे भाई, तामैं दुख अपार ॥ ११४ ॥ मात पिता रज वीर्य सूं जी, उपजौ गर्भ मंझार। मात असन जो निगलौ जी, सो तैं लियौ अहार रे भाई। तल सिर चरन उचार ॥ ११५ ॥ जंती तार सू खैंच है, जूं सुनार जग मांहि। जन मत सो दुखतै लह्यौ जी, फुनि बालकपन मांहि रे भाई। मूत्र पुरीष मझारा ॥ ११६ ॥ हस्त सुमर मुखमैं दियौ जी, लाल वहै असराल तरुन पनै मद मदन सु जी। भयो मत्त उनहार रे भाई स्व पर तियन विचार ॥१७॥ वृद्ध पणै तन कम्प है जी, शिथल होय सब अंग। केशवरण सब पलट है जी, मृत्यु आवै ता संग रे भाई। ए दुख नैन

निहार ॥ ११८ ॥ और विपत अनेक है जी, सर्व सुखी ना कोय । कोई इष्ट वियोग सूं जी, कोई असुभ संजोग रे भाई । कोई दीन निहार ॥ ११९ ॥ काहु दालिद घेरियोजी, काहु तन बहु रोग । काहु कलहारी तियाजी, अलि कानी जुत रोग रे भाई । भाई रिपु उनिहार ॥ १२० ॥ किस हीकै दुख प्रगट है जी, किस ही उर दुख जान । कोई सुत विन नित झुरैजी, होय मरै दुख ठान रे भाई । दुठ संतति दुखकार ॥ १२१ ॥ किह विध सुख हो जगतमैं जी, पुन्य उदै जा जीव । सुक्ख सदा तिनकै नहीं जी, यूं जग वास लखी बरे भाई । सब दीसै दुखकार ॥ १२२ ॥ जो सुख जगत विखैं हुतैं जी, तौ जिनवर क्यूं त्याग । काहेकूं सिव साधते जी, कर व्रतसै अनुराग रे भाई । देखो हृदय विचार ॥ १२३ ॥ सप्त कुधात भरो सु तनजी, अस्त नमा पल रक्त । पीव वीर्यतु चंतै मेठो जी, नव मल द्वार संयुक्त रे भाई । झर उपघात निहार ॥ १२४ ॥ नाक कान दग मल मुख जी, श्रम जल विष्टामूत । इम असुचि छिन येह है जी, तौ पण नाथिर भूत रे भाई लागो विखै विकार ॥ १२५ ॥ पोषत तौ दुख देत है जी, सोषत सुख उपजाय । दुरजन देह सुभाव समजी, मूरख प्रीत उपाय रे भाई । तप कीजै सुखकार ॥ १२६ ॥ इम चक्री चितवन करत जी, बन पत सभा मंझार । ताही समै सु आइयौ जी, हस्त जोड उच्चार रे भाई । गुण प्रभु सुन सुखकार ॥ १२७॥ सीमंकर उद्यानमैं जी, आयो सुन हरखाय । संघ सहित

वंदन गयो जी, जाय लखो मुनिराय रे माई। करि आवर्तन सार ॥ १२८ ॥

चौपाई—हस्त जोडि थुत थुत करनै लगो, गुरु पदाब्जमै द्रग अलि पगो। धन धन ध्यान ध्येत गुण धाम, जगत पूज इव गुण प्रभु नाम ॥ १२९ ॥ अष्ट द्रव्य मूं पूज मुनिंद, विनै सहित बैठो सु नरिंद। प्रश्न करै नृप वृषकी आस, गुरु रवि वचण किरण परकास ॥ १३० ॥ धर्म भेद द्वय श्रावग मुनी, ता विस्तार सुनौ नृप गुनी। श्रावग धर्म सु पूजा आदि, जाय जिनालय कर न्हौनादि ॥ १३१ ॥ नये वस्त्र धोए नित चीन, तिनै पहर ले भांड नवीन। खुष्क मंज कर अगनित पाय, ज्यूं कूपादिक तैं जल ल्याय ॥ १३२ ॥ विनय सहित प्रभु न्हवन सु करै, पूजन द्रव्य धोय फुनि धरै। स्थापनादि कर जज्ञ विधान, अंत विसरजन करै सुजान ॥ १३३ ॥ उज्जल वणज करै विन हिंस, क्रियाकोस तैं लख बुध हंस। वीधो अन्न न भख है कदा, दोय दाल जे विदुल जु सदा ॥ १३४ ॥ दही मही संग खैवो नांहि, दुदल मेवादिक या मांहि। फुनि मिष्टान मिलौ ही खाय, अंत महुरत सूक्षम थाय ॥ १३५ ॥

उक्तं च—गाथा इक्षु दही संयुत्त भवयत्तं समुत्थमाजीवा। अंते.महुत्त महे तम्मा भणंत जिण णाहु ॥ १३६ ॥

चौपाई—सब जीवनसैं मैत्री भाव, साधर्मी लख हर्ष बढाव। रहै मध्यस्थ मिथ्याती देख, दीन दुखी पै करुणा वेष ॥१३७॥ दान देय फुनि वित्त समान, धर्मातमसै वात्सल ठान। या विधि श्रावग क्रिया विशेष, कही बहुरि फुनि तपसी भेस

॥ १३८ ॥ थावर त्रसकी पालै दया, भूल न असत चवै श्रुत कह्या। सुपन मात्र ना करै संजोग, चोरी और नारीको भोग ॥ १३९ ॥ तिल तुस मात्र परिग्रह नांहि, निसदिन मगन रहै निज मांहि। इत्यादिक मुन कियौ उचार, तब नृप पुत्र लियौ इंकार ॥ १४० ॥ जितशत्रुको सोंपि सुराज, आप विचारौ आतम काज। चक्री हस्त जोडि सिरतान, मुनतैं भाखैं मधुरी बान ॥ १४१ ॥ हम बूडे भवदध मंझार, हस्तालवंन देह निकार। तुम समरथ नही दूजौ और, वारवार नमहुं कर जोर ॥१४२॥ भव समुद्रसैं काढनवती, रतन तरे श दिक्षा भगवती। शिव कन्याकी दूती युक्त, या आदरै मिलावै मुक्त ॥ १४३ ॥

इम गुरु वचन हियै धर लियौ, अंबर त्याग दिगम्बर भयौ। धरे महाव्रत दुद्धर पंच, तेरैविध चारित सब संच॥१४४॥ करन लगौ तप काय कलेस, सिहनक्रीडत आदि विशेष। पालै वृष दसलाक्षणी सार, रतनत्रय आचरै उदार ॥ १४५ ॥ ग्यारै अंगा पवि भयौ पार, पक्ष मासमैं लेय अहार। काय कषाय छीनकर मुनी, इकल विहारी विचरैं गुनी ॥ १४६ ॥ अप्रकंप आदि रिध सोय, केवल विना त्रिषष्टी जोय। तप बल सिद्ध भई ते सर्व, इत्यादिक गुण जुत विन गर्व ॥ १४७ ॥ कियौ विहार मुनी सब देस, तारे भवजन दे उपदेस। विहरत२ आये कहां गगन तिलक पर्वत है जहां ॥ १४८ ॥ दर्सन ग्यानचरण तप सार, आराधन आराधी च्यार। अंत समाधिमरण तिन कियौ, स्वर्ग सोलमें इंद्र सु भयौ ॥ १४९ ॥

अथ स्वर्गलोक महिमा वर्णनं।

चंद्रकांत माणी विद्रुम निसी, इंद्रनील माणि पन्ना तिसी। पुष्कर पीत सुरतनन मई, नानावरण भूमि निरमई ॥ १५० ॥ रात दिवसको भेद न जहां, रतन उद्योत निरंतर तहां। श्रेणिक प्रश्न करै तब एव, आयु तनी संख्या किम देव ॥ १५१ ॥

दोहा—गोतम भाखै भूप सुन, ज्यूं मानुष तन मांही।
अहिकाटै इक ठौर ही, लहर चढै सब ठांहि ॥१५२॥
तैसै ही नरक्षेत्रमैं, रात दिवस वरतंत।
ताहीतैं संख्या सकल, लोक मांहि निवसंत ॥१५३॥

चौपाई—मणि कंगूर कंचन प्राकार, तुंग सु कमलाग्रह उनहार। औंडी परखा सजल तरंग, हंस हंसनी विचरै संग ॥ १५४ ॥ नक्र चक्र मछ जलजंत, तीर तीर पाद पमघनंत। बने पौल उन्नत कलसंत, तोरन जुक्त धुजा लहकंत ॥ १५५ ॥ गृहपंक्ति रतनन चित्राम, ऐसे स्वर्गलोक पुर धाम। चंपक पारजात मंदार, असोक मालती करुनागार ॥ १५६ ॥ फूले फूल ही महकार, चैत वृक्ष दाडिम सहकार। ऐसे स्वर्ग रचाने बाग, देखत नैन बढै अनुराग ॥ १५७ ॥ विपुल वापिका सोहै सार, निरमल नीर सुधा उनहार। कंचन कमल मई छविवान, मानक खंड खचित सोपान ॥ १५८ ॥ फुनि सरवर निर्मल जल पूर, तिन तट रूंद सुरी सुर भूर। चकवा श्रीखंडी कारंड, पहनि मनुगुण गाय अखंड ॥ १५९ ॥

दोहा—कामधेनु सब गाय तित, सुरतरु तरु सब जोय ।
रत्न सु चिंतामण सकल, दिवसम जगमें न कोय ॥१६०॥

चौपाई—गान करै कहीं सुरसुंदरी, वन वीथी बैठी रस भरी । बीन मृदंग ताल झल्लरी, मधुर बजावै गुण आदरी ॥ १६१ ॥ जिन थुत लययुत करै उच्चार, तथा इंद्र गुण वरणै सार । सक्र सुनत धर हर्ष अभंग, कहीं देवगण वनिता संग ॥ १६२ ॥ लीला वन विचरै मन चाय, मंडप लता सु गिरैपै छाय । पुष्प सेज रच क्रीडा करै, हर्ष सहित आनंद उर धरै ॥ १६३ ॥ मंद सुगंध है नित वाय, पुष्परयण रंजित सुखदाय । आंधी मेह न कब ही होय, ताप तुसार न व्यापै कोय ॥ १६४॥ रितुकी रीत फिरै नही कदा, सोमकाल सुखदायक सदा । छत्रभंग चौरी उतपात, सुपनै नाहि उपद्रव जात ॥ १६५ ॥ ईत भीत भय चाल न होय, वैरी दुष्ट न दीसै कोय। रोगी दोषी दुखिया दीन, वृद्ध वैस्य गुण संपत हीन ॥ १६६ ॥ बढ़ती अंग विकलता कही, कु विभचार स्वर्गमें नहीं । सहज सोम सुंदर सरवंग, सम आभर्ण अलंकृत अंग ॥ १६७ ॥ लक्षन लक्षित सुरभ शरीर, रिद्ध सिद्ध मंदिर मन धीर । कामसरूपी आनंदकंद, कामनि नेत्र कमलनी चंद ॥ १६८ ॥ वदन प्रसन्न प्रीत रस भरे, विनय बुद्ध विद्या आगरे । यों बहुगुण मंडित स्वयमेव, ऐसे स्वर्ग निवासी देव ॥ १६९ ॥

ढाल दोहामैं—ललित वचन लीलावतीजी, शुभ लक्षन सुकमाल । ललना सहज सुगंध सुहावनीजी, यथा मलती माल

ललना, तिह सोभाको वरनवै ॥ १७० ॥ सील रूप लावन्य निधिजी, हाव भाव रस लीन। ललना सीमा शुभग सिंगार कीजी, सकल कला परवीन ललना तिह सोभाको वरनवै ॥ १७१ ॥ नृत्य गीत संगीत सुरजी, सब रस रीत मंझार। ललना कोविद होय सुभावसैं जी, स्वर्ग खंडकी नार। ललना तिन शोभाको वरनवै ॥१७२॥ पंचेंद्री मनको महाजी, जे जगमें सुख हेत। ललना तिन सबहीको जानियोजी। स्वर्ग लोक संकेत ललना, तिह शोभाको वरनवै ॥ १७३ ॥

चौपाई–देव लोक महिमा असमान, सुन्दर अच्युत स्वर्ग सु थान। तहां सतांकर नाम विमान, तित उतपात सिला सुखदान ॥ १७४ ॥ कोमल मीडन पुष्प सरीस, तहां जन्म धारौ सु ईस। उपजौ संपुट गर्भ मंझार, तेज पुंज सुंदर अविकार ॥१७५॥ मानौ जल धर पटल प्रचंड, प्रगट भयो जुदा मनी दंड। अथवा प्राची दिसा मंझार, ऊगो बाल सूर्य उनहार ॥ १७६ ॥ एक महुरतमैं सो तवै, संपूरण तन धारौ फवै। किधौ रतनकी सिज्या त्याग, सोवत उठौ कवर बडभाग ॥ १७७ ॥ सप्त धात मल वर्जित काय, अति सरूप आनन सोभाय। मणि करीट माथै जगमगै, कानन कुंडल ससि दुति भगै ॥ १७८ ॥ कंठ कंठिका हियरे हार, खग चल मध्य जु गंगाधार। कटि कटि मेख जुत किंकनी, मेर गिरदजू रिख सोहनी ॥ १७९ ॥ भुज भूखन भूषित भुज सोय, कर केयूरि

पोहची जुत सोय। अगुरिनिमध्य मुद्रिका ठनी, पगमें जन जुत मन किंकनी ॥ १८० ॥

दोहा—अंग अंग इत्यादि बहु, सब आभरण धरंत।
भूषणांग मनु कल्प तरु, भूषण जुत सोहंत ॥ १८१ ॥

चाल छंद—क्रम क्रम दिस देखै सारी, दग कोर कान तग धारी। चकृत चित हुवौ तामा, मैको आयौ किप धामा ॥ १८२ ॥ अहो को उत्तम ऐ देसा, सब संपत थान विसेषा। मणि जडित कनक आगारे, दीसै सुर अपसर सारे ॥ १८३ ॥ अति तुंग महल दुति हो है, मध सम मंडप मन मोहै। विष्टर अद्भुद ए ठामा, मनो मेर सिखर अभिरामा ॥ १८४ ॥ अनुपम ए निरत कराई, मनगीत श्रवन सुखदाई। विलावन्न तरोवर नारी, दध लहर यथा उनहारी ॥ १८५ ॥ एह तुंग करी मद माते, गण अस्व खडे हिननाते। कंचन रथ भृत दल आवै, मो प्रत ए सब सिर न्यावै ॥ १८६ ॥ सब हर्ष भरे मुझ देखै, फुनि विनती सुंदर पेखै। जै जै रवि कर विहसाई, कारन जानो नहि जाई ॥ १८७ ॥ इर जाल तथा सुपनाहै, कै माया भ्रम उपनाहै। मववायौ चित कराई, पै निरणै हो कछु नाई ॥ १८८ ॥ तिस थान सचित सुर ज्ञानी, मन बात अवधि सूं जानी। वच भनै जोग सिर नाई, संसै हर श्रवन सुहाई ॥ १८९ ॥ हम अरज सुनो सुर राजा, सुर जन्म सफल सब आजा। हम भए सनाथ अबारा, प्रभु जन्म हमारा सुधारा

॥ १९० ॥ रवि उदय सरोज सुखंडा, विगसै जिम भाग प्रचंडा। इम नंद वृद्ध देऽसीसा, चिर राज करौ सुर ईसा ॥ १९१ ॥ हे नाथ ए उत्तम ठामा, दिव सोलमें अच्युत नामा। जग सार लछको एहा, सद भोग निरंतर गेहा ॥ १९२ ॥ तुम इंद्र भए इस थान, व्रत पूर्व सुभव फल जान। सब सुर ए दास तुम्हारे, परवार सुजन ए सारे ॥ १९३ ॥ ए सुंदर मंडल नारी, तुम आय सचइ मनु हारी। एमइकी लावनि खाना, सब सुरि इन मानै आना ॥ १९४ ॥ उर जान महलए त्वंगा, चमु छत्र चवरस पतंगा। धुज विष्टर आदि मनोग, सब संपत ए तुम जोग ॥ १९५ ॥

छप्पै—अवधिज्ञानतें इन्द्र जान सब तसु वचनांतर। मैं पूरव तप कियौ कर्म दंडे वृष तसकर ॥ सब जीवनको अभैदान दिय अपने सम लख सह उपसर्गहै, धीरज यो मोहादिकको पख। कर काम विषम वैरी सुवस ॥ फुनि कषाय वन जालियौ, जिन आन अखंडत सीस घर। निरदोष चरनप्रति पालियौ ॥ १९६ ॥ इमसे यो जिन धर्म्म तासु फल लह्यो थान युज। दुरगत पाप निवार कियो तिन इंद्र आनभुज ॥ सो अब सुल्लभ नांहि भोग संजोग पथ लहै। राग आग दुखदाय चरन जल विना नगल है ॥ सो सुरगतिमें कारण नही व्रतको उदै ना या विषै। ह्या सम्यकको अधिकार है, मल संकादिन जा विषै ॥ १९७ ॥ कै जिनवरकी भक्ति और दीखै न धर्म इत। इम विचार जिन भजन हेत हर उठौ प्रियन युत ॥ सुधा वापि कर

न्हवन गयो जित मणिमय जिनवर । रतन बिंब वंदे सु भक्ति-युत सीस नवाकर ॥ ले द्रव्य अष्ट पूजा करी, पाठ पढो श्रुत हर्ष कर । फुनि चैतवृक्ष जिनबिंब जित, उछव कीनो तहां सुवर ॥ १९८ ॥

सवैया ३१—ऐसे बहो पुन्य कियो फेरि निज लक्ष गही भोग भुंजै सुलोकोत्तम सहजही । प्रथम संठान रूप वैक्रियक सुलक्षन मृदु गंध वपुगण सहजही ॥ पलक न लगै मल नख कचप सेव न जरा चिंता रोग सोग सोग भय सब भजही । कलेस अलप मृतु यामैं इरक न एक अणमादि आठ रिध तासु सिद्ध कजही ॥ १९९ ॥ स्वर्ग सुखकी अपार कथा कौन सुधी कहै सुंदर बिमान बैठ नभपथ इछत जीवै मरे, जिन भौन कभी कुलाचलाद्रपै दीपोदध असंख जु तामैं कविगछत । वर्ष वर्ष मांहि तीनवार नंदीसर जाय पंचकल्यानक जिन नमि सम लछत ॥ और केवलीके दोय कल्यानक पूजै आय निज कोठ थिर जिनवानी सुन इछत ॥ २०० ॥ सभा सिंहासन बैठ इर देव सुर प्रति हित उपदेस करै तत्व वृषभन है । जे सुर सम्यक् विना तप बल देव भये तीनै धर्म वच भासै श्रद्धाकु करन है । इत्यादि अनेक विधि महा सुभ संचै सुर दर्स ज्ञान मणिखनि चारित्र नग्न है । वृष वासना संयुत कर पुन्य फल भोग कवि सुन देवी गान लख नृत गन है ॥ २०१ ॥ सिंगार सुरस लीन हाव भाव जोवै कभी हास कथा वन क्रीडा सुर संग कर है । *नाना विधि विलास यो कर दिन प्रति सुखद धर्मै मगन*

तनु तीन तुंग करि है॥ बाईस सागर आयु ग्यारे मास समिछे सास बाईस हजार वर्ष गये असन कर है। सुधार्में डकारले यमनमै त्रपत होय षष्टम नरक ताई औध वैक्री कर है॥२०२॥

दोहा—असंख्यात सुर सेव पद, सुरिंद्रग कंज दिनेस।
यूं पूरव कृत पुन्य सू, भोगै भोग सुरेश॥ २०३॥

गोतमस्वामी यों कहै, सुणि श्रेणक वर राय।
कहां इंद्र अहमिंद्र पद, जन्म धरै फिर आय॥ २०४॥

जैनधर्म नृपकी धुजा, लोक सिखर फरकंत।
गुण भद्र गुरु संग्रहो, सुनतु लाल हरखंत॥ २०५॥

इति श्रीचंद्रप्रभचरित्रे चतुर्थभवसोलम स्वर्गे इन्द्रपद प्राप्ति वर्णनो नाम सप्तम संधि: समाप्तम्॥ ७॥

अष्टम संधि ।

दोहा–वंदों श्री सर्वज्ञ पद, गुर गुणभद्र मनाय ।
जिन नग मुख द्रहतैं प्रगट, गंग सारदा माय ॥१॥
नमन करू मन वचन तन, हस्त जोडि सिर न्याय ।
गौतम गणधर यों कहै, सुण श्रेणिक मन लाय ॥२॥

चौपाई–अब सो देव तहां तै गछ ताको भेद सुनो हो बछ । दीप धातुकी खंड गनेह, विजय मेरुतैं पूर्व विदेह ॥ ३ ॥ सीतातै दक्षण सोहंत, देश मंगलावती वसंत । सब विध मंगल पूरण धाम, वर मंगलावती यों नाम ॥ ४ ॥ तहां महीधर उन्नत लसै, नदी तिरंगत मानों हसै । नाना वृक्ष फले मन हरै, देव आय जित क्रीडा करै ॥ ५ ॥ लता साख पुष्प महेकहै, सुगी सुमन चूंटै गह गहै । गूंथे हार धरै पति कंठ, हर्षत भई तुरत उतकंठ ॥ ६ ॥ भोगातर सुर सु गावंत, नृत्य सुरी लख सुर हरषंत । तित वल्ली मंडफ अति बने, सुमन सुगंध साथ रेठने ॥ ७ ॥ तहां खेचरी लग क्रीडाय, दृढ आलिंगन चुंब कराय । रतिको खेद प्रस्वेदित अंग, मुक्ताफल सम झलक अभंग ॥ ८ ॥ मंद सुगंध वहै सुवयार, रतिको प्रसम हरन सुखकार । करै विहंगम केल अपार, सुंदर शब्द करै उच्चार ॥ ९ ॥ मानों पंथीजन ही बुलाय, जल पीवो फल भखो अघाय । इत्यादिक तिस देस मंझार, सोभा और अनेक निहार ॥ १० ॥ तहां रतन संचयपुर पुरी, निज छबि

करि सुरपुर छवि दुरी। तुंग कोटपर खाजलपूर, मानौ दधपुर गिरद इजूर ॥ ११ ॥ रतनपोल धुज तोरन खेंचे, विसद सदन विध नामनो रचे। ठौर ठौर रतनन चित्राम, रतनसंच सत्यारथ नाम ॥ १२ ॥ सघन बाजार गली सांकडो, जिनमंदिर जुत मुतियन लडी। तिनमैं उत्सव नितप्रति करै, नर नारी देखत मन हरै ॥ १३ ॥ महिमा पूर्व विदेह जु करो, सो सबही इत जानौ सही। पुन्ययोग सबही सुख धाम, राज करै सु कनकप्रभ नाम ॥ १४ ॥ कनक समान देह दुत धरै, लक्षन रतन जहां मन हरै। सत्य कनकप्रभ चंद्र समान, नृप क्षत्रगण सेवै आन ॥१५॥ ताकै कंचन माला वाम, कंचन देह सुगुण मणि धाम। रोहणी रति रंभा उनहार, कनक माल इम सत्य उचार ॥ १६ ॥ श्री जिन जज अनुकंपा धरै, वृत तप शील दान विस्तरै। भोग करै मन वंछित एम, इंद्र सचीवत सोहै जेम ॥ १७ ॥ भोग मगन कछु जान न परै, दिन सम एक छम छुर गरै। एक दिना निस अंत मंझार, सुपने सुंदर देखे नार ॥ १८ ॥ तद ही अच्युतेंद्रसौ चयौ, तासु गर्भमें आवत भयौ। गर्भ वृद्ध लख सुखित नरेस, कवल खिलै ज्यूं लखत दिनेस ॥ १९ ॥ पूरण मास सु दिन शुभ वार, तब ही पुत्र जन्म अवतार। जननी जनक धन्न उचरै, मंगलाचार बधाई करै ॥ २० ॥ सुंदर महला गावै रली, वाजे वाजै अति मंगली। दान दियौ नर पति हरषाय, जाचक लोग अजाची थाय ॥ २१ ॥ टेर जोतसी भाखौ लग्न, परे ऊंच ग्रह नीच सुमग्न। दिन दस

रावै बधाई करी, विविध पूजं जिनकी विस्तरी ॥२२॥ पद्मनाम तसु संग्या धार, पदमानन सुंदर अविकार। नाभनाल कीरत संयुक्त, पद्मनाम सत्यारथ उक्त ॥ २३ ॥ दिन दिन बाल बढे जूं चंद, मात पिता मन होत अनंद। हृदयकिरण शुभ लछमी गेह, जिन रवि लखत प्रफुल्लित देह ॥ २४ ॥ क्रम क्रम करि सिसु भयो कंवार, पढ लीनी विद्या सब सार। भयो तरुण जोबन मद लीन, राज धिया ब्याही परवीन ॥२५॥ स्वयंप्रभा सुप्रभा वपु चंद, कोमल अंग अधिक मकरंद। नवयौवन दंपति सुकुमार, सब रुत भोग भोगवै सार ॥ २६ ॥ तिन दोनोंके पुन्य पसाय, सुर्णनाभ सुत उपजो आय। एम कनकप्रभ नाम नरेंद्र, पुत्र पौत्र जुत सुखि अमंद ॥ २७ ॥ इक दिन घटा भई अंधियार, मानो निस छाई अधिकार। घन गरजैं मनो दुंदभी घुरे, वज्र खिवै मनो धुज फरहरे ॥ २८ ॥ जलकी वृष्ट भई असराल, जूं जिन जनक सु करत निहाल। सब ही पुरजन आनंद कंद, भयो अधिक जूं कमलनि चंद ॥ २९ ॥ मेघमाल थकि उगो सूर, मानो प्रात भयो तम दूर। गोधन रुके दिये मुकलाय, रंभ करे मुखनै अघाय ॥ ३० ॥ महकी धेनु वरस चूंचंत, अंतर प्रीत सु प्रगट करंत। पंक भई पुरमैं अधिकाय, वृद्ध व्रष सहक फंसि दुख पाय ॥ ३१ ॥ फुलवारी देखन नृप चल्यो, मगमें बैल कीचमैं ढलो। ताहि देख नृप भयो उदास, त्यों ही सब जग होय विनास ॥ ३२ ॥ इत्यादिक सुभ भावन भाय, तब ही बनमैं मुनि तट जाय। श्रीधर नाम

सु व्रत संयुक्त, ताकौ नमन कियो विष मुक्त ॥ ३३ ॥

दोहा—धर्म वृद्धि मुनवर दई, लीनी सीस चढाय ।

विनय सहित बैठो नृपत, इष्ट साधि पद मांहि ॥ ३४ ॥

पुत्र मित्र मंत्री त्रिया, पुरजन परजन संग ।

हाथ जोडि विनंती करै, धारै भक्ति अभंग ॥ ३५ ॥

प्रश्न करत प्रभु धर्मको, कहिये भेद बखान ।

तब श्रीमुन भाखै सु इम, सुनौ भव्य दे कान ॥ ३६ ॥

धर्म भेद द्वै जानियै, अनागार सागार ।

पंचेन्द्री मन वस यहन, पंच महाव्रत धार ॥ ३७ ॥

सोई मुनिवर धर्म्म है, फुनि श्रावक सुनि भेद ।

सो मानुष तिरजंचमैं, अनगति मांहि निखेद ॥ ३८ ॥

चौपाई—मैत्री मुदित दया माधिस्त, चारौ धरै सुबुध प्रसस्त । काहुको दुख वांछै नांहि, सब जीवन मूं मैत्री आहि ॥ ३९ ॥ सो मैत्री प्रमोद फुनि धरै, हरप सहित जिन भक्ति सु करै । जे संजमादि अधिक गुणवंत, लख सुन कर हो हरष अत्यंत ॥ ४० ॥ भूख रु प्यास सीत रोगादि, ताकरि पीडित जीव अनादि । तिनै देख करि करुणा करै, सो कारण हिये विस्तरै ॥ ४१ ॥ जो शिक्षा दायक नहि जोग, देव धर्म गुरु निंदक लोग । तिन सूं राग द्वेष नहि करै, सोमाधिस्त भावना धरै ॥ ४२ ॥ ए संसार शरीर अनित्य, अरु निज चितवनमैं दे चित । सो दीक्षाके सनमुख होय, पंच महाव्रत धारै सोय ॥ ४३ ॥ ताको भेद कहु सु बखान, नर नायक सुनिये दे

कान । मन वच तन प्रमाद जुत रहै, विन विवेक निस दिन भ्रम गहै ॥ ४४ ॥ प्राणी प्राण घात हो नित्य, सोई हिंस्या जानो मित्त । झूठ वचन भण सोय अलीक, विन दिये ले सो चोरी ठीक ॥ ४५ ॥ तिय मिलाप कर सेवै जोय, व्रत अब्रह्म कहावै सोय । ममता भाव परिग्रह मांहि, इनको त्यागि सु व्रत लहांहि ॥४६॥ इक माया अरु फुनि मिथ्यात, अग्र सोच ए तीनो घात । सल्ल रहित सोइ व्रतवंत, इम अनगार कह्यो भगवंत ॥ ४७ ॥

दोहा—राग सहित घरमैं वसै, करै धर्म बहु भेद ।
　　सरधा जुत जिन पद जजै, सो भवि भ्रमण उछेद ॥ ४८ ॥

कवित—जो जिनको अभिषेक करै नित, ताको न्हवन मेरपै होय । जल सूं बहुरि जजै श्री जिन पद, धोय कर्म मल उज्जल होय ॥ चंदन सो पूजै जिन नायक, भव आताप मिटावै सोय । अक्षत सूं प्रभु अग्र करै, नित अषय पद पावै भवि लोय ॥४९॥ पूजा करै पहुपसू जिनकी, मार मार धर सहज सुब्रह्म । चरसूं पूजै क्षुधा विनासै दीपग सूं लहि केवल पर्म ॥ धूप दसांगीसै वसु विध दह, फलतै फल पावै उत्कृष्ट, अर्घ चढाय लहै अनर्घ पद, जो जयमाल भनै धुन मिष्ट ॥५०॥ ताकी जयमाला सुर गावै, जो थुत करै तासु थुत इन्द । करै सु नृत्यारंभ जिनागे ता आगै नाचै सु सुरिंद ॥ जो प्रभु सुनम सुसुर सू गावै, ताहि सु जस गावै सुरराज । जो जिन आगै तूर बजावै ता घर देव दुन्दभी बाज ॥ ५१ ॥ जो जिनवर आगार करावै पावै स्वर्ग सु देव विमान । जो जिनबिंब करावै सो नर, हो है श्री जिन

पिता महान ॥ जो जिनन्दकी करे प्रतिष्ठा, ताही प्रतिष्ठा करै सुरेस। जो जन करे सकृत विधपूर्वक, सो निश्चै ही है सु जिनेस ॥ ५२ ॥

दोहा—बिंब प्रतिष्ठा जो करै, सो तिय हो जिन मात।
जाजै सीविधि आचरै, तैसो ही फल पात ॥ ५३ ॥

चौपाई—यह सु सराग धरम विध जान, फिर कछु रागसु उपशम ठान। तब ही अणु प्रतिग्या धरै, ग्यारै भेद तासु विस्तरै ॥ ५४ ॥ प्रथम सुदंसण पडिमा नाम, समकित शुद्ध धरै गुणधाम। इक जल बूंदमें जीव असंख, तामै शंका करै सु रंक ॥ ५५ ॥ जप तप पूजा दानरु शील, करकै वांछा करै कुचील। रोगी आदि अरुचि सु दृढ़ धरै, मूढ देखि दुरंग छा करै ॥ ५६ ॥ मिथ्यादृष्टिकी परसंस, वा अस्तुत करहै बुध धुंस। ए पण अतीचार त्यागंत, सातौ भय विन सो दृगवंत ॥ ५७ ॥ दूजी व्रत प्रतिमा कही, बारै भेद तासुके सही ॥ प्रथम अहिंसा अणुव्रत दक्ष, जंगम जीव सर्वता रक्ष ॥ ५८ ॥ पण थावर हिंसा कछु वर्तं, जामै यतनाचार प्रवर्त। ताके अतीचार है पंच, जो त्यागै सोई व्रत रंच ॥ ५९ ॥ बन्ध सु रस्सादिकसै बांध, लकडी चाबूक अधिक साध। तासूं मारै बध पुन छेद, नास करण इत्यादिक भेद ॥ ६० ॥

अधिक प्रमाण धरै वो भार, अति भारारोपण सु निहार। अन्य पान त्रण मने करेह, अन जल रोव कहावै येह ॥ ६१ ॥ दूजो असत त्याग व्रत अणो, दया पालै

जो झूठ वि भणे। और भांत ना बोलै रंच, ताके भी दूसण है पंच ॥ ६२॥ जो झूठो देवे उपदेस, ए मिथ्योपदेसको भेस। लुकी बात को करै प्रकास, सो रहुवा व्याख्यान सुभास ॥ ६३॥ कागद मांहि झूठ ही लिखै, अथवा झूठी साखि सु अखै। कूटक लेख क्रिया तीसरी, बहुरि धरोहर राखै धरी ॥ ६४॥ ताकू नटै व कमती देह, नास प्रहार कहावै एह। मुख दिग अधर वृक अवलोय, मरम जानि फुनि भाषे सोय ॥ ६५॥ सो साकार मंत्र है यहै, फुनि अस्तेय अणुव्रत गहै। तृण लकडी सर वापी कूप, जल ले बिना दिये हे भूप ॥ ६६॥

अरु विना दिये न लेवै रंच, ताके अतीचार भी पंच। चोरीको देवे उपदेस, फुनि राखै उपयोग विशेष ॥ ६७॥ ऽस्तेन प्रयोग प्रथम ये जान, दूजो नाम दाहृत दान। चोरी वस्त मोल कूं लेय, फुनि नृप आज्ञा उलंधि करेय ॥ ६८॥ राजातिक्रम नाम विरुद्ध, फुनि मानौं न मान हिन अद्ध। अधिक लेय अरु दे अस्तोक, प्रति रूपक विवहार अवलोक ॥ ६९॥ खरे दर्व में खोटो दर्व, सो मिलाय कर वेचै सर्व। इनको त्याग अचोरज ग्रहै, अतीचार बिन श्रावग वहै ॥ ७०॥ चौथो ब्रह्मचर्य अणुव्रत, पर दारा त्यागै सब नित्य। स्व दारामैं तोष गहाय, प्रोषध दिवस दु रात्र तजाय ॥ ७१॥ पर्व दिवसमैं सेवन रंच, ताके अतिचार भी पंच। पर विवाह करवावै जोष, पर विवाह करणा ये दोष ॥ ७२॥ तुरिका नाम कुसीली नार, परिग्रहित कोई भरतार। अपरगृहीत वेस्यादिक जान,

तिन प्रति गमन न करि बुधवान ॥ ७३ ॥ लिंग जोनि बिन अंग स्पर्श, सो अनंग क्रीडा ही दर्श। बहुरि कामके अधिक प्रमाण, काम तीव्र है ताको नाम ॥ ७४ ॥ नित प्रति इन पांचनमें भाव, सोई भव वेस्या हे राव। इनि कूं त्याग सीलव्रत धरे, सो लघु ब्रह्मचर्य अनुसरे ॥ ७५ ॥ पंचम परिगृह अणुव्रत नाम, करे वस्त मरजादा ताम। सो प्रमाद वस वीसर जाय, लोभ उदै वा अधिक बताय ॥ ७६ ॥ स्यामल पुत्र नाममें रहै, ताको नाम धारि करगहै। ताके अतीचार है पंच, क्षेत्र वास्तु इक दोनों संच ॥ ७७ ॥ खेत्र सुखेत बाग इत्यादि, वस्तु महल गढ़ बैठक आदि। हिर्ण स्वर्ण दोनों इकवार, हिरन्य सुरूपादिक व्यवहार ॥ ७८ ॥ स्वर्ण स्वर्ण धन धान्य सु एक, धन गो महषी आदि अनेक। धान्य साल्य आदिक जो नाज, दासी दास दोऊ इक साज ॥ ७९ ॥ दासी चेरी दास गुलाम, कूप कपास रू सेसम नाम। तथा भांड भाजन आभर्ण, वस्त्रादिक सब संख्या कर्न ॥ ८० ॥

अधिक बढ़ावै नाही रंच, अतीचारसो त्यागे पंच। पंच अणुव्रतको ये लहे, पच्चीस अतीचार गुर कहे ॥ ८१ ॥ तीन गुणो व्रत सुण भूपार, प्रथम सु दिग्व्रत इम निरधार। च्यारि दिशा फुन विदिशा च्यारि, उर्द्ध अधो दस करै समार ॥ ८२ ॥ इनकी संख्या श्रावक संच, ताके अतीचार भी पंच। प्रथम सु उर्द्ध अधिक मरजाद, पर्वत पै चढनो सोवाद ॥ ८३ ॥ अधो सु कूपादिकमें पैठे, त्रिये त्रियग कंदरामें पैठे। लोभथकी संख्या

दिस वृद्ध, करै चतुर्थ यही छित वृद्ध ॥ ८४ ॥ फुनि मरजाद करी जो भूल, ए दिग्व्रत तणे पण शूल। बहुरि देश व्रत संख्या धरै, देश नगर बन नग तक करै ॥ ८५ ॥ तेहसैं आगै जाय न रंच, ताके अतीचार सुन पंच। भूप्रमाण से बाहर वस्त, मगवावै भेजै रु समस्त ॥ ८६ ॥ प्रथम आन इन याको नाम, प्रेम प्रयोग दुतिय दुख धाम। अन्य पुरुषकूं दे उपदेश, तुम ये करो लाभ है वेस ॥ ८७ ॥ हमरै जानेकी आखरी, तातै बैठ रहे निज घरी। शब्द नाम संख्या भू बाहर, जनकौं शब्द सुनाय उचार ॥ ८८ ॥ खांसी अरु खंखार जु करै, ताकर निज ममता विस्तरै। तुर्य नाम रूपाअनुपात, रूप दिखावै सब विख्यात ॥ ८९ ॥ सदशा भूमि वाज्य नरजोय, हस्त चरण सिर आदिक सोय। फुनि प्रमाण भू बाहर जने, कंकरादि छेप तिन कने॥९०॥

भेजै पत्री आदिक रोज, पत्र आयेको वांचै चोज। पुद्गल छेपा पंचम जोय, दिग्वृत अतीचार लख सोय।९१॥ फुनि जामै कछु नाही सिद्ध, नित प्रति होय पापकी वृद्ध। अनरथ दंड तासुको नाम, पंच भेद ताके दुख धाम ॥९२॥ इककी जीत एककी हार। यो मण दोष प्रधान्य निहार, हिंसाकौ उपदेश जु करै, सो पापोपदेश दूसरै ॥ ९३ ॥ तरु साखा फल पत्रसु हवै। जल सीचै फुनि भूमइ खनै। विना प्रयोजन अगनि जलाय, सो प्रमाद चर ना दुषदाय॥ ९४ ॥ तपक कुंत असि दंडसर चाप, कसी कुदाल कुठार सुपाप। विष काटा रस्सी फांसादि, इन कू मागी देय नसादि ॥ ९५ ॥ जो देवै

सो हिंस प्रदान, फुनि पंचमसु अशुभ श्रुति ज्ञान। कथा सुनत है रागरु द्वेष, क्रोध मान छल लोभ विशेष॥ ९६॥ संग्रामादिकमें अति प्रीत, सो कुश्रुत नमणो सुनमीत। वा हिंसक पशु पाले नांहि, स्वान मोर मंजार सुकांहि॥ ९७॥ लोहा लाख अस्र गुड़ तेल, जिम कंदादि वणज सब ठेल। ए सब त्याग करै गुणधाम, अनरथ दंड व्रतीए नाम॥९८॥ ताके अतिचार है पंच, त्याग करै सोई व्रत संच। हास्य सहित गारी जो देय। नीच ऊंचको भेद न लेय॥ ९९॥ सो कंदर्प प्रथम अतिचार सुनो कोत कुचको विस्तार। हास्य सहित गाली विभनै, देह कुचेष्टा भी फुनि ठनै॥ १००॥

अरु मोखरय्या बहु बकवाद, डीठपणासै करै अगाद। अथवा अस मिछादिक कर्म, बिना प्रयोजन इत उत फर्न॥१०१॥ बिना विचार काज सब करै, चौथो अतिचार सो धरै। खान रु पान वसनाभूषना, ऐसे करे प्रयोजन बिना॥ १०२॥ पंचम अतीचार सो थक्य, उपभोग रु भोगा नर थक्य। ऐसे तीन गुणव्रत दोष, पंद्रह त्याग करै बुध कोष॥ १०३॥ बहुरि च्यारि सिष्या व्रत धार, वीसों अतिचार निरवार। प्रथम सु सामायक व्रत करै, राग द्वेष तज समता धरै॥ १०४॥ प्रात मध्य संध्या त्रय समै, एक दोय त्रिमहुरत पमैं। ताके अतीचार पण त्याग, मन वच काय अन्यथा लाग॥ १०५॥ सामायकमें थिर ना रहै, दोष तीन प्रण प्राव्य सु लहै। फुनि [illegible] वाही फेरै, [illegible] सो धरै॥ १०६॥ अती-

क्रमण आलोचन आदि, भूल सु जाय पर्ने कर याद। स्मृति तुष स्थापिना अंत, पांचो अतीचार तज संत ॥ १०७॥ अष्टमि और चतुर्दशी दिना, प्रोषध धरै सुगुरु इम मना। जिन मंदिर वा भूमि मसान, द्वादस षोडस पहर प्रमान ॥ १०८ ॥ विन देखे विन झारे धरा, धरै उठावे कर सांथरा। प्रोखध धर बैठे इक ठौर, देखि सुजीव बचाय बहोर ॥ १०९ ॥ सो प्रति वेछन अरथ निहार, सु कोमलोख करन तै झार। पीछी आदि प्रमर जन सोय, सुजुग अभाव करै सठ जोय ॥ ११० ॥

सो उत्सर्ग प्रथम ही भणा, भूमैं मल मूतर क्षेपणा। वा जिनपूजादिक उपकर्ण, पूजाद्रव्यरु पढ आमर्ण ॥ १११ ॥ विना लखे भू धरे उपाव, सो आदान दूसरो भाव। बहुरि बिछोणादिक सांतरा, सो सर ओपक्रमण तीसरा ॥ ११२ ॥ क्षुधा तृषाकर पीडित होय, प्रोषध वैश्य क्रियामें जोय। काल हर्ष बिन पूरा करै, तूर्य अनादर दूषण धरै ॥ ११३ ॥ बहुरि क्रिया नहीं राखे याद, फुनि २ भूल करै सो याद। सो संस्मृत नुस्थापन जान, पंचम अतीचार ए मान ॥ ११४ ॥ भोगुप-भोग करै परमान, सो तीजो सिष्याव्रत जान। एकबार भोगै सो भोग, बारबार भोगै उपभोग ॥ ११५ ॥ स्वादरुस्वाद लेय रूपेय, ए च्यारौंको भोग कहेय। वनता पट भूषण गृह आदि, ए च्यारोपभोग मरजाद ॥ ११६ ॥ इनको करै प्रमाण जु सोय, जम अरु नेम जान विध दोय। जो प्रमाण कर आयु प्रबंध, सो जमरूप कह्यो मतिवंत ॥ ११७ ॥ फुनि दिन वर्ष

पक्ष अरु मास, सो विध नेम जिनेस्वर भाष। ताके अतीचार तज पंच, प्रथमजु नेमि सचितको संच । ११८ ॥ भूल माखै विस्मरन मन जान, सचित अचित मिल द्रव्य प्रमान। जो कूले सो मिश्र निहार, तीजे पत्तलादिसु विचार। ११९ ॥ सचित मांहि धर भोजन खाय, सो सचित निछेप बताय। फुनि चौथेसु अमिरक वदेक, मषै अजोग वस्त अविवेक ॥ १२०॥

अथवा कामोद्दीपन आदि, जो त्यागै सो बुद्ध अनादि। पंचम कह्यो दुःक्काहार, वस्तु गरिष्ट तजै सु आहार ॥ १२१ ॥ पक्क अपक्क कछू इक होइ, दुखसै पचै तजै बुध सोय। चौथो शिष्याव्रत ए जान, अतित्थ संविभाग पवान ॥ १२२ ॥ जाकै तिथको नाहि विचार, सो अतित्थ मुनवर अणगार। ताकूं दे भोजन गुणधाम, अतित्थ संविभाग गुण नाम ॥ १२३ ॥ ताके अतिचार सुनि पंच, सचित द्रव्य पत्रादिक संच। तामें भोजन मुनको धरै, सो सचित निछे पावरै ॥ १२४ ॥ अथवा सचित वस्तुसे ढांक, सो अप धान्य दुतिय मुनि भाक। परको द्रव्य लायकर देय, वा परकूं आग्या सु करेय ॥ १२५ ॥ पर विपदेस तीसरो एह, बहुरि दान आदर बिन देह। वा दातासू ईर्षा करै, सो मात्सर्य तुर्य भ्रम धरै ॥ १२६ ॥ काल लंघि फुनि भोजन देय, पण कालातिक्रम सुमणेय। इनिको त्यागि धान जो करै, निरतिचार वृत्य सो धरै ॥ १२७ ॥

दोहा—कहिं इक चौथे व्रतमें, समाधमरण व्रत सार।
ताको भेद सु कहत हो, दर्शनादि विध चार ॥ १२८ ॥

चौपाई–दर्शनके गुण चितमें धरै, दूषण जान सकल परहरै। ग्यान विचारै पंच प्रकार, धरै जीव बिन कोन विहार ॥१२९॥ मूल भेद तेरह चारित्र, उत्तर भेदसु कहे विचित्र। तप बारह विधि ही निरधार, ए चौ आराधन विचार ॥ १३० ॥ मृत्यु निकट आए सो धरै, ताके अतीचार परहरै। शक्ति समान आप अनुसरै, अरु विशेषकौ चितवन करै ॥ १३१ ॥ जीवनिकी वांछा सुन आदि, मरण चाह दूजै गुणसादि। जीवत मरण संसय होय, दौ विधि दोष बखाने जोय ॥ १३२ ॥ मित्रन संग क्रीडा चितवै, सो मित्रानुरागी ही फवै। पूर्व भोग भोग सुमरे, वर्तमानमें वांछा धरै ॥ १३३ ॥ सो सु सुखान बंध हूं तुयं, बहुरि अगामी काल जु सये। तिन भोगनकी वांछा करै, सो निदान पंचम विस्तरै ॥ १३४ ॥

दोहा–दर्शनादि सल्येषना, तक चौदह परसिद्ध।
अतीचार सत्तर कहे, लख सर्वारथ सिद्ध ॥ १३५ ॥
व्रत धारै दूसण बिना, दुतिय प्रतिग्यावंत।
सो व्रत प्रतिमा दूसरी, सुण तीजो विरतंत ॥ १३६ ॥

चौपाई–सब जीवन सूं मैत्री करै, राग दोष तज समता धरै। एक स्थल बैठे स्थिर चित, ए विधि करै समायक नित्य ॥ १३७ ॥ अतीचार बतीसों टार, तासु भेद सुनियो भूपार। विनय रहित जु नमस्कारादि, क्रिया करै सु अनादार आदि ॥ १३८ ॥ पुनि विद्या मद उद्धत सजै, क्रिया अशुद्ध करै वपुजै। अति नजीक प्रतिमा सनमुखै, कर समायक प्रतिष्ट पखै

॥ १३९ ॥ करते अंप्रदा निजुर करे, सो प्रती पीडित चौथो धरे। पाठ समायक पढते भूल, वा सुधि पठ संसय मन झूल ॥१४०॥ पढो पाव अरु नांहि एह, ऐसे मन चंचल सु करेह। अथवा का यह लाव्रो करै, दोष दुला यत पंचम धरे॥ १४१ ॥ कर अंगुल अंकुस सम धरै, माल सुलाय नमन जो करै। षष्टम अंकुस दूसण जोय, करकट लाय सकुच तन होय ॥ १४२ ॥ कछप सप्तम दूषण पाय, करकट लाय शरीर हलाय। मछलीवत चंचल अति करै, सोमछली वत अष्टम धरे॥ १४३ ॥ सामायक करते हो धाम, लग संकलेस होय परणाम। मनो दुष्ट नवमो फुनि दसै, काय दाबि दृढ़ कर मन दसै ॥ १४४ ॥ संवोधन ग्यारम भय लखै, सुर नर पशु तनो भंग चै रखै। आप सुथिरन धर्म फल चाहि, गुर संग मय तैं करै अथाय ॥१४५॥ विभवी दोष बारमो होय, संगम दिच निमित्त कर सोय। पर मुखतैं निज महिमा चहै, गौरवर्द्ध तेरम श्रम हहै ॥ १४६ ॥ इन्द्री सुख चह मान बढाय, अपन माहा तम सवै दिखाय। गौर वयसो चौदमो मान, नित अतिचार पंद्रमो जान ॥१४७॥ निज औगन लोपै इम करै, गुरसै छिप सु समायक करै। फुनि गुरु आज्ञा बिना सु छंद, कर षोडस प्रति नीत सुमद ॥१४८॥ खुद कलह आदि कछु भाव, अन जीवनतै करै अथाव। सो प्रदुष्ट सत्रमो जान, फुनि तर्जित अठारमो मान ॥ १४९ ॥ गर्व भाव चित अविनय धरै, छुत प्रमाद गुर बाहर करै। इम [illegible] फुनि वृज मोने जु मनै, [illegible] दोष उनीसमो हनै ॥१५०॥

गुरु अविनय पाषंड न मान, माया माव हिलवसो जान। फुनि इकीसमो त्रिविलित दोष, जो ललाटमें त्रिवली पोष ॥ १५१ ॥ अथवा उदर त्रिवलि कर भंग, फुनि बाईसमो कुश्चित संग। करतैं सिर छिप तन संकोचि, फुनि तेईसमो दृष्टि सुमोचि ॥१५२॥ गुरु वा अन्य लषै सुष करे, विनय सहित अनि दृष्टि जु परे। जित प्रमाद स्वइछा जोक, मन तन चंचल दिस अवलोक ॥ १५३ ॥ फुनि गुरु वृद्धि मुनी ना लषै, मुद निज रूप समृद्ध तन लषै। मन तन चल अदिष्ट चोवीस, कर मोचन फुनि दोष पचीस ॥ १५४ ॥ लब्ध दोष छवीसमो चेत, संघ अन्य जन राजी हेत। पीछी ग्रंथादिक परिचाह, अब्ध सताईस सुण नरनाह ॥ १५५ ॥ षट्कर्मोंपर्ण गृहतने, प्रापति हेत समायक सने। ग्रन्थ अरथ विचार विनजेह, काल लंघ हिण ठाईस एह ॥ १५६ ॥ फुनि जल दीसै पाठ जु पढ़ै, अथवा बहुत कालमें पढ़ै। पढ़ पढ़ भूल रु जुत परमाद, उद्यत चूल सु उनतीस लादि ॥ १५७ ॥ मूकेवत जू हूं हूं करै, द्रग अंगुलनते संग्या धरै। मूक सु दोष तीसमो सोय, फुनिक तीसमो दादुर होय ॥ १५८ ॥ भेख सोरवत पाठ सु करै, एक स्थल थिर श्रुत उच्चरै। नुत पादादि मिष्ट सुर पोष, परम निरंजन चूलित दोष ॥ १५९ ॥

दोहा—दोष बत्तीस निवारिये, करै समायक शुद्ध।
सामायक प्रतिमा सुधर, त्रितीय पद अविरुद्ध ॥ १६० ॥

कवित्त—फुनि सप्तमी त्रोदसीके दिन, प्रथम जिनेन्द्र जे जै

कर भक्त। ग्रंथ सुनै फुनि मन वच तन, देकर मध्यान समक्ष इकभुक्त, फिर मसान वा जाय जिनालय, सोलै पहर मुनी सम ध्यान ॥ इम पौसध नोमी पदरस दिन, असन आदि दे मुनको दान ॥ १६१ ॥ अथवा दुखित भुखितकू दे, फेर आप करहै बुधवान। इह उतकिष्ट जाम द्वादस मधि, चलन हलन किरिया विन मान ॥ जघन जाम वसु थिर पदमासन, वा खडगासन सु अचल जु मेर। इम चौथौ पद धारक श्रावक, सुन पंचमकी विध फेरि ॥ १६२ ॥ कूप वापतै जल नहीं ल्यावै, कच्चा जल वरतै ना भूल। कोंपल पत्र वकल वल्ली, कंदमूल तरु फल अरु फूल ॥ भोग निमित्त वा औषध कारण, छेदन भेदन व्यंजन आदि। करतै छिजैन अंगरस परसै, सूंत ना इ सचित इत्यादि ॥ १६३ ॥

दोहा—आप करे न करावै अन, अन करतै ननमोद।
मनतैं वचतैं कायतैं, सचित त्याग मल सोद ॥१६४॥
विषयभोग इंद्रियजनत, विषसम जानै सोय।
घरमैं मुनिसम भाव ग्रह, पंचमपद अवलोय ॥१६५॥
रात्रभुक्त तज षष्टमी, ताको कथन सुनेय।
दिन कुशील निसभुक्त तज, तब नृप प्रश्न करेय ॥१६६॥
दिन कुशीलसे निसभखै, पंचमतक प्रथमाद।
गौतमस्वामी यूं कहै, सुनि श्रेणिक अहलादि ॥१६७॥

चौपाई—मानी दिम अष्टी जोय, निज श्रुत भण परनिंदक सोय। व्रत अतीक भी बहु कहै, पर मन रंज सुयम ठग लहै

॥ १६८ ॥ ऐसै कुटल मिथ्याती घने, तिनकी गणती कहां लौ गिनै। जे को तत्वज्ञान कर हीन, अरु जिनमारगमैं परवीन ॥ १६९ ॥ मिथ्यादिक समदिष्ट प्रजंत, व्रतकू ग्रहण करै बुधवंत। विषय कषाय तजै सुभ भजै, कोई मास पक्ष तिथ तजै ॥ १७० ॥ केई त्यागै आयु प्रजंत, केई निसको असन तजंत। केई जलको त्याग सु करै, केई दिवस तनौ अनुसरै ॥ १७१ ॥ तौ कैसे करहै व्रत वंत, कनक भूर जानौ निश्चंत। फुनि पंडित अरु ज्ञानी जोय, ऐसे जीव तुछ ही होय ॥ १७२॥ काज महंत करै तुछ कहै, सो परमातम पुर थल लहै। तातैं व्रत तौ जम ही रूप, दोस सहित भाखौ जिन भूप ॥ १७३ ॥

छप्पै–रात्र सोधरात्री सुपक अन्नादि धोवै, जल गालय इत्यादि दोस निस भोजन होवै। राग भावतैं अंग निरखिवा हास्य कतूहल, करै सपरसन देह बहुरि मर्दन करि हिलमिल, ए दिन कुसीलके दोस सब, त्यागै सो बुधवान नर, निस भुक्त त्याग षष्टम यही, परतग्या धारी सुवर ॥ १७४ ॥

चौपाई–सप्तम ब्रह्मचर्य ए नाम, इतस्व नारि तजै गुण धाम। सप्त कुधात भरी घिणगेह, नव मल द्वार श्रवै नित एह ॥१७५॥ मास मास प्रति स्रुद्र समान, तौपण थिरीभूत ना जान। तातै सील गहै जुतसार, षेत आडिरत नव निरधार॥ १७६ ॥

उक्तं च कवित्त–तिय थलवास प्रेमरस निरषत, देई प्रीत भाषत मुष वैन। पूरव भोग केल रस चिंतन गरबाहार लेत चित चैन॥ कर सुचि तन सिंगार बनावत त्रय प्रयंक मध्य

सुप सैन। मनमथ कथा उदर भर भोजन, ए नव वार सील मत नैन ॥ १७७ ॥

चौपाई—ए नव दूसण त्यागै जोय, शुद्ध शील धारै नर सोय। सोई सप्तम प्रतिमावंत, दस विधि अब्रह्म चिह्न धरंत ॥ १७८ ॥ महापुराण सुद्रिष्ट तरंग, तामांही दस अब्रह्म अंग। तहां देखि करियो निरधार, ग्रंथ बढनतैं मैंने उधार ॥१७९॥ अंतराय भोजनमैं सात, पढय सु त्यागै बुद्ध विख्यात। कोढी आदि अस्त निरजंत्व, दुतिय पल लख भुक्ति तजंत ॥१८०॥ रुधिर असन मध जियमृत टीक, पंचेंद्री मल मूत्र पुरीष। ए पंचम फुनि षष्टम चर्म, तजी वस्तुको असनम मर्म ॥ १८१ ॥ अंतराय सातौं ए त्याग, तब भोजन भुंजय बड़भाग। सतरै नेम चितारै नित्य, इकीम गुण धारै शुभ चित्त। १८२ ॥

दोहा—ए सप्तम प्रतिमा धनी, फुनि अष्टम सुन राय।

नाम त्याग आरंभ है, पापारंभ विहाय ॥ १८३ ॥

चौपाई—वसुपद धारि उदासी भव्य, शिव वांछी चितत कर्तव्य। जैसे तस्कर खीर चुराय, लायो कुटंब हेत सुखदाय ॥ १८४ ॥ फिरसों पंच थालमैं थाप, मात तात सुत तिय फुनि आप। फिर मण रूखी बिन मिष्टान, गयो लेन परजन सुखदान ॥१८५॥ पीछे तुरीय क्षुधा बस खाय, फिर मिजमान गयो इक आय। पंचम थाल सुताहि जिमाय, एतेमैं सो मठा स्याय ॥१८६॥ देखै तौ भोजनना हाल, खोजत पूठ भयो कुतवाल। तीन दिवसको भूखो चौर, गह तलवर बांधो सु भोर॥ १८७ ॥

फुनि मारो कीनो बेहाल, सब कुटंब मार्यो ततकाल। वैसे अहारंभको पाप, नरक विषै बूडै भो आप ॥१८८॥ इम विचार कर साखी पंच, ग्रहको भार पुत्र सिर संच। आप एकांत हुवो बुधराय, असन हेत टेरै तैं जाय॥ १८९॥ अपने भवनन अन्त सु कही, कछुक परिग्रह रखी संग्रही। फिर नौमी परिग्रह त्यागंत, तामैं ग्रह ममताको अंत ॥ १९० ॥ ... एकांत तिष्ट वृष सेय, प्रथम दिवस नौते तसु ... । असन करै अपने घर तथा, अथवा अन्न भोज सर्वथा ॥ १९१ ॥

कवित–दसमो अनुमत त्यागी श्रावक पापारंभ न देख कराय। असन मात्र भी मान न नोता भोजन समय बुलायो जाय॥ जो कोई टेरै ता घर जीमै विन नोते ये निश्च जान। एकादस प्रतिमा धारकके दोय भेद भाखे भगवान॥ १९२ ॥ इक क्षुल्लक इक ऐलक जानो क्षुल्लक ऊंच नीच कुल मांहि। नीच कुलोमैं दोय भेद है सपरस अपरस सुद्र कहाय॥ सपरस सुद्र छिये नहीं निंद्य। अपरस छिये जग करै गिलान॥ इम भंगी चंडाल चमाररु कोली भील इत्यादिक जान॥ १९३ ॥ जाट धोबी दरजी बढ़ही फुनि नाई लोध तंबोली आदि। असन समय श्रावक घर जावै, आंगन तक इनकी मरजाद॥ भक्तिवंत दाता इनि टेरै, आगे जाय न पात्र दिखाय। लख कुधाव विजात मुदित दे तत्र और घर व्रती लखाय॥ १९४ ॥ एक दोय वा पंच घरनतै असन लेयकर भुंजै सोय। पात्र न राखै ऊंच कुलो जो भुंजै भोजन थालमैं जोय॥ इक पट धरै पछे वरितनपै

नाभीनी अति मोटी नांहि। राग दोष भाव कर वर्जित सो क्षुल्लक कहिये जगमांहि ॥ १९५ ॥

गीताछंद–ऐलक लंगोटरु ग्रंथ पीछी कर कमंडल सोहना। सो नगन बिन इकीस परिग्रह सहै, मुनि सम मोहना ॥ फुन खड़ा होय सु अशन करहै बनवासिया धीर है। वर तीन कुलको होय उपजो सो ऐसी पदवी गहै ॥ १९६ ॥

दोहा–ग्यारे प्रतिमा इम कही, किरिया त्रेपन और।
गर्भान्वय आदिक सकल, गृही धर्म सिर मौर ॥ १९७ ॥
इम सुन द्वै विधि धर्मको, कियो सकल विस्तार।
सुन वैराग्यो कनकप्रभ, नमन कियो तनकार ॥ १९८ ॥

चौपाई–इम वृष सुनि निज पद थापि, नयो कनक प्रभु मुनको आप। भव वनमें प्रभु भ्रम्यो अपार, हस्तालंबन देहु विकार ॥ १९९ ॥ तब मुननै निज आग्या करी, जिन दीक्षा धरि भवदध तिरी। तब संयोग भाव प्रघटयो, अंबर त्यागि दिगम्बर भयो ॥ २०० ॥ भये मुनीश्वर बहु नृप लार, गहि चारित तेरै परकार। कनक नाभि आदिक जे और, श्रावक व्रत धारे गुन कोर ॥ २०१ ॥ दुद्धर तप धारै विध मुनी, धरै धरम दशलाछन गुनी। हिम ग्रीषम पावस तिहुंकाल, सहै परिसह गण गुणमाल ॥ २०२ ॥ इकल विहार जु पवन निसंग, ध्यान मेरवत निश्चल अंग। शुकल ध्यान कर घाती चार, पायो सु केवल मुक्त भंडार ॥ २०३ ॥ लोक अलोक प्रकाशक

सर्व, झूलकै जू हस्तावल दर्व । केवल मार्तंड जुत रस्म, मिथ्या मोह पटल कर भस्म ॥ २०४ ॥ धर्मामृतकी वृष्टि करंत, भव चात्रगकी तप्त हरंत । विहरे देस अनेक प्रवीन, अन्तम जोग निरोध सु कीन ॥ २०५ ॥

दोहा—सिद्ध थान इक समयमैं, लियो कनक प्रभदेव ।
श्रेणिक सो तुमको करौ, चिर मंगल स्वमेव ॥ २०६ ॥
तिहुं गुणभद्राचार्यने, कह्यो संस्कृत मांहि ।
भवजन हीरा सुन हरप, अष्टम संधि मांहि ॥ २०७ ॥

इति श्रीचंद्रप्रभचरित्रे पंचमभव पद्मनाभनरेन्द्रपद प्राप्त वर्णनो नाम अष्टम संधिः समाप्तम् ॥ ८ ॥

नवम संधि।

दोहा—वंदौ शांति जिनेश क्रम, शांति कर्म करतार।
शांति करौ सब जगतमें, शांति शांति दातार॥ १॥
शांति हेत गुणभद्र गुरु, करत कथा विस्तार।
गौतम स्वामी यौं कहै, सुनि श्रेणिक निरधार॥ २॥

छन्द वसंततिलका—श्रीधर मुनींद्र तट राय अणुव्रतधारे, वंदे पदाब्ज नर नायक घर सिधारे। हर्ष नरेश वर साधु सुदर्श लाह, सो कंच पित्त सु वियोग करंति नाह॥ ३॥ कांतार सोभितर देखत जाय राजा, अंबादि वृक्ष लखि सिंह करेन्द्र भाजा। कल्हार वल्लि जल पूरित ताल सोहै, इन्द्रादि देव तिरअंचन गादि मोहै॥ ४॥ आरूढ़ नाग परसेन सु संग आवै, छोरें दुफेन समचार ढरंति जावै। सिरछत्र धारि जस उज्जल चंद्र पर्म, गजेंद्र मध्य इव सोह जु इंद्र सर्म॥ ५॥

चौपाई—बाजे दुंदुभि बजै अपार, भटगण वृद्ध बलि उचार। नृत्य होत आनंद समेत, जाय लखी तब नगर सुकेत॥ ६॥ मानौ चपला झल झलकाय, इंद्रपुरी सम पुर सोभाय। सुनी नगरमें सुन नृप भयो, अपने सुतकौ राज सु दियो॥ ७॥ सो यह आवत अब हि कुमार, देख न चले सकल नर नार। अप अपनो सब काज विहाय, मानौ प्रलय उदधि उमहाय॥८॥ पंच लोग ले भेट अपार, जाय सुन जर करी भूपार। नमस्कार करिकै थुति अखै, नृप आनंद दृष्टि करि लखै॥ ९॥ धीर

दिलासा सबकूं देय, गये नगर मांही गुण गेय। राजभिषेक कंवरको कियो, सब पंचननै नृप मानियो ॥ १० ॥ मंत्री बांधव वर्ग मिलाय, चमू सहित दियो सिरोपाय। अपनी आज्ञा सब पै करी, फिर दिश साधन मनसा धरी ॥ ११ ॥ मारू बाजे तब बजवाय, दधि सम फौज लई संग राय। मगर मच्छ सम है गजराज, रथ धुज जुत मनु बने जिहाज ॥ १२ ॥ चंचल अस्व तरंग समान, पायक झक सम अपरमान। बाजन धुन मनु दधि गर्जना, चलो भूप आनंद धरि घना ॥ १३ ॥ पूरब दिशके देश अपार, जीते कंवर भुजाबल धार। सोभा हेत कटक सब संग, फिर दक्षण दिस चलो उमंग ॥ १४ ॥ जे बलवंत मान धन लिये, तिनकूं अपने सेवक किये। फुन पछिम दिशके भूपाल, वस किये न्यायो निजभाल ॥ १५ ॥ फिर उत्तर दिस रिपु सिर मौर, ते सब जीते निज बल कौर। तिन तैं भेंट लेय भूपाल, कन्या रतनादिक सु विमाल ॥ १६ ॥ घर आयो नृप हर्ष विसेस, करै राज इक छत्र नरेस। सीता निषध मध्य भूमंड, ताकी आज्ञा फिरै अखंड ॥ १७ ॥ इक दिन सभा मध्य महाराज, बैठो सोहै जूं सिरराज। तब ही वन-पालक सो आय, प्रतीहार सूं कहै सुनाय ॥ १८ ॥ विनंती इक करो नृप कनै, तब चर जाय सभामैं भनैं। महाराज बनपति थित द्वार, आज्ञा द्यो तो ल्याऊं हार ॥ १९ ॥ सुनि नृप तुरत दियो आदेश, तब किंकर आयो मुद भेस। बनपालकसैं कहियो आय, आवो तुमैं बुलावै राय ॥ २० ॥

गीताछंद—तब चलो आनंद धार माली भेट भर नृपको नयो। मन शिवंकर उद्यान माही साधु श्रीवर आवयो ॥ ता वन तने परभावसे फल फूल षटरितुके फरे। इकवार ही सब वृक्ष सूके फुनि सरोवर जल भरे ॥ २१ ॥ दुठ जे विरोधी जन्म जीव सुप्रीत आपसमें करै। फुन अंध निरखै मूक बोलै बधर सुन आनंद धरै ॥ तसु तन सपर्सन करि पवनसों लगै कुष्टी तन विषै। सो होय कंचन सम वपु तौ और महिमाको भाखै ॥ २२ ॥

दोहा—कर परोक्षि वंदन नृपति, वस्त्राभरण उतारि।

दिये लिये माली मुदित, डंका नगर मझार ॥ २३ ॥

चौपाई—दियौ लोक सुन हर्षित भये, सजि २ आय रायको नये। पुर परजन सेना ले लार, हय गय रथ सुकपाल मझार ॥ ॥२४॥ चढि चढि चले सकल नरनार, आगै बाजनकी झणकार। मानो इंद्र अखारे युक्त, चल्यौ जात नृप हर्ष संयुक्त ॥ २५ ॥ मुनके देख सवारी छोर, जा सिर न्याय दोय कर जोर। कर नमोस्तु बैठे जन भूर, ना अति निकट नहीं अति दूर ॥ २६ ॥ धर्मवृद्ध तब मुनवर दई, सुनि नृप मन संसय उपजई। धर्म नेम कहको मुननाथ, ताको भेद कहो विख्यात ॥ २७ ॥

दोहा—साधक है सुन राजई, जीवदया सो धर्म।

जीवदर्व प्रभु है नहीं, दया कहनसो मर्म ॥ २८ ॥

कवित—दया विना न पुन्य अघ दोनो, पुन्य पाप विन परणति नांहि। परगति विन सब सुरग नरक भ्रम अघ सुख

फल जिम विनको लाह। भू जल अगनि पवन गगन मिली पंचभूत आतम ठहराय। मिल गुड छालिम सक्ति मदिरा है त्यूं चैतनकी शक्ति कहाय ॥ २९ ॥ भोग छोड जे कष्ट सहै अति परगत हेत तपस्या धार। ते चिंतामण पाय वगेलत काग उडावन हेत गंवार ॥ केई एक ब्रह्म ही मानै जल थल अगन पवन पाषान। तरु आदिक सब एक ब्रह्ममें दूजा अन्न न कोई जान ॥ ३० ॥

केई क्षणभंगुर ही भाखै, षिण षिणमें जिय आवै और। केई इक करता ही मानै नये नये जीव बनावै और ॥ केईक मोष विषै आतम जो तसु, औ तारक है अगमांह। केयक ग्यान रहित शिव मानै ग्यान उपद् जुन जग भरमाय ॥ ३१ ॥ इत्यादिक भ्रमरूप कहत जग दे दृष्टांत पुष्टत सु करै। सो सब संसय दूर करौ मुनि नृप वच सुन साधु उच्चरै ॥ जीव बिना संसय काकै नृप, ए पुद्गल तन है जड रूप। तिन देखन जाननकी शक्ती, शक्ती गहै सोई चिद्रूप ॥ ३२ ॥ जगवासी पुद्गलके संग सु राग रु दोष भावकूं गहै। ताकर हिंस्या झूंठ तस्करी, फुनि कुशील परिग्रह बहु वहै ॥ पापारंभ करै इत्यादिक ता फल नर्क मांहि सो जाय। तथा दान सील तप संयम ता फल स्वर्ग मांहि उपजाय ॥ ३३ ॥

छपै—और कथा इक सुनौ भूप जो श्री जिन भाखी। जीव पुन्य फल पाय सत्य परगतकी साखी ॥ सुनत करौ निरधार दीप जम्बू दखण भूत। तहां आदि जिन भये रिषभ विष कर्म-

भूमि कृत ॥ तिन भरत आदि सत सुतनकौ राज दे दीक्षा धरी। नृप सहस चार ता संग ही विन ग्यान भक्तितै आदरी ॥३४॥ धरो ध्यान षटमास मौन गहि आतमें रत। नार अनुज नम विनय करै नुत राजसु जाचत ॥ ध्यान तनै परभाव धनिदको आसन कंपत। तुरत आय तिन दियो राज पग चल जुत संपत॥ जो स्वर तिथि तौ देवनै आय राय तिनकौ किये। इम जीव पुन्य फल परगति निश्चै करि नृप धरि हिये ॥३५॥ क्षुधा तृषादि परीषह आये सहन असमरथ। प्रभु सुत पुत्र मरीच बीचके मारगमैं रत ॥ तिन दण्डी मत कियो बकुलके अंबर पहरे। बन फल भख जल पीय जटा सिर नख बढायरे ॥ इम कुमति चलायो दुष्टनैं मर सप्तम नरकै गयो। इम जीव पाप फल परगति, हे नृप निश्चै धरि हियो ॥ ३६ ॥

दोहा—पाप पुन्य फल परगती, नास्तिक मति कहंत।

सो एकांत मिथ्यात पछ. मूरख जन धारंत ॥ ३७ ॥

कवित- फुनि जे एक ब्रह्म ही मानैं, सर्व जगतमैं ताको रूप। सो वह निर्मल जगत सहित मल, कैसै ताकी शक्ति सु भूप॥ जो सब जग इक रूप कहत है, केयक दुखी राय केइ सुखी। अरु सब एक रूप ही होते एक दुखी होते सब दुखी ॥ ३८ ॥ एक सुखी तैं सब हीको सुख होता नृप निश्चै करि एह। एक मरेतैं सब ही मरते इक जनमतैं सब जन्मेह ॥ जन्म जरामृत तन मन धन दुख रोग सोग जुत जग जन सर्व। इनसैं रहित सु परम ब्रह्म है, यातै वृथा कहै जुत गर्व ॥ ३९ ॥

दोहा–यों ब्रह्मवादी कहत हैं, सो सब मिथ्या जान ।
तास पक्ष तज भूप अब, करि जिनमत सरधान ॥ ४० ॥

छपै–फुनि हे नृप इक तनै आतम खिण खिणमैं अन । जे मानै तिनकों अब कहिय तले न देन ठन ॥ अथवा पुत्र पौत्रको जन्मरु मात तात प्रत । कैसैं यादि रही खिणमैं जीव अन्य भूत ॥ जो याद रहै तौ मत वृथा ए निश्चय करि होय थाप । बिन यादबन जहन असत जग, कोन देय हासल सु नृप ॥ ४१ ॥

दोहा–यह खिणकमती झूठ सदा, जगत रीत बुख रीत ।
दोनो ही तै जान नृप, अनेकांत ग्रह मीत ॥ ४२ ॥

कवित्त–केई करता वादी मान तन ये नये जीव करैं भगवान् । अरु ताहीकी इच्छा हो जब तब संघार करत है जान ॥ ताकों कहिय तहै सुन भाई, बालक कैसी लीला ठान । प्रथम सु नाना खेल बनावै पाछै ताकों हनै अग्यान ॥ ४३ ॥ जगमैं जो जाकूं उपजावै सो ताकों कहिय तहै तात । फिर वाको संघार करै सो सुतकी हत्या करै विख्यात ॥ राग भये जब पैदा करि है, दोष भये जब कर संघार । राग दोष जुत देवन कहिये, करै हरै ये खेद अपार ॥ ४४ ॥ देव खेद जुत कैसे मानै, जगवासी बत ताकों रूप । कुंभकार जो कलस बनावै ठसक लगै कोई फूटै भूप ॥ तौ वह भी अति खेद सुमानत, क्या तासम बुध वाकै नांहि । एक सुजीव हतै सो पापी, घने हते से कौन कहांहि ॥ ४५ ॥ अर जो वाको पाप न लागै धर्म दयामैं

क्यों भाषंत। जो इक पैदा करै प्रभु ही तौ क्यौं व्याह करै बुधवंत ॥ तौ सब सेवा वाकी करहै सुत चाहै सो देय तुरंत, जैसी जाकी भक्ति सुजानै तैसी ताकी साइ करंत ॥ ४६ ॥ फुनि जो करता जीव बनाए पहले कछु थाय अरु नांहि। जो कछु था तौ कौन अधिकता बहुरि कहो कछु थाहो नाहि ॥ तौ काकी प्रति जीव बनाये ताको भेद कहो समझाय। अरु करताको करता को है, फुनि जो स्वयं सिद्ध बतलाय ॥ ४७ ॥

दोहा—तौ करतापन हो वृथा, फुनि करता जु कहाय।

स्वयं सिद्धपन हो वृथा, इक पछतैं भ्रम थाय ॥ ४८ ॥

करता हरता जीवका, कोय न जगमें भूप।

जो करता हरता कहै, सो मिथ्या भ्रम रूप। ४९ ॥

सवैया ३१-केई अवतार वादी मोक्ष गये आतमको फेरि अवतार मानै ताको कहियत है। अपना बनायो सब जत सुत सुता सम सान ही कुवात मस्यो तन लहियत है ॥ माताको रुधिर पिता वीरजतैं उतपति माता जो चिगल गिलो हार अहीयत है। सर्वांग सकुचित उष्णताकी बाधा महा कष्ट सेती जन्म ऐसे दुःख सहियत है ॥ ५० ॥

कवित्त—महा मल सहित रहित परमातम कैसे यामें ले अवतार। अथवा सुतके पुत्र भयो जू, ऐसै कहत न मूर्ख गवार ॥ कहोकजगकू असुर देय दुख ता रक्षाको ले अवतार। तौ पै राक्षस किन उपजाए, ताके मने करो निरधार ॥ ५१ ॥ अरु जो काहीनै उपजाए प्रथम, बुद्धि कहो थी भया दूर। अरु जो

वेदा हुये सुद्ध थे, पाछे जगमें भये सुकूर ।। तिनके हतन हेत अनचाकर भेजन जोगहु ते निरधार । निज आए ते को महंत पन, क्रिया क्षुद्र मम जग अवतार ।। ५२ ।।

छपै-कोयक जगमें करै कुकर्म गहै नृप ताकौ । बंदीखानै देव तुछ जल अन्य सु बाकौ ।। कर फुरमायस बहुत द्रव्य दे छुटौ सुदातैं । फिर कोई कहै किह्वाई फुनि कहै सु तातैं ।। मैं ह्वायन जाऊं फिर कदा कोटि द्रव्य जो आवही । फुनि मारग होय तौ यह मलौ मृत्युमै अति दुख तित लही ।।५३।। त्यौंहा राग रु दोष ताहि करिकै सु जीव यौ । गह्यौ मोहनी कर्म भूपनै काराग्रह दियौ ।। सतगुरुको उपदेश पायकर जपतप संयम । सुकल ध्यान परभाव लह्यौ केवल सु अनुपम ।। फिर हर अघाति शिव थान लहि परमातम निजमें सुखी । सो फिर उतार जगके विषै लेकर क्यों होवे दुखी ।। ५४ ।।

दोहा-जो शिव आतमकूं कहै, लै जगमैं औतार ।
ते मिथ्याति जगतमें, भ्रमै भूप निरधार ।। ५५ ।।

सवैया २३-ग्यान विना शिव मानत केयक ग्यान उपाधि कहै सठ ऐसे । अन्न पदारथ जानन सक्ति सु सोइ उपाधि जाल हर जैसे ।। ग्यान अभाव होय सिव पावत अगनि विना कुधात सुख तैसें । ता सबकूं कहिये सुन भो बुध ज्ञान विना शिय भाषित कैसे ।। ५६ ।। अन्न पादरथ जानन ज्ञानसू आतमका सु सुभाव प्रसिद्ध । ग्यान अभाव अभाव सु आतम अगनत ताई विना न सिद्ध ।। दीपक सूर प्रकास विना जिम

आतमज्ञान विना सु विरुद्ध। जो गुण नास गुणी विनसै सति नास गुणी गुण केम सुबुद्ध ॥ ५७ ॥

कवित्त–तुछ ज्ञानी थोरोसो समझै, तातैं ताको तुछ सुख जान। जो विशेष ज्ञानी बहु समझै, तातै ताकै बहु सुख मान ॥ मति श्रुत अवधि मन पर्यय जेता जेता अधिक सुज्ञान। तेता तेता अधिक सु जानत, अधिक अधिक सुख तेम प्रवान ॥ ५८ ॥

सोरठा–कथा और चित्राम सुनै लखै समझै नहीं। हम सम मूढ न आन, ऐसे मनमैं ही दुखी ॥ ५९ ॥

सवैया ३१–द्रव्यके वसेव तुछ देखन जानन मांहि राग दोष भाव होय सो उपाधि मानियै। राग दोष विना जाको केवल सुबोध महा तामैं झलकै सु आय समेमैं प्रमानियै ॥ अतीत वरत भावी तीनौंकालके सु द्रव्य ताके गुण परजाय नंतानंत जानियै। ऐसो है सुज्ञान जाको ताको नास हो न कदा ऐसो शिववासी देव निश्चै उर आनिये ॥ ६० ॥

दोहा–ज्ञान रहित शिव जीवको, कहै मूढमति राय।
तातै ए सरधातना, गहो जैन सुखदाय ॥ ६१ ॥

चौपाई–इक इक पछतैं सब भ्रम रूप, अनेकांत तै सब सत भूप। ताको भेद सुनो मतिवंत, जो समझे सो सम्यकवंत ॥ ६२ ॥

कवित्त–जगमैं कछु ना थिर सब नासै, यातै नास्तिक भी सत जान। क्षमादिकमैं जीव एकसा सोई ब्रह्म कह्यौ भगवान ॥

एह नय अक्षवाद सत्यारथ, फुनि खिण खिणमें पलटै भाव। अक्ष अक्षरूप हो प्रणमै एह नय षिणक मत्त सतराव ॥ ६३ ॥ कर्त्ता कर्म और नहि दूजो, नाम गोत्र आयु इत्यादि। नइ नइ परजाय सु धारै एह नय कर्तापण है स्यादि ॥ तीर्थंकर चक्री हर प्रतिहर बल मक्रेस जन्म औतार। एह नय युक्ति कह्यौ अवतार रु ग्यान रहित शिव इम निरधार ॥६४॥ या तनमें मन राग दोष जुत जानन ज्ञान शक्ति निरधार। जबतक ऐसो ग्यान धरै जिय तब तकही भिरमें संसार ॥ सो उपाधि भाखी जिन नायक याको नास भये भौपार। यौ नृप ज्ञान विना शिव जानौ, समझै नाहीं मूढ गवार ॥६५॥ ऐसा जीव चतुर्गति माही, भटकै पाप पुन्य फल भोग। सो अनादि कालतैं भूपति नंतानंत जन्म संजोग ॥ तातैं सत्यारथ मारग गह, जो सुर सुफल है सहज नियोग। अनुभव म्यास करै शिवपद लह नातर फिर निगोद संजोग ॥ ६६ ॥

चौपाई—फुनि ए पुद्‌गलीक सब लोक, दीखै दग सूं गुरु अस्तोक। तक्ष अद्र समै धर्मा धर्म, काल अकासादिक ए पर्म ॥ ६७ ॥ पुद्‌गल अणुकर्म वर्गणा, देखै अन्यनि केवली विना। जीव अनादिते पुद्‌गल संग, मोहित राग दोष मग्न अंग ॥ ६८ ॥ मन वच तन जोगनसूं करै, तातै कर्माश्रव विस्तरै। सो दो विध सुभ पुन्य सरूप, असुभ पापमैं जानो भूप ॥ ६९ ॥ इक कषाय जुत सो सांपराय, इर्यापथ इकसो अकषाय। पंचेंद्रीनिकू दे सुक लाय, चो कषायमैं प्रवृत कराय

॥ ७० ॥ अवृत पंच माँहि परणवैं, अरु पचीस किरिया नही फवै। सब उनतालीस भेद सुजान, सांपराय आश्रवके मान ॥ ७१ ॥

दोहा-संसय कर कोऊ कहै, क्रिया भेद कहो कोन।
श्रीहरवंस पुराणमैं, देख लेय बुध मोन ॥ ७२ ॥
उद्यत भावन मूं जु इक, मंद भाव सू एक।
जाण अजाण पणे इकिक, भाव रु बल इकएक ॥ ७३ ॥
लखे तीव्र मंदा श्रवै, ए छह विधि सू जोय।
जैसो बीज सु बोइये, तैसो ही फल होय ॥ ७४ ॥
आश्रव आवन शक्तिता, जीवाजीवक होय।
भिन्न हुए आश्रव नहीं, निश्चै जानो सोय ॥ ७५ ॥

सवैया ३१-पापके आरंभको विचारि फुनि समगरी जोडि तिम कारजकूं करतन भांतिजी। फुनि मन वच तन तीनो जोग लगाव करतरुकाम वन कर्ता कुमरातजी ॥ क्रोध मान माया लोभ तासिके उदैसै आवै, आरंभादि तिननकूं तिगुण करातिजी। नव मनादिक भए कृतादिकसै सत्ताई क्रोधादिकसेती वसु पंत जो विख्यातजी ॥ ७६ ॥

छप्पय-आश्रव भेद वसु सत एही, निसि दिन आवैं ता रोकनके हेत मांलके मणिका गावै। वसु सतक हैं जिनराज निसाको पाप जु रोकै ॥ प्रातकाल की जाय दिवस अघसंख्या सोकै। ए सिध्या श्रावककौं कही विन जाप होवै विधि बंध फुनि इनपरिं बहु भेद धरि ज्यूं आश्रव तिहुं बंध ॥ ७७ ॥

कवित्त–सो आश्रव है दोय भेदको इक परवर्ति निर्वति सु एक। लिखि चित्राम क्रिया इत्यादिक सेती फेर मिटावै टेक॥ सो प्रवर्ति निवर्ति कषाय सूं क्रोधादिकके वसतै होय। बहुरि निक्षेपा च्यारि भेद है ज्यौंकी त्यौं थापै इक जोय॥७८॥ द्वितीय औरकी और सुथापै, तीज करै उतावल जान चौथै भूले करै इक नाही, च्यारि निछेपे ए परमान॥ जुग संजोग बाह्य आभ्यंतर अग्रहके संग आश्रव होय। त्रिनिसर्ग मन वच कायातैं, सब ग्यारै विधि आश्रव जोय॥ ७९॥ नीके तत्व अरथकूं जानै, जो पूछै न बतावै ताहि। तत्त प्रदोष नाम है याको, दूजो निन्हव सुण नर नाह॥ दर्सन ज्ञान तथा तिन जुत जो ना परसंस करत सुहाय। तथा ग्रंथ मांगो नहि दे है जोग पुरुष सू दगा कराय॥ ८०॥

दोहा–निन्हव दोषको अर्थ यह, भ्रमै नंत संसार।

मुक होय ग्यान न फुरै, मातसर्य त्रय मार॥ ८१॥

कवित्त–जाको सुबुधि सुधी पै आवै, पढन हेत ताकूं इम अखे। कहा पढै तु बुद्ध हीन है, भली वस्तुको देख न सकै॥ ग्रथमैं विघन करै दुमण तु, रिदेय असाता पंचम आहि। गुणी पुरुषको विनय न करि है, नागुण कहै कहै गुण नांहि॥ ८२॥

दोहा–एह उपाधि है षष्टमो, इन सु छहुतै जान।

ज्ञान दर्शनावरणको, आश्रव भण भगवान॥ ८३॥

पद्धड़ी–दुख सोक आताप विलाप, चार मारन दुखकारी वच उचार। इम छहतैस्व पर कहा राव, दुठ असद वेदनीकर्म आव॥ ८४॥

छप्पय–प्रथम भूत अनुकंप दया पालै षटकाया, दुतिय दान परधान व्रतीकूं दिय सुख पाया। त्रय सराग संयमी छठे गुणठाणाधिक है, जिय रक्षा षटकाय इंद्रि मनको वसि रख है॥ कर जोग सु मन वच काय, थिर क्रोधादि तजनसों छांति। सो इन पांचनतैं जानिये, हो सद वेदा भव पांत॥ ८५॥ प्रथम केवली दुतिथ शास्त्र त्रिय संग मुनादिक, तुर्य अहिंस्या धर्म पंचमैं स्व २ भवनादिक। इन पांचोंका अर्थ औरको और बखानै, दर्श मोहनी कर्माश्रवसो निश्चै ठानै॥ फुनि तिव्र कषायके उदयलिय, हो प्रणाम कारज करै। सो कर्म चरित्र सु मोहके, आश्रव कारण विस्तरै॥ ८६॥

चौपाई–बहु आरंभ परिग्रह घना, सो नरका युष आश्रव मना। माया पशुगति आश्रव करै, अल्पारंभ परिग्रह धरै॥८७॥ तथा सहज कोमल परणाम, सो मनुष युष आश्रव धाम। सील व्रत एको नहीं धरै, सो च्यारूं गति आश्रव वरै॥ ८८॥ श्राग संयमी श्रावक जाती, द्वितीय असंयम सो समकती। अकाम निर्जरा तीजै जान, इच्छा बिन जपतप बहु ठान॥८९॥ सहै परीषह कोमल भाव, तप अग्यान सु बाल कहाव। इनि पांचनितै सुर गति लहै, मन वच तन त्रिय वक्र सु रहै॥९०॥ दोहा–हठतैं और सु और कहैं, साधर्मी सु जोय।

विषमवाद सो असुम ही, नामाश्रव विधि सोय॥९१॥

सोरठा–जोग सरल त्रिय रीत कहै सत्यको सत्य ही। साधर्मी सूं प्रीत शुभ नामाश्रव विधि लखो॥ ९२॥ निर्मल

कर परणाम सोलहकारण भावना जो भावै बुधधाम, सो तीर्थंकर पद लहै ॥ ९३ ॥

अडिल-परकी निंद्या अपन बड़ाई कहत है, अपने गुनपर औगन प्रघट्यौ चहत है। अपने औगन परगुनको जो ढांकहै, नीच गोत्रको आश्रव ताकै भाख है ॥ ९४ ॥

चौपाई-अपनी निंद्या पर थुत अखै, अपने गुणपर औगन ढकै। निज नय चलै गुणीको विनै, निज बुध तप बहु मदन हि ठनै ॥ ९५ ॥ उच्च गोत्रको आश्रव यही, अन्तराय आश्रव सुन सही। धर्म काजमें विघन सु करै, बहुरि सु दान भक्ति विस्तरै ॥ ९६ ॥ तीन सु पात्र कुपात्र सु एक, भोग कुभोग सु आश्रव टेक। ए आश्रव भाख्यौ जिनराय, अब सुन बन्ध भेद नरराय ॥ ९७ ॥

गीता छन्द-मिथ्यात अव्रत फुनि प्रमाद कषाय जोग सदीवजी। बन्ध कारण कहे जिनवर इन सहित जो जीवजी ॥ पुद्गल प्रमाणे रूप आवै करमको जो गहत है। सो बंध प्रकृति सु आदि चवविध आप जिनवर कहत है ॥९८॥ सो जाननेकी शक्तिसे कै मति श्रुतादिक विध पण। फुनि देखनेकी शक्ति रोकै दर्शनावरणी भणं ॥ है सोइ नवविध चक्षु द्रगतैं अचक्षु मन इंद्री तुरी। फुनि अवधि केवल धार ए विध पंच निद्रा संग धरी ॥ ९९ ॥ जो अल्प सोवै श्वानवत्, सो करम निद्रा जानियै। फुनि बहुत सोवै सम दरिद्री, निद्रा निद्रा मानियै ॥ बैठो सु सोवै अर्द्ध मुद्रित, द्रग कछुक श्रुति प्रचला। फुनि सोवते कर चरण हालै, राल वह प्रचे प्रचला ॥ १०० ॥

दोहा–बोल उठै कारज करै, नींद न छांडे रंच।
स्थानगृद्ध सो नींद है, देखन शक्ति समुंच ॥ १०१ ॥
जास उदय दुख सुख लहै, जीव सुद्धय विधि जान।
सोइ वेदनी कर्म है, कह्यौ वीर भगवान ॥ १०२ ॥

चौपाई–कर्म मोहनी दो विधि ख्यात, दर्श मोहनी तीन मिथ्यात। चारित मोह कषाय पचीस, मिली दोनो सु भई अठवीस ॥ १०३ ॥ च्यारूं गतिमें थित जो धार, सोई आयु च्यारि परकार। आयु कर्म याहीको नाम, प्रकृति तिराणवै फुनि विधि नाम ॥ १०४ ॥ गति कहिये च्यारूं गति च्यार, जाति एकेन्द्री आदि निहार। पंच भेद फुनि पंच शरीर, आंगोपांग आदि त्रिय धीर ॥ १०५ ॥ जैसे जहां चाहिये चिह्न, तैसे तहां होत ये भिन्न सो निर्माण करम इक संच, पंच बन्ध संघातन पंच ॥ १०६ ॥ जैसो तन तैसो बधान, फुनि संघतन तावत मान षट संस्थान सषट संघनन, वसु सपर्श पंचरस धरन ॥ १०७ ॥ दोय गंध विधि पंच जु रंग, जो आगै तन होना संग। सोई आनपूरवी जान, च्यारि प्रकार सुगति सम मान ॥ १०८ ॥ जाके उदय न भारी देह, अगुर सोय फुन लघु सुन लेय। जाके उदय न हलवो होय, पुनि अपघात सुनो अवलोय ॥ १०९ ॥ कूप बावड़ी पर्वत सिंधु, सरता अगनि विषै पड अंध। विष भख कर रु शस्त्रतैं घात, इम निज मरण करै अपघात ॥ ११० ॥

एम उपद्रव परकूं करै, वांछना आपेकूं अनुसरै। जाके

उदय होय ये वात, सोई प्रकृति कही परघात ॥ १११ ॥
जाके उदय तेज तन होय, प्रकृति अताप कहावै सोय ।
जाके उदय देह उद्योत, सोई प्रकृति कही उद्योत ॥ ११२ ॥
जाके उदय होय उछास, सो उछास प्रकृति सुन भास । जास
उदै नभमैं गम करै, सो सुविहायोगति विध वरै ॥ ११३ ॥
इक तन समंधी इक जीव, सो परतेक प्रकृतकी सीव । इक
तनमैं बहु जीव बसंत, सो साधारण प्रकृति कहंत ॥ ११४ ॥
जाकै उदै वे इन्द्री आदि, लहै सोई त्रिस विध मर जाद ।
जासु उदै तन लहै इकेंद्र, सो थावर विध कहै जिनेंद्र ॥ ११५ ॥
जास उदै हो सबकू भला, सोई सुभगे करमकी कला । जास
उदै लग सबकूं बुरा, सोई दुर्भग विधि विस्तरा ॥ ११६ ॥
जास उदै सुकंठ पिक बैन, सोई सुसेर प्रकृत सुख दैन । जास
उदय वच समखर काग, सोई दुसुर प्रकृत फल लाग ॥ ११७ ॥
जास उदै तन सुंदर लहै, सो सुभ प्रकृति उदयको गहै । जास
उदय तन होय विरूप, सोई असुभ प्रकृतिको रूप ॥ ११८ ॥
जास उदय तन सूछम लहै, सोई सूछम प्रकृति सु गहै । जास
उदै बादर तन लहै, बादर नाम प्रकृति सो गहै ॥ ११९ ॥
जास उदय लहै सब परजाय, सो परयापति प्रकृति सु भाय ।
जास उदय लहै कम पजाय, सो अप्परजापति तन पाय ॥ १२० ॥

जाके उदय सुथिरता लहै, नाम कर्म इम सो थिर गहै ।
जास उदै थिरता नहीं होय, प्रकृति अथिर सु कहावै सोय
॥ १२१ ॥ जास उदै बहु आदर मान, सोई आदर प्रकृति

प्रमान। आदरमान न कोई करै, जास उदै सु अनादर धरै॥ १२२॥
बिन खरचे जगमें जस होय, जास उदै सो जस विधि जोय।
बहु धन खरचै जस नहीं रंच, जास उदै सो अजस विधंच
॥ १२३ ॥ जास उदय कीरत प्रघटंत, सोई कीरत नाम कहंत।
जस कीरत दोनों इक रूप, ताके भेद सुनो हो भूप ॥ १२४ ॥
कुल देसमें जस प्रघटंत, कीरत दूर देस फैलंत। नाम उदय
तीर्थंकर होय, सो तीर्थंकर प्रकृति विलोय ॥ १२५ ॥

नाम कर्म ए प्रकृति तिरानु, अब सुन गोत्र भेद दो मानु।
ऊंच वंसमें जन्मजु ऊंच, नीच वंसमें नीच ही सूच ॥ १२६ ॥
अंतराय विधि पंच प्रकार, प्रथम दान नहीं करै गवार। अंत
सु राय दान विध यहै, उद्यम करै न कौड़ी लहै ॥ १२७ ॥
लाभ अंतराय विधि सोय, खाद सुगंध वस्त घर होय। भोग
न सकै भोग अंतराय, षट भूषण रामादिक राय॥ १२८ ॥
सो उपभोग छतै नहीं भोग, अंतराय सोई उपभोग। जास
उदय उद्यम बलराय, फुर न सकै सुवीर्य अंतराय ॥ १२९ ॥
जाकै अनंतानुका उदा, ताकै सम्यक होय न कदा। उदय
अप्रत्या जाकै होय, श्रावक व्रत धर सकै न कोय ॥ १३० ॥
प्रत्याख्यान उदै आवरै, सो मुनिव्रत कबहु ना धरै। उदय च्यार
संज्वलन जु होय, यथाख्यात चारित नहीं कोय ॥ १३१ ॥
दोहा—ज्ञान दर्शनावरण जुग, जुग मिथ्यात अधीस।
नींद पंचत्रय चोकड़ी, सर्व घात इकीस ॥ १३२ ॥

संज्वलन चारि हास्यादि नव, ग्यान दर्स चव तीन ।
अंतराय पण अट्ठस इक, छत्तीस देस हण चीन ॥१३३॥
घात सैतालीस नीच दुख, नर्क आव इक एक ।
संस्थान संघनन वर्ण, पंच पंच रस ट्टेक ॥१३४॥
नर अन पसूगति पूरवी, दोय दोय वसु फास ।
गंध दोय इंद्री तुरी, अप्रसस्थ गत जास ॥१३५॥
अथिर अप्रजतुछ, साधारन थिर अपघात ।
असुभ दुर्भग दुसर अनादरो, अजस पापमई सम्य॥१३६॥
एक शतक जानियै, पुन्य प्रकृति अठसट्ठ ।
देव मनुष्य पशु आव त्रय, सातावेदिक ठट्ठ ॥१३७॥
ऊच गोत्र सुर नरगति, आनपूरवी दोय ।
इक निरमान रु स्वास इक, पंच पंच सुन सोय ॥१३८॥
बंधन संघात रु तन वरन रु रस पच्चीस ।
इकत्रस अंगोपांग त्रय, इक सुभ जुग गंधीस ॥१३९॥
वसु फर्स इक अगरु लघु, एक पंचेद्री जात ।
आदि ठान संहनन इक, इक बादर विख्यात ॥१४०॥
प्रत्येक सथिर परजास जस, अताप उद्योत प्रघात।
सुसुर सुभग आदर तीर्थ पुन्य प्रकृति विख्यात ॥१४१॥
ठैंतर जीव विपाककी, बासठ देह त्रिपाक ।
क्षेत्र विपाकी चार है, चार सु सुभव विपाक ॥१४२॥
आठ कर्मकी प्रकृति, एक सतक अठ तार ।
प्रकृतिबंध या विध कह्यो, थितबंध उपरि निहार॥१४३॥

उत्तपाद् त्रय बंधपर, प्रकृत उदय सो आय।
सो विपाक फल अनुमवै, तिमग्याना दिल हाय ॥१४४॥
करम उदयकूं भोगते, एक देस छय होय।
एक देससे निर्जरा, बंधनुभाग है सोय ॥१४६॥

अडिल्ल—असंख्यात परदेस जीव केईक कपै। पुगल अनंतानंत प्रमाण भिन लिखे ॥ सो प्रदेस ही बंध जिनेस्वरनै कहा। आश्रव काजु निरोध सोई संवर महा ॥ १४६ ॥

दोहा—तप आदिकतैं कर्म छय, सोइ निरजर जान।
शुद्ध आतमा होय तब, सोई मोक्ष प्रमाण ॥१४७॥

चौपाई—इत्यादिक मुनि धर्म बखान, राजा हर्षित भयौ प्रमान। पिछले भव सब पूछत भयौ, मुनि विस्तार सहित कहि दियौ ॥ १४८ ॥ श्री ब्रह्मा आदिक भव तनौ, सुनि नृप मन संशय ठनौ। मोकौ कैसे है इतबार, प्रतिछेद कछु करौ उचार ॥ १४९ ॥

सोरठा—दसमें दिन गज आय. करै उपद्रव नगरमें। तातैं हे नरराय. करि निश्चै मब कथनकौ ॥ १५० ॥ कैइयक मुनि व्रत धार, केइक श्रावक व्रत धरौ। कैइक समकित धार, यथा जोग्य सबने गहो ॥ १५१ ॥ फिर वंदन मुनिराय, करकै नृप घरकू चलै। आनंद हर्ष बढाय, बाजे भेरि निसान ठय ॥ १५२ ॥

चौपाई—नगरमांहि कीनो परवेश, निसदिन सुखमें जाय विशेष। दशमो दिवस पहुंतो आय, तब ही गज मायौ दुखदाय ॥१५२॥ कालवरण मुसलोपम दंत, गंडमूल पै अली भ्रमंत। मद धारा मनु वरषाकाल, जंगम गिरसम मनुज कराल ॥१५४॥

कंपत अंग फिरावत सूड, महावृक्ष पाडै जुं झूड। गिरसमकोट रूढाये पोल, मेर शिखरसम महल अमोल॥ १५५॥

हाटन पंकतिको बाजार, ढाव तवनक करे हाकार। जिह दिसकू गज भागो जाय, तिह दिसके सब लोक पलाय॥१५६॥ वारणके धक्के जो परौ, सो जम मंदिरकू अनुसरौ। रक्ष रक्ष कह भागे जाय, नृपके आंगन बहु जन आय॥ १५७॥ पूछे राय कहा यह भयौ, तब लोकननै सब कह दियौ। तब ही सबकूं धीर बधाय, आप ही गजके सनमुख जाय॥१५८॥ घनी देर तक क्रीडा करी, गजकी घात चुकाई भरी। कृष्ण वस्त्रकी गेंद बनाय, हथनीकी संज्ञा सुकराय॥ १५९॥ कुंजर सनमुख फेंकी भूप, सूंघन लागौ देख अनूप। मानौ करनी पौंहची आय, कंधे चढ़ौ दाव नृप पाय॥ १६०॥ मुष्ट प्रहार भालमें देय, फेरो गज मद रहित करेय। सौंप महावतकूं गज साल, बंधवायौ गजकूं भूपाल॥ १६१॥ महीपाल नृपको गज हुतो, बंध तुडाय आइयौ हुतौ। नृपनै तुरत ढूंढायौ ताहि, पाई खबर अजुध्या मांहि॥ १६२॥ पदमनाम नृप गंह बांधियौ, दूत बुलाय रु समझा दियौ। आदित प्रभुकौ कीनौ विदा, पदमनाम पै भेजौ तदा॥ १६३॥ जा प्रतोलिये ते उचार, महीपालको दूत दुवार। अग्या द्यौ ल्याऊं तुम तीर, नृपनै कह्या सु ल्यावौ वीर॥ १६४॥ तुरत आय लेय कर गयौ, दूत विनय सूं नृपकू नयौ। धन सुवंस धन भुजबली, दंवी पकडि दियौ सांकली॥ १६५॥

निज प्रतापते छिती वस करी, नृप अनेक सिर आग्या धरी। कोस देस सेना अधिकार, तातैं तुम सबमें सिरदार ॥ १६६ ॥ महीपाल नृप राजन ईस, हज्जारों नृप न्यावे सीस। ताको करी भूष यह जान, तुमकूं यादि किये बुधिवान ॥१६७॥ बहुत भेट अरु गज ले चलो, नमस्कार करि ताते मिलो। सो करहै तुमसे सनमान, करो राज निह कटक आन ॥ १६८ ॥ नृप सुत दूत बचन सुन जबै, क्रोधवंत है बोल्यो तबै। जो तेरे नृपमें बल भूर, चढि आवो लैके सब सूर ॥१६९॥ रणसंग्राम करो सो आय, जो जीते सो गज लेजाय। नातर हमरी आज्ञा वहो, देश तजो कै सिर न्या रहो ॥ १७० ॥ इम कह दूत दियो कढवाय, तुरत दूत निज पतपै जाय। नमस्कार करि कह्यो हवाल, सुनकर त्यार भयो महीपाल ॥ १७१ ॥ सरवधात औषधकी खान, बेल वृक्ष पशू अपरमान। ऐसो भूभृत है मण-कूट, ताके तल भूमिसम घूट ॥ १७२ ॥ तिह रण खेत ठरायो राय, पद्मनाभ रणभेरि दिवाय। सजकर चलो चमू ले संग, झरण झरण रथ चले अभंग ॥ १७३ ॥ तरुण तुरंग जुपे धुज जुक्त, मानो देव विमान सु उक्त। जंगम गिर सम वारण स्याम, मानो सुर कुंजर अभिराम ॥ १७४ ॥ चंचल हय छिन छिन कर घनो, गत मृदंग पौन सुत मनो। तिनके खुरन उठी रज छई, दिस दिस अंधिकार भई भई ॥१७५॥ भूकंपित करते चर चले, नाना शस्त्र हस्त धर भले। चक्र रु कुन्त धनुष सर गदा, भिंडमाल मुदगर परघदा ॥ १७६ ॥ सक्ति तुपक क्रोक्तं असि

दंड, इत्यादिक आयुध परचंड। नेक छोहनी दल ले रास, पोहचे मण कूट सुपास ॥१७७॥ मकराव्यू रच्यौ भूपाल, मगर-मक्ष सम सेना डाल। महीपाल वी सजकर चलौ, हय गय रथ पायक ले भलौ ॥ १७८ ॥ मगकी सोभा लखते जाय, वन परिवत सरिता सुखदाय। नेक छोहणी दल ले लार, ताकौ भेद सुनौ विस्तार ॥ १७९ ॥

सवैया ३१-एक रथ गज एक तीन घोडे पांच प्यादे आदि पत दुजे सेना सेनमुख सार है। चौथै गुल्म वाहन सु पांचमें पतन छठै चमू सप्त अनीकनी आठवैं सु धार है ॥ तिगुण तिगुण आठौ फिर दस गुणो कर आठसै सतर इकीस हजार है। तेते गज छस्सैदस पैसठहजार अस्व, प्यादे साढेतीन सतलाख नोहजार है ॥ १८० ॥

दोहा-आकर मण कूटाद्र तट, चक्राव्यू रच सार।
फिर जुग सेना लडत है, करत परस्पर मार ॥ १८१ ॥
जय रवजसकौ जिम गयौ, हेत सुलोचन जुद्ध।
तैसे ही उनको हुयौ, गजके हेत विरुद्ध ॥ १८२ ॥
जुद्ध बहुत दिन तक भयौ, को कवि करैं बखान।
महीपालको सीसवर, लुनो स्वर्णप्रभ आन ॥ १८३ ॥
सोका काथो नृपतिको, पद्मनाम लह जीत।
वाके सुतको राज दो, फिर घर आयो मीत ॥ १८४ ॥

चौपाई-विष्टरस्थ इक दिन दरबार, विबुध सु मध्य सक्र इव सार। अखिल सु भूप भेट धरनमैं, पदम सुनाम भूर बल-

पर्मै ॥ १८५ ॥ रणकी कथा चली तिहवार। तब भूपने इम उचार। देखो पुन्य भयो जब गोन, महीपालसे लइ अम मोन ॥ १८६ ॥ तौ अरु छुद्रतनी को कथा, मोहित जीव भूलियौ वृथा। संपति विपति लिये सुख सोग, जोबन जरा संयोग वियोग ॥ १८७ ॥ इत्यादिकसु अथिर सब जान, सर्ण बिना जिय होय हरान। जगवासी पर निज कर गहै, तू तिंहुकाल अकेलो रहे ॥ १८८ ॥ अरु चिन मूरति रूपी देह, सात कुधात भरी घिन गेह। या संग रागादिक कर सेय, विषय कषाय सु आश्रव एह ॥ १८९ ॥ तज रागादि गहै निज धर्म्म, सो संवर सुनि निर्जर धर्म्म। तप बल कर्म्म खिरै दुखदाय, लोक सरूप यथास्थित भाय ॥ १९० ॥ तू है ज्ञान सरूप सदीव, ताको जानन दुर्लभ जीव। इम विचार मन भयो वैराग, पदमनाम राजा बड़ भाग ॥ १९१ ॥ महीपाल पुत्रादिक जेह, तिनसै छिमा करी गुण गेह सुवर्ण नाम सुतको दे राज, आप चले वन दीक्षा काज ॥ १९२ ॥ विहरत आये श्रीधर मुनी, तिनतट जा नृप संस्तुत ठनी। धन्न दिगंबर अंबर बिना, पावस हिम ग्रीषम रितु गिना ॥ १९३ ॥ सुर नर पशु अचेतन कृत्य, सो उपसर्ग सहो तुम सत्य। धीर मेर सम निहचल अंग, शस्त्र विना जीत्यौ सु अनंग ॥ १९४ ॥ अंतर राग दोष छल कोह, मान लोभ मत्सर इन मोह। इत्यादिक जीते मुनिनाथ, सिर न्याऊं जोड़ूं जुग हाथ ॥ १९५ ॥ दुखसागर संसार असार, तातैं काढ करो भवपार। तब मुनि कहै सुनो नर नाह, नर भव

गयो मिलै फिर नाह ॥ १९६ ॥ तातै दस दिष्टांत अबार, कहुं सुनो जो जानौ सार । जाके सुनत होय वैराग, धर्म विखै बाढ़ै अनुराग ॥ १९७ ॥

दोहा—चोला फासा धान्य त्रय, इत रतन फुनि सुप्न ।
चक्र कूर्म जुडा सु नव, परमाणु दस क्रम्न ॥ १९८ ॥

अथ चौला दिष्टांत ।

सवैया ३१—चक्री पै चोलक भुक्त मांगै तासू पूछे नृप, जैसो होय तैसो देवै भेद सो बताईये । जाचक कहत ऐसे मुकटादि आभूषण, सुंदर वसन झीने मान दे पराईये ॥ चावलादि भोजन मनि छत षानेकूं देवै आप और पटराणी आदि पै दिवाईये । छहों षंडवर्त्ती भूप मंत्री सेना सेठ आदि सब परजाय भिन्न तैसे ही कराईये ॥ १९९ ॥

दोहा—पय यह मिलनो कठिन अति, होतो अचरज नांह ।
ताही तै नरभव कठिन, गयो मिले फिर नांह ॥ २०० ॥

अथ फांसा दिष्टांत ।

कवित्त—इक पुरस तक पोल पोलन, प्रतग्यारै ग्यारै सहस सुथंभ । थंभ थंभ प्रति छनवै बैठक, बैठक प्रतज्वारी जुत झिम । षेलै तिनमें इक ज्वारीन, पत मम ज्वारिनितै इम उचार । मम फांसा गेरुं जो जी तूं जीतो धन सब देह अबार ॥ २०१ ॥

दोहा—मानी सब तक फेंकियो, फांसा पुन्य वसाय ।
कहे जीत अचरज नहीं, गयो न नरभव पाय ॥ २०२ ॥

अथ धान्यक दिष्टांत।

जैसे एक महान नृप, सब परजाको अन्न। गर्त मांहि इकठो कियौ, फिर इम कहो सवन्न॥२०३॥ अपनेर अन्नको, कर पिछाण ले जांहि। ए बातै मिलनी कठिन हो, तो अजरज नाहि॥ २०४ ॥ पण मानुष भव अति कठिन, गयौ न आवै हात। जसे रतन समुद्रमैं, फेंकि मूढ़ पछतात॥ २०५॥

अथ इत दिष्टांत।

कवित्त—इक पुर पण सत पौल, पोल प्रतिपण सत दूत साल प्रति साल। इकिकमैं पण सत खिलै, नित वैदग्ध दिस गए विसाल। फिर उन मिलन कठिन अति जानौ, मिले पुन्य वस सब सु कदाचि। तो अचरज नहि कठिन मनुष भव, गया न फिर आवै जिन वाच॥ २०६ ॥ इति ४ ॥

अथ रतन दिष्टांत।

दोहा—द्वादस चक्रीके रतन, जे सब पृथ्वी काय।
दैवजोग होई कठे, तौ अचरज मत ल्याय॥२०७॥
पण मानुष भव अति कठिन, गयौ न पावै फेर।
जैसे तरु ते फल गिरै, नांहि मिलै सो फेर॥२०८॥

अथ स्वप्न दिष्टांत।

कवित्त—काहु नृप कीने द्वय विसत थंम थंम प्रति चक्र सु एक। इकक चक्र सहंस आरे जुत कोर कोर प्रति छिद्र सु एक॥

तिन चक्रनको सुभट फिरावै, परै पूतली सुंदर एक। नार रूप सो फिरै चक्र सम तान थमैं मोती जुट एक ॥ २०९ ॥ चक्र चक्र प्रति इकक कोर व्रण, व्रण ढिग चिन्ह कियो बुधवंत। बुद्ध विसार वतीर चलावै अधो दिष्ट जलमैं निरषंत ॥ चिह्न छिद्र सबमैं सिर निकसत वे सिरको मोती वीधंत। यह बात अति कठिन जगतमैं हो तो अचरज नाहंत ॥ २१० ॥

दोहा–पण मानुष भव अति कठिन, गयो न आवै हात।
　　जैसैं जो बनके गये, कामीजन पछतात ॥२११॥

अथ कुरुम दिष्टांत।

चौपाई–उदध स्वयंभूरमण मझार, इक कछवा दीरघ तन धार। निज तन चर्म विखै व्रण पाय, सहंस वरसमैं रवि दरसाय ॥ २१२ ॥ फिर उस व्रणमैं देखौ चहै, सूरज दृष्टि कभू ना लहै। पै यह कठिन मिलै त्रिध जोग, नर भो गयो न मिलै संजोग ॥ २१३ ॥

अथ जूडा दिष्टांत।

पूरव दिस जूड़ा दधतीर, कीली पछिम दिसमैं वीर। पथ वह मिलै तो अचरज नांहि, नर भव गयो न फेरि लहांहि ॥२१४॥

अथ परिमाण दृष्टांत।

अडिल–चक्रवर्तको दंड रतन चव हाथ सों, तिस परमाणू विरै मिलै किह भातसों। फिर परमाणू मिलै सर्व अचरज नहीं, नरभव गयो न आवै श्री जियो कही ॥ २१५ ॥ इति ॥

चौपाई—कथाकोष आराधन सार, तामें दस दिष्टांत निहार।
इम दुर्लभ यह नर परजाय, यातैं यत्न करौ नृपराय ॥२१६॥

उक्तं च कवित्त—जू मतहीन विवेक बिना नर साज उतंग जु ईंधन ढोवै। कंचन भाजन धूर भरे सठ सार सुधारस सू पग धोवै॥ वो हित काग उडावन कारन डार महामणि मूरख रोवै। यो नरदेह दुर्लभ सुपाय विसय वस होय अकारथ खोवै॥ २१७॥

दोहा—इम मुनने वरनन कर्‍यौ, बढौं अधिक वैराग।
नृप सुनके मनमें गुणै, दिक्षाको अनुराग ॥२१८॥
फिर मुनवरको नमन कर, भयौ दिगंबर धीर।
पंच महाव्रत धारकै, भयौ सुगुण गंभीर ॥२१९॥
सो मंगलके हेत ही, वरनो श्रेणिक राय।
तुमरै अरु सब भवनकै, गोतम एम कहाय ॥२२०॥
इमो कह्यौ गुणभद्र गुरु, उत्तर नाम पुराण।
कवि दामोदर भाष इम, चंद्रप्रभू पुराण ॥२२१॥
ता संस्कृतकूं देखिकै, अथवा भाषा और।
हीरालाल सु वीनवैं, सु कवि सुधारो चोर ॥२२२॥

इति श्रीचंद्रप्रभूपुराणे पंचमभव पद्मनाममुनिव्रतग्रहणवर्णनो नाम नवम संधिः समाप्तम् ॥ ९ ॥

दशम संधि।

छप्पय छंद–वन्दौ श्री जिनवीर तासकी दिव्य ध्वनिमें, खिरो सु गणधर इंद्र भूत भण दृष्टवादमें। सो गुणभद्र उचार ग्रंथ उत्तर सुर वचमें, कवि दामोदर कह्यौ संस्कृत चंद्र चरितमें। सो वीरनंदि कह्यौ काव्यमें, भाषा हीरा करत है। श्रीपद्मनाम मुनिराज, तप सक्ति समान सु धरत है॥ १॥

चौपाई–सो बारै विधि कह्यौ जिनंद, अनसन ऊनोदर गुणवृंद। व्रत परसंख्या रस परित्याग, विविक्त सय्यासनतै राग॥ २॥

दोहा–तन कलेष षट बजु तप, फुनि अन्तर षट वर्ग।

प्राश्चित विनय वैयाव्रत, स्वाध्याय व्युत्सर्ग॥ ३॥

चौपाई–ध्यानादिक सुन अर्थ अवार, जैसो जिन शासन विस्तार। इक दिन आदि बरस लग करै, चार प्रकार असन परिहरै॥ ४॥ सो अनसन ऊनोदर फेर, पौण अद्ध चौथाई हेर। एक ग्रास अथवा कण एक, करै हार बहु धरै विवेक॥५॥

दोहा–कृत कारित अनुमोदना, मन वच तन कर त्याग।

नव कोटी सुध भक्त इम, करै साधु वड भाग॥ ६॥

चौपाई–घृत दधि दूध तेल मिष्टंच, लोन एक द्वै त्रि चव पंच। छहौं त्याग इम भोजन करै, रस परत्याग वृत अनुसरै॥ ७॥ एक दोय घर नर वा नारि, ऐसे वसन कहसो अहार। मिलै तो लेय नहीं तो त्याग, सो व्रत परसंख्याव पराग॥ ८॥

सुना घर कंदर गिरसीम, वसकांतार विशेष मुनीस। वा त्रिन संघ इकाकी जान, सो विवक्त सिज्या सनमान ॥ ९ ॥ हिम ग्रीषम पावस रिततनी, सह समभाव परीसह गुनी। काय कलेस सोई जुत भेद, यह तप बाह्य तने छह भेद ॥ १० ॥ अब अंतर तपकू सुन राय, प्राश्चित भेद आदि नव थाय। अलोचन प्रतिक्रमण रु मिश्र, फुनि विवेक व्युत्सर्ग पिश्च ॥ ११ ॥ छेद परिहार थापना, अब इन अर्थ सुनो बुध जना। आलोचन गुरुके तट जाय, ताके दस दूसण छिटकाय ॥ १२ ॥

छप्पय–उपकरणादिक भेट देय निज सक्ति छिपावै, अन्न न लखं सु दोष लोपना दीर्घ जनावै। पण प्राश्चित भय हेत दीर्घकूं लघु बतावै, गुरु सेवा नित करै दोसकूं कहन कहावै। गुरु कलकलाट मैना सुनै प्राश्चितमैं संसय धरै, लेदं समानक साध पै अन प्राश्चित सम अनुसरै ॥ १३ ॥

चौपाई–ए दस टालक है निज दोस, विनय नम्रता जुत गुण कोस। दंड देय सोई परवान, लेय करै तैसै बुधवान ॥ १४ ॥ जैसे पटकै लागो मैल, धोए शुद्ध होय विर फैल। मंजी आरसी उज्जल जेम, प्राश्चित लिये शुद्ध मुनि तेम ॥ १५ ॥ लगा दोसको जुत परमाद, सामायक चुत करै सु याद। सो मिथ्या हो इम वच भनै, सो आलोचन प्रथमहि ठनै ॥ १६ ॥ प्रतीक्रमण सु पाठ फुनि पढै, तुछ दोस कोउ तासूं कढै। सो दूजै तदुभय तीसरै, आलोचन प्रतीक्रमण सु करै ॥ १७ ॥ सो तीजै तदुभयकर यादि, तुर्य अन्न जल उपकरणादि। हो संसर्ग दोष जुत तजै, सो विवेक प्राश्चितको सजै ॥ १८ ॥

तनोत्सर्ग व्युत्सर्ग सु पंच, अनसनादि षष्टम तप संच । सु-बठावन इकदिन पछमास, दिछा सो सप्तम छिद मास ॥१९॥ संग बाह्य कर पछ मासादि, सो परिहार अष्टमपसादि । आदि छेद दीछा फुनि देह, छेदोस्थापन नवमो एह ॥ २० ॥

सोरठा—जुत प्रमाद जे दोस सल्य अवस्था अन्य तज । रहै मृजाद गुण कोस, उज्जल भाव प्रकासि है ॥ २१ ॥ सो प्राश्चित धारंत, विनय भेद फुनि चार मुनि । ज्ञान दर्स चारित, फुनि उपचारसु अर्थ सुन ॥ २२ ॥ मान रहित शिव हेत, ग्यान ग्रहन अभ्यास कर । ग्यान विनय इम चेत, संकादि दूसण विना ॥ २३ ॥ तत्वारथ सरधान, दर्प विनय फुन चर्ण सुन, ग्यान दर्स जुतमान, चारण विषै मन धान मान ॥२४॥

दोहा—आचार्यादि प्रतक्ष जो, तिनें देख उठ गछ ।
सनमुख कर जुग जोडकर, चित उपचार प्रतछ ॥ २५ ॥
वारराक्ष गुण सुमरि करि, करि उस्तवन बहु भक्ति ।
मन वच तनतै होइ सो, ज्ञान चरण सुध युक्त ॥ २६ ॥

चौपाई—विनय यम वैयाव्रत सुनो, दसविध सुर गुरु जुग सुनो । तपसी सिख गिलानगण कुली, सघ साधु मनोग्य मडली ॥ २७ ॥

छप्पय—जिनतैं व्रत आचरे सोई आचारज जानो । जिनतैं पढै सु ग्रंथ सोई उवझाया मानो ॥ पख मास दुपवास करै बहु तपसी सोहैं सिष्याके अधिकार पठन आदिक सिख जोहै ॥ जो रोगादिकतैं छिन तनतै गिलानि फुनि गण सुनो । सुन

होय बडे पर पाटके, निज गुरके सिष कुल गिनौ ॥ २८ ॥ रिषधारी सो रिषी अच्छनस करै जतीसौ। मनपर्यय अरु अवधिज्ञानकूं धरै मुनि सो ॥ त्यागै घर सामान सोई अनगार कहिज्ज। चारि भेद इम मुनि समूह सो संग भणिज्जै ॥ फुनि साधू दिढ तपहु दिनन लोक मान सु मनोग्य है। निज मान त्याग तिन टहल कर सो वैयाव्रत गुरु कहैं ॥ २९ ॥

दोहा-वाचत पूछत चितवन, आमनाय उपदेस।
पंच भेद स्वाध्यायके, अर्थ सुनो नरेस ॥ ३० ॥

छप्पय-ग्रंथ दोष बिन पढै पढावै देय सुवाचन। भरम हरन दृढ करन हेत पूछै सो पूछन ॥ जान यथारथ रूप द्रव्यको चितवन प्रेक्षा। शुद्ध घोषनो पाठ सोइ अम्नाय प्रतिछा ॥ व्रत कथा आदिको श्रवण करे सो धर्मोपदेश्वर। इम स्वाध्याय तपकूं करै फुनि व्युत्सर्गसु तप सुकर ॥ ३१ ॥

दोहा दस विधि परिग्रह बाह्यको, अंतर चोदह भेद।
नेम तथा जम रूप तज, सो व्युत्सर्ग अभेद ॥ ३२ ॥
जो पूछै उत्तर यही, धन धान्यादिक बाज।
जो लीनो महाव्रतमैं, फुनि हारादिक साज ॥ ३३ ॥
सो दसलक्षिणी धर्ममैं, प्राश्चितमैं प्रति पक्ष।
दोषन हेत रु तप विषै, कह्यो समान सु लक्ष ॥ ३४ ॥
फुनि तप ध्यान सु षष्टमो, आरतादि विधि च्यारि।
सोलै भेद संयुक्त ही, प्रथम कीयो उचार ॥ ३५ ॥

चौपाई-विष संस्थान ध्यान विध च्यार, [illegible]

पिंडस्थ निहार । फिर पदस्थ त्रितये रूपस्थ, चौथे रूपातीत प्रसस्थ ॥ ३६ ॥ अब सुन इनको अर्थ विशेष, पद्मासन थिर मुनिवर पेख । पंचभेद पिंडस्थ सरूप, भूजल अगन पवन नभ रूप ॥ ३७ ॥

छप्पय–मध्यलोक सम गोल क्षीरदधि सम तरंग बिन, तासर मध इक कमल सहस दल चिंतै मुनिजन । कनकवरण जुत गंध दीप जंबू सम जानो, मन अलि तापै रमै किरनका मेरु समानो । सो कंज तनी तापै थपै विष्टरससिसम क्रांत रुचि, निज रूप पठावै तासु पासो चिंतै रागादि विन ॥ ३८ ॥

दोहा–आकुल बिन अनुभो करै, पृथ्वी तत्व सरूप ।
यह पिंडस्त सु अंग है, मन तरंग बिन भूप ॥ ३९ ॥

इति पृथ्वीतत्व ।

कवित्त–मनमैं चिंतै निपत रोक सब घटा छांई भूलोक प्रमान । घन गरजै चपला अति चमकै कहुइक इंद्र धनुष रह्यो तान । पवनाकुलित बिंदु जल बरषै सूछम कहुं थल सम सुधा । इम पावस रितुतैं वह जावै कर्म धूल जलतत्त्व सुविधा ॥ ४० ॥

इति जलतत्त्व ।

सवैया ३१–कोई मुन थापै नाभिकमल षोडस दल दल प्रति सुरमाला धारकै सुफेरना । अंतर रहित फुनि करनकापै अर्हं मंत्र जुत बिंदी रेफ तामैं धरध्य बेरना निकसै सो धूम शिखा बहुरि फुलिंग छूटै फुनि अग्नि ज्वाल । हृदैकंज दह देरना । जाके अधोमुख लागे दल वसु कर्म सम जल भस्म होय फिर अग्नि बाय हेरना ॥ ४१ ॥

काव्य—स्वरत वर्त्तिकार चौ फेर कंचन सम प्रज्वलित मंत्र अनाहतसै, प्रगट अग्नि घग २ प्रज्वलित अमल अष्टदल भस्म करै स्वयमेव सांति हुय। यह पिंडस्थ सुज्ञान त्रिय गुण अग्नि-तत्त्वमय ॥ ४२ ॥

इति अग्नितत्त्व।

सुर विमान मुनि रचै ता समै ध्यान लगावै। चलै पवन परचंड बहै तिरछौ सुहलावै ॥ घन सम गर्ज अत्यंत कर्मरज सीत सुहावै। सकल छार सु उडाय फिर शांति होजावै ॥४३॥

सोरठा—पवन तत्त्व इम जान, अंग तुरिय पिंडस्थ यह।
अब सुन गगन बखान, पंचम अंग सु ध्यानको ॥ ४४ ॥

इति पवनतत्त्व।

कवित्त छंद—धातु विधि कालमारूप सुविकार विन निर्मल देह जिम सिद्धि मांहै। एम चिंतवन करै थापि विष्टरसु तन अतिम चौंतीस प्रतिहार्ज जो है॥ पुन्य फल प्रकृति सब इंद्र तित सेव करि जयकार चहुं ओर हो है। एम पिंडस्थ विधि पंचमी सो करै जासु चंचल सुमन ठौर हो है॥ ४४ ॥

इति आकाश तत्त्व।

दोहा—मन निरोध जिह पंच विधि, कह्यौ ध्यान पिंडस्थ।
जातै शिव मारग सधै, आगै सुनौ पदस्थ ॥ ४५ ॥

इति पिंडस्थ ध्यान।

कवित्त—बावन अंक ध्यान सिद्धादिक षोडस सुर थापै दल कंज। नाभि मध्य अ आ इत्यादिक फिर हिरदै चौबीस दल कंज॥ कु चु टु तु पु सवर्ग पचीस ए किरणका दिप थापित

जाय। फुनि मुखकमल सुदल वसु जापर य र ल व स ष श ह दलप्रति थाय ॥ ४६ ॥ मंत्रराज धारे मध्य वरण ह्रींकार सु इक थापै सब अंक। द्वादसांग वानी प्रगटै जब श्रुत दधि तीर लहै सु निशंक॥ उदर पत्र जुत कवल सु ध्यावै जपत जाप सुख रुचि आनंद। खांसि स्वास तिव्रागन कुष्ट रु उदर विकार नरहै जलंद ॥ ४७ ॥

काव्य–मंत्रराज ह्रींकार जान फुनि हिरदयमैं धरि जप तप कर मनह। ऊन कछु जिन समतै वर ग्यान बीज यह ध्यान होय जिन जगजन नमते जन्म अगनिको मेघ जपो इक वर सुख पमते ॥ ४८ ॥

कवित्त–इम साधनकी विधि जानो ता मध्य रूप अब थल जाके ताकौ ध्यान करै तित ध्यावै फिर मुख अंबुज तालव रोक फुनि निकसत तहां सुधा झरत है नेत्र पत्रपै दर्श वहोर ॥ अलक वाढ ब्रह्मंड विदारै कर विहार रवि मंडल फोर ॥ ४९ ॥ ससितै दुति अति तित रहै उछलत विधिको तम हर भव भ्रम महान। फिर सो आवै भुजथलपे पूरक कुंभ करे चक ठान पवनाभ्यास ॥ सिव कर साधैं पूरक जहां पवन खैंचाय। कुंभक अचल सुतन भर बैठै रेचक सौ दीजे निकसाय ॥ ५० ॥

दोहा–पवनतत्त्व ध्यानत गह, मंत्र अनाहत तंत्र।
कुंभक कर सो चितवे, जानै विधि सर्वत्र ॥ ५१ ॥
फुन षोडष दल कमल सम, कवल किरणका मध्य।
ह्रींकार ससि सम लसै, ता मुख अमृत वृद्ध ॥ ५२ ॥

वापै ध्यानी मुन लखै, फिर ध्यानी ले ताहि।
देय प्रदक्षण कमल दमल, नम मऊ छारे ताहि ॥ ५३ ॥
कवित्त—फिर जुग जुगपै आय विराजे अधिक जोत ताकी अघटाय। नमै सुरासुर विश्व तत्त्वको दीपसु विद्या लहै अघाय॥ हरै सर्प्प विष ध्यानी ध्यावै इम षट माम सु धुत्र निकाम। मुखतैं देखि प्रतिक्ष जतीसो फुनि वछु दिन वीते इम मास॥५४
दोहा—अगनि फुनि रु प्रतिक्ष जिन लखै होय आनंद।
पण कल्याणक फिर लखै, भव्य कमल सु दिनंद ॥५५॥
प्रगट स्वयंभू जानसो, निद्रा मोहि विनास।
भवसागरसे पार ह्वैय, मुक्ति सिला पर वास ॥ ५६ ॥
सिद्ध अर्थ ह्रींकारको, कह्यौ ग्रंथ व्याकर्ण।
बुधजन साधै सिद्ध करि, सठ नहीं समुझै वर्ण ॥ ५७ ॥
इति ह्रींकार।
कवित्त—परम तत्त्व नाम अर्हंको चिंतें आदि करै फिर ध्यान। होइ मुक्ति फुनि चन्द्र रेखसम रवि दुति जन्म मरण भव हान॥ अथवा अलक सु अग्र भाग सम चिंतै निश्चल हो इक चित्त। अष्ट सिद्ध अणिमादिक प्रगटय जो को मुनि ध्यावै इम नित्य ॥ ५८ ॥
दोहा—लछमी हो है वृद्ध अति, सकल सुरासुर सेय।
शिवपद लह चौगति वमैं, अर्ह ध्यान धरेय ॥ ५९ ॥
इति अर्हं मंत्र।
छप्पै—सुर षोडसमैं आदि अकार अनाहत मंतर। चन्द्र रेख सम तुछ दिस रव समरत अन्तर॥ ता जिहाज चढि भवे

पार भये संसार सिंधुतैं। शांत भाव भये बाल अप्रमम ध्याय शुद्धतैं ॥ फुनि करि चित्त निश्चल विषय तज जगको जोत मह सु लख। इम ध्यानत अनमादिक लहै, देवादिक सेवै प्रवख ॥ ६० ॥

इति अकार मंत्र।

पनवनाम-ॐ मंत्र दुष्ष ज्वाला कुमेघसम, श्रुत उद्योत प्रकाश करणको दीप अनुपम। है पवित्र फुनि शब्द रूपको उतपति कारण, सुर व्यञ्जन कर वेष्ट कमलमध हियै सुधारण ॥ थिर भाल रेख ममि सम झरत सुधाकर मवनको अगनि। सुर देत इन्द्र पूजित सकल तत्व महान् प्रभा धरन ॥ ६१ ॥

सोरठा-पांच शतक कर जाप, फल पावै उपवास इक। लख निरंजन सम आप, करै सिथल विध बन्धको ॥ ६२ ॥

छप्पै-महामंत्र महाबीज महापद हिमरितु ससि सम। रचे तरंग कुंभक कर चिंतै फुनि सिंदुर जिम ॥ वा मूगा सम सर्व जगतकूं छोभ करत है। स्थंभन हेत सुपीत स्याम विद्वेष करत है ॥ वसकरण हेत ध्यावै सुरंग सेत चितवै शिव अरथ। इम ॐ वरणको ध्यान कर परमेष्टी वाचक अरथ ॥ ६३ ॥

इति ॐ मंत्र।

चौपाई-नमस्कार जो पंच परमेष्ट, करै मंत्रको ध्यान सुनेष्ट। सब जग जनको कारण पवित्र ससिसम स्वेत कमल वसु पत्र ॥ ६४ ॥

छपैय-मध्य किरणका मांहि णमो अरिहंताणं धर। पूरब

दिशिके माहि णमो सिद्धाणं फिर कर ॥ दक्षणं दिसके मांहि णमो आइरियाणं धर ॥ पछिम दिसके मांहि णमो उवझायाणं मर। णमो लोए सव्वसाहुणं उत्तर दिसमैं थाप है ॥ फुनि सम्यक दर्शनाय नम अगनि विदिस मांहि गहै ॥ ६५ ॥

दोहा—सम्यक् ग्यानाय नमः, नय रितु वे दिसि मांहि।
सम्यक् चारित्रायनमः, वायवि दिसा ठांहि ॥ ६६ ॥
फुनि सम्यक् तपसेनमः, थावै विदिश इशान।
एही मंत्रपरभाव करि, पावै मुनि शिवथान ॥ ६७ ॥

छप्पय—मंत्र तने परभाव रहित अघ सुधी तरं जग। कष्ट पडै तव हो सहाय रक्षक सब ही जग ॥ करै हजारो पाप करि हिंसा बहु पहली। अंत मात्र सुभ जपै पशू पावै सुर गैली ॥ तिन कथा पुरानमैं घनी मन वच तन सुध मुन जपै। सो हार करत उपवास फल ए महिमा याको दिपै ॥ ६८ ॥

दोहा—मुनि महंत तपके धनी, च्यार ज्ञान धारंत।
ते महिमा नहि कहि सकै, तो अनकिम भाषंत ॥ ६९ ॥

इति नमोकार मंत्र।

गीता छंद—अर्हत् सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो नमः। इम षोडसाक्षर मंत्र जप सत जुगिक प्रोषधि फल पमः ॥ अरिहंत सिद्ध षडा कि त्रिष सत मंत्र जप प्रोषधि फला। जप असि आउ सा सतिक चव जो होय प्रोषध इक फला ॥ ७० ॥

इति षोडस फुनि षट फुनि पंच अक्षर मंत्र।

चौपाई—अरिहंत च्यार वरणको मंत्र, चार पदारथ देत

तुरंत। कामार्थादिक शावत जाप, ऐक व्रत फल पावै आप ॥७१॥

इति चतुराक्ष मंत्र ।

दोय वरणको मंत्र जु सिद्ध, ताको जपत लहै सिव रिद्ध।
कह्यो मुनीश्वर श्रुतमें सार, जग कलेसको नासनहार ॥ ७२ ॥

इति जुगाक्षर मंत्र ।

दोहा—पैंतिस षोडस षट रूपणि, च्यार दोय इक वर्ण ।
सात जाप ए नित करै, सोलहै सुर शिव धर्ण ॥ ७३ ॥

एक वरण मैं प्रण वहै, मंत्र और बहु जान ।
विद्यानुवाद पूरव विषै, गणधर कियो बखान ॥ ७४ ॥

बीज वर्ण साधन क्रिया, चमतकार लौकिक ।
स्थंभन मोहन वसिकरण, उच्चाटन तहकीक ॥ ७५ ॥

मंत्रण फल उपवास इक, कह्यो सु रुचिकै हेत ।
निश्चै कर सुर सिव लहै, अधिक कहा इम चेत ॥७६॥

ए पदस्थको रूप ही, कह्यो सुमन थिर काज ।
पद्मनाभ मुन गहत निज, थिर आतम पद राज ॥७७॥

इति पदस्थ ध्यान ।

कवित्त—मुनि रूपस्थ ध्यान विध त्यागै, मर्ज कुदेव सेव जिनराज। नन्त चतुष्टय वंत अतिंद्र जु करै सेव नाना विध साज ॥ समवसरण लक्ष्मी कर मंडित ताको ध्यान करै इक चित्त । तनमय होय सो सुर शिव पावै सो मुनिवर पद वंदौ नित्य ॥ ७८ ॥

इति रूपस्थ ।

कवित्त–अथ विन जो जगमें जिय थंभन मोहन उच्चाटन फुनि मार। चेटक नाटकादि मंत्रणको साधै तो ते मुनी उचार॥ सिद्धाक्षरके मंत्र इत्यादिक तिनसै रिद्ध सिद्ध सब होय। अणिमादिक इनितै मति गोकै रूप रहित ध्यावै अवलोय॥ ७९॥ आकुल रोग विकार रूप तन रहित सहन परम रस गेहि। त्रिभुवन व्यापी पुरुषाकार सु तुछ घाटि चर मांग सु देह॥ सिद्ध रूपको ध्यान करै इम तावत निज आतम फुनि ध्याय। तनमय होय छाडि दुविधा करूं पातीत ध्यान इम भाय॥८०॥

दोहा–वचनकोस सनमति चरित, अर ग्यानार्णव जान।
तिनमें कह्यो विशेष ही, ह्यां तुछ कह्यो वखान॥८१॥

इति रूपातीत।

इम बारै विध तप करत, पद्मनाभ मुनिराय। फुनि तप नाना विधि तपत, सो सुन श्रेणिक राय॥ ८२॥

छप्पय–तपलक्षन पंकित सुमेरु पंकित विमान जुग। पल विवान मुक्तावली जिनगुण संपत जुग॥ वर्द्धन आचाम्ल वसु करम हरन चारित्र सुद्ध फुनि जुगम सर्वतोभद्र। त्रिमण वर रत्नावलि गन॥ मिरदंग मुर्जे मघ वज्र त्रय शांति कुंभ व्रपचक्र जुग फुनि रुद्र वितरण बसंत इक रिषमाला अष्टानक सुजुग॥ ८३॥ चक्रपाल दुषहरन पैतीस नमोकार वर। नंदीश्वर कल्यान सीलसुख संपत विधिकर॥ चौबीसी सम्यक्त भावना पचीसी कृत। चौबीसी तीर्थेस षोडश कारन दशलक्षण व्रत। श्रुतग्यान पंच अरु लब्धि विधि। सिंह निष्क्रिडित

गुनमधर ॥ फुनि इत्यादि वसु अधिक सत । जिनभाषित व्रत सकल कर ॥ ८४ ॥

अथ वचनकाय मद्ध सिंघनिष्क्रीडित व्रत विधान ।

उपवास १, पारना १, उ० २, पारना १, उ० १, पा० १, उ० ३, पा० १, उ० २, पा० १, उ० ४, पा० १, उ० ३, पा० १, उ० ५, पा० १, उ० ४, पा० १, उ० ६, पा० १, उ० ५, पा० १, उ० ७, पा० १, उ० ६, पा० १, उ० ८, पा० १, उ० ७, पा० १, उ० ९, पा० १, उ० ८, पा० १, उ० ७, पा० १, उ० ८, पा० १, उ० ६, पा० १, उ० ७, पा० १, उ० ५, पा० १, उ० ६, पा० १, उ० ४, पा० १, उ० ५, पा० १, उ० ३, पा० १, उ० ४, पा० १, उ० २, पा० १, उ० ३, पा० १, उ० १, पा० १, उ० २, पा० १, उ० १, पा० १, सारे उपवास एकसौ पैतालीस १४५। पारने बतीस ३२। सर्व दिन एकसो सतंतर १७७ मांहि व्रत पूर्ण होहि है।

इति व्रत विधान ।

चौपाई- व्रत अरु तप बलके परभाय, उपजे रिद्ध सुनो मन लाय । बुद्ध औषधी तपबल च्यार, रसविक्रिय क्षेत्र क्रिय सार ॥ ८५ ॥ प्रथम सुबुद्ध अठारे लीज, केवल अवधि मनपरजय बीज । कोष्टरू भिन्नरु पादनुसार, दुरा स्पर्शन वसुमि विचार ॥ ८६ ॥ दूरा रसनरु दूरा घ्रान, दुरा श्रवन एकादश जान । दूर विलोक चतुर्दस पूर्व, प्रत्येक सुबुद्ध चौदमी सर्व ॥ ८७ ॥

निम्मत ज्ञानवाद बुद्ध प्रज्ञ, दस पूर्वहि अठारमी अन्य। अब इनके गुण भिन्न २ सुनों, वृष बुद्ध बढे पाप सब हनों ॥ ८८ ॥ छहो दरव गुण पर्जय वर्त, तीनलोक तिहुकाल प्रवर्त। करमें आवल सम लख जोय, केवल बुद्ध कहावे सोय ॥ ८९ ॥ गति आगम मत्र सात जु कहै, पूछे विना भेद ना लहै। कहै सुजब कोउ पूछे तास, अवधि बुद्ध या विधि परकास ॥ ९० ॥ तीन भेद ताके पहिचान, देस परम सरवावधि जान। देशावधि सुदेस इक कहै, छेत्र एक परमावधि लहै ॥ ९१ ॥ दीप अढाईको व्याख्यान, करै सु सर्वावधि बल ठान। मनपर्ययतैं निर्मल बुद्ध, सबके मनकी जानै सुद्ध ॥ ९२ ॥ रुजु विपुलमति भेद सु दोय, सरल सुभाव रिजुमती जोय। सूधी टेढी सब मन लखै, विपुलमती मुन बरसत अंख ॥ ९३ ॥

सोरठा—परमा सरवावद्ध विपुलमती केवल चतुर। लहै सु ततभवसिद्ध, होनहार आगे रव ॥ ९४ ॥

चौपाई—पढत एक पद बहुपद लहै, बीज बुद्धको फल है यहै। एक श्लोक अर्थ सुन ग्रंथ, लह सर्वार्थ कोष्ट बुध पंथ ॥९५॥ नोवा राजो जन दल चक्र, देस२ जन वचन सु वक्र। भने एक वा सबको जान, खोस भिन्न श्रोत्र बुद्धिवान ॥९६॥ आद अंत इक पद सुनै, ग्रंथ अरथ जानै अरु भनै। वासब ग्रंथ कंठतै कहै, पादनुसार सातमी यहै ॥ ९७ ॥ फरस ओठ गुण फरस अंग, रिव धारी मुनको सु अभंग। दीरघ द्वीप अढाई लहै, लघु जोजन नव वसु गुण कहै ॥ ९८ ॥ फुनि रस

पंच अढाई द्वीप, होहै प्रघटसु कहुं महीप। रिध धारी तट सब सुन भेव, दूरा रसनरिद्ध बल एव ॥ ९९ ॥

सोरठा—नासा विखै सुगंध, वा दुरगंध लहै सकल। ढाई द्वीप प्रबंध दूर घ्राण बल रिध दसम ॥ १०० ॥

गीता छंद—सुर सप्त दूराश्रवण बलतै सुनै ढाई दीपकी। दूराविलोकन तैल खेपण रंग त्यों जुसमीपकी ॥ दस पूर्व ग्यारै अंग फुनि पढि पढै अर्थ बखानहै। रोहणादिक पंचसत लघु सप्त सतक महान है ॥ १०१ ॥

दोहा—क्षुल्लकादि सब आयकैं, हावभाव जुत मान।
करै सुथिर रहै ध्यानमें, दसपुर वारिध वान ॥१०२॥

पद्धड़ी—चौदह पूरब अरु अंग सब, विन समं पढ़ै अरु भणै भव। सो द्वादसांग श्रुत ईम साथ, चौदह पूर्वा तेरमि अराध ॥ १०३ ॥

दोहा—संयम चरित विधान सब, विन उपदेसे जान।
दया दमन चख घोर तप, यह प्रतेक बुधमान ॥१०४॥

चौपाई—इंद्रादिक जे विद्यावान, आवै वाद करण धर मान। सब मद गलै इकत्तर सुनै वाद बुद्ध सोलम बुध सनै ॥१०५॥ तत्त पदारथ संयमदर्वे, अनंत भेद लघु गुरु तिन सर्वे। द्वादशांग वानी विन कहै, प्रज्ञा बुद्ध सतरमी यहै ॥ १०६ ॥

दोहा—अंतरीक्ष भू अंग सुर, व्यंजन लक्षन छिन्न।
स्वप्न मिलै सब जानिये, अष्ट निमित्तन अन्न ॥१०७॥

चौपाई—रवि ससि ग्रह नक्षत्र तारादि, तिनको उदय अस्त

ग्रहनादि। तीन वर्त भावी सुभ असुभ, ज्ञान कहे फल अंतरिष सु शुभ ॥ १०८ ॥ द्रव्यादिक जे भूममय छिपी, सर्व बतावै राखन लिपि। भूमिकंप फल वरतै जिसो, भूमिनम्मत दूसरो इसो ॥ १०९ ॥ नर पशु अंग उपंग जु लषै, तथा फरस सब दुखसुख अपै। वैद्यक सामुद्रिक अनुसार, करुणाकर भाषै उपचार ॥ ११० ॥ यही अंग तीसरो नाम, सुनो चतुरथी सुर अभिराम। खग चौपद्की भाषा सुनै, होनहार भावी सो मनै ॥ १११ ॥ नवमत तिल मरसे लहसनादि, सामुद्रिकतैं जुदे अनादि। तिन फलको शुभ अशुभ बषान, व्यंजन अंग तनौ इम ग्यान ॥ ११२ ॥ श्रीवत्सादिक लक्षण लषै, अष्टोत्तर सत संख्या रखै। करपद परत शुभाशुभ कहै, लक्षन अंग कहावै यहै ॥ ११३ ॥

काव्य—छत्र भंग दुति सस्त्र प्रहाररु आमर कंपन राक्षस सुरनर चरित चमूचल मूषक कंठन। अंग भंग पट हुलन पसूगो आदि विनासै, यह छिन अंग सुदेष सुभासुभ सकल जुभासै ॥ ११४ ॥ सकल पदारथ जगत तने ते स्वप्नमांहि लष, करि विचार सुभ असुभ तासुफल सब परघट अष। यह अष्टांग निमित्त भाष सब संसय मेटै, सो अष्टादस बुद्धि रिद्ध गुण साथ सुभेटै ॥ ११५ ॥

॥ इति बुद्धरिद्ध ॥

दोहा—विटमल आमय जल्ल, फुनि छुल्ल अंग श्रव दृष्ट।
विष्प महामिल अष्टविध, रिद्ध औषधि अष्ट ॥११६॥

अडिल्ल–मुनिकी विष्टा लगै रोग सबको हरै, निर्मल होय शरीर रिद्धि विटगुण धरै। दांत कान मल नाक तनो लग मद हरै, करै धातु कल्याण सकलमल रिध धरै॥ ११७॥ रोग सोग दालिद जुत भागसु हीन है, होत छुवत हो सांति आम गुन यह लहै। श्रम जल में रज लगै अंग सुषदुष हनै, जल्ल रिद्धि यह नाम चतुरथी मुनि भनै॥११८॥ मूत्र थूक षंषार राल मुनिकै श्रवै, फासदेह दुष हनै सुष्य छुलक फवै। मुनि तन फरस समीर लगै जग जननकै, दुष नासै सुष करै अंग रिध गुरुनकै॥११९॥ अहि काठौ विष पियौ होय काहू जना, मुनि दिठपरे नसाय दृष्टि रिध गुण मना। मुनिको विष दे कोउ न व्यापै सुख लहै। वाक्य सुन विषअन्न जननको परहै॥१२०॥

दोहा–सर्पादिक तिन वास लह, मुनितट रह न कदापि।
रिद्धि महा विष गुण यही, कहै जिनेश्वर आप॥१२१॥
सर्व औषधि रिद्ध यही, भाषी अष्ट प्रकार।
अब बल रिद्धि त्रिविध सुनों, मन वच तन बल धार॥१२२॥

गीता छंद–दुर श्रुतावरणी विधि छयोपसमते सु अंतमहूर्तमें। वर अर्थ समझे मन विषै सब द्वादशांग सु सूर्तमे॥ बिन खेद मन बल जान एही वचनतें फुनि भाषि है। फुनि वचन बलतैं पठय तन श्रम नाह तन बल राष है॥ १२३॥

दोहा–त्रिविधि रिद्धि बल एक ही, सुन तप रिधत्रिध सात।
घोर महत उग्गरि दिपत, तप्त घोर गुण ख्यात॥१२४॥

गीता छंद–सो भूमसाममें जोग कठिन करै निवास

मुनिवरा, श्री पद्मनाम सु लहीत प्रबल घोर रिध यह गुण धरो। व्रत सिंहक्रीड़ित आदि इकसत आठ क्रम २ सब करै, उपवास मौनंतराय पालै महत रिध यह गुण धरै ॥ १२५ ॥

कवित–अनसन इक बेला अरु तेला अष्टनक फुनि पक्षरु मास, वरष आदि मुनि करै आयु तक उग्र उग्र इम रिद्ध निवास। करत घोर उपवास मुनी बहुघटै न क्रांति तनन दुरगंध, यह तप दीप्त रिद्ध मुन धारै। पद्मनामि मुनिवर गुण सिंधु ॥ १२६ ॥ करै आहार निहार न करैहै तप्त लोहपै जैसे नीर, सूक जाय नहीं पीर होय कछु तप्त रिद्ध पंचम तप वीर। अतिचार विन पद्मनाम मुनि घोर गुणा यह षष्टम रिद्ध, दुस्सुप्नादिक होन कदाचित तो कुक्रियकी कहा प्रसिद्ध ॥ १२७॥

दोहा–घोर ब्रह्म यह गुण धरै, रिद्ध सात तप येह।
गुन रस रिद्ध सु पंचमी, षट विधि है गुण तेह ॥ १२८॥
आसन विष फुनि दृष्ट विष, घृत पय श्रावी दोय।
मधु श्रावी अमृतश्रवी, इन गुण वर्णूं जोय। १२९॥

गीता छंद–दुर असन विष मिश्रित सु मुनिकौ देय जो दुठ धी धरै। सो घटत विष विज होय रस जुत परम स्वादु सु विस्तरै ॥ यह असन विष वर रिद्ध जानौ दिष्ट विष फुनि लषत ही। तव अपनको विष जायहो है सुष्ट षटरस सजुत ही ॥ १३०॥ जो देय रूखो अन्न मुनिको कर स्पर्शत घृत चवै इम रिद्ध घृत श्री वीमगुण यह त्योंही पयश्रावी फवै। फुन मधुश्रावी तैं मधुर ह्वै अमितश्रावी ते लहा। अमृत समान सु होय भोजनको सुरस गुरु इम कह्यौ ॥ १३१ ॥

दोहा—यह बरनी रस रिद्ध विरध, सनौ वैक्रिया जोय।
एकादस विधि नाम इम, अनुमा महिमा दोय ॥१३२॥
लघुमा गरिमा प्रापती, प्राकामित ईसत्व।
वसत्व अपरघात नव, ध्यानंतर रूपत्व ॥ १३३ ॥

काव्य—अनुसम तनकू करै कवलकी नाल सुमंदिर, पैस रचै दल चक्रवर्त समभर वपु अंदर। यह अनुमा रिध चरित बहुरि महिमा सुन लिज्जै, लख जोजन जिम मेर तुंग समदेह कार जु ॥ १३४ ॥

गीता छंद—तन रचै हलवो पवन हुतै या समान न अमतमैं। लघुमा धरै गुण यह रु गरमा वज्रतै भारी पमैं॥ बठो धरापर मेर फरसै सूर्य आदिक जोयसी। वर रिद्ध प्राप्तीके सुगुण ये सुणो प्राकामत जिसी ॥ १३५ ॥ भूपै चलै जिमजल विषै जल पै चलै जू भूमपै। जिन देहतैं सेनादि रचहै षष्ठमी रिध यह थपै॥ सुन करै जिय मैं जो हुलासि मत्रि जगकी प्रभुता धरै। पत तीन लोक सु आप मानै यहै ईसत गुण वरै ॥ १३६ ॥

चौपाई—नर पशु अमरादिक बस करै, यह वसत्व रिध अष्टम धरै। विषम गिरनपै गगन समान, चलै अप्रतीघात रिधवान ॥ १३७ ॥

पद्धडी छंद—सब देख सुनै वच अदश्य रूप, सो अत्र ध्यान मुनि रिद्ध कूप। सुर नर पसु समकर रूप नेक, कामीत्व रिद्ध गुण यही टेक ॥ १३८ ॥ यह रिद्ध वैक्रिया रुद्र भेद, मुनि

कही बहुर सुन क्षेत्र भेद। है प्रथम अछी नम हान साय, दूजै सु अछीन महा बलाय ॥ १३९ ॥

कवित्त–जा घर मुनि अहार ले तादिन चक्री दल जीमै नहीं टूट। ऐसी अधिक रसोई हो है, रिद्ध अछीन महान तूटे ॥ जहां जतीस्वर करम विनासै, चार हात सो भूम प्रवान। कोटक सुर नर पशु समावै, रंचक कष्ट न होय सुजान ॥१४०॥

दोहा- यहै अछीन महालय, कही क्षेत्र रिध दोय।

क्रिया रिद्ध सुन दोय विध, चारन नम गत जोय ॥१४१॥

सोरठा–चारण बहुविध सादि, जल जंघत तुप होय। दल फलसे नमादि, अब इनके गुण सकल सुन ॥ १४२ ॥

गीता छंद–वर भूमि वत जल पै चलै मुनि जल न फरसै देहकूं। वर रिद्ध जल धारी सुसुधा विधि लहै श्रमण सुतेहकूं ॥ सो चलै भूमै अधर चतुरांगुल सुपद् मासन मुनी। वरनाम जंघा-चारणी रिध यह सुगुण श्री जिन भनी ॥ १४३ ॥ जो कवल नालको तार सूछम पै चलै धरि ध्यानवा। तसु तंत जीव न होय बाधा तंत चारन मानवा ॥ फुनि चलै साधु कुसुम पर ज्यौं कुसम चारन रिध यही। फिर पत्र पै चालै न हालै पत्र चारण गुण यही ॥ १४४ ॥ मुनि बीज ऊपर चलै त्यों फल चारनी षष्टम गनी। वे बेल पै चालै सेनचारी इम भनी ॥ ते सिखा अग्निपर चलै निहस कमन तन ना छुहै। सो अग्न चारन अष्टमी यह बहुर नभगामी कहै ॥ १४५ ॥

दोहा–ऊभे पद्मासन दुविध, चलै अकास मझार।

यह नभगामी दोय विधि, क्रिया रिद्ध इम चारि ॥१४६॥

जेते चेतन अंस है, ते ते रिद्धि सुदक्ष।
सत्तावन गुण आठके, मैं भाषे बुध तुछ ॥१४७॥
इम रिध धारी असनकूं, जाय ग्रहस्तीके गेह।
एक दोषके हेत हौ, तासैं असन करेह ॥ १४८ ॥
चौपाई-एक धनुष आयामरु व्यास, पर मत भोजन साल निवास। रिध धनी तहां भोजन करै, पंचाश्चर्य देव विस्तरै ॥ १४९ ॥ तादिन ऐसी अतिसय थाय, चक्रवर्त दल तहां समाय। विगत तिष्ट जीमैं नहीं भीर, होई अटूट रसोई धीर ॥ १५० ॥

दोहा—पदमनाभ मुनगै लही, तप केवल सब रिद्धि।
अब भावै सब भावना, सोलै कारण सिद्धि ॥ १५१ ॥
चौपाई-पंचवीस मल वर्जित जोय, दर्स विशुद्ध कहावै सोय। मन वच तन वामा तुर सुद्ध, पद्मनाभ मुनिधर अविरुद्ध ॥ १५२ ॥ दर्सन ज्ञान चरित्र उपचार, तथा साध गुण वय अधिकार। तिनको विनय करै मन लाय, दुतिय भावना यह सुखदाय ॥ १५३ ॥

कवित्त-काष्ट पाषाण रूपी कृत त्रिय त्रिध मन तन तै कृत कारितनुमोद। तासु गणें अठारै ही है, पण इन्द्री सों गुणयै सोद ॥ नव्वै द्रव्य भाव तै गुणियै इकसो असी रु चार कषाय। तासू गुणे सात सत विंशति याविधि नार अचेतन भाय ॥ १५४॥ सुरी नरी पसुणी कृत कारित अनुमोदन सुगुणो नवतीस। मन-वच तनसैं गुणे सताईस पण इन्द्रीतै, सत पैंतीस ॥ द्रव्य भाव सू

दोसै सत्तर चव संज्ञासुं सहसरु अस्सी। फिर सोले कषाय सूं गुनिये सतरे सहस दोष सत तिसी ॥ १५५ ॥

चौपाई—चेतन यह रु अचेतन कहे, सब मिले सहस अठारै भये। अतीचार इम रहत जु सीर, धरै भावना चितीय धीर ॥ १५६ ॥ अंग पूर्व आदिक श्रुत सार, पढ़ै पढ़ावै विविध प्रकार। करै निरंतर ग्यानाभ्यास, पद्मनाम चवथा गुण वास ॥ १५७ ॥ धर्म २ फलमैं अति प्रीत, लखतरवानस ईम भीत। तन धन जोवन राज रु भोग, इम विचार संवेग नियोग ॥ १५८ ॥ दान करै निज सक्ति समान, चार भेद वा परिग्रह हान। वा धर्मोपदेस शिव हेत, यही भावना षष्टम चेत ॥ १५९ ॥ नाना विध तप करै मुनिंद, सो तपसी भावन गुण वृंद। गद पीडित जोग है समाध, तिनकी भक्ति सु साधु समाधि ॥ १६० ॥ बाल वृद्धि अरु रोगी मुनी, तिनकी टहल करै जो गुनी। वय गुन नून न करै विचार, सो वैयाव्रत नौमी धार ॥१६१॥ अतुल चतुष्टययुत अरिहन्त, ता नामाक्षर सुमरै संत। अथवा भक्ति वंदना करै, पद्मनाम यह दसमी धरै ॥ १६२ ॥ पंचाचार सूर जे धरै, सिष्यन चरित सु मल परिहरै। जिन वच अर्थ लेय शुभ रचै, पद्मनाम तिन भक्ति न मचै ॥ १६३ ॥ विद्यादायक विद्यालीन, पाठक बहुश्रुत जुत परवीन। विनय भक्ति जुत ताकी करै, बहुश्रुत भक्ति बारमी धरै ॥ १६४ ॥

अडिल्ल—श्री जिनभाषो अर्थ सु गणधर गूथयो, गर्भ तत

बसि संयम इनको जू थावो । तहां भक्त जु तत रहै प्रवचन जु हेरही, सुन आवस्यक भेद पद्म मुन हेरही ॥ १६५ ॥

दोहा—समता थुत वंदन करै, प्रतीक्रमण प्रतिष्ठान ।
षष्टम कायोत्सर्ग धर, यही चौदमी जान ॥ १६६ ॥
तपगुण ग्यान रु रिद्धितैं, प्रगट करै जिनधर्म ।
सो मारग परमावना, धरै पन्द्रमी पर्म ॥ १६७ ॥
च्यारि संग जिनधर्म सूं, गउ वत्स इम प्रीत ।
वरतै सोलम भावना, यही जिनागम रीत ॥ १६८ ॥
दरस विशुद्धी एक ही, पंदरमें इक और ।
जो ए द्वो विभाव है, हो तीरथ सिर मौर ॥ १६९ ॥
पद्मनाम भावै सकल, बांधो तीरथ गोत ।
धर्म धरै दशलाक्षणी, जो जिनमत उद्योत ॥ १७० ॥

गीता छंद—विन दोष दुरजन देय दुख बहु बंध बहु दुठ वच कहै । जो होय समरथ सहै सब नहीं क्रोध उत्तम क्षमय है ॥ मद अष्ट पायरु निरभिमानी यहै मार्दव धर्म है । मन जोय चिंतै सो कहै मुख कहे तन सू काज वहै ॥ १७१ ॥ जगसो न मायाचार धरि है धरम आर्जव इम कह्यौ । जो स्वपरहित इम वचन भाषै सत्य अमृत सम लह्यौ ॥ मिथ्या न भाषै भूलकै सो सत्य धर्म वखानियै । परद्रव्यमें नहीं लोभ जिनकै सोय शौच प्रमानियै ॥ १७२ ॥ जो मन रु इन्द्री वस करै फुनि दया त्रस थावर तनी । इमे लोक दूर संयम कह्यौ अरु सुनो जो विधि तप तनी ॥ गुरु स्वामि

क्षुत्रा लाभ सब तज तप सु नाना विध करै। फुनि दान दे चौ विधि जतिनकूं दुष्ट विकलप परहरै॥ १७३॥ वर यह त्याग रु बाह्य दसधा कह्यौ परिग्रह भेद ही। अंतर हु चौदे भेद त्यागै धर्म आकिंचन यही॥ लख बडी माता लघु पुत्री नार वय सम बहन है। सो तजि विकार सु वरत है मुनि ब्रह्मचर्य सु गहन है॥ १७४॥

चौपाई—धर्म अंग इम धारै सोय, पद्मनाभ मुन बीस रु दोय। सहै परीसह नाम सु कहुं, अर्थ सहित जो श्रुतमैं लहुं॥ १७५॥

काव्य—क्षुधा तृषा हिम उष्ण दंस मंसक नगनारत। स्त्री चर्यासन सैन दुष्ट वच बांध रु मारत॥ जाच न लाभ न रोग फास त्रिण तथा जनित मल। मान न आदर प्रज्ञ ज्ञान चिन दर्स सहत मल॥ १७६॥

दोहा—ए बाईस परीसहै, कह्यौ नाम सुन अर्थ।
सहै साधु तिन पद नमूं, सो पावै परमर्थ॥ १७७॥

ढाल दोहामें—अनसन ऊनोदर करत, पक्ष मास दिन बितजी। जो नहीं भिक्षा विधि बनै, सोख सिथल तनकी तजी; श्रम बिन मुनि सह भूखजी॥ १७८॥ परवस पर घर असन ले, प्रकृति विरुध देह ध्यासजी। पितको परितु उष्नमैं, नैन फिरे सहे त्रासजी; धन २ मुनि सहै प्यासजी॥ १७९॥ हिमतमैं बन थरहरै, तरु दाहै घन वृक्षजी। पवन प्रचंड सीरी वहै; सरत रित ढिग तिष्ठजी; धन धन मुनि सहै सीतजी॥ १८०॥

आंत जलै भूख प्यास सूं, तन दाझै लग धूपजी। पवन अगनि सी उष्न रितु; गिर तापै पित कोपजी, धन धन मुनि गरमी सहै ॥ १८१ ॥ डंस मांस माखी मरछ, विछू इरगज स्यालजी। रीछ रोज आदिक निठुर; दुख देवै विकरालजी, धन्न सहै डंसादि जे ॥ १८२ ॥ बहु विषयांतर वाज फुन, लाज नगन किम होयजी। दीन जगतवासी पुरुष; धन २ श्री मुन सोयजी, मय विकार बिन बाल सम ॥ १८३ ॥ देस काल कारन लहै, होत अचैन अनेकजी। तहां खिन्न हो जगत जन; कलमलान थिर नेकजी, इम अरत सहै धन मुनि ॥१८४॥ हर पकरे प्रलय अहि दलमले, दीन होय लख सुर बहु। ऐसे जन जग डिग-मगै; प्राय पवन तिय वेद सहु, धन्न अचल मुन मेर सम ॥१८५॥

कोमल पद भू कठिन पै, धरत न बाधा मानजी। चव कर भू सोधत चलै, वाहन याद न आनजी। जो चरयामन दुख सहै ॥ १८६ ॥ गुह मसान गिर खोहरे, निवसै सुच भू देषजी। निहचल रहै उपसर्गमें, जड चेतन कृत पेखजी; धन्न निषध्या मुन सहै ॥ १८७ ॥ घर सोवत मृदु सेजपै, मृदु तन भू अति कठिनजी। तित पोढत कंकरादि चुभ, कायर होना कठिनजी; सैन परीसा मुन सहै ॥ १८८ ॥ जगत हितू दे सुख सवै, तिन लख कहै दुरवचन इम। छानै तप भेषी सु ठग, गह मारो अघ करण इम; पोढै वच खिम ढाल सु ॥ १८९ ॥ दुठ मारै बिन दोष मुनि, फुनि बांधै दृढ़ अगनिमें। तहां न क्रोध विध कृत मुनै, समरथ हो पर बन्धनमें; धन मुनि वध बंधन

सहै॥१९०॥ घोर वीर तप करत ही, क्यों खीन अति देहजी। औषध अन जल ना चहै, प्राण जाय पण तेहजी; धन्य अजाची साधुजी ॥ १९१ ॥

मक्ति समै इकवार पुरमें आवै घर मौनजी, जो नहीं भिक्षा विधि बनै। खेद करै मुनि तो नजी; सहै अलाभ धन धन जती ॥ १९२ ॥ रुधर वात पित्त कफ जनित, दुख दारुण सहै सूरजी। उपचार न चहै निज मुनै, तनसू विरकत भूरजी; धन्य गुरु थिर नेममें ॥ १९३ ॥ तृण कांटे दिठ कांकरी, पग चुभ रज उडत पडतजी। दृगमें सर समपीर है, पास करन निज बढतजी; यों तृण फरस सहै रिषी ॥ १९४ ॥ जाव जीव तज न्होन जे, नगन धूपमें सोखरे। चलै पसेव रज उड पड़ै, इम लख उरमल परहरे; सहमत सुश्रमण धन ॥ १९५ ॥ चिर तपसी गुण बुद्ध निधि, तिन युत जनता करतजी। तौ न मिलन मन मुन करै, सहै अनादर सुरतजी; ऐसे गुरु पद नमत हूं ॥ १९६ ॥ तर्क छंद व्याकर्ण निधि लंकारादिक पारगजू, जा बुध लख वादी विलख। इर धुन सुर गज भागजूं, सो त्रिय धरि पै मान बिन ॥ १९७ ॥ सुध चारित्र सु पालतै, बीतो है बहु कालजी, अवधि रु मन परजय पणम; ज्ञान न हुओ हालजी। यों न कभी विकलप करै ॥ १९८ ॥ मय चिर घोर सु तप कियौ, अबहु न रिध अतिशय भई। तप बल सिद्ध है मुनि प्रथम, सो सब झूठीसी भई; यों कदाच न मन धरै ॥१९९॥

दोहा—भन धन मुन ए सहै जे, सोय अदर्सन जीत।
तिनके वन्दो चरण जुग, जूं होवे वह रीत ॥ २०० ॥

कवित—प्रज्ञा ज्ञान अज्ञानै दर्शन मोह अदर्शन धार। अंतरायतै हो अलाभ फुनि चरित मोह नग नारत नार ॥ निषद्या अक्रोस याचना मान सनमान सात दे कष्ट। बाकी जिनकै फुनि इक मुनिकै उदय उनीस कही उत्कृष्ट ॥ २०१ ॥

सोरठा—चरजा आसन सेन, इन तीनौंमैं एक ही। इक हिम उष्नसु लेन, इन तीनो विन जानियो ॥ २०२ ॥ पदम-नाम जो साध, साढे सैंतिस सहस मित। सब ठारै परमाद, तिन संख्या सुनियै अबै ॥ २०३ ॥

उक्तंच छप्पय—तिय धुन भोजन राज चारै शृङ्गार वैर सठ। भांड परिग्रह कलह देस संगीत सुरी रट ॥ पर पीडा पर ग्लान रू पर अपवाद रू चुगली। रसक काव्य पशु वचन कहै सद्-भाषा भय ली परगुन ढक पर पाखंड भन क्रषारम्भ कटुक वचन फुनि देस काल विवहार विधि निज थुन इम विकथा सुख ॥ २०३ ॥ विकथा रूप पचीस बहुर पणवीस कषायन। गुणतै छस्सै सवापांच इंद्री सोगुन ॥ पौणेचार हजार पंच निद्रा सू गुणियै। सहस पौणे उन्नीस नेह रू मोह सु मुनिये ॥ साढै सैंतीस हजार सब भेद प्रमानिये। छट्ठे गुण ठाणो लो कहै पद्मनाम सब हानिय ॥ २०४ ॥

चौपाई—उत्तर गुण चौरासी लाख, पदमनाम धौर गुरु साख। तिनको भेद लिखूं सुन सार, जू पूरब श्रुतमैं निरधार ॥ २०५ ॥

छपै—अव्रत पंच रु चौकषायरत अरत दुगछा, भय मद

और मिथ्यात दुश्रुत मन वच तन इछा। पिसुन प्रमाद इकीस गुणै अतिक्रम वितक्रम, फुनि अतीचार अनाचार भये चौरासी सब सुन ॥ फुनि काम बा दस तै गुणै, चिंता इक दरसन चहै। त्रय दीर्घ सास तुरिका मजुर दाह देह पंचम यहै ॥२०६॥
दोहा—असन अरुच फुनि प्रमन सठ, अष्टम क्रीडा हास।

जीवन नव संदेह फुनि, शुक्र गिरै दस रास ॥२०७॥

छपै—वसु सत चालीस भए बहु दस गुणौ विराधन। आद तिय संसर्ग बहुर दूजे तिय मंडन ॥ से वैराग सयुक्त सर सले असन श्रवन सुन। गीत वजित्र सुगंध लेय संचौर न इम नैव फुनि ॥ वसु अर्थ ग्रहण नव सैन मृदु दसमें कुसील संसर्ग। सब आठ सहस अरु च्यारिसैं गिण भये सकल एवर्ग ॥२०८॥
आलोचन दस दोष तिनैं कृत कर्म उचारे। तिनसैं गुनकर भये सहस चौरासी सारे ॥ नव प्राश्चित फुनि दस मुनी सावद्य युक्त जे। तिनै मिथ्याती भाष करैं गुर निराकर्ण जे ॥ गुन इन दसतै वसु लाख फुनि चालिस सहस्रकू फिर गुनै। दस धर्म सु लाख चुरासी सब उत्तर गुन ए मुन मुनै ॥ २०९ ॥

चौपाई—करै उचित आहार विहार, वन गिर गुफा मसान निहार। शुद्ध भूमिमें कर अस्थान, इकलविहारी पवन समान ॥ २१० ॥ करै अहार मुनीस्वर जहां, पंचाचरज करै सुर तहां। द्वादसांग श्रुत दध गभीर, बुध जिहाज चढिकै मुन धीर ॥२११॥
गुरु खेवटिया संगत लहा, पार भये तौ अचरज कहा। गुरु सेवातैं शिवपद लहै, तद भाव अधिक और को कहै ॥ २१२ ॥

काय कषाय करी अति छीन, सुभ संयम सम भाव सु लीन। राग दोष सब दीने चीर, जै जै पद्मनाभ मुनि धीर ॥२१३॥

गीता छंद—सो ध्यान जा वनमें धरै मुनि विपत सब ताकी टलै। सूके सरोवर जल भरे रितु षट्के तरु फल फले॥ सिद्दाद जात विरोध जे सब वैर तजियारी करै। सो सकल मिलकै करै क्रीडा प्रीत आपसमें धरै॥ फुन राग तन पन ममत बिन मुन धरै मैत्री सबनथै। सो लीन आतम दान बिन फुनि अनाकुल किम गुण कथै ॥ २१४ ॥

चौपाई—मरना निकट जबै जानियौ, सबसै छिमा भाव ठानियौ। दूषण बिन फुन अंग समेत, दर्शन ज्ञान चरण तप चेत ॥ २१५ ॥ इनकूं भावै फुनि भावना, जो भावत आतम गुणासना। इम भावत भावन तन त्याग, लह्यौ वैजयंत बड भाग ॥ २१६ ॥ तित उपपात शिला दुतिमान, सो चढ़ै अन्तमुहूर्तमैं जोबन वान। रतन तुल्यतै उठौ देव, दिशा देख आश्चर्य करेव ॥ २१७ ॥ दिव्य लक्ष भूषित सुर ज्ञान, मन दिवाकर सुभ पुंज समान। तातै अवधि ज्ञान उपजेव, तब सब लखो पूर्वभव भेव ॥ २१८ ॥ चारित वृक्ष फलो बहु भाय, जैनधर्म सेवा मन लाय। ताही मैं फिर निहचै करो, सो विचार उर आनंद भरो ॥ २१९ ॥ कर स्नान पट भूषण साज, पूजा कर न चलो सुर राज। रतन जडित श्रीजिनवर थान, प्रभा पुंज रवि रस्म समान ॥२२०॥ क्रोडो सूरजतैं दुतिवंत, श्री जिनबिंब देख हर्षंत। तिन गुणमैं अनुरागी भक्त, गीत नृत्य वाजित्र सजुक्त

॥२२१॥ अष्टप्रकारी पूजा करी, महा महोत्सव उर विस्तरी। फिर
सुव करि निजथानक आय, हर्ष सहित निज सौज गहाय ॥२२२॥
थिति तेतीस दध लेश्या शुक्ल, इक कर देह घात विन शुक्ल।
तेतीस सहस वर्ष भविहार, तावत पक्ष उस्वास विचार ॥२२३॥
तीनलोकमें श्रीजिन मन्द्र, वा त्रिकाल कल्याण जिनेन्द्र। मुनि
केवलि हुए है होय, निज थलनमें अवधि बल जोय ॥ २२४ ॥
लोक नाडितावता विक्रिया, शक्ति धरै न करै सो क्रिया।
आपसमें मिल सुर अहमिंद्र, करै तत्त्व चरचा गुण वृन्द ॥२२५॥
यौ बहु सुखमें वीत्यौ काल, जानत नांह देव सु कवार। तिति
सुख कथा कथन को कहै, कोट जीभसूं अन्त न लहै ॥२२६॥

दोहा—गणी कहै मगधेश प्रति, पुन्य समान न कोय।
यामव जस परभव सुखी, क्रमक्रम शिवसुख होय ॥२२७

ता प्रति अंगनमें मुनी, कहते आए सोय।
गुणभद्राचारज कही, हीरालाल अवलोय ॥ २२८ ॥

इति श्रीचंद्रप्रभुपुराणे षष्ठमभववैजयन्त पदप्राप्तिवर्णनो नाम
दशम संधिः समाप्तम् ॥ १० ॥
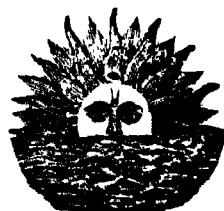
एकादश संधि ।

दोहा—महासेन कुल कुमुद शशि, नभ लक्ष्मी उदियंत ।
भव चकोर इक इक निरख, सुद्ध सुरवालंभित हंत ॥ १ ॥

कवित्त—जा जन्मादि करै मण बरषा कनमय रचि मण जडित प्रसाद । जन्म होत कनकाचल न्हावै तांडव नृत्य करै अहलाद ॥ तास क्रमाबुंज कौं नुत करतैं अमंडल मुण मुकट जु माल । तित नख रस्म लगत अति प्रगटायो उद्योत जु बन्धन नाल ॥ २ ॥

दोहा—ऐसे चन्द्र जिनेन्द्र नमि, तिनके पण कल्याण ।
बरणों गुणभद्र कथित, पूरव ग्रन्थ प्रमाण ॥ ३ ॥

चौपाई—एही जम्बूद्वीप महान, आरज खंड मनोहर थाम । तामें कासी देश विशाल, ताकी शोभा अधिक रिसाल ॥ ४ ॥ ग्राम खेटपुर पट्टण दुर्ग, करवट संवाहन सम सुर्ग । पद पद पुर पंकति पेखिये, उचट स्थानन कहुं देखिये ॥ ५ ॥ धन कन कंचन भरे असेस, निवसै जैनी विसद विसेस । दया धर्म पालै सबजना, ऊंचे जिन मन्दिर बहु खना ॥६॥ बनमें गिरपै सरता कूर, गाम नगरमें जानौ भूर । नर नारी नित पूजन जाय, हर्ष रहित बहु पुन्य कमाय ॥ ७ ॥ करै विहार केवली जहां, सु निरवाण लसै अति तहां । चार प्रकार देव तित आय, करै वंदना मुदित अघाय ॥ ८ ॥

कवित्त—जल अगाध जलचर जुत सरता वहै तीर मुनि ध्यान

धंत। झरना झरै गिरनके सिरपै खडगासन सोहंत महत ॥ दुर्ग धाम सम सुंदर कंदर तित एकाकी थित अनगार। नन्दन वन सम विपन लहैं अति, ताकी सोभाको नहीं पार ॥९॥

चौपाई–तहां विटप बिरखा अरु बल्ली, तिनके नाम सुनो तजगल्ल। अख्यूं तुसी कज्ज तो नाल, कर्ण लाय सुन हे भूपाल ॥ १० ॥

काव्य–कमरख करपट कैर कैथ कटहर किर मारा, केरा कौच कसैर कंज कंकोल कलहारा। कुंद करौंदा कदम किकर कचनार कनेयर, कुमुद कटूंबर कगहि केवरा करना केसर ॥ ११ ॥ खिरनी खैर खजूर खिरहटी खारख खेजर, गौंदी गोरख पान गुंज गूलर गुझ गोझर। चंपा चिर भट चूत चिरौंजी चोल चवेरी, चन्दन चीठ जायफल जामन जंझ जवेरी ॥ १२ ॥ जनुहारा जासदा जवत्री जाई जुहिल, वा सब काय न बेर बेत बहे डावझ हल। महुआ मोल सिरी मुच कंदा मरु वामो खरु, तून तबोल तमाल ताल तारी तिहुं तरु ॥ १३ ॥ अर्जुन अगर अनार अडू अंजीर अरठा, अमली अंड असोक अलू अंगुर सुमीठा। पाकर पील्हू पोल पीपली पाट पतंगी, पांडल पिलूखन पक्क पलास पद माखरु पुंगी ॥ १४ ॥ सोना सेवल साल सिर ससी सो सिव सालर, इम भर तट तरु बेल जुक्त फल फूल मनोहर ॥ धान अठारै जात और बाखर सब ही है। साटन वाड अपार जंत्रमैं पेलत मोहै ॥ १५ ॥ दादुर मोर चकोर पपैया फुनि पिडु कांपक, नीलकंठ चंडोल कठिया तुती

बकसुक। मैना सारस लाल हस लाली पचांनन, फील सुरह हयरोज भरो इत्यादिक कानन ॥ १६ ॥

चौपाई-तीतसु कांग पृथ्वी सर्वत्र, तासम सोमा नांहि अनत्र। चन्द्रपुरी नगरी तहां बसै, मानौ सुंदर नारी लसै ॥१७॥ सित महलन पंक्तन अधिकार, तिनकी रसम रही विस्तार। ऐसे सदनन आकर महा, सत्य चन्द्र पुरी नाम सु लहा ॥१८॥

कवित्त-परखा जल उज्जल अति मानौं, कांची दाम धरै कटि थान। कोट वोट चादर सम सोहै, दरवाजे आम रासिमान ॥ तुंग बुरज कुच सम उर धान' कंचन कलस नैन समजान। कंगुरे दांत निकाल हंसत मानो स्वर्ग लोककू सारत ठान ॥१९॥ धुजा हस्तसै कहै दूर रहौ तुझ मैं बसै अव्रती सर्व। शिव पद साधनकी समरथ बिनतातैं क्यूं धारत तू गर्व॥ इत्यादिक अन्योन्य उक्तकरि युक्ति सहित सोहै यह पुरी॥ ताकि सोमा देखनकों नित आवत है सुर गुण जुत सुरी ॥२०॥ ता पूरव दिसमैं सुर सरिता वह सुमानो। हिमवन सुता गौरव रण जल अंग जु सोहै चंचल तरंग भाव संजुता॥ चपल नैन ऊष भोन नाम समफुन दोतट दुकूल अदभुता। बने बराम न्हानके ललित सु मानौ रचे देव विधि जुता ॥ २१ ॥ फैन हांस जुत बाहु जंत जल धुज्र ऊचाय पट अंगुरी मोर। नृत्य करत मनौ सौर गान जुत सबै रिझावै नर पसु कोर ॥ दोनौं तरफ तथा सुर नभमैं देख देख हरषै सु बहोर। जार नार समेद आलिंगन आवै जो सु न्हान या ठौर ॥ २२ ॥

चौपाई–ऐसी गंगा तट सो बसै, राजा भवन मध्यमैं लसै। तुंग महल जिन मंदिर घने, वीथी सघन चोहटा बने ॥ २३ ॥ चिभ्रम चिभ्रत जन मोहंत, देस देसके जन आवंत। नाना वनज करै मन चाय, सब ही सुखी मनो सुर राय ॥ २४ ॥ सुख विख्यात मनो भुव क्रांत, और अनेक गुन नगन पांत। महासेन नृप नृपगन मनी, नभ इष्याक कुलमैं दिन मनी ॥ २५ ॥

दोहा–सेना बहु अरु बल अतुल, महासेन द्रव सत्य।
और सुगुन मन खान नृप, बुद्ध बिन कहन अकत्थ ॥२६॥

चौपाई–कासपगोत्र सिरोमन जान, थिर नगद्ध गंभीर विमान। रवि प्रताप सोम ससि जयौ, धन कर धनिद देख नख रह्यौ ॥ २७ ॥

कवित्त–क्षिमा प्रभत्व सौर्य नहीं तो सम नान भोगा कर घन लाह। देह धन नित प्रत सुर तरु सम सब जनको मोहै नर नाह ॥ वीर श्री क्रीडा ग्रह नृपको वृक्ष स्थल दीरघ सोहंत। और सुगुन जे नृप नमै भाखे जिनवर पिता समन कहुं अंत ॥ २८ ॥

छपै–तानृपकै तिय घनी पट्टरानी सबैं, पर नाम लक्षमना श्री रु नाग कन्या सम सुन्दर। गुन मन खान महान् सुनान, लछन मंदित तिय गुण सुख भृङ्गार वेदमैं भाषित पंडित। सो सब तिय उपमा जोग बर, नव जोवन कोमल सु तन बसन। भूसन भूषत करन तासमको है अनधरन ॥ २९ ॥

दोहा—जाके शिमकार गाढ़ भय, मदन भयो है सोय।
तोभी अरि सूझ्यो नहीं, आय भयो कच होय ॥ ३० ॥
स्वर्नवर्न जिस कर्नजुग, सत्त वचनके सर्न।
कर्नेसिर्थ मनुसुय है, सूपित सुनो मर्न ॥ ३१ ॥
जास मधुर सुम सुनत ही, को कछ सोचै चित्त।
स्यामल ही बनमें बसो, अजहु न आई मित्त ॥ ३२ ॥
जाके वक्षस्थल विषै, मन पवित्त कुच पीन।
मार भूपके हरनको, दुग्रम गढ समकीन ॥ ३३ ॥
गहरी नाभ सरोवरी, पूरन जल लावन्य।
काम करीके केलको, विधना रची सरन्य ॥ ३४ ॥
मैन महलके धरनको, रंभाके उर थंभ।
जिनकी दृढता देखकै, दगके रंभा थंभ ॥ ३५ ॥
पद्म २ जिम देखिके, लज्जित भये सु पद्म।
तब ते प्रथी छाड़िकै, जाय वसे जल सद्म ॥ ३६ ॥

चौपाई—इम दंपति जोबन आरूढ़, क्रीड़ा करैं मन इक्षित गूढ़। कभी विपन सर सरिता तीर, कभी बागमें जावैं धीर। ॥ ३७ ॥ तालमृजं नरनार समेत, नृत्य गान लख हर्ष उपेत। इधर उधर डोलत मन चाय, नृपति पगलायो जब धाय ॥३८॥ तरु असोक फूलो अरु फरो, जूं जिन संग सोक सब हरो। फिर रानी आगे पग धरो, कुरलो वकुल तरुनपै करो ॥ ३९ ॥ फूलो फलोरु कुरव वृष्य, माता लिगनतै त्यों दृष्य। जगमें माता उत्तम जाय, क्यों न फलै फूल तरु सोय ॥ ४० ॥ इम

कर क्रीड़ा घरकू चलै, परमानंद सुषोदय मिलै। जो इनको सुष वरन दक्ष, को ऐसी बुष धारै वक्ष ॥ ४१ ॥ नवयौवन दंपति सुकुमार, भोगै भोग पुन्य फल सार। एक दिना सो प्रथम सुरेस, अवधिज्ञान चितो मुद भेस ॥ ४२ ॥ धनद प्रतः इम वचन बषान। वैजयंत हर तजै विमान, जम्बूद्वीप मरथ छित बसे, आरज खंड सु पूरव दसे ॥ ४३ ॥ चन्द्रपुरी नगरी भूपार, महासेन लक्षमण सुनार। अष्टम जिनवर होसी सही, आयु मास षट बाकी रही ॥ ४४ ॥ तापुरकी सोभा अति करो, पंचाश्चर्य मणादिक मरो। हरकी आज्ञा मान कुबेर, धार सीस करजोड़ि सुफेरि ॥४५॥ नुत कर चलौ सु आयौ कहां, मंदाकिन तट ससिपुर जहां। कनकमई माणि जड़ित सुपान, रहित सुपंक पंक प्रफुलान ॥ ४६ ॥ सूक्ष्म अमिय सम जलकर भरी, ऐसी परषा ओंडी करी। कंचनमय अति रस्म सुवर्ण, पंच वर्ण माणिक जुत दुर्ग ॥ ४७ ॥ जगत तिमर हरमानो हंस, मंगल दर्व पौलि उर ध्वंस। मध्य भाग जिन मंदिर करो, सहस कूट कृण माणीमय नरो ॥ ४८ ॥ राजभवन अति सुंदर रचौ, हाटकमय रतनन कर षंचौ। इन्द्र नील माणिक हुं प्रवाल, कहुं पन्ना कहुं पुष्कर लाल ॥४९॥ कहु हीरा सम स्वेत विलोक, फैलां किरण लियौ नभ रोक। इन्द्र धनुष सम सोहै रंग, पणवौ अथिर ए सुथिर अभंग ॥ ५० ॥ ऐसी आपण टणो बजार, सकल वस्त आकर सुनिहार। हेममई सु रची मेदनी, मणिमय चित्र बमू सोहनी ॥ ५१ ॥ रचना प्रथम हुती अति घनी, तो पच

धनदभक्त अति ठनी । जो प्रभुको वैराग है लखी, तौ मौ सुथिर करै सुर रखी ॥ ५२ ॥ ऐसे रचरु कीयो जुतकार, मात-तातकूं आनंद धार । साढ़े तीन कोड़ि यह बार, साढ़े दस दस दिन प्रति सार ॥ ५३ ॥

दोहा–नभसूं आवै झलकती, मणधारा इह भाय ।
स्वर्ग लोक लछमी मनु, सेवन उतरी माय ॥ ५४ ॥
अम्बु कण जुत गंध ही, बरसै कुंकुम रंग ।
नभ गंगा आई किधौं, सेवन मात उमंग ॥ ५५ ॥
बरषै सुरतरु सुमन ही, नृप आंगण सुखदाय ।
मकरध्वज जिन सर्ण लहै, मनु नाचै हरषाय ॥ ५६ ॥
नभमैं सुर दुंदुभि धुरै, वृषसागर उनहार ।
तथा जनावै जगतकूं, इतले जिन अवतार ॥ ५७ ॥
सकल अमर जै जै करै, मानौ एम बखान ।
जो सुज जै जिनराजकू, सो ऐसो हुय आन ॥ ५८ ॥
या विध पंचाश्चर्यवर, होत महा नृप भौन ।
तिनकी महिमा को कहे, लखै सुजाने तौन ॥ ५९ ॥

चौपाई–एक दिवसमांही त्रियवार, मण बरषावै धनदकुंवार। सिहद्वार आवै जे जना, सो ले ले मणि जावै घना ॥ ६० ॥ सब अर्थीजन तृप्त जु भए, फेर मांगनेमैं थक रहे । भए कुबेर समान सु लोग, इंद्र समान भोगवै भोग ॥ ६१ ॥ अवधि-विचार गर्भ दिन जान, षट देवी टेरी मुद ठान । पद्मादिक-द्रह वास निहार, रूप संपदा अचरजकार । ६२ ॥ श्रीः ह्रीः

चौथे कीने शुभ लक्ष, तिन बुलाय हर कहे प्रत्यक्ष। ससिपुर महासेन नृप जिसा, नाम लक्षमणके अब त्रिया ॥ ६३ ॥ ले अवतार अष्टम जिनवरो, ताकी गर्भ सोधना करो। यह नियोग तुमकूं सुख हेत, सुनके चली हर्ष चित चेत ॥ ६४ ॥ कर जुत हर आज्ञा धर भाल, स्वर्गलोक तजि आई हाल। बसे चंद-पुर नगर सु तहां, लावनभरी क्रांत तन महा ॥ ६५ ॥ चूड़ा-मन माथे जगमगै, देखत चकाचौंधसी लगै। कानन कुंडल ससि रविसो, नथ मुतियन विच मानक लसो ॥ ६६ ॥ ज्युं कुज शुक्र गुरु मध सोह, कंठ कंठका देखत मोह। सुरतरु सुमन दाम उर धरी, अति सुगंध दशदिश विस्तरी ॥ ६७ ॥ कुच मध हार मणन लुंवाह, खग चल मध्य जु गंग प्रवाह। पधना कुलि तनी रमैं नेम, रव दुति सम मण झलकत एम ॥ ६८ ॥ भुज बंधन जुत भुज जुग लसै, जिनघर जुत जूं खग गिर लसै। मण कंकण जुत कर जुग सोह, धूल साल जू रतन समोह ॥ ६९ ॥ अंगुष्ट नामिका मध्य तर्जनी, छापक निष्टादिक में ठनी। मानो भूषणांग तरु एह, कटकटि मेखल रुण झुण गेह ॥ ७० ॥ जंबु वेदिका मानो यही, गिरदाकार वेढ़ि कटि गही। चलते पग नूपर ठणकार, लख द्रग मोह श्रवण सुखकार ॥ ७१ ॥ अंग अंग सब सजो सिंगार, मानो नभ दामनि अवतार। आय सभा मधि नृपथित पीठ, ज्यूं उदयाचल पै रवि दीठ ॥ ७२ ॥ सुमन सु छेप भक्त जुत असैं, आय सची जननी पद लखैं। तब नृप आज्ञा दे सत्कार, कारण फूल सम

अमण सुधार ॥ ७३ ॥ रसम त्रिभुवित माता गेह, जे जया द्विक कर बहु येह । आमे जाय लखी उदयंत, जिन जननी विष्टर विलसंत ॥७४॥ चवर उभय दिस डोलत नार, मानो नभ गंगा अवतार । विसद पवित्र माय तन धरै, सो फुनि जठर सोधना करै ॥७५॥ स्वर्ण मई ले द्रव्य सुगंध, ताकर उदर कियो सुच सिंधु । सेवा और अनेक प्रकार, करै मातकी हर्षि सु धार ॥ ७६ ॥ केल विनोद करत दिन रैन, मास षष्ट सुखमे गति चैन । निमष मात्र भी जान न परै, एक दिना सुखमें अनुसरै ॥७७॥ पुष्पवती जब राणी भई, मनो रेण जुत कवलनी थई । कर चतुर्थ सुंदर असनान, तिसमें कर सिंगार महान ॥ ७८ ॥ रतन पलंक मध्य निवसंत, जूं बिमानमें सची लसंत । करत सैन माता जामंत, अद्भुत सोलै सुपन लषंत ॥ ७९ ॥

अहो जगतगुरुकी ढाल—ऐरावत सम स्वेत मद धार जुत मानो, रूपाचल नग जेम झरना झर अधिकानो ॥ अलि छायो भई स्याम, घटाघन गरज जसो । लछन लछत सोय लषो, जननीगज असो ॥८०॥ विकटानन कटि, छीण मृदु केसावलि सोहै । चल रसना दृढ दाढ, स्वर्ण वर्ण मन मोहै ॥ स्याम सुक्ल संयुक्त, इन्द्र नीलमण कणमें । जड़ा भरण जिम सोई, लखो इम हर सुपननमें ॥ ८१ ॥ सरद इन्दु सम कांति, खनत सो भूमि खुरनतैं । चपल हलावत शृंग कंध, अति स्याम अलिनतैं ॥ उछलत करत ठकार मनो, उपदेश करै है । अहो हमारो नाक तुरत ससि पुत्र वरै है ॥ ८२ ॥ नागासन थित पीठ, कनंक

कलस जुग धारा। गहत सूंडसे देव देय, ता सिरपर धारा ॥
ज्यौं सुर गिरपर सांझि, फूली घन गरजत मानौ। वा सूचत है
पूर्व जनम मंगल अधिकानौ ॥ ८३ ॥ इम कमला तुरि माय,
लखी फुनि जुग फूलमाला। झंकित भृङ्ग सुगन्ध, फैल गई
दिग आला ॥ मानौ विधना आय दाम, रूप धर गावै। जिन
गुण श्री अवतार लेय इम टेर सुनावै ॥ ८४ ॥ सर्व कला जुत
सोम मंडित गिपि अविकारं। लख तम दस दिस जाय, ज्यूं
समीर घन टारं ॥ निज मरीच संजुक्त वानिज मुख जुत मोती।
सप्न आरसी माहि लखत माता इम सोती ॥ ८५ ॥

प्राची दिस सम नार कुंभ लिप्त संदूग। सिर धर मंगल
रूप चक्रविध मानौ पूग ॥ उदयाचल पय पेख कुंकम तिलक
जु मानौ। किरनारे जुत नक्त तमहर माल निज मानौ ॥८६॥
कुच सम कणमय कुंभ कंचुकी रतन जरे है। हरतांबुज मुख
जुक्त पयसम सुधा भरे है ॥ तथा न्हवन घट जेम मा अष्टम
विख्याता। निज तन सोभा जेम लखे सुपनेमें माता ॥ ८७ ॥
जुग झख सरमै तरंत ललित मनोहर मानौ। जग पद्माके नैन
भ्रमन ऽलरूप समानौ ॥ श्रुत जलमै प्रतिबिंब ध्वजसम चंचल पेखी।
वा अंश निज अङ अङ बिना इम देखी ॥८८॥ अमिसम करत पूर
रोमावलि छब छायौ। कीरत महक समीर मदन तन फरस मिटायौ॥
काम विथा सम ताप, कनरंग सम तन लछन। जठरत त्रिवली
श्रेणि हंस, नृप रमत ततछन ॥ ८९ ॥ औंडो ज्यौं निज नाम,
सर देखौ इम माता। फुनि मधि फैनिक, लोल तन मोरत हर-

खाता ॥ बिंदु छलन कर ठाय, मौंना रवरत सुगावे। सोर गरज जुत नृत करत, दधि लख हरखावे ॥ ९० ॥

जंबु तनुज मय पीठ मणि न जडौ किरनारी, छायौ ज्यू हर चाप सुर गिर सम ऊँचारी। जुग दिस चवर सुधा रमनो निझरना सोहै, पुत्र जन्मको सूचि लखौ जननी मन मोहै ॥ ९१ ॥ रतन जड़ित कलि धोत मई सु विमान देवको, तम हरता ज्यूं सूर किरण बिलके तनको। किंकनीर विजू प्रात चढतौ यौ चल आवै, लखौ ते रमै मात सुपनेमैं सुख पावै ॥ ९२ ॥ निकसत पोहमी फोर ज्यौं प्राची मार्तंडा, बाजिन मन समान मुक्ति माणिक मणी मंडा। सर्म खान सुम मूर्त्त सुत बस पात्र समरनी, लखौ फणी सागार निज मंदिर समजननी ॥ ९३ ॥ पंच रतन मय राशि मेरु चूल वत ऊंची, प्रभा पुंज दिग पूर इन्द्र धनुष मनु सूची। किधौ सु जिन गुण राशि बाल छन व्यंजनसी, पुन्य पुंज सम पेख सुरनर द्रग रंजनसी ॥ ९४ ॥ प्रजुलित ज्वाला जाल उठत सिखा ऊरधको, आगे जिन शिव जायता मंगल सूचनको। मानौ सुत जम मूर्ति काल मधूप विना है, षोडसमय लख माय अग्नि सिखा सुपना है ॥ ९५ ॥

दोहा—इम स्वप्नांत रु स्वर्णमय, तुगानन परवेश।
मंगल मंगल रूप लख, सुख तद्गन विन लेस ॥ ९६ ॥

गीता छंद—फुनि घुरै दुंदुभि घोर घन सम मोर सम कुरकट नचे। वे बाहु सम बाजू उठावत ग्रीव मोरत तन लचै। सो

गान सम उचरित शब्द सु सुनत निद्रा जन तजी। ज्यूं दिव्य धुनि प्रभुकी सुनत भवि निकट मिथ्या मिलतजी ॥ ९७ ॥ तब भये जोत सुमंत उडगण कछु लसै कछू नाहिजी। ज्यूं होय तीर्थंकर उदै पाखंड गण छिप जायजी ॥ फुनि चंद मंद उद्योत होहै मात ससिमुख दे खक। ज्यूं कमलनी कामि सु हिरदा मुद्रित हो रवि पे खकै ॥ ९८ ॥ अब प्रातकी फूली सु लाली जू पलास बसंतमें। अथवा जिनागम सुनत भविजन हर्ष लाल उरंतमें ॥ तब ही सु जिन सम रवि उदै लखि भविक मन मुद्रित खिले। मिथ्यात सम घू घू सुघूमै प्रभा जिन सम बच गिले ॥ ९९ ॥ जब कमलमें बंध भृ खुले जूं जीव श्री जिन धर्मसं। तब देखि घाट सुघाट पंथी लोग चाले समसू ॥ अरु जेम जिन धुन सुनत सुझ स्वर्ग शिव मारग यथा। धरि ध्यान मुनि श्रावक सामायक करै सब सुभ विध यथा ॥ १०० ॥

तब सब सखी मिल मंगलीक सु गीत गावै चावसू। मानो धरम दधि गरजकी ध्वनि होत आनंद भावसूं। इम सुजस सुनि सो उठी माता नैन मुद्रित इम लसै, जुत कंट कवल निसांतमैं जू कछु कवि गसत हूलसै ॥ १०१ ॥ उठकर सामायक प्रात किरिया गंध जुत उबटन लियो, तन किया मंजन न्हवन सुंदरि फुनि विलेपन वपु कियो। मेरु चूलीवत तिलक दियो भालमै ससि सम दियै, मंगल विमान समान मांग सिंदुर कुंकम का लिये ॥ १०२ ॥ फुनि सुभग सहज सुनैन मैन सु बान सम चल चपलसे। तब तहां अंजन दियो, सुन्दरी तीरूं पछ जुत

लै। फिर अलक मुक्ता जुत किये भूषन मगामग मलकती, बहु मोल कोमल वसन झीने धार तनसो लहकती ॥ १०३ ॥ सुभ सखी संग सु लेय चाली संग अमराजूं सची, बाहर अघोर सम सभा मध देष पति निज मन रची। महासेन देवी आवती लख हर्ष अर्द्धासन दियौ, कर जोडि जुत करि भाव तिष्टी भयौ आनंदित हियौ ॥ १०४ ॥ फुनि सीस न्याय क विनपूर्वक प्रश्न कीनौ नाथजी, हम स्वप्न सोलै गजादि कलरव आज होत प्रभातजी। तिन सबनको फल कहौ कैसा सुनत फुरियौ अवधजी, तसु ज्ञान बल तै कहै नरपत सुनौ देवी विविधजी ॥ १०५ ॥

छन्द पद्धडी—जिम कुंद इन्दु नृप दंत पंत, तसु रस्मि प्रकाशित वच भनंत। हे गज गमनी निस गज विलोय, सित यस जुत सुत जगपति सुहोय ॥१०६॥ हे सुवृष धरालय वृषभ रूप, वृष रति गतिको धारी अनूप। हे छीन कटी सम हरि निहार, सुत अतुल अनंती सक्ति धार ॥ १०७ ॥ हे पदमाक्षी पदमा निहार, जुत न्हवन तास फल सुनि अवार। सुत जन्मोत्सव जुत न्हवन इंद्र, ले जाय करै सुर जुत गिरिंद॥१०८॥ निज तन सुगंध सम सुमन दाम, पोह करमैं लटकत लखी वाम। तातैं सुगंध तन दुविध धर्म्म, भाषै सुपुत्र तुव होय पर्म्म ॥१०९॥ हे ससि वदनी ससि तेजु सांत, मिथ्या तम हर गुण किरण पांति। धर्मामृत तैं जगत प्रहर्ण, हे रवि क्रांते रवि जुक्त किर्ण ॥ ११० ॥ निरुपै लखने है होय पुत्र, हनि

बाह्यान्तर मोहांध शत्रु। हे मत्सरधी विन मत्स देख, तो सुत तजि भोगोपभोग सेष ॥१११॥ हे घटस्थनी जुग घट निहार, या फल निधि नाथ कहो कवार। हे सर लाभे सर कंज जुक्त, सुत धरे सुलछन हो निरुक्त ॥ ११२ ॥ तृष्णा आताप बिना सुआप, फुनि औरन कूं कर यह प्रताप। हे सुगण भणाकर धीर गम्भीर, निज धुनि सम गर्जित समुद छीर ॥ ११३ ॥ यातैं दधि सम गम्भीर बुद्ध, पर तार तरै संसार अब्ध। हे उर्द्धासन लख सिंह पृष्ठ, सुर असुर नमै तोहि पुत्र इष्ट ॥ ११४ ॥ जाको सिंघासन सकल सेय, फुनि सुर विमान आवत लखेय। सबमैं उत्तम पंचोत्र जोय, तजिकै जयंत आगर्भ तोय ॥ ११५ ॥ भूभेद निकसि अहि भवन जोय, तो सुत भव पिंजर तोर सोय। जावै सिव फुनि हे सुगुण राशि, तासम देखो तै रतन राशि ॥ ११६ ॥ ता फलत सुगुण मण रासि पुत्र, हो है निश्चै जाणो निरुक्त। हे निकलंके निर्धूम अग्नि, ताफल एह सब विघ्न करै भग्न ॥ ११७ ॥ सुभ ध्यान धनंजय तै प्रजाल, केवल रवि सम लहै जुत किनाल। फुनि स्वप्न अंतगज मुख मंझार, तातैं तुव निश्चै गर्भ धार ॥ ११८ ॥

दोहा—लक्षमणा देखो स्वप्न फल, सुन रोमांचित भूर।
सुवचन जल सिंचित किधो, उगे हर्ष अंकूर ॥११९॥
चैत्र श्रमर पंचम निसा, अन्तर्नुराध निवंत।
बसे गर्भ जिन बाध बिन, यथा सीपमैं मुक्त ॥१२०॥

चौपाई—वसै गरभमैं भिन्न सदीव, ज्यों घटमैं नभ भिन्न अतीव। श्रम विन जननी दीपै अत्यंत, ज्यूं दर्पण जुत मूर्त्ति लसंत ॥ १२१ ॥ तब जिन पुन्य पवन वस हले, मौलि नए सुर आसन चले। चिन्त देख इन्द्रादिक देव, चौ विध ज्ञान अवधि बल भेव ॥ १२२ ॥

कड़का छंद—आज जिनराज अवतार लियौ गर्भमैं। सक्र आनंद उर धर विचारौ ॥ देव गिर वान सु विमान चढि चले संग परवार जै जै उचारो। गर्भ कल्याणके हेत पितु सदनमैं आय पित मात विष्टर बढाए। कनक मय कलस ले न्होन उनकौ कियौ महा उछाह बाजे बजाए ॥ १२३ ॥ गान जुत नृत्य किये गर्भ मधि वर्त ये प्रणामि जिन ध्यान धरि देव सारे। भेट पूजा भली न्याय सिर थुत मिली धन्य जैयंत सु विमान द्वारे ॥ गर्भ अवतार लिय भव्य सु पवित्र किय साध सु नियोग हर घर सिधाई। देव गण मन विर्खे चित जिन गुण रखै रुचिक वासनि सुरि हरि बुलाई ॥ १२४ ॥ आय नुत करि कहो जो सु आज्ञा वहो सोय हम करै हम आज कीनी। सुनत गिर वान सुख खान इम जाय जिन मात सेवा करो तुम नवीनी ॥ पूर्व-वत भेद कहो सुनत सब हर्ष लहो सुरनरपति नुत राहो हुकम आई। सोम पुर पत नई हुकम ले घर गई मातकु लखि नई थुत कराई ॥ १२५ ॥

छंद कुसुमलता—आई भक्ति नियोमनि सब ही विविध विभा झल झलकंत। दामनिसी दुति हंसगामिनी पग नूपर ठण-

उमकंत ॥ अंग अंग भूषण सब साजै समर धुजा लह लह लहकंत । दस दिस पूरी तन पराग फुनि सुमन दाम मह मह महकंत ॥ १२६ ॥ विजया वैजयंति जैयंती अपराजितारू नंदा जान । नंदोत्तरारू आनंदा फुनि नंदवर्द्धना आठ सु मान ॥ पूरब दिस वासनि करी झारी पूजा द्रव्य लिए खडी येथ । माता निकट विनयपूर्वक ही कहै कछु आय सहम देय ॥१२७॥ आदि स्वस्थिता बहुरि पूर्वका प्राणीघ यसोधरा सु गिनिए । लक्ष्मीमती रु कीर्तिमती फुनि रुचिका वसुंधरा वसुए ॥ दक्षिण दिसा रुचिक गिरवासनि मणीमय दर्पण लिये जु हातसो । जिन जननीकूं दिखलावै सेवा करै सु नाना भांति ॥ १२८ ॥ इलासुरी प्रथ्वी पद्मावती तथा कांचना नमकाहेर । सीता और भद्रका ए वसुमाता सिरपर छत्र सु फेर ॥ मुक्ति झालरी संजुत सोहै मानौ ससिनि क्षत्र संयुक्त । ए पछिम दिसवासनी जानौ फुनि उत्तरदिश सुनौ जिनुक्त ॥ १२९ ॥

गीता छन्द—वर लंबुसा फुनि मिश्र केसी पुडरीकणी वारुणी, आसा रुही श्री फुनि धृति वसु ए भणति उर धारणी । वे भक्त माताके वपू पै चमर ढोरत सब खरी, फुनि ताहि गिर की चौ विदिसमैं ओर है सुन चव सुरी ॥ १३० ॥ चित्रा कनक चित्राऊ त्रिपला तुर्य सूत्रा मणि यही, ते मात तट मुदकर विनै सुवात सुन्दर ए सही । फुनि विदिसमैं अरु रुचिका और रुचिकोज्वला है, फुनि त्रितीय रुचिको भारु रुचि कोत्तमा चौथी मिला है ॥ १३१ ॥ वे दीपका उद्योत कर है

सेव बहु विध भरता, फुनि आदि विजया वैजयन्ती जयन्ती अपराजिता । ए बिदिस बासनी जानैं चामैं मिल आठवी, विद्युत कुमार नमै सुमुखरा करै सेवा ठाठजी ॥ १३२ ॥ फुनि सु माला मालनी अरु सुवरणा गुण षष्टमी, सुवर्ण चित्रा पुष्प चूला चूलिका वती षष्टमी । ए सर्व पंचास षट श्री आदि मिल छप्पन भई, मैं और बहुती नाही जानूं मात सेवै सुख भई ॥ १३३ ॥

छंद कुसुमलता—कोई उबटन मलमल न्हावै कोई अलक संवारै । कोई मांग भरै दृग अंजन कोई तिलक सु धारै ॥ कोई तनकैं गंध लगावै कोई भूषण साजै । कोई पट पहरावै बहु विधि जिन जननी मन राजै ॥ १३४ ॥ कोई भोजन करै तयारी कोई पान चबावै । कोई सिरपर छत्र सु फेरै कोई चमर ढुरावै । कोई सिंघासन पर थापै कोई दर्पण दिखलावै ॥ कोई गूंथ मनोहर माला आनि सुगंध पहरावै ॥ १३५ ॥

कोई भेट करै सुरतरुके फल फूलादिक ल्यावै । कोई जलक्रीड़ा कर रंजै कोई सुन्दर गावै ॥ कोई नृत्य करै बहुविधिसूं कोई साज बजावै । कोई सुन्दर सुर आलापै कोई तान सुलावै ॥ १३६ ॥ कोई देवी दीपक बालै कोई सेज बिछावै । कोई माता पांव पलोटै पंखा कोई हलावै । कोई मुखमंजन करावै को दतोनी देवै ॥ कोई पग पखालै कोई पटसूं पूंछै सेवै ॥ १३७ ॥ कोई आंगण देव बुहारी कोई फरश बिछावै । कोई गंधोदिक छिरकै फुनि सुमन कोई बरसावै ॥ कोई औरण

फूल समेटैं मंदिर बाहर डारैं। कोई दान देय मंगन जन, कोई जस विसतारैं ॥ १३८ ॥ कोई हांस विलास कतूहल करि, करि मात रिझावै। कोई काव्य कथा रस पोषत, सुन माता हरषावै॥ कोई पंच रतनकूं चूरैं, पूरैं चोक सु कोई। कोई मणि रज रचै, सांथिया देख २ मनमोई ॥ १३९ ॥

कवित्त–कोई माता रक्षा कारण बंध देत दश दिस पढ मंत्र। सवाधान निस दिन आयु धर है कोई कोट रचैं कर जंत्र॥ करत उपद्रव छुद्र असुरको ताहि निवारण हेत विचार। तथा भक्ति वसि करि है देवी, नाना विध सेवा निरधार॥१४०॥

दोहा–या विध सेवा करत नित, वन कीडादिक जेय।
विध वैक्रिया पर भाव सूं, नवें मांस गुण गेय ॥१४१॥
गूढ अर्थ शब्दादि क्रिय, नाना प्रश्न सपोष्ट।
करैं सुरगंन मात प्रति, काव्य श्लोक वृष गोष्ट ॥१४२॥

अथ देवी प्रश्न, माता उत्तर।

कवित्त छंद–कोन देव देवन पत माताको, वृष उपदेसै विनदोस। गुरुन गुरुको सब दरसी, कोन सुधी छालिप गुण कोस॥ को सरवग्य सरबकूं देखै, कौन अठारैं दोषनहंत। कोन पंचकल्याणक नायकको शिव मगदाता अरिहंत॥ १४३ ॥ तीर्थंकर–निराकार आकार धरैं कोवै सब देखै उनै न कोय। ध्रौव्योत्पाद धरै न धरैको, हानि वृद्ध बिन फुनि युत होय॥ निरगुण सुगुण सहितको जननी, कौन सुथित बिन थिर धारंत।

उरध अधो चलन बिन समरथ, समरथ बहु शिव पति निवसंत ॥ १४४ ॥ सिद्धि-ग्रन्थ बिना बहु ग्रंथ धरैको जगत विरुद्ध सुद्धको मान । मौन बिना को मौय धरत है बिना आस आसा अधिकाय ॥ धन बिनको धन जुत सर्वोत्तम को बिन सेव सेव निज तत्त्व । को बिन घर घर आतमके जुत को बिन जोग है जोगी सत्त्व ॥ १४५ ॥ शाख-चारित्र मार उपल समजा बिन जा बिन भव्या भव्य न जोय । धन बिन धन सर्वोत्तम है को शिव तरु वर अंकूरस कोइ ॥ श्रवण भूषण भूषणको है जा बिन भव आवली न नास । जास प्रहादि वसै तुम सो दर सुरी प्रश्नतैंमा द्रिग भास ॥ १४६ ॥ सम्यग्दर्शन ।

जाकर तीन लोक पत पूजै तीन लोकमैं महिमा जास । जा बिन चेतन अप नहीं इक जातैं लोका लोक प्रकास ॥ जा बिन जगमैं मूढ़ कहावै जा जुत पंडित मान प्रवीन । को निज गुण सो जननी भाषै ता प्रघटे लह मुक्ति नवीन ॥ १४७ ॥ सम्यग्ज्ञान ।

जो निश्चै तद भव सिव जावै जा बिन सिव पावै न कदापि । जाकर सम्यक आधिक जूं कन भूपनमैं मन आय जा बिन ॥ निर्मल सो मल युत है जाजुत मलजुत उज्जल होय । जाको सुर चाहत सो प्यारे जग तो दासी कूमा होय ॥ १४८॥

दोहा-जा बिन मुनि श्रावक क्रिया, वृथा होय सब माय ।
कौन इसो जगमैं सुनौं, सो तुम मैं सुखदाय ॥ १४९॥ विवेक ।
सषी स्याही मोक्षकी, उलटी दुरगति दाय । आद बिना

..द जन प्रिय, सो सुन प्यारी थाय ॥ १५० ॥ ..... ।

..दांकन पाले सुजन, मध्यांकन छयकार। अंतांकन सब जग प्रिय, को दम भूषण सार ॥ १५१ ॥ काजला ।

कल्याणक उछव विषै सुरनर भक्ति सुधार। वा आधीन जन सुजसमैं काको करे उचार ॥ १५२ ॥ जप ॥ रमैं बहुतमूं आर सम, वासू रमै जो कोय। फेर औरसूं ना रमैं, नारि नारि बिन कोय ॥ १५३ ॥ शिव ॥

इति पहेलिका।

अथ प्रश्नोत्तरमालिका।

छंद चाल—तुमसी तियको जिन जावे, मटको जग त्रिसैक खावै। को कायर अक्ष न जीतैं, पंडित को चलै सुनीतैं ॥१५४॥ दुराचार कुमग इन तेते, सठको त्रिषई जग जेते। को सदन चारू साधे, को कुनर न धर्म अराधै ॥१५५॥ को धन्य तरूण व्रत धारै, को धृग व्रत भंग निहारै। को जीव हितु सद्‌बोधा, को जीव रिपुगन क्रोधा ॥ १५६ ॥ सुपवित्र कोन तज लोभा, को मलिन पाप जुत छोभा। को नर पसु समान विचारै, को अंध जु नांहि निहारै ॥ १५७ ॥ गुरु कुगुरु असुर सुर जानी, कोबधर सुनन जिनवानी। को मूक साच नहीं भाषै, को सुमन सरल चित राखै ॥ १५८ ॥ को तुंड हस्त नहीं देवै, को पंगु सु तीर्थन सेवै को रूप सील शृङ्गारै, को विरूपसील परिहारै ॥ १५९ ॥ को मित्र सुधर्म दिढावै, को शत्रु वृषतै हटावै। को सरण जीव परमेष्ठी, इत्यादिक प्रश्न जु श्रेष्ठी ॥ १६० ॥

दोहा—करै विनै जुत सुरांगना, उत्तर देय विचार।
लक्ष्मीदेवी सहज ही, चतुर सुगुण आगार ॥ १६१ ॥

सोरठा—पुरुष रतन उर वास, क्यौं न ग्यान अधिको लहै। ज्यूं प्राची दिस भास, उदै भान पहली ममैं ॥ १६२ ॥ तीन ग्यान गुणवान, निवसै निर्मल भ्रूणमैं। ज्यूं मणि दीप महान, फटक महलमैं जगमगै ॥ १६२ ॥

कुसुमलता छन्द—त्रिवली भंग न उदर मनोहर तीन कोट मनुगाजै। श्री जिनगर्भ विषै सुभार बिन जृ दर्पण गिर छाजै ॥ जननी कल्पलता कुच मंजरी, सुमन भार न सहारै। तौ फल गरभ भार किम सह है इम नाजुक तन धारै ॥ १६३ ॥ पीत वरण नहीं देह मातकी स्थन विटली नहीं स्यामा। लम्बे उष्मन स्वांस सुगंधित ना आलि सगुण भामा ॥ अरु चिजें माई होय न जननी मणि दुति सम तन सोहै। झांक समान गर्भमें वालक अधिक रीस मनमाहै ॥ १६४ ॥

छन्द चाल—सुरवल्ली सम छवि वंती, हसि मंद कुसुम फूलंती। अब होय सुफल फल वेटा, इम पूरव पुन्य सुभेटा ॥ १६५ ॥ सुरराज वचन उर वेवै, सचि अहि निस हर्षत सेवै। अमरी जुत अलख सु भावै, पूरव वत नग वरसावै ॥ १६६ ॥ फुनि पंचाश्चर्य अनूपा, घर महासेन वर भूपा। कर धनिद महा सुखदाई, सुखमैं निसि दिन वीताई ॥ १६७ ॥

गीता छन्द—मय वेद नाम न कही सुणिये गर्भ मंगल यो महा। सो करौ मंगल सबनको श्रीचन्द्र प्रभु गौतम कहा ॥

सुणि भूप श्रेणिक अंग पुलकित पुन्य महिमा इम लखी। ताकी परमपर देखि गुरु गुणभद्र संस्कृतमें अखी ॥ १६८ ॥

दोहा–या विध जे मंगल लखैं, धन्य पुरुष जग सोय।
भाखै हीरा आस यह, कवि ऐसो दिन होय। १६९॥

इतिश्री चन्द्रप्रभपुराणे जिनगर्भावतारप्रथममंगल वर्णनो नाम एकादशम संधिः संपूर्णम् ॥ ११ ॥

द्वादश संधि।

कवित–इंद्र सुरासुर मुनि खग नरपति ध्यावत मन वच तन कर जाको। जातन रश्मि लगे हो उज्जल बाहरु अंतर ध्यान सु ताको ॥ ऐसे चंद्र जिनेंद्र क्रमांबुज मो उर ताल करो सोभाको। फैलो तासु सुगंधि मनांतर ताप कुबुद्ध हरे कविताको ॥ १ ॥

चौपाई–सुनि श्रेणिक आगै मन थंम, कहुं जन्म मंगल आरंम। रहसरलीमें निस दिन गए, गरभ मास जब पूरण भये ॥ २ ॥ पूस चंद्र पडिमा तिथ दच्छ, जोग इंद्र अनुराधा रिच्छ। प्राची दिश समान लक्ष्मणा, महासेन उदयाचल भणां ॥ ३ ॥ तित जिन रवि यो रत्नागार, मध्य लोक सम भवन मझार। तीन ज्ञान किरणावली जुक्त, त्रिभुवन कवल प्रकाशन उक्त ॥ ४ ॥ तेज पुंज जिन सित जिम चंद, वृद्ध सुखाब्द कर जगतानंद। सवे लोक भयो क्षोभित रूप, कलपट घर मनो

नाचै भूप ॥ ५ ॥ घरा सखी सम हर्ष विचार, ताकर चलत भई सु निहार। नृत्य करत मानो पुर नार, वस्त्राभरण किये शृंगार ॥ ६ ॥ श्री तीर्थंकर जन्मो जबै, पुण्य पुंज मणि पुंज फबै। तीन लोक आनंद तरले, जिम वसंत विनस्पति खिलै ॥ ७ ॥ स्वजन लोक इम हर्ष अमंद, चन्द्रोदये जूं कमलनी वृन्द। दश दिश निर्मल फटिक समान, आंधी रज घन विन नम जान ॥ ८ ॥ मंद सुगंध वहै दुखहार, पवन तरुण जूं पात्र सिंगार। छेप द्रगांजली मुदित नचंत, सर्व सभा मनो नृत्य करंत ॥ ९ ॥ सुरतरु सुमन चवैं स्वयमेव, जन्मत जजैं मनो जिनदेव। कुसम सुगंधित दसो दिश भयो, मानो हर्ष बांट सबां दयो ॥ १० ॥

दोहा—एक महूरत नरकमें, सब जिय चैन लहाव।

उयूं रणमें पट फिरतही, राउ त्याग समभाव ॥ ११ ॥

चौपाई—अब जिन पुन्य पवन वस इले, चौविध शक्रन आसन चले। मानो कहै लखो बुध थोक, जिनवर जन्म भयो भुवलोक ॥ १२ ॥ तुमै उचित नहीं उच्च स्थान, मुकुट नए मनो मागत ठान। करो नमन जिन जन्म परोख, यही भक्ति दे निश्चय मोख ॥ १३ ॥ अकस्मात सुर दुंदभि बजु, अनहद मधुर सिंधु जू गजु। कल्प वास घर घंटा घुरै, मनो सुरन प्रति इम उचरै ॥ १४ ॥ सावन चलो जन्म कल्याण। उदय भए सूरज भगवान। जा दरसैं छूकै भव नीर। अघ मारस तजि मवे शरीर ॥ जोतिष घर हर नाद अपार, मानो कहै न सावो

थार। सब व्यंत्रन घर पटह पटंत, मनो जिन जन्मोत्सव सूचंत ॥ १६ ॥ भवनालय प्रति पूरौ संख, मानौ सबकूं कहत निसंख। रहो जनम जिनवर भयो आज, यातैं मौलि पीठ चल राज ॥ १७ ॥ लख चिन्हादिक चकत थाय, पीन पुंज जू तुल भू भाय। अवधि विचार जान जिन जन्म। जू दर्पणमैं छबि विन भर्म ॥ १८ ॥ प्रलय सिंधु सम हर्षितवंत, चलनेकूं उद्यम सु करंत। हर इशान रु सनतकुमार, त्रिय महिंद्रक ब्रह्म निहार ॥ १९ ॥ लांतव महाशुक्र सहस्रार, आणत प्राणत आरण विचार। अच्युत ग्यारै इंद्र प्रतिंद्र, सब परिण जुत दुतिसु दिनंद ॥ २० ॥ नानाविधि वाहन सजि चढे, ते जिनभक्ति सलिल उमढे। हर्षांकूर बढत गुणग्राम, मिल सब आए प्रथम सुधाम ॥ २१ ॥ चली सेन सप्तांग सु एम, लहर जलधकी स हे जेम। अस्व वृषभ रथ गज गंधर्व, नृत्यरुपत्य सप्त चमू सर्व ॥ २२ ॥ इक इक सेनामैं कछ सात, प्रथम तुरनिकी सप्त विख्यात। लक्ष चौरासी कछमैं आदि, दूण दूण सप्त तक साद ॥ २३ ॥

छप्पई—प्रथम कुंदके कुसम क्षीरसागर फेनोपम। द्वितीय बसंती तप्त हेम बालार्क केसर सम ॥ त्रितीय लाल पवाल गुंज गुलम षमल समहै। धानी हरित सुकाग रंग पन्ना सम सोहै ॥ पण अंजन राठरुकेत सम, षष्ट कपूरी तुछ जरद। सित कंठ इंद्रमणि नील फुणि, इककमैं बहु रंग हद ॥ २४ ॥

दोहा—सौ करोड अरु कोड षट, अडसठ लक्ष प्रमाण।
संख्या सब अस्वन तनी, लिखी देख जिनवानि ॥ २५ ॥

छप्पै–बालतुरी गत पवन प्रिष्ट, अति पुष्ट सुभग मुख। तुच्छ श्रवण ज्यूं मेर उद्ध, थिन भाल उच्च लख ॥ दृग नीलोत्पल नाल सम दंत इन्दु दुति। ग्रीव धनुषकी अष्ट उर्द्ध कू केसावलि जुत ॥ मृदु चिकने चमके किरण रवि पुंछ सुरह सम चल चवर। कलगी पलाण मणि स्वर्ण मय दुमची लगाम पण रतन जड ॥२६॥ पग पैजणी झुणकार हार मणी किंकणी हिममय। मोहरी हाटक जडी रतनमय श्रवण चवर लय ॥ चढ़े विबुध बुधवंत क्रांत रवितणाभरण जुत। करि सिंगार हथियार लिए सुर वृक्ष दाम जुत ॥ अति महक रही दशहु दिशा सब तान रहे सिर छत्र। हय उछरत ही सत मनहरै सुर ऐसे जान सर्वत्र ॥ २७ ॥

गीता छन्द–फुन रंग संख्या पूर्ववत सब सेन दूजी वृषभकी। तिन सुभग मुख कट पूंछ कंधे जू नगारो उलटकी ॥ फुन शृंग खुरकन धुन घनाद्ध जु अधिक पट भूषण लसै। सब त्रिदस तिनपै है सवार सुभगति जिन हिरदय बसैं ॥ २८ ॥

दोहा–लूम्बै श्रवणमें चंवर, चूडामण जुत भार।
गलघट घूरै जू दुन्दभि, वृषभ सुवृष उनहार ॥ २९ ॥

गीता छंद–फुन चालते परवत समानो भाद्र घन सम मद झरै। तसु गंध फैली पवन श्रवणत ननताल सम हालत सिरै ॥ चंचरीक आवै महकतै झंकार हं धुन सुन करी। तब बीज सम गरजै उठावै सूंड नाचै जू सुरी ॥ ३० ॥

सोरठा–झूलवणी मखतूल कार चोम मुतियन झलर। चमक काण अनुकूल अंबारी कण मण त्रिप ॥ ३१ ॥

दोहा—कंचन मणि माणिक जडित, बुखदम सम मल घंट ।
अश्व वृषभ गज पशु नहीं, माया देव करंट ॥ ३२ ॥

चौपाई—रवि रथ समरथ सातौ वर्ण, छत्र चमर धुज किंकनी घर्ण । तिन मध बैठे सु रजूं मैण, विविध विमाजुत तर्जित सैन ॥ ३३ ॥ पंचम सेना सुनौ बखान, नृत्य कारसो सात विधान । तामे बाजे चार प्रकार, तत्तरु वितत 'घन' सुषर निहार ॥ ३४ ॥ तत सु संतारादिक जुत तार, वितत मंढे तु चपट सुनि हार । घन कासीके घट तालाद, सुखर फूंकके पुंगि तुराद ॥ ३५ ॥ देव दुंद इव बाजे बजै, देव सुरी संग नाचत रजै । फिर कौले तनकर मोरंत, विगमत उछल तान तोरंत ॥ ३६ ॥ ग्राम मूर्छना जुत सुर ताल, गावै सरस गीतकी चाल । समै जनम मंगल सुनिहार, नव रस पोखत मधुर उचार ॥ ३७ ॥

अथ नव रस नाम ।

दोहा—सिंगार हास करुणा, त्रय रूद्र वीर रस पंच ।
फुनि भय सात रु चपलता, नवमें धीरज संच ॥ ३८ ॥

चौपाई—राजा अर्द्धराज महाराज, अरू समान भूचर खग-राज । तिन गुण वीर्य गंध पदमाय, प्रथम अणी इम नाचत गाय ॥ ३९ ॥ अध मंडली मंडली फुनि महा, मंडली सत्रिय जस गुण गहा । रचि गावत नृत्यत इम दुती, सुण त्रिय चमूं नृत्यकी भति ॥ ४० ॥ तीन खंडपति विसयक करा । चतुराई गुण जस विस्तरा । वा चक्री गुणनिधि मण लक्ष, नृत्यत सक

दिखलावत दक्ष ॥ ४१ ॥ मघवा लोकपाल गुण कला, विमोरु ब्रह्मचारी सुर मिला। कल्पातीत तने सुराय, तुरी चमू नाचत दिखलाय ॥ ४२ ॥ सागुरु मुनि गुण सब गहै, सह उपसर्ग स्वर्गपद लहै। ग्रीवादिक उपरि थित ठणी, तीन गुण गूंथ नचै पण अणी ॥ ४३ ॥ चरमशरीरी गणधर वली, अंत कृतोपसर्ग केवली। तिन गुण महिमा गूंथन चित, षष्ठम समासु एम लसंत ॥ ४४ ॥ चौतीस अतीसै जुत अरिहंत, प्रातिहार्य सु चतुष्टय वंत। समवसरणादिक तिन गुण गूंथ, सप्तम अणी नाचै अदभूत ॥ ४५ ॥ इम नृत्यकी फुनि गायन भेद. सुनौ सात्रक छाविन भेद। गावै सुर गंधर्व सुधार, सो गंधर्व शास्त्र अनुसार ॥४६॥ बाजे है गंधर्व शरीर, फुनि उनपत्य सुणो हो धीर। बीण बांसरी नृत्य निहार, फुनि सरूप है तीन प्रकार ॥ ४७ ॥ सुर फुनि पद अरु ताल निहार, मुख्य भेद सुर दोय प्रकार। एक बैन अरु एक शरीर, लक्षण अरु विधान सुण वीर ॥ ४८ ॥

गीता छंद—अनुव्रत सुर अरु ग्राम, वरणरु अलंकाररु मूर्छना। फुनि धातु अरु साधारण, आदिक बहुत बैन सु रच्छना। फिर जात वरणरु सुसुर ग्रामै, स्थान साधारण क्रिया। जुत अलंकारादिक सरीर, सु दूसरो सुर इम लिया ॥ ४९ ॥ फुन ताल गत बाइस, जुत गंधर्व संग्रह इम करै। इकीस मूर्छन जुक्ति गावै, थल उनंचासनुसरै। अरु नामतै सुर खरज उपजै, सोर महषी सम कहा। सो प्रथम कच्छा बांहि बांवै, यही सुरमैं सुर महा ॥ ५० ॥ उपजै हियातै

रिषभ सुर घन धार सम अति सोरजी । गंधर्व गावैं अणी दूजी, मय सुधार मरो रजी । फुनि कंठ सै उत्पत्य सुर, गंधार अज उनहारजी । सो ताहि सुरमैं गावते, सुर त्रिय चमू सु निहारजी ॥ ५१ ॥ फुनि तालुतै उत्पत्य रवि, मंजार वत मध्यम तुरी । ते सभामें गावत चाले, गंधर्व प्रघटत चातुरी । फुन पंचमो सुर जेम हर, रवि गावती पंचम सभा । गज गर्जि सम धैवत सु सुरमैं, गाय है षष्टम सभा ॥ ५२ ॥

दोहा–सुरनिखा दहै मगजतै, उतपति कोकिल भान ।
सप्तम कक्षाके विषै, गावत चले सुज्ञान ॥ ५३ ॥
तीस रागनी राग षट, एक एक सुत आठ ।
अर इनको परवार सब, गावत सुर जुत ठाठ ॥ ५४ ॥
इम षष्टम फुनि सातमी, सातों रंग सु केत ।
हंस मोर गज हर वृषभ, चिह्न इत्यादि समेत ॥ ५५ ॥
निज निज कछामैं पतक, चले जात हित हेत ।
जै जै रवि उचिरत सकल उछरत हर्ष उपेत ॥ ५६ ॥
शस्त्र वस्त्र आभरण सजि, विविध विबुध सोहंत ।
आय सभा प्रथमेंद्रकी, माहि सुकेत कांत ॥ ५७ ॥

चौपाई–टेरो नाग कवार सुरिंद, रचि ऐरावत लाय गयंद ।
सो निर्जर असवारी जात, सुन हर जलपन प्रमुदित गात ॥५८॥

कडका छन्द–फील वैक्रिक रचो लछ जोजन कचो मद गति मंद मचो गिर जु छाजे । वदन सत वदन प्रति रदन वसु रदन प्रति सर सु इक सरन प्रति कुमुद राजै ॥ सतक पण-

बीस गिनि कुमुद प्रतिकमल जिण संख पणवीस भिन इकके कंजा। पत्रसत आठ लछन चत देवी सुफस कोट सतवीस सब मिल रंजा ॥ ५९ ॥ साज बाजत ठठाइस्त अंगुरी कटा मोर पग अटपटा नृत्य करती। वक्र सिर कर जटा सुगन्ध मृदु पुल छटा भ्रमत दिश दग कटा चित्त हरती। नील पट जूं घटा दमक विद्युत छटा कनक सम तन लटा गान करती। करत जिन थुत रटा गाय गुण सरगटा राम कलि गुर ठटा हाथ धरती ॥ ६० ॥ नाग सुर आनयौ लाय इम इम चयौ हुकम तुम नोदयौ सोई लीजै। सुनत हर हरषयौ देख चकित भयौ धन्य धन इम चयौ बहुरि कीजे ॥ लोक दिग्पाल सचिनाल सुंडाल चल चढत इन्द्रादि दस जात देवा। सुरगतैं उतर सो गगनमैं आय तित चन्द्र रवि जोतिसी पंच भेया ॥ ६१ ॥

चौपाई—किन्नरादि व्यंतर वसु जान, इक इकमें दो दो हर मान। किन्नरमें किन्नर किंपुरुष, द्वितीय सत्पुरुष महापुर्ष ॥ ६२ ॥ तीजे महाकाय अतीकाय, तुर्य गीत रत गीत लषाय। मानभद्र फुनि पूर्णभद्र फुनि पूर्णभद्र, जघन इंद्र जाण ये भद्र ॥ ६३ ॥ भीम और महाभीम सुभूप, भूतन पत सरूप प्रतिरूप। पिशाचनमें काल महाकाल, सोलै हर व्यंतर गुणमाल ॥ ६४ ॥ अरु तावत प्रतेंद्र गनीस, फुन भवनेन्द्र सुनों नृप वीस। चमर विरोचन जुगम सुरिंद्र, भूतानंद रु धरणानंद ॥ ६५ ॥ वेण २ धारी तर श्रेष्ठ, गुणपूरण अरु पूर्ण वसेष्ट। जलप्रभ अरु जलकांत सुरेस, घोष रु महाघोष पवनेश ॥ ६६ ॥

गीता छंद—फुनि सप्तमैं घन कारमैं हरिषेण अर हरिकांत। फिर अमितगति अरु अतिवाहन उदधिमैं अतिकांत ॥ अरु अगनि सिष फुनि अगनिवाहन दीपकार सुरिन्द्र। फिर दिग्कुमारन माहि वेलंवित प्रभंजन इन्द्र ॥ ६७ ॥

दोहा—भवनपती ए बीस हर, तावत चले प्रतेंद्र।
सब संख्या सत इन्द्रकी, सुणि श्रेणिक भूपेंद्र ॥ ६८ ॥
भवन पती चालीस ए, व्यंतरराय बत्तीस।
ससि रवि पसु पती नरपती, कलपईस चौबीस ॥ ६९ ॥
इंद्र समानक आद दस, जात सहत परवार।
निजनिज कक्षा सप्त सज, चले हर्ष उर धार ॥ ७० ॥

छपै—वाहन विबुध प्रकार रचे सदन विमान सुक। लाली मोर मराल गरुड़ पारे वावत्तक ॥ कुरकट सारस चील लाल बगला मंड घरु। बुल बुल मैना चिरा कठैया गुरसल गिर घरु ॥ अज महिष सिंह चीता गिदर सावर रोज वराह है। कपि रीछ खचर मंझार मृगस्वान वृषभ कर हास गय ॥ ७१ ॥ मेढ वघेरा सूमा व्याघ्रसे ही पर गैंडा। सार दूल लंगूर सरभ अष्टा पद मैंडा ॥ नक्र कुरम माछला आद चल थल नभ चर सब। केनर मुष पसु देह पसू मुख नर तनको फव ॥ इत्यादि सकल सजि सजि चढे विविध विमादि गूपूर छवि। मुद गान बजावत गरजते उछर करत जै जै सुरव ॥ ७२ ॥

दोहा—आए ससिपुर निकट सब, फेरी पुर त्रिय दीन।
वन वीथी बाजार नभ, रोकि सुरी सुर लीन ॥ ७३ ॥

चौपाई—नृप आगणमें आए सुरेस, इन्द्राणीकूं दे आदेश । जाय प्रसूत स्थल जिन ल्याय, सुन आग्या चाली उमगाय ॥ ७४ ॥ शुभ प्रसूत गेहमें जाय, चकृत चित इकटक दृग लाय । बाल सूर्य जुत प्राचीमात, उदयाचल सिज्या स्थित ख्यात ॥ ७५ ॥ प्रभा पुंजरु दामनी दंड, देख मुदित दृग कुन लय खंड । त्री आवर्ति देय नुतकार, धन्य धन्य माता जग सार ॥ ७६ ॥ तुम ही पुत्रवती नहीं और, सो सब भ्रमे सहै दुख घोर । रूप रतन खोवै तें वृथा, आगममें तिनकी बहु कथा ॥ ७७ ॥ तीर्थंकरकी जननी माय, यातै नमूं नमू हरषाय । धन्य धन्य जिनवर तुम बाल, तौ पण अतिसै वृद्ध विसाल ॥ ७८ ॥ जैसे रवि दरसत तम फटै, त्यौं तुम दरसन तै अघ हटै । नमूं नमूं तोहि मंगल कर्ण, जै जग उत्तम जै जग सर्ण ॥ ७९ ॥ धन्य जन्म मेरो भयो आज, जिन पद फल लीनौ महाराज । थुत करदे निद्रा सुखदई, मा ढिग धर सु माया मई ॥ ८० ॥ कोमल पान सपर्स जिनंक, प्रमुदित रिद्ध पाय जू रंक । चली पलोमजा ले सिसु पेष, हरष उदधि वृद्धो सु विशेष ॥ ८१ ॥ आगैं २ मंगल द्रव्य, लिये जाय देवी वसु सर्व । जै ज नंद वृद्धि उचरंत, जाय शक्र कर दियौ तुरंत ॥ ८२ ॥ प्रथम नमस्कार कियौ इंद्र, हस्त जोडि सिर न्याय सुरिंद्र । धन्य २ देवनके देव, हम भव सफल भयौ कर सेव ॥ ८३ ॥ नैन चकोर निमेष पसार, चंद्र वरण जिन रूप निहार । लख २ तृप्त सुरंचन भयौ, तब हजार दृग हरकर लियौ ॥ ८४ ॥

छकित रह्यो जिनवरकी वोर, आस पास देवनकी कोर। ले उछंग जिनवर प्रथमेद, सची सहित आरूढ़ गयंद ॥ ८५ ॥

तब ईसान इंद्र जिनसीस, छत्र सेत जस पुंज सरीस। धरौ मुक्त झल्लर युत मनौ, सेवै ससि रिष जुत कर घनौ ॥ ८६ ॥ सनतकुमार महेंद्र सुरेन्द्र, चवर करै दो तर्फ जिनेंद्र। जूं अति हिमवन गिर दो ठांव, रोहितास्य हर दीन प्रवाय ॥ ८७ ॥ सेस सुरेंद्र सु जिन चहुं ओर, जै जै शब्द करै घनघोर। कोलाहल हुओ अधिकाय, बधर भई दस दिसा सुराय ॥ ८८ ॥ तब सौधर्म्म स्वर्गको राय, सारत करी सुबाह उचाय। चलौ मेरु गिर देर न करौ, सुर संघट दधि सम विस्तरौ ॥ ८९ ॥ चले गगनमें मगन अपार, अमरांगन च्यार प्रकार। विबुध विभा भूषित घन घान, नाना चेष्टा करत महान ॥ ९० ॥ बाहु सफलन करतक तान, केइ उछरत केइ हंसत महान। केई बजावत दुंदभि नाद, केई गावि करै सुर साध ॥ ९१ ॥ केई अमरी नचै अपार, फिरकी लेवै हाथ पसार। पग कटि अंगुरी ग्रीवा मोर, मान मूर्छना तान सुतोर ॥ ९२ ॥ केई परस्पर जल पण करै, केई श्री जिन जस उच्चरै। कुचित सु निरख जिनकी ओर, हम रथचर हय वृष घन कोर ॥ ९३ ॥ गए जोतिसी पटल उलंघि, पहुंचे मेरु सुदर्शन शृङ्ग। सहस निन-नवै ऊंच माग, पांडुकवन तरु सहित पराग ॥ ९४ ॥ गोल मध्य चूली चहुंवोर, च्यार जिनालय अकृत अडोल। सुर विद्याधर चारण आय, जजै नमै ते मन वच काय ॥ ९५ ॥

च्यारि विदिश सिल च्यारि विचित्र, तीर्थ न्हवणतैं परम पवित्र।
पांडुकसिला दिशा ईशान, धनुषाकार कही भगवान ॥ ९६ ॥
ऊंची योजन आठ अयाम, सतक व्यास पचास ललाम। सित
फटकोत्पल सम चंद्रर्द्ध, सोहै सिद्धशिला सु स्पर्द्ध ॥ ९७ ॥
मध्यभाग सिंघासन चाप, मूल पंचसत विस्तर आप। तावत
तुंग अर्द्ध विस्तार, उरध दिसकण मणमय सार ॥ ९८ ॥ झारी
कलस आरसी छत्र, धुजा वीजणा सथिया चवर। मंगल द्रव्य
धरे उत्कृष्ट, दोय दुतर्फ और लघु प्रष्ट ॥ ९९ ॥ मंडफ रचो
विविध परकार, पन्ना थंभ रंभ उनहार। स्वर्णमई रतनन कर
जरी, ऐसो मंर कोलय विस्तरी ॥ १०० ॥ उपर तनो चंदोवा
सार, पंच रतनमय स्वर्णाकार। मुतियनकी झालरि झलकंत,
हारा डोर मची विहमंत ॥१०१॥ ऊपर धुजा हलत मनो नचै,
प्रथम जु सिंहासन वह्यो सचै। ता ऊपर श्री जिनवर थाप,
पूरव मुख पदमासन आप ॥ १०२ ॥ दक्षिण स्थविष्टर प्रथमेंद्र,
उत्तर दिश ईशान सुरेंद्र। लोक पाल चहु दिसी थित हेर, सोम
और जम वरुण कुबेर ॥ १०३ ॥

छपै—फुनि थापे दिग्पाल दशौ दिश पूर्व थित। अगनिर
दिसि काल सु दक्षन नैरूतनै रत ॥ पछिम दिसमें वरुण पवन
वायव दिस ठाणो। उत्तर दिशा कुबेर दिशा ईशान ईसानो ॥
धरणेंद्र अधो दिश उद्ध फुनि सोम स्थित रक्षा करै। सब
विविध भांति आयुध लिये सावधानतैं विस्तरै ॥ १०४ ॥

चौपाई—छीरोदध तक मारग रचो, हेम मई माणिक

कर धर्यो। यूं कुबेरकूं हर फुरमाय, सुनकै रचीं अधिक धनराय ॥ १०५ ॥

दोहा—मेरु सुदर्शन तैं कही, पंचम सिंधु प्रजंत।

हेम रतनमई पेडिका, सुर नर हर मोहंत ॥ १०६ ॥

चौपाई—सहस आठ घट कंचनमई, रतन जड़े संख्या जिनवई कनकमई कवलन ढूढके, मुक्ति माल उरमें झकझके ॥ १०७ ॥ वसु जोजन ऊंचे अध व्यास, आनन एक अकृत्यम भास। हाटक कीटि कांटन पै धरे, देख सुरेस हर्ष उर भरे ॥ १०८ ॥ चंदन कर चर्चित हर करे, कलस सुवास दिश विस्तरे। सब सुर गण तब एकइ बार, कुंभ उठाय चले ले लार ॥ १०९ ॥ हाथों हाथ लगाय भर नीर, कोलाहल हुवो गंभीर। सुर कुन फूलन वरषा भई, नृत्य गान बाजन धुन ठई ॥ ११० ॥

छंद संकर—पट निसान मृदंग भरी संख हर नादाद। सुर बजावैं श्रवण सुखदा दिगंतर मरजाद ॥ शृङ्गार जुत मुद सुरी संघट प्रघट रस नृत ठान। हाव भावरु मान लय जुत मूर्छना ले तान ॥ १११ ॥

चौपाई—तुंबर नारदादि जुत नार, गावैं गीत श्रवण सुखकार। अमरी अमर हरष उर छाज, मंगलीक सब बनो समाज ॥ ११२ ॥ जय जय नंद वृद्धि इकवार, भई धुनाब्ध गर्ज उनहार। ताइ समैको करै बखान, निज दृग देख सो धन जान ॥ ११३ ॥ सहस अठोत्तर कर हर बाहु, भूषण भूषित अधिक सुहाउ। मानों भूषणांग तरु एह, बहुरि मंत्र पढि घट

कर लेह ॥ ११४ ॥ मानो भाजनांग सुर वृक्ष, न्हवन कारण विधिमें हर दक्ष। तीन बार कीनो जयकार, सब कुंभनकी ढारी धार ॥ ११५ ॥ फुनि ईशानादिक सब देव, निज २ भक्ति करै बहु मेव। भरि भरि कलस छीरदधि नीर, ल्या ल्या ढारै स्वामि शरीर ॥ ११६ ॥ सो जलधार अधिक विस्तरी, मानौ नभ गंगा अवतरी। कित सत जाए सिसु कित धार, यह अनंत वीरज गुण सार ॥ ११७ ॥

दोहा—जो धारासूं गिर शिखर, खंड खंड हो जाय।
सो धारा जिन सीसपै, फूल कली सम थाय ॥ ११८ ॥

चौपाई—जिन तन फरसत प्रीत कराय, जल कण उछल मनो मुसकाय। फास जिनांग सु अघविन भई, क्यों न उद्धकूं जावे नहीं ॥११९॥ जिन दिगनार मजो सिंगार, त्रिदि गविंद जल ऐम निहार। कण जल उछर स्वान वपु परै, मानौ मवन पवित्र सु करै ॥ १२० ॥ सो जल फैला मंडप मांहि, विखर रहै जहां कवल अथाह। वह चाले इम उपमा धार, ज्यूं महान पंकति उनहार ॥ १२१ ॥ ता धाराको बह्यो प्रवाह, मनो मेरु प्रति उज्जल थाह। कैरै समस्या सबको मोय, गंधोदिक जल लावै जाय ॥ १२२ ॥ क्यौं न रोग बिन निर्मल लसै, नेक जन्म कृत अघ सब नसैं। श्री जिन न्हवन न्हवनोदक सुरनाय, माल नैन उर कंठ लगाय ॥ १२३ ॥ सक्र सची सुर आनंद भरे, जथाजोगि सब कारज करे। परदक्षण दीनी बहु भाय, बारंवार नए सिर न्याय ॥ १२४ ॥ फिर जल गंधाक्षत चरु फूल, दीप

धूप फल कियो ममूल । पूजा करी सु उछव ठान, सुरनर सुखदा मुक्ति निदान ॥ १२५ ॥ सुर असंख सब हर्ष सु भरे, निज निज भक्ति प्रमट नित करै । बहुरि सची पूंछौ जिन देह, करि सिंगार सु नाना भेह ॥ १२६ ॥

अडिल्ल–घसि गोसीर रु कुंकम मंधित अलिमची । जगत तिलकके तिलक कियौ तब ही मची ॥ जगत मौलिसिर मौलि धरी तब हर रणी । जगत चूडामणि सीस सज्यौ चूड़ामणी ॥ १२७ ॥

सोरठा–छिद्र किए जिन श्रोत्र, वज्र सुई ले प्रोमना । ह्या संसै प्रइमोत्र, बजजरसूं बज्जर भिंद ॥ १२८ ॥

अडिल्ल–ससि सूरज उनहार पराए कुंडला । निर अंजनके नैननमें अंजन धल्या ॥ कंठी कंठरु हार वहै गंगा मनौ । देवछंद इन नाम महम बहु लडि तनौ ॥ १२९ ॥ भुजबंधन भुज मांहि करे करमें लहमै । पोहचोथल मणिवग छाप अंगुरी निवपै ॥ कटि कटि मेखल पग पायल जुत किंकनी । रुणझुण पैजन करै कनकमय जुत मणी ॥ १३० ॥ भूषण जिन तन पाय अधिक सोभा लहैं । झांकि पाय ज्यू फटक अधिक दुतिकू गहै ॥ इंद्रानी पहराय वस्त्र सुरगन तणे । फूलमाल धरि ग्रीव मांहक अलि रवि ठणे ॥ १३१ ॥

दोहा–अंग अंग आभरण जुत, ए उपमां तिहकाल ।
सुरतरु सम प्रभु सोहिए, भूषण भूषित डाल ॥ १३२ ॥
अब इंद्रादिक करत थुत, तुम लखि आरति गोन ।
धन्य आप औतार प्रभ, दीपक सम त्रिय मौन ॥ १३३ ॥

छंद त्रिभंगी—मिथ्या मित भंगी वृष धन अंगी चोर कुलिंगी सो लूटे। तुम जन्म प्रात जो हो न तात दुख पाव प्रजा सो क्यौं छुटै॥ मोभद ग्रीस जीव विलफ अती वा एह अनाद संसारीजी। सो दुख मेटन राजवैद तुम दयानिधान जगतारीजी॥ १३४॥ भ्रम अंधकूपमें परे जीव तिन काढन समरथ ना कोई। तुम वचन रज्जु गह ले उधार अब तुम समान प्रभु तुम होई॥ तुम सहज पवित औरनकूं करहो ज्यूं ससि निज सुत सत्न करंत। त्रिनस्मान निर्मल बाह्यांतर निज हित निर्मल न्हौन ठनंत॥ १३५॥ स्वयं बुद्ध देवनके देवा जगपत जग रक्षक जगतान। बंधु निकारण गुणदधि पारण हमसे कि जो मुनन लहात॥ तुम तारण तरणं शिव सुख करणं असरणं स्वरणं अतिसै कोस इम गुण बहुरि नाम संख्या विनते वरणूं जु कुछक निरदोस॥ १३६॥

छंद चंडी—महासेन कुलचंद नमस्ते, लछमीचंद अनंद नमस्ते। सुधदधि वृद्धि करेहि नमस्ते, शांतिदाय जग श्रेय नमस्ते॥ १३७॥ भ्रम नासन अवतार नमस्ते, हमसे भृत सुधकार नमस्ते। रवि विन तम क्यूं जाय नमस्ते, किरणव्ज विग साय नमस्ते॥ १३८॥ त्रैलोकेश महात्म नमस्ते, सर वर्ग्य सुधात्म नमस्ते। अमल स्वासतो शुद्ध नमस्ते, निर विकल्प अविरुद्ध नमस्ते॥ १३९॥ सिद्ध प्राप्ति निरदेह नमस्ते, सुविरांतक निरकेह नमस्ते। सिद्ध निरंजन शुद्ध नमस्ते, निहकलंक गुण वृद्ध नमस्ते॥ १४०॥ निरालंब निरमोह

नमस्ते, निरमलात्म निरकोह नमस्ते। मिक्षन निरहंकार नमस्ते, अतिक्रियेन विकार नमस्ते ॥ १४१ ॥ दोम सुरजविन शांत नमस्ते, शिव अभेद गुण पांति नमस्ते। निरजनि रंग निकार नमस्ते, निराकार लष मर्म नमस्ते ॥ १४२ ॥ विकल प्रम निरवेद नमस्ते, निरुपम ज्ञान अभेद नमस्ते। विराग धीर जिन श्रेष्ट नमस्ते, अव्यय सर्वोत्कृष्ट नमस्ते ॥ १४३ ॥ गोचर ज्ञान निसंग नमस्ते, केवल प्राप्त अमंग नमस्ते। मह पूज्रात्म अमंद नमस्ते, जगत सिषर सुग छंद नमस्ते ॥ १४४ ॥ गुण संपज्जयनिश्चद्द नमस्ते, जोग विरोध गुणाब्ध नमस्ते। अजर अमर सुविशुद्ध नमस्ते, अमय अक्षय अविरुद्ध नमस्ते ॥१४५॥ ब्रह्मा चुत अमूर्त नमस्ते, विश्नु प्रजापति मूर्त नमस्ते। अनूपम ईश अजेय नमस्ते, विश्वनाथ विन नेह नमस्ते ॥१४६॥ अनर्घ अप्परमान नमस्ते, बोध रूप युतिमान नमस्ते। सकलाराध जितात्म नमस्ते, निस पर्यो अमयात्म नमस्ते ॥ १४७॥ नित निरमल दृगज्ञान नमस्ते, जगत पूज जगमान नमस्ते। अदीन अहीन असर्ण नमस्ते, अलीन अछीन अमर्ण नमस्ते ॥ १४८ ॥ महादेव महावीर्य नमस्ते, महासेव महाधीर्य नमस्ते। गुणभद्रेन्द्र मुनेन्द्र नमस्ते, हीरा मवनृप वृन्द नमस्ते ॥ १४९ ॥

दोहा—च्यारि ग्यान धारक गणी, लहइ न नाम गुण पार।
इमसे तुछ धी किम लहै, नाम माल उर धार ॥१५०॥

चौपाई—प्रघटचंद्र प्रभहर धर नाम, सब देवन मिलि कियो प्रणाम। जन्मोत्सव हर हद् सर धान, लख सम्यक् धर अप्पर मान।

॥१५१॥ देव सकल मिलि जै जैपूर, रोमांचित तन हर्षांकूर। गजारूढ़ हर ले निज गोद, पूरन रीत अधिक परमोद ॥१५२॥ निज२ वाहन सब सुर चढै, आनंद लहर सुखोदध बढै। ताल मृदंगरु भेरि निसान, नृत्य गान जुत जन्म स्थान ॥ १५३ ॥ चले गगन मग मगन अपार, प्रभा पुंज रूपा उनहार। आए जय जय करत असेस, पिता भवन कीनो परवेस ॥ १५४ ॥ मण मय आंगनमें हर आय, हेम सिंहपै श्रीजिन थाय। महासेन नृप देखो नन्द, निरुपम छबि लख भयो अनंद ॥ १५५ ॥ माया नींद सुनीकर दूर जननी जागी सुख भूर, भूषण भूषित बाल दिनेस। भर लोयण लख हरख विशेष ॥ १५६ ॥ वाक जुगल सम दंपत तबै, पूरण भये मनोरथ सबै। सक्रजने तब मुद पितु मात, पट भूषण धर भेट विख्यात ॥ १५७ ॥ हाथ जोडि थुत कर इंद्रादि, बस गगन तुम तुम दयाद्र। मात पूर्व दिस सम सुत सूर, किम बरनै महिमा तुम भूर ॥ १५८ ॥

संकर छन्द–धन धन्न नृप महासेन जिन घर जन्मियो जिन बाल, सुत्रिलोक मंडप शिखर चढ़ तुम कीर्ति वेलि विमाल। धन्य देवी लक्षमना जिन जाईयो जग राय, तिय त्रिलोक सिंगार जननी धन्य तुम अब थाय ॥ १५९ ॥

चौपाई–तुम सम जगमै और न आन, जिन देवल सम पूज प्रधान। यों थुतकर हर हिए प्रमोद, बाल दिवाकर दीनो गोद ॥१६०॥ कही सकल पूरब ली कथा, मेर महोछव कीनो यथा। तब मिल नगर विषै भूपाल, जन्म उछाह कियो तत्काल ॥१६१॥

छन्द चाल—हरखतपुर जन परवारा, घर घर भए मंगल चारा। घर घर तिय गावै गीत, घर घर नृत होत संगीत॥१६२॥ बाजे मगंली बहु भेवा, लगे बजन सकल सुख देवा। जिन भवन न्हवन विस्तार, सब करु मंगल दातार॥ १६३ ॥ छिरक्यो चंदन पुर मांहि, मणा साथिया सुघर रचाहि। जन्मोत्सवमें सब नारी, कर नृत्य गान विधि सारी॥ १६४ ॥ घर घर तिय तूर बजावै, तंबोल बंटै हरषावै। सज्जन जन सब सनमाना, दानादि यथाविधि ठाना॥ १६५ ॥ यह विध महासेन नरिंदा, कर सुत जन्मोक्ष अनंदा। भए पूरण सब जन आसा, दुख दीन न कोइ निरासा॥ १६६ ॥

दोहा—उदै भयो जिनचंद्रमा, कुल नभ तिलक महंत।
सुख समुद्र वेला तजी, बढ्या लोक परजंत॥१६७॥

सोरठा—तब देवन जुत सर्व, आनंद नाटक हर ठ्यो।
गान करै गंधर्व, समय जोग बाजे बजै॥ १६८ ॥

दोहा—पुत्र सहित परवार मिल, महासेन लख भूप।
पुष्प छेप दरसाय हर, प्रथम सप्त भव रूप॥१६९॥

पद्धड़ीछंद—फिर तांडव नामा नृत्य अरंभ। कीयो जग जन कारण अचम्भ॥ नट रूप धरयो अमरेश। तब रंगभूमि कीनो प्रवेश॥ १७० ॥ सिंगार सज्यो सब मंगलीक। संगीत वेद अनुसार ठीक॥ विधि ताल मान लय जुत उमाह। फेरै पग रंग सु अवनि मांहि॥ १७१ ॥ पोह करमें सुर कर पुष्प वृष्ट। लखि भक्ति शक्रकी अति विशिष्ट। मोचंग मुरज वीणाक

ताल। बाजै अरु गावै गीत चाल ॥ १७२ ॥ किन्नरी करै मंगल सुपाठ। सब समै जोम बनियौ सुठाठ ॥ बहु भाव भ्रमै बच अंग मोर। करि अंगुरि कंठ कटि पग मरोरि ॥१७३॥

गीता छंद—तब नृत्य तांडव रस दिखावै सबनि अचरज कारजी। अद्भुत सहस भुजकरी हरनै भूषण जुत निहारजी ॥ सो चरण धरत चपल चल अति भूमि कंपै गिर हलै। फिर लेत चक्र फेरी मुकट भ्रम तास मण दुति झिलमिलै ॥ १७४ ॥ सो चक्रमो सोहै अगनिकी जूं मरहटी लसत है। छिन एक छिन वह रूप छिन लघु छिन गुरु तन करत है ॥ छिन निकट अरु छिन दूर जा छिन गगनमैं छिन धरनिमैं। छिनमैं निषतर विस सिस छिन धसै जा अवनिमैं ॥ १७५ ॥ छिनमैं प्रकट छिनमैं अद्रस छिन वीर रस छिन रागमें। हर जालवत दरसाय निज रिध इंद्रने बहु आगमें ॥ हर हाथ अंगुरिन नाम धर निज चक्रसी बहु भ्रम हुरी। फुनि बाहु थेरीपै केई नच उछर नम तित अवतरी ॥ १७६ ॥ ते रूप मणकी खान भूषण झलक है अंग अंगमें। तिन कंजसे द्रग खिले मुसकत पुष्पगण मानौं वमें ॥ सब नृत्य विधमम चरण धर चख फेर भाव दिखावती। बहुविध कला परकासि दामनिसी सुरी मन भावही ॥ १७७ ॥ तब नृत समै हर सुरतरु सम सुरलता वेढो तिया। हर एम उपमा युक्ति नाटक थान तिहुं जग सुख किया ॥ तिह समापति जिन पिता जिहवर भाव अंन्मात सह जिन। सब नमे हर नट बाज हो तिस समै सुक्को वर्णने ॥ १७८ ॥

चौपाई–मात पिताकी साख सुतबै, इंद्र सुरासुर गण मिल सबै। नाम चंद्रप्रभ भण थुत करै, बार बार नमि पायन परै ॥ १७९ ॥ राख सुरी सुर सेवा योग, आप चले सुर साधन योग। चाले इंद्रादिक मुदि धार। जन्म-कल्याणक विधि विस्तार ॥ १८० ॥ बहु विधि पुन्य उपायो जबै, पहुंचे निज थानक सबै। अब जिन बाल चन्द्रमा बढ़ै, कोमल हांस किरण मुख कढै ॥ १८१ ॥ इन्द्र हेत प्रभु अमृत सींच, दक्षण कर अगुष्टके बीच। ताहि चूस पय पानन करै, आनंद सहित बृद्ध वपु धरै ॥ १८२ ॥ सुरग विषै सुरतरुकी साष, लटक रहे ब्रह्मंड गुरु माष। तेजो वस्त्राभूषण भरे, सो सुर लाय भेट जिन करे ॥ १८३ ॥ जिन सिसुकूं पहरावे सुरी, देष देष अति आनंद भरी। कभी सखो कभी माता गोद, कवि पालणो सहित प्रमोद ॥ १८४ ॥ नरनारी मण माणक चोर, देखत नैन रहै जा बोर। हाथैं हाथ खिलावै नार, वय समान सुर रूप निहार ॥ १८५ ॥

हंस मोर सुक अह गज स्याल, हय मृग स्वान परेबावाल। इत्यादिक प्रभुके अनुसार, क्रीड़ा करै हर्ष मन धार ॥१८६॥ कम ही मणी आंगणमें फिरै, घुटलिन २ सब मन हरै। लोटैं कभी रतन मेदनी, मणी रज युक्त देह सोहनी ॥ १८७ ॥ बाढ़े होय सु अटपटे पाव, धराधर तम नौकरणभाव। ताकौ प्रगट करै ए भाइ, भू मम भार सहारक नांह ॥ १८८॥ रत्न भीतमें निज छवि लखे, ताकौ पकरत मानो अखे। मिले सु

श्री जिनसंग जिन नांह, एक इलावत यूंठ दिखाय ॥ १८९ ॥ कभी यक जगपति दौरे जाय, मृग छालकूं पकरै आय। देव रूप धरि उछरत फिरै, कब ही जिन आगै अनुसरै । १९०॥

रतन कपूर धूमरे हाथ, लीला सहित जगतके नाथ। देवकुमारनके सो नाल, डारत भए होत खुसियाल ॥ १९१ ॥ तब ही वे सब देवकुमार, मन संतुष्ट भए तिहवार। आप जन्मकू सफल गिनंत, तीन भवनमें ए गुणवंत ॥ १९२ ॥ या विधि उत्सव मंडित स्वामि, अष्ट परवके है गुण धाम। तब ही सहज अणोव्रत धरे, निज कुल रीत सकल आचरे ॥ १९३ ॥ नवजोवन हुये सुकुमार, जन्मत ही दस अतिसै धार। खेद रहित वपु पर्म पवित्र। तीर्थ प्रकृतितैं भयो विचित्र ॥ १९४ ॥ मानो खेद गयो तन त्याग, कामीजनके आश्रय लागि मल विन निज तन आन पवित्त, भाग गयौ नहीं रह्यौ कुपित ॥१९५

हार करै ना करै निहार, यह मल रहित पणो निरधार। इति पूछै रख संसै कोय, बिन निहार संतति क्यौं होय ॥ १९६ ॥ ताको उत्तर यह लख सांच, मूत्र पुरीब न होय कदाचि। नार संग क्रत वीरज श्रवै, तातैं संतति हो मुनि च्वै ॥ १९७ ॥ रुधिर छीरवत स्वेत सरूप, जिन तन फरस भयो सुचिरूप। ज्यूं जल बिंद कवलदल संग, मुक्ताफल सम सोह अभंग ॥ १९८ ॥ सु समचतुर संसिथान सु धरे, आंगो-पांग यथावत परे। हीनाधिक न होय कदापि, ऐसो सुभग धरै तन आप ॥ १९९ ॥ वज्रवृषभ नाराचि शरीर, परमारतन धा

... कील। तन अखंड यातैं अविकाय, ... नहीं भेद्यो जाय ॥ २०० ॥

उत्तम रूप त्रिजगमें जोय, इकठे सब परमाणू होय। आय बसे तुम वपु अस्थान, यातैं तुम सम रूप न आन ॥ २०१ ॥ हर ससि रवि खग नृप मन मोह, देखै इकटक हर्षित होय। ज्यूं सुचको चंद्रमा देख, त्रस होय नहीं थके सुनेक ॥ २०२ ॥ जो त्रिभवनमैं सार सुगंध, सो सब मिली कीनो सनबंध। तुम तनको अति उत्तम जान। सहज सुगंधित देह महान ॥ २०३ ॥ कर पादादि अंगमें पडे, लछन अष्टोत्तर सत बडे। नौसे व्यंजन तिलभर सादि, पडे महलच्छन जन्मादि ॥ २०४ ॥ मरन अजतर है वपु मांहि, व्यंजन पीछे प्रगट लहाय। लक्षन महातने सुण नाम, वरणन यथा कहे श्रुत धाम ॥ २०५ ॥

गीताछंद—श्रीवत्स संखरू पदम सुस्थक धुजा अंकुस तोरण, फुनि छत्र सिंहासन चवर जुग कलस मसि चूडामणी। अरु चक्र दधि सर नर त्रिया हर पाण अंहिघर मोलजी। चांप सुर गिर इन्द्र गंगा मछ जुग रवि पोलजी ॥ २०६ ॥ फिर नगर वीणा बांसुरी कछप विमनरु बीजणं। अरु हाट पट फूलमाल मूंजे धरा रूप क्रोषतणो। फिर बाग फल जुत दीप रत्नरु काम गोगृह गोपती ॥ स्वर वृक्ष कल्पलतारु निधि घन ... देवी सरस्वती ॥ २०७ ॥ साल तरु असोक तारे पथराट धरनि पही फुनि ... ...।

[illegible] अठोतर लक्षण [illegible] पड़े प्रभु तन सर्वही । फुनि तीन काल तने त्रिजगपति भूपती सुर सबही ॥ २०८ ॥

दोहा–तिन सब बल इकठा करो, तिनसैं बहु बलवान ।
यौ अनंत बल जिन विषै, भाषौ श्री भगवान ॥२०९॥

गीता छंद–मानौ त्रिजग बल सकल मिलकै हूंढ जगमें तुम लखौ । सब जगत आयुध तैं संवारे मोहि अब [illegible] रखौ ॥ फुनि वचन हित मित मधुर भाषै सहज सब सुखदायजी । मानौ सबनकू देत सिक्षा भणो इम मन लायजी ॥ २१० ॥

चौपाई–ए दस अतिसय जनमति पाय, निज मित्रन जुत केलिकराय । कभी सुनै देवन कृत गान, अमरी कृत कभी नृत्य लखान ॥२११॥ कभी यक बाजी गज असवार' ह्वै के निकसै नगर माझार । कभी बाग फुलवारी जाय, कभी यक वनमें केल कराय ॥ २१२ ॥ कभी तरी चढ़ि गंगा मांहि, देखै लहर तने समुदाय । फिरत दान देवै मन चाह, मानौं जंगम सुर तरु राय ॥ १३ ॥ ज्योढ सतक कार्मुक तन तुंग, नख सिख सोभन रूप अभंग । स्याम सनिग्ध मृदु लम्बे केस, मानो आतपात्र कियो भेस ॥ २१४ ॥ सिम धोलागिर सिरके तटी, इंद्र नील मणि जू भा छुटी । तापर मुकट धरौ मन जड्यौ, कंचन मय देखत मन हरो ॥ २१५ ॥ ताकी प्रभा पुंज चहुं ओर, फैली लखै मनौ [illegible] और । भाल लिखौ त्रिलोकको राज, अति [illegible] सुंदर छबि छाज ॥ २१६ ॥ भृकुटी [illegible] रोम दुति [illegible], मानौं इंद्र [illegible] [illegible] तान । श्री मुख [illegible] समान,

मातैरावत सम श्रवणान ॥ २१७ ॥ जुग रवि सम कुंडल मन हर्ण, नीलोत्पल जित जुत त्रिय वर्ण। द्रग मिलान मन मिलनौ चहे, धातु दीपमें मरत जु लहै ॥ २१८ ॥ पडौ नाक जूं इस्त्राकार, मध कदाचि मरजाद निवारि। तीन अंक सम रूप अनूप, मानौ मण त्रिय हो इक रूप ॥ २१९ ॥ जूं इम धारै ताकी साख, ताकूं कहिये नाकरु साक। कोमल चिक उन्नत जुग गंड, मानौ क्रांत सरोवर मंड ॥ २२० ॥ मानौ लाली मिल त्रिय मौन, अधर अथेली गत गौन। कारकै वसी पाय जिन सर्ण, सोहै अधिक क्रांति मन हर्ण ॥ २२१ ॥ रदनावलि जूं हीरापति, कुंद पूर्ण सीता सु निहंत। अधो गूढ़ चन्द्रानन पंक, कंठ अस्त त्रिवली सु निसंक ॥ २२२ ॥ पुष्ट कंध बाहु लबांय, जानु प्रियत जुग जु सुझाय। भुजमें नव मण जुत भुज बंध, जू पग गिरपै कूट प्रबंध ॥ २२३ ॥ पौहचे पहुंची मणि वधकडे, कुंडल क्रत रतननसू जडे। वीर लछ कीडा स्थल वछ, श्रीवत्स लक्षण जुत लक्ष ॥ २२४ ॥ जग कमलाहु मानौ हार, उर सूं लगी बाह गलडार। मृदु सनिग्ध जठर मनहर्त, नाम सुकूपद क्षणावर्त ॥ २२५ ॥ लंक छीन अति हर सम महा, कण मण मय कट मेखल तहां। मानौ दीप खेदका जान, उत्रासन है कोट समान ॥ २२६ ॥ गूढ़ नितंब सुभग सोहने, लिंग पतालु जथौ चितवने। जंघा पुष्ट महल जू थंभ, रोमावलियुत मृदु समरंभ ॥ २२७ ॥ सुभग जानु पिंडी ढाकने, गूढ पधावत पंजे बने। कर पद अंगुरी

सुंदर सारु, नख मंडल परिखगण बास ॥ २२८ ॥ अंगार-रुतै अधिक दिपंत, जुत मणिमय मुंदरी रतिवंत। अंगोपांग पुष्ट सब बनो, वज्रमई सुंदर सोहनो ॥ २२९ ॥

दोहा—चंद्रकांति तन अधिक, दुति अति उज्जल मनो एह।
सो इकत्र सित तात्र जग, आइ वसी प्रभु देह ॥२३०॥
सिज्यासन वस्त्राभरण, मुक्ति विलेपन नान।
देव रचित सब ठाठ हैं, कहा लौं करू बखान ॥२३१॥
नर सुरको दुर्लभ जो, सो संभोग लहाय।
पूर्व पुण्योदित थकी, जानौ मन वच काय ॥ २३२॥
भाषै गुणगण सरलचित्त, रागदोष निरमुक्त।
जे भवि हीरा इम करै, पुन्य विबुधा जिन उक्त ॥२३३॥

सोरठा- ते लह जन्मकल्याण करै, बाल लीला सु इम।
अंत लहै निरवान, और अधिक क्या बरणउ ॥२३४॥

इतिश्री चन्द्रप्रभुपुराणे गुणभद्राचार्यविरचिते जन्मकल्याणाक वर्णनो नाम द्वादशम् सर्ग संपूर्णम् ॥ १२ ॥

त्रयोदश संधि।

इन्द्रवज्राछंद—स्वयंभुवे भूतहितोदि वाक्यं, चंद्रप्रभं चंद्रिष अंत आख्यं। तदुबिम्ब प्रघटो मुद्योत पूरं, समंतभद्राश्रम तास भूरं॥१॥ ज्योहंकर सर्म सुजातत्राता, ऊरोजवासाकरसादि ताता। गुरुगणाख्यं गुणभद्र जैसें, मुखारहं तत्प्रित देख तैसें॥२॥

चौपाई—अथै कदाचिन सभा मझार, विविध विभा भूषित सुनिहार। उदियाचल सम त्रिष्ट सीस, तेजपुंज सम दीसै ईस॥ ३॥ कनकम आतपत्र सिर दिपै, मुक्ता द्युति लखि रिष ससि छिपै। चंवर वाहनी दौनौ ओर, ढौरै चवर घ उपमा कोर॥ ४॥ मेर दु तर्फ जु सीता आदि, फैन तरंग जुत अह-लादि। सभा देव सम हर सम भूप, ता वरनेवै कौन बुध रूप॥ ५॥ देस देसके नृप गुणधाम, आय राय प्रति करै प्रणाम। रत्नादिक बहु भेट कराय, तिनकी सोभा कही न जाय॥ ६॥ नाना वर्ण वस्त्र हय फील, इत्युत नजर करन मौ कील। नृप आनंद द ष्ट सयुत, देखै सब अगर जे दूत॥ ७॥ द्वारपालकी आग्या लेय, आय सभा मधि पत्री देय। सीस न्याय कर संपुट नमैं, विनयवन्त इक ताही समै॥ ८॥ जगउ दूत सु विचक्षण तबै, सुनौ देव मम वचन जु अबै। सुन्दर पुर पत्तन इक बसै, श्रुतकीरत राजा तहां बसै॥ ९॥ रिपु कुरंगको सिंह समान, कमलप्रभा सुता तासु जान। जीतत नाग सुताको रूप, लावनि कीर्ति जुक्त रस कूप॥१०॥ चतुर ज्ञानकी मूरत मनो, कला-

पूर्ण सर्वोत्तम मिनो । सो सौभाग्य सहित जयवंत, ताको दियो चहंत गुणवंत ॥ ११ ॥ त्रैलोक्य स्वर पूज महान, जितरव मेदु महा दुतिवान, चन्द्रप्रभसु तुम भूप। तस्यारथ आयो बुध कूप ॥ १२ ॥ इमि सुन रोमांचित मुदि राइ, वच प्रमाणकर सिद्ध कहाय । वस्त्राभरण विविध दे मान, दूत विदाकर नृप गुणवान ॥ १३ ॥ रचौ विवाह चंद्रप्रभ तनौ, वस्त्राभरण विभूसत घनौ । देव जान सम शिवका करी, किंकणी जुत कणमय जरी ॥ १४ ॥ मंगल द्रव्य जुक्त फुल पार, मुक्ताफल देखत दृग हार । ऐसी सिवका हो असवार, सुर नरेन्द्र सेवै दरबार ॥१५॥ चवर बोज सम फिरै दुतर्फ, छत्र फिरै सिरसेतजु बर्फ। मुक्ता झलरी जोत अमंद, जुत नक्षत्र जूं पुनिमचंद्र ॥ १६ ॥ सूर्जरथा स्वसमान तुरंग, खुर भिदग रज फर्सन अंग । युतलंकार मरुत गत वाल, घन सम गर्ज करै संडाल ॥ १७ ॥ मद धारा वरसै जुगमंड, मनौ चलै अंजन गिर मंड । चार चक्र जुत नाना वर्ण, सदन चले करत झण झर्ण ॥ १८ ॥ मंगल गीत गाय गंधर्व, तुंवर नारदादि सुर सर्व । नृतत अमरांग नर समरी, बजै मृदुंग ताल मल्लरी ॥ १९ ॥ तिन धुन कर गुंजत कंदरा, वस्त्राभरण विभूषित नरा । मंगलीक गावै सब नार, चली बरात होय असवार ॥ २० ॥

पोहची सुंदरपुर बन मांहि, सुनी भूप अति हर्ष लहाहि । पुर परजन ले संग नरेस, चलौ भूप जन संग विसेस ॥२१॥ पिता सहित चंद्रप्रभ जहां, नमन किथौ नृप जाकर तहां ।

क्षेमकुशल पूछी विधि सबै, नितिकर चले नगर प्रति तबै ॥२२॥ पुर सोभा नाना परकार, तोरण खैंचे सु घरघर द्वार। हर्त पत्र जुत फटक समान, जल जुत घटवाले प्रतिठान ॥ २३ ॥ स्वर्ण रत्न वस्त्रादिक दर्व, ता जुत हाट पंक्ति है सर्व। चित्र विचित्र कियो बाजार, इन्द्र धनुषवत रसमागार ॥ २४ ॥ कंटक धूल रहित सब गरी, पुष्प गंध जलाअंहि विस्तरी। पांटवर जित तित विस्तार, नानावर्ण दिपै मनहार ॥ २५ ॥

नानावर्ण धुजा फरकंत, मानो मुदित नगर भासंत। कोट पौल महलन आरूढ़, महाजनाद जलपन कृत भूर ॥२६॥ जिन दर्सन अभिलाषी सर्व, इधर उधर दौरत तज गर्व। विविध-तर बाजे मंगली, विस्मयवंत पुर स्त्री चली ॥ २७ ॥ सुध बुध भूल करत विक्रिया, कटिमेखल धरि कंठमैं त्रिया। हार धार कटिपै जनभार, सीसफूल लटकै जु हार ॥ २८ ॥ कंकन मुदरी पगमैं गाज, बिछवे फेर करे कर साज। कज्जल तिलक द्रगन सिंदुर, घरकारज तजि चाली भूर ॥ २९ ॥ रोवत सिसु तज चली उमंग, किनहु मरकट लायो अंग। करवध बांधत कोई चली, कोई केस समारत रली ॥ ३० ॥

कोई चाली जठर उघार, कोई मुख पर अंचलडार। कोई कंचुक बिन कुच खुले, कनक कुंभ सम सो जुग मिले ॥३१॥ कोऊ उच्च स्वर टेरत वहो, पीर रहो मम हाथ सु गहो। कूपो परको जलके हेत, गरुवा तजि बालक गहि लेत ॥३२॥ रज बांधकर फांसत सोय, रोवत सिसु न सुनत सठ कोय। कुलका

काम त्याग सब नार, चंचल चली रूप उनहार ॥ ३३ ॥ सु सुरार्चित पद जिन तित समय, जुत बरात कर पुर आगमय । फटक भीत कंचनमय थंभ, उन्नत चित्र विचित्रारंभ ॥ ३४ ॥ रतनागंण फरकंत पताक, इम मंडफ रचियौ नौ नाक । तित सुंदर पटौ वरगार, कर्पूरा गुरु खेय अपार ॥ ३५ ॥ पुष्पमाल लटकै चहुंओर, गंधत आय करै अलि सोर । कलस कनक मय वेदी जहां, वीद वीदनी तिष्ट तहां ॥ ३६ ॥ बाजे बजै विविध परकार, मंगलीक गावै मिलनार । दोषविवर्जित लग्न मझार, श्रुत कीरत राज हितधार ॥ ३७ ॥ कमल प्रभा सु दुहिता हस्त, जिन कर ग्रहन कराय प्रशस्त । अग्रावर्त करत दंपती, मेरावर्त जेम खगझती ॥ ३८ ॥ भूषण भूषित सुन्दर बात, कमलाभा कर गह जगतात । मृदु नव तियै लहन मुद कोन, दंपति कीर्ति भई त्रिय मोन । ३९ ॥ दुदद तुरी रथ बहु चंडोल, पटा भरण जुत दिये अमोल । विविध सुभाजनक नमन जरे, बहु करंड रतनन कन भरे ॥ ४० ॥

दासी दासरु बहुती फौज, इत्यादिक दीनौ बहु सौज । त्रिनै सहित बहु भगति कराय, हस्त जोड रोमांचित काय ॥ ४१ ॥ इम कर विदारु घर नृप आय, चली बरात निशान बजाय । कूंच मुकाम करत सो आइ, नगर चन्द्रपुर बनके मांहि ॥ ४२ ॥ तित दरसनसो उठ जन सबै, करत महोत्सव नर सुर सबै । तोरणादि बहु सोभा कीन्ह, पुर प्रवेश कर जिन सुर मध्य ॥ ४३ ॥ करै सुरासुर जै जै शब्द, दुंदभि धुन जु

माजे अष्ट। सो सुनि पुर तिया अचिरज वंत, घर कारज तजि चली तुरंत ॥ ४४ ॥ को घरटीको दुपक अहार, गंडक भुक्कन ताहि समारि। चली तुरत कोई बालसक्ती, पिक वच मधुर मनोभारती ॥ ४५ ॥

कुंज बजार पोलि छत रोक, जहां तहां नरनारी थोक। कोई तुंग महलपै नार, लखि निमेष द्रग मुदित उचार ॥४६॥ जापर सुर बरसावत जाय, सुमन सुगंधित अलिगण छाय। सिर सितछत्र फिरै जिम चंद, ढरै चमर दो तर्फ अमंद ॥४७। वेष्टित सुरनर जैजैकार, पुन्यौ ससितैं अति दुति धैर। जा जन्मादि भई मणिवृष्ट, सो नृप सुनु देख सखो इष्ट ॥४८॥ रथारूढ़ श्री चन्द्रकवार, अरु शिवका मैं वधू सवार। कला पूर्ण लावण रस कूप, पीनस्तनी सरूप अनूप ॥ ४९ ॥

दोहा—पूर्णचन्द्र नृप तनु जतन, मधू किरणका रूप।
विधना जोग मिलाईयो, उपमा रहित अनूप ॥ ५० ॥
धन्य नार यह जगतमें, वर पायो तीर्थेश।
भाग वडो याको त्रिजग, पूजत भई बिसेस ॥ ५१ ॥

छपै छंद—करवायो जिनधाम विविध सोभा जुत उन्नत। तथा मूर्ति जिन स्वर्ण रतनमय लक्षण लच्छत्त ॥ वा द्रग मनकूं मोहनि केले द्रव्य जजे जिन। भोजनादि चव दान दियौ चौसंघ प्रतै इन ॥ व्रत धार अहिंस्यादिक महा करौ विविध तप जैनको। सब क्रांति कीर्ति गुण पूर्ण यह ऐसी छव नहीं ऐनको ॥ ५२ ॥

चौपई—नगर नार इम करती बात, निज अवास पहुंचे सुप गात। सो विचित्र रचियौ धन देव, इच्छ दान दियौ बहु भेव ॥ ५३ ॥ सब नारिनको उपमा जोग, विविध विभा भूषित सु मनोग। त्रिजग तिया तैं अधिक सरूप, रति रंभा किम रोहणी रूप ॥ ५४ ॥ ऐसी वधू पाय शशि स्वामि, भोगै भोग यथा रत कामि। पंच इन्द्री मन जनित सु जेह, भोग निरंतर भुगतैं तेह ॥ ५५ ॥

सोरठा—पूरव पुन्य विपाक, दंपति पुन्य प्रभावतैं। सुत भयौ जू पति नाक, संगधावर चंद्राभ धर ॥ ५६ ॥ कर जन्मोत्सव तास, सुखसागरमें मगन जिन। दो लख सहस पचास, पूरवकाल कवार पण ॥ ५७ ॥

पद्धड़ी छन्द—तब इन्द्र आय ससिपुर मंझार, धुज तोरणादि रचि विभा भार। कर मंजन सजि पट भूषणादि, प्रिष्टोन्नत मणिमय मा मृगादि ॥ ५८ ॥ तत्रस्थ चन्द्रप्रभ नारियुक्त, जग रक्ष काज लषि पूर्व उक्त। पितु राजभिषेक सु करकै वार, तब कियौ कतूहल अमर नार ॥ ५९ ॥ नृत्यादि गान सुर दुंद नाद, सुर पुष्प वृष्टि अलि जुत जलाद। सुरभि कत दिगमन घ्राण हार, सुरनर इत्योत्सव द्रग निहार ॥ ६० ॥

चौपाई—चार प्रकार चमूं ले संग, कर दिगविजय अंग अभग। सब भूपन इकठे ह्वै कियौ, सु महामंडलेस पद दियौ ॥ ६१ ॥ रोग जात जेते जग मीर, अनावृष्ट अति वृष्टि कीर। टीडी मूषक स्वपर दलादि, नहीं उपद्रव चोर

असनादि ॥ ६२ ॥ फलफूलादि अन्न बहु जोय, सब रितुके इक रितुमें होइ। न अति सीत नहीं अति उष्न, सदा इक रीत रहै सब प्रष्म ॥ ६३ ॥ यह अतिसय जिनराज प्रसाद, भोग मगन दिन सरकी माद। काल जाय प्रभु जान न रंच, इक दिन सभा मध्य सुर संच ॥ ६४ ॥ सो धर्मेंद्र सुअवधि विचार, भोग मगन जिन इम निरधार जू श्री रिषभ जगत प्रतिपाल, त्यौं चन्द्रप्रभु कर दरहाल ॥ ६५ ॥

सो वैरागी किहि विधि होय, करौ उपाय अहो सुर सोय। धरम रुचि सुर हरषित नमो, होय कार्ज तुम अज्ञा बमो ॥६६॥ दियौ पाक सासन उपदेस, तब उन कियौ बृद्धको भेस। सखलित पद सिर हलै जू चक्र, सकुचितनु चांदतबिन वक्र ॥६७॥ इन्द्रो सिथल कष्ट कर महा, प्रौढ सु इम झट आयौ कहा। आय चन्द्रप्रभु सभा मझार, शीघ्र नमन कर जुग सिर धार ॥६८॥ गद२ बोलत तब मुख थकी, लाल झरै छटा थुक थुकी। सुरगण श्रेपदाब्ज तुम तने, तुम सरणगत वत्सल सने ॥६९॥ भय निरमुक्त भूर बल धार, तुम सबकी कर हो प्रतिपार। जग रक्षक तुम दीन दयाल, इक पलतैं निसदिन सुइ काल ॥ ७० ॥ विकटायु चसैं ग्रह सु आय, मम रक्षा कीजे जिनराय। हे त्रिभुवनपति दुठ मृतु ग्रसै, तुम बिन कोई न रक्षक लसैं ॥ ७१ । हे भवनेस सरण यो लही, दुरबल दीन सु मो सम नहीं। बन्धु विवर्जित मात रु तात, सबसे अधिके तुम विख्यात ॥ ७२ ॥ षण मासादिनाकमें रख्य, तो बसुन्धराके

त्तक अरूप। त्रिभुवनमें इमको बल घरे, तुम सरणागतकों पर-हरे ॥७३॥ दुष्टन दंड वृषीको रक्ष, धरमराज इम जग पातक्ष। तुम दिगकाल गहे नहीं रखो, क्यों जु जगत मज्ञ मांतक अखो ॥७४॥ इम सुन सब चक्रित चित भये, विश्वेस्वरतैं पूछत भये। लखो अपूरव कोतुक एह, कोहै इमरो हरो संदेह ॥ ७५ ॥ तब जिनससि सु अवधिबल जान, सबसै मणे सुणो दे कान। प्रथम सुरिंद्रसु आज्ञा पाय, घरम रूची सुर इह इति आय ॥ ७६ ॥

कवित्त–इम कहि भयो विरक्त सु चिंतन भव थित अब तक कथुन निहार। लछमी हेतसु नाना छल बल करत जीव जग मांहि अपार ॥ पराधीन विषय न सुख बांछै तातैं तुम चेतन धिक्कार। हो सुछंद सुख भोग निरंतर आप सनातन येह निरधार ॥ ७७ ॥ श्री ब्रह्मानरेन्द्र श्री प्रभु सुरचक्री अजितसेन अचुतेंद्र। सागरांत सुख पद्मनाम नृप वैजयंतमें ह्वै अहमिंद्र ॥ इम बहुकाल भोगमय भोगे तोभी नेक न तृप्त लहंत। तौ यह स्वल्प भोग नर भवके तातैं तृप्ते कोन महंत ॥ ७८ ॥ अथ विसै तन जोबनादि बहु विभो विनिस्वर इव सब छन्द। अभ्र पटल चपला रु ओस जल कंटक अणी रु फूली संद। छिद्र कुंभ फुनि अंजुलि जलजूं छिन २ छीन आयुतन सेस। त्रिये सहोदरादि रिथोपम तिन निमित्तसैं करै कलेस ॥ ७९ ॥

दोहा–सब सीताभ्र तुषार सम, इम अनित्य सुधी जान।
क्यों न चरित सद व्रत गहै, जो साधन निरवान ॥८०॥

इति अनित्यत्व।

कवित्त छंद–रिपु सुक तात ग्रहो सुजीव यह तसु रक्षैको जगमें बलो। जूं पंचानन दाड बीच मृग बाजु रहु एन वच है करी ॥ माततात तिय पुत्र सहोदर मणि मंत्रा पद व्यंतर हरी। तो भूपतिकी कौन बात है पंच परम गुरु सुमरण धरी ॥ ८१ ॥ तातैं सुद्ध भाव सदगति हो मृतुसे राखन कौन समथ्थ। गहन विपनमें डगर भूलि जूं भ्रमें जीव बिन धम्म अकथ्य ॥ जन्म जरामृत गदादि पीडौ जीव सर्ण बिन सह उपसर्ग। सुधी विचारिम सरण प्रमेष्टी गहै लहै झट स्वर्ग पवर्ग ॥ ८२ ॥

इति असरन।

एह अनादि संसार खार जल दुख पूरत तामें तू जीव। करम रज्जू कर गृहो भ्रमै ध्रुव पण विधि जग द्रव्यादि अतीव ॥ व्रष विन निश्चय लहो न कदाचित चौरासी लखमें भटकंत। मुक्त न लही सुद्ध पद है जग तत्व संग रागादि गहंत ॥८३॥

चौपाई–तातैं आश्रवतै विधि बंध, तावसि निस दिन दुख सनबंध। इम को विद लख जगत स्वरूप, दरै हेत शिव सु तप अनूप ॥ ८४ ॥

इति जगतत्व ॥ ३ ॥

कर्मोदयतैं चव गति मांहि, जीव एकलौ आवै जाइ। कास स्वांसऽश्लेषम पित्त कुष्ट, निस दिन सहै आप ही कष्ट ॥ ८५ ॥ सुर पति अहि पति नर पति मुख्य, सुभ कर्मोदय इकलो चख्य। छेद भेद छित तन मन युक्त, पापोदय नरक निज भुक्त ॥ ८६ ॥ क्षुधा तृषा शीतोष्णगति मार, चेतन सहै

वसु गति धार । कर ध्यानाग्नि करम बन भस्म, नंत चतुष्टय लहि निज रस्म ॥ ८७ ॥

दोहा–इम इकलो निज जानिकै, सुख सनातन हेत ।
विष नासन व्रत आचरै, सुधी सहज इम चेत ॥ ८८ ॥

इति एकत्व ॥ ४ ॥

कवित्त छन्द–नगमें कनक दुग्धमें घृत जूं तिलमें तेल काष्टमें वह्नि, त्यौं तनमय आतममें जानौ जडहु चेतन चिह्न । तो पंचाक्ष विषै सब न्यारे बाल तरुण वृद्धादिक धुंद, सफल तरोवरपै विहंग सम, सज्जन मिलन न जानै अन्ध ॥ ८९ ॥

दोहा–मैमै कर सठ बोक सम, मोह कर्म वस थाय ।
इम लखि सुधी ता नासकों, ध्याय निजातमराय ॥ ९० ॥

इति अन्यत्व ।

या तन माहि सु हाड तीन सत बडी नसा नो सतक प्रमान, छोटी नसा जु सात सतक फुन मास डली जु पंचसत जान । नसा जाल चर्म मूल जु सोलै पलके रजू दोय तुच सात, सात कले जारो मन संख्या अस्सी लाख कोट विख्यात ॥ ९१ ॥ पलनलमास्तरक्त पीव मल चर्म मढो पर सप्त कुधात, नख कच श्रम जल श्लेष्म शुक्र रु मूत्र पुरीष सप्त उपधात । इम घिन गेह सब रचा सम सो व्रत विन सार न यामै कोय, क्षुधा तृषारू रोग कामाग्नी तासैं जलैं निरंतर सोय ॥ ९२ ॥ याइ सुगंध लगे दुरगंध हो ऐसे उनकूं पोष निरंत । तो फिर जरा आदि फुनि छीजै सो न कदाचित सुथिर रहंत ॥ ऐसे तनमें सार तपादिक हैं भव्य निज अहि मणि जेम । इम तन

अशुचि सुधी लखि सुमरै सिद्ध सिद्ध कारण करि प्रेम ॥९३॥

इति अशुचित्व।

सवैया ३१-कर्माश्रव सेती डूबे भव दध मांहिनी, बजू जल आवन सैती छिण जुत पोतही। मिथ्यात अव्रत जोग कषाय विषय अरु रागदोष मोहसेती असुभ उद्योत ही॥ राग दोष मोह विना सारलैं सुभ होय इम लखि चित्तपत्र सुद्ध योग होत ही। मन वच काय सेती ध्यान धैन करै नित जा सेती करमहन लहे निज जोत ही॥ ९४॥

इति असूव।

कवित्त-आश्रवको रोकै सो संवर तेरै विधि चारित दस धर्म। बाईस परीषह वृष अनुप्रेक्ष पंचाचार गहै जो पर्म॥ संवर पोत विना नभ वा बुध तरै न पावै सुन्दर मोष। ऐसे जान चतुर शिव कारण संवर अंवर सजै अदोष॥ ९५॥

इति सवर।

रस दे पूरव वध खिरै सो कही निर्जरा दो विध होय। सविपाक है चारो गतिमें अविपाक तप कैवल जोय॥ कर्म नासि जिय वांछित पद लहै उरध गत्त विनलेय जु तुंब। पंडित जान सु करै जतन इम कर्म निर्जरा हेत सुलुम्ब॥ ९६॥

इति निर्जरा।

पुरुषाकार लोक सब जानो ऊरध मध्य अधो त्रियभेद। यामै भ्रमै सुजिय अनादिसे कर मन बंधो लहै अति खेद॥ इम नर नागर लख लोक स्थित करै विचार सुधी इम चेत। तस

संयम आदिक बहु विध कही लहै लोक अस्थित हित हेत ॥९७॥

इति लोकत्व ।

भ्रमते भ्रमते भवसागरमें दुल्लभ चिंतामण नरदेह । तातैं सुछित काल कुल आयु सदीर्घ निरोग सुनत सदनेह ॥ साध संग सम्यक् रत्नत्रय अति दुल्लभ कारण शिव जोय । इम सुबोध नहीं लह्यो कदाचित ह्वै प्रमाद वस भटको सोय ॥ ९८ ॥

दोहा–इम दुल्लभ भवदध विषै, जान विचक्षण ज्ञान ।
महारत्न निस दिन विषै, इच्छा करै सुजान ॥ ९९ ॥

इति सुबोध दुल्लभ ।

कवित–पतित भवाब्ध जंतुको काढै थाप उच्च पद धर्म जिनुक्त । सो दु भेद यतिको दस विध है जो क्षमाद दे तद्भव मुक्त ॥ सबता आसवृत्तिचर्यादानंद गृही धर्म दै नर सुर सौख्य । हन अघोघ तप ध्यान सुबल मुन आकरषती शिव श्रीतोष्म ॥ १०० ॥ ज्ञान चरण भूषण वृषते कछु दुल्लभ नांहि त्रिलोक मझार । वृष बिन इन नरर्थ नर जन्मसु अजागलस्तनपत बिन नार ॥ वृष युत मृतकसु जीवै जगमें वृष बिन जीवन मृतक समान । धर्म सु फलतै लहै मुक्त सुख सुधी जान, निस दिन मन आन ॥ १०१ ॥

इति धर्मानुप्रेक्षा ।

इम बारा विध सारनुप्रेक्षा वैरागोत्पति मात समान, सो चन्द्र प्रभु चिंतत तावत अवधि ज्ञानसु रिषीस्वर जान । पंचम ब्रह्म स्वर्गमें जानो लोकांतक पाडौ सु विसाल, अष्ट प्रकार देव तहां बस है ब्रह्मचारी सुंदर गुणमाल ॥ १०२ ॥

सोरठा—सारस्वत आदित्त गर्दित, अरुणरु अग्र फुन।
षष्टारिष्ट तुषित, व्यावाधाष्टिम सुर रिषी ॥ १०३ ॥

चौपाई—जू इक वंश विषै बहुगोत, त्यों इनमें बहु भेद उद्योत। मुख्य आठ ए आए संग, जै जैकार करत मुद अंग ॥ १०४ ॥ सब पूरब पाढी बुधवंत, सहज सोम मूरत उपसंत। वनिता राग हिए नहीं वहै, एक जनम धर शिवपद लहै ॥ १०५ ॥ तीर्थंकर विरकत जब होय, रहसवंत तब आवै सोय। और कल्यानक करै प्रनाम, सदा सुखी निवसै निज धाम ॥ १०६ ॥ प्रभुके चरण कमलकूं नये, सुरतरु पुष्पांजलि छेपये। गिराभदितनिः क्रम कल्यान, पर ससां सूचक बुधवान ॥ १०७ ॥ हाथ जोडि थुत सिष्या रूप, धन्य देव भूपनके भूप। धन्न सु तुम विचार उर धरौ, निज पर हेत विलम्ब न करौ ॥ १०८ ॥

जगन्नाथ साधुनके साध, तीन ज्ञान जुत परम अबाध। परम सु दिव्य रूप गुण रास, मोह मल्लको करो विनास ॥१०९ तुभ्यं नमो नमों जिनदेव, निज पर 'तारक' कहो स्वमेव। धन विवेक यह धन्न सयान, धन यह औसर दया निधान॥११०॥ जानौ प्रभु संसार असार, अथिर अपावन देह निहार। इन्द्री सुख सुपने सम दीस, सो याही विधि है जग ईस ॥ १११ ॥ उदासीन असि तुम कर धरी, आज मोहसे नाथ रहरी। बढो आज सिवरवनि सुहाग, आज जगे भविजन सिर भाग ॥११२॥ जग प्रमाद निद्रावस होय, सोवत है सुध नाहीं कोय। प्रभु

धुनि किरण पधासै जबै, होय सचेत जगै जन तबै ॥ ११३ ॥
यह भव दुस्तर पारावार, दुख्जल पूरत पारनवार । प्रभ उपदेस पोत चढ़ धीर, अब सुख सूं जै हैं जन तीर ॥११४॥ तुम तिलोक हितु जग रक्ष, यह संसार चक्र परतक्ष । तामें जीव अनंत अपार, भ्रमें अज्ञान भाव निरधार ॥ ११५ ॥ तुमरे वचन हस्त अवलंब, भ्रमण तजै तौ कौन अचंभ । तुमरे नाम मंत्र परसाद, पशु उच्च पद लहै इंद्रादि ॥ ११६ ॥ तुमरे बोध नियोग पसाय, जूं अन्धरेमें दीप सहाय । ताकर सुगम विषमादिक परे, देख सुगम मगमें अनुसरै ॥ ११७ ॥ शिवपुर पोल भरम पर जहां, मोह महोर दिढ कीनी तहां । तुम वानी कूंची कर धार, अब भव जीव लहै भवपार ॥ ११८ ॥

स्वयं बुद्ध बोधन समरथ्य, पै प्रतिबोध सुवैन अकथ्य । जू सूरज आगे जिनराज, दीप दिखावन है किह काज ॥११९॥ संयम जोग गृहन यह काल, वरतत है हे दीन दयाल । चतुर गति निजलोपम वर्त्त, सत्यारथ वृष तीर्थ प्रवर्त्त ॥ १२० ॥ हम नियोग औसर यह भाय, तातें करै वीनती राय । धरिये देव महाव्रत भार, करिये कर्म शत्रु संहार ॥ १२१ ॥ हरियै भरम तिमर सर्वथा, सूझै स्वर्ग मुक्ति पथ यथा । यूं थुत करत सुभाव दिठाय, वार वार चरनन सिर न्याय ॥ १२२ ॥

दोहा—इम थुतकरि जिन चरन नमि, निज नियोगकू साध ।
देव रिषी निज थल गए, प्रभु गुण हिए अराध ॥ १२३॥
चौपाई—तिनके वचन सुनत जिनराय, मोह रहित हुए ए

माय। जू रविसैं अंधियार नसाय, नेत्रनामको तब भ्रम जाय ॥ १२४ ॥ तब ही सुर घर चतुरन काय, घंटादिक बाज अधिकाय। इन्द्रादिक लखि चक्रितवंत, तब सोयघतैं जान वृतंत ॥ १२५ ॥ सब स्वनारी सेनाकर युक्त, चतुरन काय देव युत भक्त। हरषानन पूरव वत चले, देषन तप कल्यानक भले ॥ १२६ ॥ सुर वनता नाचै रस भरी, गावै मधुर गीत किन्नरी। बाजे विविध बजै तिह बार, कर अमर गण जैजैकार ॥ १२७ ॥ सब सुर गण बरसावत फूल, आय नये जिन पद अनुकूल। कंचन कलस भरे सुर राय, विमल क्षीर सागर जल ल्याय ॥ १२८ ॥

मुक्ति माल जुत सोभित सोय, रिप गण जुत जूं ससि अविलोय। चंदन चर्चित छाद दुकूर, जूं घन मांहि रस्म जुत सूर ॥ १२९ ॥ हेमासन थापे भगवान, उछव सहित न्होन विधि ठान। भूषन वसन सकल पहराय, चंदन चर्चित कीनी काय ॥ १३० ॥ वर चंद्राभ सुपुत्र बुलाय, ताकू राज दियौ जिनराय। तुम परजा करियौ प्रतिपाल, राजनीत धर्मज्ञ गुणाल ॥ १३१ ॥ अति हठसूं समझाई माय, लोचन भरे वदन बिल खाय। पिता पुत्र बंधव परिवार, बोधे वच वैराग्य उचार ॥ १३२ ॥ विमला नाम पालकी तत्र, देव रचित कन मय सर्वत्र। पंचरत्नमय रस्म विथार, मानौ इंद्र धनुष आकार ॥ १३३ ॥

तापै प्रभु हुए असवार, देव दुंदभी बजे नगार। मुक्त

झलरी जुत सिर छत्र, ससिसेवमनु सहित नक्षत्र ॥ १३४ ॥ अंग तरंगापम झिल चौर, फली रस्म मयौ मनु मौर। चौंवर देव करें जे भूर, ना अति निकट नहीं अति दूर ॥ १३५ ॥ इस औसर प्रभु सोहै एम, मुक्ति वधू वर दुलहो जेम। ली उठाय अंश भूपेंद्र, सप्त पैंड फुनि त्यौं दुष गेंद्र ॥ १३६ ॥ सुनासीर आदिक सुर सव्व, लेय चले हरषित फुनि भव्य। पोहचे विपन सघन तरु वेल, रचि मंडप जिह सुर कर केल ॥ १३७ ॥ फल सफलित बहु फूले फूल, दिगम करंद रहे अति झूल। सुद्ध सिलातल फटिक समान, चंदन चर्चित कर गिरवान ॥ १३८ ॥

सिबका सुर गण ल्याये यत्र, नर सुर युत प्रभु उतरे तत्र। सुर पुनीत जो वर आभर्ण, तिह उतार गइ आतम सर्ण ॥१३९॥ नगन भये यथा जात आकार, फुन पण मुष्टी अलक उखार। पदमासन पूरव दिस वक्र, कर जुग सिर धर नम सिद्धचक्र ॥ १४० ॥ धर षष्टोपवास जिनचंद्र, कनक करंड केस धर इंद्र। जा छेपै क्षीरोदध मांहि, सर्वोत्कृष्ट जान सुर नांह ॥१४१॥ सहस भूप संग भए मुनेन्द्र, प्रात कृष्ण हर पोह दिनेंद्र। तब सब जानों जिन मत भेव, जैनी भए मिथ्याती देव ॥ १४२ ॥

दोहा—धट लाखार्द्ध सुपूर्व फुन, चतुर्वीस पुर्वांग।
एते दिन कर राज फिर, भए नगन सर्वांग ॥ १४३ ॥

चौपाई—पटाभरण धर विन जिन देव, सुरआजात रूप

है एव। श्री चन्द्रप्रभ सुमजिनेन्द्र, सुध फटिक तन दुति सु दिनेंद्र ॥ १४४ ॥ ध्यान रूढ़ अचल जूं अद्र, भूषित वृत गुणादि समुद्र। तुष्टत इंद्रादिक सुर तबै, अस्तुति करैं सुप्रभकी अबै ॥ १४५ ॥

दोहा—गणीत रहित गुण तुम विषै, मानव वचन अकथ्य।
कौन सुधी तिहु लोकमें, तुम गुण कहन समथ्य ॥१४६॥
सुत थापी तुम भक्ति वस, भणूं सुगुण जिनराय।
जू सुरसूं पिक उच्चरै, आमृकली परभाय ॥ १४७ ॥

पद्धडी छंद—हे नाथ सुगुण उज्जल सु तोहि, तिहुं लोक विषै विस्तरे सोय। तृष्णा विन तुम हुवे सुकेम, तृष्मातैं कीयो अधिक प्रेम ॥ १४८ ॥ अघराज लक्ष तुमनै तजीय, तप अनघ लक्ष तुमने सजीय। किम विध निरग्रंथ सुभणै तोहि, यह देखत मम आश्चर्य होय ॥ १४९ ॥ अपवित्र नारिको तजो राग, मुक्त श्री सदच हो किव राग। तज अल्प सौज बहु सोज चाह, निरलोभ कुतः लोभी अथाह ॥ १५० ॥ तज विग्रह नाना विध असार, तुम धारौ नाना गुण अपार। तन अथिर तजन चहो सुथिर सिद्ध, कैसें निमग्रह तुम हो प्रसिद्ध ॥ १५१ ॥ तज तुछ बांधव सब जीव भ्रात, कैसे निर बांधव तुम कहात। हन कर्मारी प्रिय गुण महाष्ट, संभावी क्यौं कहिये सपाष्ट ॥ १५२ ॥ महाज्ञान महागुन बल महान, परताप सु तुम सम कोन आन। तुह नमूं सुगुन धारौ अनंत, ध्यानात्म लीन परमेष्टी संत ॥ १५३ ॥ तीर्थेश नमूं जगनंद दाय, भव

भव मैं दर्शन देहुराय । इम थुन नुत कर सुरगण निरुक्त, निज निज थल पहुंचे हर्ष युक्त ॥१५४॥

दोहा—हिरदेमें धरि जिन सुगुण, सरल सुभावी जोय ।
उज्जल नर भव सफल कर, देख लाल निज सोय ॥१५५॥

चौपाई-तदनंतर मन परजय ज्ञान, महूर्तांतरमें लहै भगवान । तप बल बहुर प्रतिज्ञा पूर, असन हेत उठे जग सूर ॥ १५६ ॥ चलत दृष्टि इत उत न पसार, जंतु विवर्जित भूमि निहार । जूडा मित इम ईर्या पंथ, धरा पवित्र करत निरग्रन्थ ॥ १५७ ॥ कोमल पाव कठिन भू मांहि, धरत धीर नाखे दल हांहि । जगकूं दर्स देत जिन सूर, सोम ध्यान सम मय गुण भूर ॥ १५८ ॥ पोंहचे नलिन सुपुरके मांहि, निरधन धनी विचारत नांहि । ग्रह पंकतिमें विचरत असें, सोम भाव जुत ससि सम लसें ॥ १५९ ॥ राहु दोष बिन लख नरनारिं, अकस्मात सब अचरज धार । अहो लखो यह अदभुत चंद, या आगे रवि किरण सुमंद ॥ १६० ॥ जूं महताबो आगै दीख, नभ तज मानो आय समीप । महा दीप्त बहु पंथ विहाय, ज्ञानपयोनिध सुन्दर काय ॥ १६१ ॥ धोर मेरु वत गुणगण खान, नरनारी इम करत बखान । विहरत पहुंचे चंद्र मुनिंद्र, सोमदत्त नृप घर गुण वृंद, ॥ १६२ ॥ चंद जौति सम कीर्ति विथार, चिंतामणि सम भूप निहार । भयो रंक जूं तुष्ट नरेस, देख जगत गुरको परवेस ॥ १६३ ॥ जिन चरणांबुज नमियो राय, हाथ जोडि भूवमें सिर लाय । तिष्ट तिष्ट महाराज सु अत्र,

मम श्रावक कुल करो पवित्र ॥ १६४ ॥ प्रासुक नीर अहार सुदेव, भुंजो दोष विवर्जित एव। इम भण भूप महांदरवित्त, लेय गयौ कर नौधा भक्त ॥ १६५ ॥

छपै-आदर जुत लेगयौ भवन पहली प्रतिग्रह यह। दुतिय उच्चस्थान काष्ट विष्टर पै थापह ॥ त्रितिय पद परछालि चतुर्थी पादार्चन गुर। पंच प्रनामि जुत भक्ति त्रिय ऐ सुध वच तन उर ॥ फुन नवम असन सुध भक्त नव दाता करै सुगुरु तनी। सो सोमदत्त नृप नै सकल हरष सहित परगट ठनी ॥ १६६ ॥

अथ सप्त गुण यथा।

चौपाई-प्रथम श्रद्धा दूजै बहु भक्त, तीजै निर्मल ज्ञान संयुक्त। मन उदार सो निस्पृह तूर, दया क्षमा सक्ति लिहु सूर ॥ १६७ ॥ ए सातौ गुण जुत नृप दात्र, दियौ लियौ विध जुन जिन पात्र। प्रासुक मधुर भुक्त क्षीरादि, दियौ तृषाक्ष करण मरजाद ॥ १६८ ॥ विमुख विन ध्यान तप वृद्धि, कारन यह वांछा नहीं किध। चतुरांगल पादांतर धिरै, पान पत्र पारण इम करै ॥ १६९ ॥ भुक्त करत तन थिरता धरै, तनतै विविध तपस्या करै। तपतै ज्ञान ज्ञानतै मोक्ष, यह कारन करि असन निरदोष ॥ १७० ॥ तास पुन्यफल पंचाश्चर्य, नृप आंगनमें देव विसर्ज। दात्र कीर्ति सूचक सुर दुंद, बाजत इन मनोगाजत सिंध ॥ १७१ ॥ दाता सुजस त्रिजग विस्तार, सरद सुरभि व है मंद बयार। दिव

नारी अति आनंद भरी, लेय स्वांस इव उपमा धरी ॥१७२॥
सुमन सुगंध विष्ट सुर करै, अलिगण ढंका उडत मन हरै।
हर्षित नृत गान मनो करै, दाता तवौ सुजस उच्चरै ॥१७३॥
विष्ट अमोल रत्न पणतनी, करै देव जग लख इम भनी।
धन्न सुपात्र दान धन एव, सुर गण करै भूपको सेव ॥१७४॥
नाम तृप्तदा फुन सब देह, सुरभि नीरको बर्षे मेह। मुक्ता-
फल सम सोभित भए, नृप घर इम पंचाश्चर्य भए ॥ १७५ ॥
पात्रनमें महा पात्र जिनेश, धर्मतीर्थके कर्ता वेस। जगतमान
दाता ए धन्य, श्री जिनवरको दियौ सु अन्न ॥१७६॥ अहो
दान यह परम पवित्र। दातृ पातृकूं वृषदा नित्य। धनको-
पार्जन करै गिर हस्त, एक जीवका हेत प्रसस्त ॥ १७७ ॥
तामैं जे जन दान कराय, ता धन सफल भूप सम थाय। जाके
घर न दान हो कदा, सो मसान सम है सर्वदा ॥ १७८ ॥
दात्र पातृ थुत इव सुर करी, फुन अनुमोदन जन विस्तरी।
जगतसु मान दानतै होय, नानारिद्ध लक्ष लहै सोय ॥१७९॥
सक्र रुचक भोग भू लाध, वा तद्भव सिवपदको साध। जूं
बटबीज बोइयो तुछ, सफलित सघन अमित अति रुक्ष ॥१८०॥

छप्पै–ईष खेतमैं वृष्टि मेघ जल होय मिष्ट रस। नीब
क्यारमैं पडो वही जल अधिक कटु कलस ॥ यौंही पात्र कुपात्र
दान फल जान विचक्षण। दाता भोग कुभोग भूमि सु लख है
ततछन ॥ जो दाता प्रथम जिनेन्द्रको, सो तद्भव लह मोक्षपद।
इम जिनकू दान सु दे प्रथम, ताकी महिमा कोन हद ॥१८१॥

चौपाई–छालिस दोस विवर्जित मुक्त, बत्तीस अन्तराय निरमुक्त। हुवो शुध जिमको इम हार, तब सुन प्रश्न करै भू पाल ॥ १८२ ॥ ताको भेद सु कहो वसेस, इंद्रभूत कहै सुण मगधेस। प्रथम सु छालिस दूषण भेद, जाके सुनत मिटै भ्रम खेद ॥ १८३ ॥

दोहा-प्रथम गृहस्ताश्रम जुको, पण सूना कह नाम।
चाडी उखली मजनी, नीर रसोई धाम ॥१८४॥
ताजुत सहज सु अष्ट विध, पिंड सुधसो बाझ।
हिस्या कर षट कायकी, आरंभ सो अघ त्याज ॥१८५॥
व्रती सु तन सूना करै, पाको दे उपदेस।
कर ताकी अनुमोदना, नाहि करै लवलेस ॥१८६॥
मनतै वचतैं कायतैं, यह कारज अति निंद।
करै सु व्रत कर हीन जे, निसदिन रहै सु छंद ॥१८७॥
छालिस दूषणतै जुदे, यह अघ दूषन जान।
मूलाचार ग्रन्थमें, गुरवट केरु बखान ॥१८८॥

चौपाई–मुनिका नाम लेय जोकरौ, सो उद्दस दूसण परहरो। गुरु आए लख आरम्भ करै, दोष अध्या द्विसु दुजो धरै ॥ १८९ ॥ अप्रासुक प्रासुक जू मिलाय, तृतीय दोष सो पूत कहाय। अन लिंगन तै फर्स रु पोष, सु मुन गृही सु मीसर दोष ॥ १९० ॥ निज वा पर घर थापो पोष, रिषको मुक्त सु थापित दोष। देवादिक वा गुरके अर्थ, किये देय बल दोष अनर्थ ॥ १९१ ॥ हान रु वृद्धि कालको रूप, दोय दोष प्राभृत

विरूप । मंत्रफादका कर परकास, दोष सुप्राभीकर्म निवास ॥ १९२ ॥ बाणज रूप खरीदे जोय, भोजन दे कृत नवमो सोय । लाय उधारो दे अह्लाद, सोय प्रमार्ष दोष मरजाद ॥ १९३ ॥ परकैला बदलाय सु देय, सो प्रावर्तक दोष कहेय । जो विदेसतें आयो देय, सो अभिघट बार मसु कहेय ॥१९४॥ बंधो खोल अरुढ कोउ धार, देय सु उद्भिन दोस निहार । श्रेणी चढ़ि ऊपरसूं लाय, देय सुमाला रोहन थाय ॥ १९५ ॥ नृप चौरादिककी भय मान, दे अछेद दूसन सिर ठान । अप्रधान दाता दे भुक्त, सो अनिसृष्ट दोष संयुक्त ॥ १९६ ॥ यह उद्गम दूषन वसु दूण, फुन उत्पादन षोडस सूण । धाय बालवत पोषै साध, सो पहलौ धात्री अपराध ॥ १९७ ॥ जो मातावत किरया करै, सो आजीव दोस सिर धरै । भुक्त हेत गुरु जाय विदेस, ग्रहस्तोदित तित कहै संदेस ॥ १९८ ॥ सो विधिजुत दे मन कौ दान, ले दिष दूत दोष सिर ठान । अष्ट निमित ग्यानतै जान, करै सुभासुभ सगुरु दखान ॥ १९९ ॥ तासुन ग्रेही मुदित दे भुक्त, ले मुनि निमत दोष संयुक्त । वचन भनै वानीपक दोष, वैद्य भणो सु चिकित्सा पोष ॥ २०० ॥ क्रोध करै सो क्रोधुतपादि, मान करै सु मान मरजाद । माया करै सु माया दोष, लोभ करै सु लोभको कोस ॥२०१॥ दाता सुजस भणो गुन कोस, भोजनादि पूरव थुत दोस । अथवा भोजनांत थुति दात्र, करै सुदोष थुतांत कुपात्र ॥ २०२ ॥

काव्य—बहुविद्या दिखलाय चवै देगे जग भूपाल, यो सुण मुद दे

दान गृही सो विद्या दूसण। मंत्र देयवा साध गृहस्थीको कारज कर, मुदत गृही दे दान सु मुनमंतर धर दूसण ॥ २०३ ॥ रोगादि हरण सृगार निमित्त दे द्रव्य रजतादी, मुदित गृही दे दान दोष सो चूर्ण युगादी। जे वस होन कदाचि मंत्र सौं सो वस कर-है, मूल करम सोलमा दोस यह साधू परहै ॥ २०४ ॥ अध क्रम कर उपजा कनाह यह अधिक्रम दूसण, वा तेलादिक लिप्त मांड रज छिप्त दुतिय हण। तथा सचितमें थाप असन क्षिप्त तीसरा, सचित अचित मिल ढक्यौ असन दे पिहत नीसरा ॥ २०५ ॥

दोन अर्थ कर गोन देय सो संव्यवहरन, दायक असुधसु आप देय दायक षट वरन। अप्रासुक भूआदि मिलोदे मुक्तु-न्मिश्रत, पक्क अकपक्क मिलि गिलै मुनी अपरणित सोभृत ॥ २०६ ॥ अप्रासुक लिप मांड धरो ले भुक्त लिप्त नव, मुन करतै गिर पिंड दसम परित्यजन दोस फव। उष्न भुक्त जल सरद मिलै इत्यादि संयोजन, विरुद्ध परस्पर हार गरम जल सरद भुक्त अन ॥ २०७ ॥ उदर अर्धमें असन पावमें नीर समावै, यातैं अधिक सुदोष दुषट अति मात्र कहावै। अति तृष्ना कर असन ग्रहै सो दोष अंगारक, यह तेरम मल दोष चोदमा धूमन मांतक ॥ २०८ ॥ अति निंदा अति ग्लानि करत भोजन विरूप कह, मेरै है सु अनिष्ट करत संक्लेश ऐसे गह। सोले उद्गम उत्पादन सोलै चोदै मल, ए छालीस सब दोष टालि मिल असन सु उज्जल ॥ २०९ ॥

दोहा—अंतराय बत्तीस बिन, भोजन करै मुनिन्द्र।
गोमय गणी सु इम भणै, सुन मग्धेस नरिंद्र ॥ २१० ॥

चौपाई—कागादिक खग बीट करंत, काकनाम अंतराय कहंत। अशुचि लिप्त पग सोय अमेध, वमन कर मुन छर्द सु भेद ॥२११॥ कहन करू भोजन इम कोय, अंतराय रोधक चवथोय। निजपरकै लख अश्रुपात, अश्रुपात पंचम विख्यात ॥ २१२ ॥ निज परकै लख रुधर रु राध, रुधर सु अंतराय षट लाध। रुदित उच्च सुरसि सुजन दर्स, गोडा नीचै हस्त स्पर्स ॥२१३॥ रुद परमर्स जानु बोध दोय, अंतराय आठमी होय। गोडा तक काष्टादि उलंघ, जानु परिव्यत क्रम यह भंग ॥२१४॥। नाभ तलै सिर करनी सरै, नाभ्यधो निरगमन सु धरै। तजी वस्तुकूं खायज भूल, प्रत्याख्यान सेवना सूल ॥ २१५ ॥ निजपर कर जिय बध होकनै, अंतराय जिय वध गुर भनै। खगकागादि लेजाय सु पिंड, पिंड हरण तेरम यह मंड ॥२१६॥ भुक्त करत करतैं पिंड गिरै, पाणित पतन पिंड सो धरै। भुक्तत करमैं जिय गिर मरै, पाणो जिय बध सो अनुसरै ॥ २१७ ॥ भुक्तत पल पंचेन्द्रिको लखै, सो मासाद दर्स गुर अखै। हो उपसर्ग सुरादिक कृत, सो उपसर्ग सतरमी धृत ॥ २१८ ॥ जुग पद बीच पंचेन्द्री गछ, अन्तराय पादांतर लछ। दाता करतैं भोजन गिरै, भाजन संपातन सो सिरै ॥ २१९ ॥ निज तनतैं मल हो व्युत्सर्ग, सो उच्चार अन्तरा वर्ग। मूत्र श्रवै तो प्रश्रवन नाम, भिक्षारथ भ्रमते गुण धाम ॥ २२० ॥ चण्डालादि ग्रहमैं

परवेस, ग्रह अभोज्य परवेस निवेस। हो मूर्छादि पतन मुन देह, सो तेईसमी पतन गिनेह ॥२२१॥ उपवेसन बैठे गुरु खरे, दह स्वानांदस दंसिम धरै। सिद्ध भक्त कर भूम सपर्स, भू संसर्स अन्तरादर्स ॥ २२२ ॥ श्लेष माद पेपै जो साध, नष्टी बन छठिसम पराध। जो मुन जठरतैं क्रम नीसरै, क्रम निरगमन सताईस धरै ॥ २२३ ॥ बिना दियौ तुछ गृहै जो व्रती, सोय अदत्त ग्रहनकी गती। निज परकै सुलगै हथियार सो प्रहार उनतिसम निहार ॥ २२४ ॥ ग्राम दाहसापुर जु जलेय, पग तैंठा वछु भूतैं लेय। किंचित ग्रह नसोई पादेन, फुन करतें तुछ ग्रहन करेन ॥ २२५ ॥ अन्तराय ये कही बतीस, अरु कछु जादै सुनौ महीस। चंडालादि स्परसन कलह, इष्ट प्रधान सन्यासी मरह ॥ २२६ ॥

दोहा-लोक निंद नृप भय तथा, संयम निर वेदार्थ।
इन कारन भोजन तजै, अन्तराय सामर्थ ॥२२७॥

चौपाई— इनके लछन रूप विशेष, मूलाचार ग्रन्थमें देख। इम भिक्षाकर वनकूं जाय, एकाकी सु ध्यान धराय ॥२२८॥ धारे पंच महाव्रत सुध, तासु भावना जुत अविरुद्ध। सुमत गुपत अनुप्रेक्षा धर्म, दस विध धारे विध गह पर्म ॥ २२९ ॥ विहरत पुर पट्टन ग्रामादि, गिर कंदर बन तट नद्यादि। नाना-देश सुगुण गण गहै, तिहुं कालाद्र परिसह सहै ॥ २३० ॥ यूं छद्मस्त सुमौन अरोय, पहुंचे इक्षुक बनमैं सोय। सुध सिलास्थ नागतरु हेठ, धर षष्टोपवास जय जेठ ॥ २३१ ॥ ध्यान थंभतैं

रुजू विवेक, गह बांधो मनक पसु वसेक । आरत रुद्रकूं ध्यान विहाय, धर्म सुकल ध्यावो मन लाय ॥ २३२ ॥ महुर्तान्तर एकाग्र सुध्यान, प्रथम सुकल पदगह वसु ठान । अधिक अधिक कर उज्वल भाव, मोहादिकको विमत नसाव ॥ २३३ ॥ प्रकृति घातिया छयकृत चलो, चढ नव दसम अंत इक मिलो । दुतिय सुकल जो धारण धीर, लंघ ग्यारमो नग फुनवीर ॥ २३४॥ बारम अंत अंत कर घात, विधि चव प्रकृति संतालिस घ्यात । सो गुण रुजू मम प्रापत हेत, भण सुयणमें तुमें इम चेत ॥ २३५॥

कवित्त—कब सुपात्रकूं दान द्यूं मैं, विधि जुत कब कर हूं थितहार । निरावरण तन ध्येन ध्यान युत, सुथिर गिरमसृण चसै विहार ॥ जब तक वा इनमैंतरे, चेतन कर नित यज्ञ दान विस्तार । जप तप सीलवृत मुनगण भणजूं पवर्ग लह तुछ भवधार ॥ २३६ ॥

दोहा—जो कछु भव लह जगतमैं, हो भूपेन्द्र सुरेन्द्र ।
गौतम कह श्रेणक सुणो, यूं भण वीर जिनेन्द्र ॥२३७॥

इतिश्री चन्द्रप्रभपुराणमध्ये निःक्रमकल्याणक वर्णनो नाम
त्रयोदशम संधिः संपूर्णम् ॥ १३ ॥
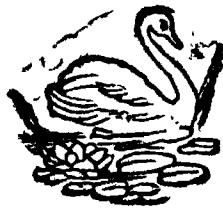
चतुर्दश संधि।

कवित—यथाख्यात चारित्रकूं ढाली महाजीव कन विध मल जूंक। मुन सोनी ध्यानाग्नि प्रजाल सु सोधै सुधपयोग के फूंक॥ विधमल दूर भयो तब आतम तप्त हेम सम सुध निकलंक। होय तेरमो ठाण सपरसैं सो वर्षेह निमित्त निसंक॥ १॥

सोरठा—तीन मास छदमस्त, करे विविध तप चन्द्रप्रभ।
घाति करम अप्रशस्त, करके बल रव प्रगट्यो॥ २॥

चौपाई—दिव्य परम औदारिक देह, सप्त घातमल वर्जित जेह। सुध फटिक सम तन परमाणु, भए सकल दुतिवंतसु भानु॥ ३॥

दोहा—जूं पारसके उपलसूं, फास लोह गुण त्याज।
होय कनक दुतिवंत अति, त्यौं कुघात जिनमाज॥ ४॥

चौपाई—त्रितिय सुकल अरु तेरम ठाण, इक संग फरसक प्रगट्यो ज्ञान। अनुराधा रिष २ अलि फाग, सांझ समै लहियो बड़ भाग॥ ५॥

पद्धड़ी—केवल मयूष युत मारतंड, तब फूलो त्रिभुवन कवल खंड। तब अमल भई दस दिशा नार, जब त्रिभुवन पतिको इम निहार॥ ६॥

चौपाई—ता प्रभाव उछलो जिनदेव, तनो वपु ऊरध कू एव। रंडवीज जू सहज सुभाय, बंध छेद ऊरध कूं जाय।७॥ जगमें नंतसार सुख गेह, सो जिन बोध लह्यो सु अछेह। दर्से

ज्ञान सुख वीर्य अनंत, छायक दान लाभ सु महंत ॥ ८ ॥ भोग और उपभोग सु एव, केवल लब्ध लही नव देव। ता प्रभाव चव विध सक्रादि, कम्प सुरासन बेमरजाद ॥ ९ ॥ मुकट नए अरु घर घर नाद, घटा ढोल संख सिंघाद। सुर तरु सुमन चवै बहु भाय, लख इत्यादि चिन्ह सुखदाय ॥१०॥ सूचक भए प्रभु केवल भेय, जानौ अवधि विचार सुरेश। करे काम छय चंद जिनस, सिंहासन तैं उठ पग सप्त ॥ ११ ॥

पद्धड़ी—तब चले पाक सासन हरषाय, सब नमन करै मन वचन काय। इंद्रानी पूछै कहो कंत, क्यों आसन तज उठे तुरंत ॥ १२ ॥ किस कारण प्रभु न्यायौ सु माथ, ताको उत्तर देहो सु नाथ। तब कहे मुदित सुर राज गाज, जिनचंद भये केवली आज ॥ १३ ॥

चौपाई—नम अष्टांग सुरासुर सेस, धनिद प्रतै हरदे उपदेस। रच समोसर्ण जिनदेव, सजो विविध वाहन फिर एव ॥ १४ ॥ इंद्र हुकमतैं चलौ धनेंद, आय नमो श्री चंदजिनेंद। रच समोसर्ण बहु भाय, देखत नैन थकित हो जाय ॥ १५ ॥ सुर सिल्पी रच सूत्रनुसार, सो समुश्रितको करै उचार। निज२ सेना सप्त प्रकार, अच्युताद आसो धूम द्वार ॥ १६ ॥ सजि ऐरावत जुत परवार, चढ प्रथमेंद्र चलौ मुदधार। वस्त्राभर्न ते सज २ देह, पूजा द्रव्य हस्तमें लेह ॥ १७ ॥ चले विविध वाहन सुर चढे, तनाभर्न नानायुध मंढे। इंद्र धनुष वत रस्म प्रकास, मिले भवनत्रिक मध्याकास ॥ १८ ॥ और सुरासुर

विविध प्रकार, निज २ वाहन हो असवार। जुत परवार क हरषत सबै, लख निमेष चक्र तहो तबै॥ १९॥

दोहा—समोसरणकी संपदा, लोकोत्तर तिहु मोन।
　वचन द्वार वरने तिसै, सो बुध समरथ कोन॥ २०॥
　सोरठा—पैथक औसर पाय, धरम ध्यान कारन निरख।
लिखूं लेश मन लाय, पढ़त सुनत आनंद बढ़े॥ २१॥

चौपाई—समभूते ऊँची कर एक, दिव्य भूमि चोखूंटी पेख। जोजन साढ़े आठ प्रमान, दिस प्रति बीस सहस सोपान॥ २३॥ कनकमई मन जडित विचित्र, ऊपर धूली साल पवित्र। पंच रतनमय दुति विस्तार, इंद्र धनुषवत रत्नागार॥ २४॥ मानो प्रभु तन रस्म विचित्र, प्रभा पुंज यह बनो पवित्र। कहुं स्याम कहुं कंचन रूप, कहुं विद्रुम कहुं हरित अनूप॥ २५॥ समोसरण लछमीको एम, दिपै जडाऊ कुंडल जेम। विजियादिक चोदिस चव द्वार, ऐसे सब छतीस निहार॥ २६॥ चार कोट अरु वेदी पांच, इक इक दिस दर नव नव राच। वेदी अधो उर्द्ध सम मोट, अधो अधिक ऊरध तुछ कोट॥ २७॥ पोल पोल प्रति मंगल दर्व, इकसत आठ भिन्न ए सर्व। आठ सतक चोसठ इक पोर, नाट साल नव निधि दोऊ ओर॥ २८॥ प्रभु तनी कहो कापै जाय, यो लख दर थितसे न कराय। पुष्प रतन फुन कंचन माल, बुर्ज कंगुरे कलस धुजाल॥ २९॥ इम इंद्रादिक अणि चढंत, हेमांगल मण जडे लसंत। इत्यादिक सोभा जुत पोल, द्वारपाल

सुन प्रथम अशोक ॥३०॥ सजे विविध सुरकर आभर्ने, रतन दंड ओदसि मन हर्ने । प्रथम चौक चौदिस चित रूप, आगे मान-भूमि सु अनूप ॥ ३१ ॥ प्रथम पीठ जुत सोलै पान, तित त्रिय कोट कोट प्रति आम । चवर पोल खैंचे धुज तोर्ण, मान-स्थंभ मध्य इक सोर्ण ॥ ३२ ॥ चौदिस चार पहल बहु धरै, तलै त्रि मेखलि धुरजी सिरै । बज्र रतनमय इकइक संग, दो दो सहस अभ बहु रंग ॥ ३३ ॥ धुजायुक्त लख मानी जास, मान गलै जू स्वतम नास ॥ अधोभाग चौदिस जिनबिंब, सुरनर नमैं तिनैं तजि डिंम ॥ ३४ ॥ थंभ२ प्रति वापी चार, चारौ दिस सोलै निरधार । साल युक्त रतनके पाल, मणश्रेणिपे लिखे बिसाल ॥ ३५ ॥ हंस मोर बक सारस चक्र, सुक कारंड चवै धुन वक्र । तीर तीर बैठक बहुघनी, क्रीडत सुर नर मन मोहनी ॥३६॥ वायं वायं तट दो दो कुंड, तित स्नान सुर गण मंड । वस्त्राभर्ण विसद सज सोय, जल्ल दर्व वापीमें धोय ॥ ३७ ॥

दोहा—चैत्याले जिनके बहु, विदिस मांहि सोहंत ।
तित हरन मयातै इसे, चैत्य भूमि विकहंत ॥ ३८ ॥

चौपाई—अष्ट विधार्चा कर जिन मूर्त, इन्द्र चले आगे कर सूर्त । पट कोटा सुवर्जमय रची, नर वक्षस्थ तुंग जिन अची ॥३९॥ दूनौ ब्यास कुण्डकाकार, प्रभा पुंजस्थ रम्मागार । फुन खाई जल बानु अथंत, कवल खिलै रु चलै जलजंत ॥४०॥ जिनावर्त कर अंभा मनो, आगे वेल सघन वन मनो । सुमन

सुगंधित अलिरव चवै, फिरी दे जिन बस मनु चवै॥ ४१॥ प्रभु तन तेज पुंज सम हेम, प्रथम कोट तन दुति ससि जेम। हरमुष कूट लाल कर ठाय, नचै मुदत मन जग लछ आय ॥४२॥ मनमथ दुति व्यंतर दरवान, विमित्र सहित सु गदाधर पान। रोकै विनय हीनकू चेत, अग्र दुतर्फ गलीगम हेत॥४३॥ तित नृत साल समग सुविनीत, सो रणथंभ फटकमय भीत। विष नीर तन सिखर बहु रंग, नच किन्नरि लावन्न तरंग॥४४॥

छप्पै—प्रथम भूमकी गली आमुं साम्हं दर दोतट। चौंदिस षोडस इकेक मांहि बत्तीस बत्तीस रट॥ अरुथाडे प्रति सुरी नचै बत्तीस सर्व मिल। तीन सतक चौरासी सोलै सहस मधुर गिल॥ सर्व सुरीसु जिन गुण गावती, फुनि मंदहास मुलकंत। ठप ताल मुर्ज बाजै सकल, मिलि सुर जुत मधुर वजंत॥४५॥

चौपाई—इन्द्र लषी इम सुरी नचंत, अग्र धूप घट जुग सोहंत। दर दर प्रति चव चवघट धूप, इकमत सर्व चवालीस भूप॥ ४६॥ तित दस दिष हर धूप खिपन्त, मनु धूवां मिस अघ मयवंत। पुन्य थकी अरधकूं जाय, फिर आगे चले हर-षाय॥ ४७॥ चार बाग चारों दिस मांहि, पूर्व अशोक सम पनाई। चम्पक चूत नाम मध भूप, इन ही वृक्ष मूल जिनरूप। दिस प्रति सव सोलै लष इन्द्र, करी जज घर हर्ष अमंद। नाना वृक्ष फले फल फूर, मंद पवन जुत अलकन भूर॥४९॥ अलि मकरंद हित मृदु धुन करे, मानो सुर जुत गानोचरे। सब तरु दल पन्ना सम फूल, लाल बरन हीरा सम मूल॥५०॥

कोण त्रिचव बापी केइ मोल, पंच रतन तट जड़े अमोल। सब चुतीस घट घट चहु मांहि, रिषी सुरी तित नष तल षांहि ॥५१॥ लता भुवनमें छुटत फुंवार, जलकन उछल मुक्ता उनहार। कहुं तुंग गिर क्रीड़ागार, सुन्दर तन सुरसुरी अपार ॥ ५२ ॥ युत विश्राम बने सहु धाम, वा प्रेछाग्रह कहुं ललाम। रेणु पुंज कहुं सरन द्याद, कहुं वन लषो इंद्र अहिलादि ॥५३॥ ऊपरवत संख्या सब जान, और बहुत रचना तिह थान। वेदी गिरद वज्र मय जोय, अग्रग छजा भू लष सोय ॥ ५४ ॥ धुजा हेट सुंदर चौंतरे, मध मणवांस त्रिषणु विस्तरे। वंस उर्द्ध थित वस्त्र त्रिकोन, बहु अमोल दस चिह्न सुभोन ॥ ५५ ॥ सिख फुन हंस गरुड फुलमाल, हर गज मगर कमल गोवाल। चक्र सु दस इक इक सत अष्ट, इक इक दिस चौदिस संघष्ट ॥ ५६ ॥ चार सहस तीन सत बीस, सब बहु वरन बखान मुनीस। एक धुजा संग धुज लघु जान, इक सताष्ट सबते परमान ॥५७॥ चार लाख सतरै हजार, आठ स्रतक अस्सी निरधार। सुमन माल युत मोती माल, किंकनिरव मनु नृप जुत ताल ॥ ५८ ॥ मंद पवन गत हल मनु भास, आ जिन दर्स करो अघ नास। फुन लख भवन नासनी सुरी, आगे निरत करत रस भरी ॥ ५९ ॥ आगे रजितमई गढ स्तंग, मानो प्रभु सुजस सरवंग। गिरदा क्रित दे फेरी प्रसस्त, चौ दिस मणि मयद्वारोर्धस्त ॥ ६० ॥ कन घट जल जुत वारज छए, मुक्ति माल मल झल झलकए। तिन द्वार स्थित सुर भवनेस, वेत छ [illegible] वेस ॥ ६१ ॥

द्वारपाल फुल माल सुधार, तिन पतनी नाचै मनुहार। पूरब
वत संख्या तृत साल, फुनि घट धूप मुक्ति गल माल ॥६२॥
तित सुर गणधे धूप विचित, धूंआ उठत मनु करत सु नृत।
अथवा पाप पुंज सुपलाय, धुवा रूप धरि दस दिस जाय
॥ ६३ ॥ आगे कल्पवृक्ष सुदेष, मध्य सिद्धारथ वृक्ष सुपेष।
विव अधोरध सिद्ध चहुं ओर, वस्तु विष जजहर नुन कर जोर
॥ ६४ ॥ फुनि वेदी आगे नव तूप, चौदिसमें छत्तीस अनूप।
अज चौतरा हेट त्रिमेष, तिन चौदिस जिन मूर्त जु देष ॥६५॥
तित वसु विध अघ हर हरषाय, पद्म राग मणि मय सोभाय।
तिन आगे सुर क्रीडा गार, चित्रनचित्रत सक्र निहार ॥ ६६ ॥
आगे स्फटिक कोट चहुं पाय, प्रभु तन सु जस रह्यो यूं छाय।
चौदिस पोल पूर्व वत ठाठ, द्वारपाल पूरव दिश आठ ॥६७॥
विजय विश्रुत कीर्त्त विमल कर, उदय विश्व धुक नाम वीर्यंवर।
वैजयंत सिव ज्येष्ट वरिष्ट, धारण अनंग याम्य अप्रतिष्ट ॥६८॥
दक्षन द्वारपाल सुर येह, सुन पश्चिम दिस देखे जेह। सार
सुधामा अमित जयंत, सुप्रभ वरुण अक्षोभ्य महंत ॥ ६९ ॥
अष्टम वरद सुहर्ष सुरर्च, उत्तर दिश अपराजित अर्च। त्रिय
अतुलार्थक उदित अमोघ, अक्षय उदित कुबेर गुनोघ ॥ ७० ॥
पूर्ण काम अष्टम जु समस्त, रतनासन थित आसे हस्त। मंगल
मुकर दुतर्फ दुवार, तहां सप्त भव भव्य निहार ॥ ७१ ॥
तात त्रिये त्रय भावी एक, वर्तमान भव एम वसेक। दर्सन
कांक्षी दर प्रवि जांहि, द्वारपाल दिखलावै ताहि ॥ ७२ ॥

तिन दर्पण जुत दिपै अतोल, दिसवंत सुर वै जय बोक। आगै लतारु तरु बहु जात, ता वनमें मंदिर बहु भांति ॥ ७३ ॥ वन वेदी जुत नृत्यावास, लोकपाल तिय नृत्य विलास। करत सु नव रस पोखत देख, आगै एक पिष्ट फुन पेख ॥७४॥ मणिमय तापै तरु सिद्धार्थ, मूल किंव सिव जज सर्वार्थ। सिद्ध हेत हर थुत फुन करी, तरु अनेक चौदिस बावरी ॥ ७५ ॥ रतन तूप द्वादस भूवर्न, ता पूरत सुर नर मनहर्न। वेदी जुत वापी चत्र जुदी, तित असनान करै जे सुधी ॥ ७६ ॥ पापरोग जावत सब नास, अरु पूरब वत भव तिह भास। इत्यादिक सोभा लख इंद, आगै चलै सु परमानंद ॥ ७७ ॥

कवित—फुनि तिरलोक विजय जय जय आंगन रंम। धुजायुत अचो तोर्न मुक्ति झालरी युत अति सोहै पुष्पार्चित मण पंकज सोर्न ॥ कनरस लिप्त धरा नम समभै सुमन सूरगण सम सोहंत। बहु सुखके निवास जिह मंदिर पूर्ण सुरा सुरनर मोहंत ॥ ७८ ॥ दान शील तप जप पूजा फल पुन्योदय लहि सुरगुरु मोष। तासै विमुष अघोदय लह दुष नर्क निवास सुनी बस दोष ॥ इम चित्रामन युत बहु मंदिर लपे पुरंदर सुरनर जिते। डरै पापतैं धर्म विषै रुच गहै ततछिन हो सुदि तिते ॥ ७९ ॥ स्फुरित मुक्ति झलरी जिनकै दिप्त जडे मन लसत जु सार। छुद्र घंटका जुत धुज हालत मंद पवनतैं रुण झुणकार ॥ लूवंत रतनमाल इत सोहै दधत रंग समभल झलकंत। धूपमें रुचिरु डरप अबतैं फुनि सोया मंडपकू निरखंत ॥ ८० ॥

दोहा—नाम श्री शिवक्षेम जय, मंगल श्रय जयंत।
उत्तम सरणादित्तपुर, अपराजित भाषंत॥ ८१॥
तीन लोकके जीव सब, यापुरमांहि समाय।
रंचक बाधा हो नहीं, जिन अतिसय परभाय॥ ८२॥
सुमन सुगंधित सुर चवै, मंडफो पर महकाय।
भृग झंकारत ही फिरै, मानौ जिन गुण गाय॥ ८३॥

कवित्त—सो तिरलोक विजागण मध रुन पीठ मनोजय लछमी मूर्त। तापर सहस थंमको मंडफ नाम महोदय सुंदर सूर्त॥ तित जिनवानी थित मनु मूरत सुयाम दिसा श्रुत केवलि अषै। ता मंडफ तट चार अन्न लघु विस्तरर्द्ध इर जुत सुर लषै॥ ८४॥

दोहा—तित पंडित अक्षेपणी, आद कथा कह चार।
तिन तट नाना भवनमें, चौसठ ऋद्धि उचार॥ ८५॥
मुनि भव्र श्रोता हेत ही, फुन नाना विध खेल।
मंडित हाटक तप्तमय, पीठो परमव ठेल॥ ८६॥
जञ्ज दर्व सो इन्द्र भी, सुरगण युत जिन पूज।
दरव चही डागे चले, दर दू तर्फ निध सुज्ञ॥ ८७॥
तिनके रेक्षक देव सब, दान दे मन इछंत।
प्रमद नाभ फुन ग्रह विषै, कल्पांगना नचंत॥ ८८॥

अडिल—विजयागणकी पूट विषै दस तूप हैं, लोकाकाश समान अकार अनूप है। ताष्टश्मम उर्द्ध धुजायुत सुर लषे, निर्मल फटिक समान श्वेत श्रीजिन अषे। ८९॥ तिनमैं

रचना लोक तनी दीसै इसी, जूं प्रतष मुष लषै लेयकर आरसी। मध्य लोक चित्राम तूप मध्यलोकमैं, मंदिर गिर सम मंदर तूप विलोकमैं ॥ ९० ॥ ता चौ दिस जिन बिंबज जै सक्रादजी, कल्पवास फुन तूप लषो अहलादजी। तामै स्वर्ग समस्त तनी रचना महा, फुन ग्रीवक जो तूप ग्रीवक तहां ॥ ९१ ॥ फुनि अनुदिस जो तूप अनुतर जिह लषै, फुन विजयादि चतुष्क तूप संज्ञा अषै। तामैं सो सब प्रघट अब त्यौ पेषियौ, सरवारथ सिद्ध तूप त्रिषै सो देषियौ ॥ ९२ ॥

सोरठा—सिद्धरूप जो तूप, भव्य कूढ फुन तसु कहै। सिद्ध मूर्त सु अनूप, अधोभाग चौदिस जज ॥ ९३ ॥

छप्पै–ताहन लषै अभव्य बहुरि प्रतिबोध तूप तित। दर्सत मिटै अज्ञान सु चिर रु सु ज्ञान लहत जित ॥ लोकाकार रु मध्य लोक सुर गिर रु स्वर्गमय। ग्रीवक अनुदिस चष्ट चतुक विजियादिक सप्तम ॥ सर्वार्थसिद्ध वसु भव्य नव। दसमो प्रबोध वर तूप ॥ जो निकट भव्य सो इन लषै। लह पार निकस भवकूप ॥ ९४ ॥ मानथंभ धुज तूप कोट नग क्रीडा मंदिर। सुरतरु चैत सिद्धार्थ पोलवेदी जिन मंदिर ॥ श्री मंडफ नृत साल त्रिपन जिन तनतै ऊंचे। बारे गुणे प्रमाण पूर्व श्रुतमें इम सूचे ॥ फुनि सिंहासन तक कोटतैं फटिक भीत दुतिवन्त अति ॥ मित षोडस है मनु भावना। दिव चौं मारग तुरि लसत ॥ ९५ ॥

पद्धड़ी–फुनि विदिसमें तीन तीन, इम सभा दुवादस

भक्ति लीन । पहलीमें मुन वृष पद विचित्र, दूजीमें कल्प सुरी पवित्र ॥ ९६ ॥ तीजीमें अजिका वकार, चोथीमें सुर जोतसी नार । पणमें वितरनी श्री समान, भुवनेस तिया षष्टम महान ॥ ९७ ॥ दस विधि भवनाधिप सप्त थान, अष्टम वसु विधि वितर महान । नौमीमें जोतसी जोत रूप, षोडस सुरेस दसमें अनूप ॥ ९८ ॥ नर त्रिय जुत नृप ग्यारमें थान, केई सम्यक जुत केई वृत वान । पशु जात विरोधी वैर छार, कर प्रीता स्थित बारम मंझार ॥ ९९ ॥ नाना विध वस्त्राभर्ण धार, जम्बू सुत मणमय जडे अपार । फूल माल युक्त फुनि भक्त लीन, ऐसे सुर नर नारी प्रवीन ॥ १०० ॥

अडिल–तिन कोठनकी भीत उपर थंमा बने, तिन पर मंडफ छयो अधिक सोभा सने । मध्य सिंहासन लखो त्रिमेखल जग मगी, प्रथम पीठ वैडूर्य रजमणि मय दुति जगी ॥ १०१ ॥

चौपाई—मोर कंठवत षोडस पान, सुन कोषाद प्रगट भय आन । इम ग्राहक सु अघोघ उपाय, अलि सम पकड्‌ गहौं जाय ॥१०२॥ तिन पक्षे रचु दिम सिरधार, धर्मचक्र जुत कोर हजार । रविसम क्रांत धर्णोनत आठ, मंगल द्रव्य धरें जुत ठाठ ॥ १०३ ॥ इत सुर जायन आगै गछ, दुतिय पीठ वसु श्रेणी लक्ष । मेरु शृंगोन्नत दुरि रवि जेम, तापै अष्ट धुजा चिन येम ॥१०४॥ चक्र वृषभ गजहर पक्षराट, माल कमल बस्तर ए आठ । रतन दंडयुत किंकनी सोर, जिन गुन गाम तुन चैह लोरा॥१०५ तापै तृतीय पीठ है और, झलके मानक हीराहोर । रतन

जाल मय पंडी अष्ट, अति निर्मल मनु दर्स गुण इष्ट ॥ १०६ ॥
तापै गंधकुटी सु सुगन्ध, नाना महक मई तह संघ। चव
थंभा युत गुमटी लसै, ऊपर कलस झलक मनु हंसै ॥ १०७ ॥
मुक्त फूलपण रंग मण माल, चौदिश तोरण खैचे विसाल।
मध्य सिंहासन सिंघाकार, पाये चार विदिस निरधार ॥१०८॥
कनमय जड़ौ प्रभामय लसै, मानौ जग लछमीकौ हंसै। तापै
कमल सहस दल एम, प्रभा पुंज रव मंडल जेम ॥ १०९ ॥
तस्योपर चतुरांगल अत्र, अंतरीक्ष सोहै विन मंत्र। जगत पूज्य
श्री चंद्र जिनेंद्र, वचन गम्य ना जिह्वा कविंद्र ॥ ११० ॥ जूं
जग सिखर शिला जग मांहि, अंतरीक्ष सिद्ध स्थित थाइ।
इम लख हर मुद चन्द जिनेश, सेव सुरासुर करै नरेस ॥ १११ ॥
दोहा—कंचन रतन मई सकल, देव वैक्रिया रूप।
समोसर्ण या विध रचौ, अतिसय श्रीजिन भूप ॥ ११२ ॥
रचौ चहै सुर इम कहु, अन्न ठौर सब ठाठ।
रचौ जाहि नांहि कदा, यह भाषौ गुर पाठ ॥ ११३ ॥
सिद्धांत सार श्रुतके विषै, देख विसेस सुजान।
ग्रंथ वधनके भय थकी, थोड़ा कियौ वखान ॥ ११४ ॥

अथाष्ट प्रातिहार्य वर्णन।

सवैया २३—मंडफनै तरु छाय असोक विलोक तही सब सोकहनीसो। क्यों न जिन ढिग नृत्य करै मनु पौन सु प्रेरत मोद मनीसो ॥ गुच्छन पै अलि गुंजत गान सु हालत कोप लता नवनी सो। सो निकलंक मयंक ज्यों भवताप हरौ जग मौल

मनीसो ॥ ११५ ॥ जोकन विष्टर जाके जड़ो मणि रत्न प्रकाश खिलो हिम नीसो। सेवक सामर भृंग जयो रच द्वादश पत्र सभा वरनीसो ॥ पंकज वदन वर्तक विराजित सो कणिकासन लोक घणीसो। सो निकलंक मयंक जयो भवताप हरो जग मोल मनीसो ॥ ११६ ॥ चौसठि चमर दुरै इम जू रजताचल वैधनकमरनीसो। गंग तरंग तथा फेनोपम उज्जल वार फुंकार वनीसो ॥ गच्छत उरवकू इम जावत ढार मयंक पजक्ष घनीसो। सो निकलंक मयंक जयो भवताप हरो जग मोल मनीसो ॥ ११७ ॥ सोहत चन्द्र समान त्रिछत्र सु धारत रूप त्रिधात्र घनीसो। मोतिन झालर लूंब अमोलिक सेवनि श्वत्र नयुक्त ठनीसो॥ चंद्रप्रभु पासो फिरते प्रघटो त्रिषलोक मएक घनीसो। सो निकलंक मयंक जयो भवताप हरो जग मोल मनीसो ॥ ११८ ॥ देह जिनेष तनी प्रघटो किरणांगल मंडल भाव रनीसो। पूषण रस्म समान दसो दिस देखत है जन्मात रनीसो ॥ आरसिमें मुख जेम लखै भव सेवत जान महंत मुनीषो। सो निकलंक मयंक जयो भवताप हरो जग मोल मनीसो ॥ ११९॥ मृत लखो मन मार डरो जग ढूंढत सर्ण फिरो धरनीसो। कोन रखे प्रभु चौर सुहार तजे हतियार ले सर्ण घनीसो ॥ रूप धरो कर शिष्ट अधोमुख यो सुनमें जिनको सु मनीसो। सो निकलंक मयंक जयो भवताप हरो जग मोल मनीसो ॥ १२० ॥ मोह महा जम सूर दियो पट मुर्ग अभो मथ एक धनीसो। दुर्जय शत्रु हनो तुम सो अब ध्यान असी महा शुक्ल अनीसो ॥

द्वादश कोट सबै बह बाजत गीत मनो सुर दुंदमनीसो। सो निकलंक मयंक जयौ भवताप हरौ जग मौल मनीसो ॥१२१॥
चंद्र जिनेन्द्र तनी धुन दिव्य घनोघ समं भवताप हनीसो। देस अनेक तनै जनसोत्र सु खेत इखादिककी धरनीसो॥ तत्र पढे जिम स्वात अनेक सुभाष इसी समझै सु मनीसौ। सो निकलंक मयंक जयौ भवताप हरौ जग मौल मनीसौ ॥१२२॥
दोहा—प्रातहार्य जुत जिन लखे, इंद्रादिक जुत सर्व।
हात जोड प्रणमें तहां, जजै मुदित ले दर्व ॥१२३॥
अमरांगन गन जुत सची, रतन चूर निज पान।
रचौ साथिया मंगली, तत्त्हर पूजा ठान ॥१२४॥
चौपाई—जंबू सुत झारी मनमय, तामें भर तीर्थोद्भव पय दे जिन चरनाग्र त्रिधारं, मम जन्म जरामृत टारं ॥१२५॥ फुन तामें भर घसि चंदन, जज चंद्रप्रभो कर वंदन। भवताप हरो हर बोले, अनवीधे मुक्त फलोले ॥ १२६ ॥ कन थाल भरे दुप दर्पं, दे अख यशि वाल समर्पं। ले सुर तरु पुष्प अपारा, पूजूं हन काम विकारा ॥ १२७ ॥ जजूं पिंड सुधा हम लेहं, हन दोष क्षुधा गुण गेहं। ले मनमय दीप उद्योतं, यौ ज्ञान जजू नित जोतं ॥ १२८ ॥ ले धूप सुगंध दसांगं, खेऊं हन कर्म गनांगं। सुरतरुके फल बहु लीहो, शिव लो पूंजू जिन जीहो ॥ १२९ ॥ पूजूं वसु विधि ले अर्घ, पद दे जिनचंद अनर्घ। फुन मन जयमाल पुरंदर, पद लखि तीर्थ कर सुखकर ॥ १३० ॥

दोहा—तीन ज्ञान धारक विभुप, तिनयुत हर महाराज।
कर त्रिभुव भक्ता स्तुति, जयो चंद्र जिनराज ॥१३१॥

भुजंगप्रयात—जिनाधीस सर्वज्ञदर्मी अनंत, पिता मात भ्रात तुही ज्ञानवंत। भवाब्धं सु तारे दे धर्मोपदेसं, जयो कर्म शत्रु सु पुजं सुवेसं ॥ १३२ ॥ वृषा धर्म कत्थं फलंगुर्महत्वं, परम सुक्ख कर्ता हमै संकरत्वं। त्रिलोकेस संदोह बंदे क्रमाब्जं, महेसं परस्तुन नामात्र साज्जं ॥ १३३ ॥ सु ध्यान त्रिलोकं सुज्ञान सरन्यं, तु विष्नुन प्राज्ञै सुखाकर्न अन्यं। चतुर्थंक धर्म सुतीर्थं प्रबन्धं, सु ब्रह्मा बखानै नही तोम पर्थं ॥ १३४ ॥ सुरी नृत्त तीस्त्रं कहा चित्त डोलै, समीगात काले न मेरु हिलोले। वैरागी सु सक्तीतुमेवात्र न्यान्यं, गुनाश्रंतु सर्वं सुधर्मं निधान्यं ॥ १३५ ॥ निर्दोषौघ लक्ष यथा यात रूपं, इसं आप रागं विजरमस्तु भूपं। न दोषं जगन्नाथ हेतु त्रिलोकं, तुभक्ति स्वतः क्रित सौख्यं विलोकं ॥ १३६ ॥ दुखी निद्य दीर्घ लभेदं महीस्ते, मयंकं जिनेन्द्रं नमस्ते नमस्ते। यथा मृग त्रिषातुरं-पार्थं जलासं, भवदुःखनासं तुमैं श्रीवआसं ॥ १३७ ॥ सुनितं ज्ञु जीवे त्रिसंध्य अराधं, प्रभुस्तोककाले तुसादस्स लाधं। निरासंसु आसं शिवश्री सुपार्थं, तुमासं लभं जिन्नियोग समर्थं ॥ १३८ ॥ निकारन्तु ही बाधवेहं अनाथं, अनन्तौ चतुष्टात्मये विश्वनाथं। अवांछित दातामनो विश्वामित्रं, त्रियालो किसभी कही जो पवित्रं ॥ १३९ ॥

छंद मालनी—इति वदुन प्रमा करत सस्तुत समर्थो, ज्ञानधर

मुन वृंदा ज्ञान प्राप्ते चतुर्थी। इम थुत नुत कीनी स्वरपदां मोक्ष भक्ता। करथित निज कोष्टे सक्रदेवोघ युक्ता ॥ १४० ॥

चौपाई—ताही समय दत्त नृप नाम, आय प्रभुको कियौ प्रनाम। उर वैराग करै थुत सोइ, धन्य धन्य तुम जीत्यौ मोह ॥ १४१ ॥ यह संसार विपनके मांहि, जीव कुरंग भमै भय पांइ। काल अहेडी पाछै लगौ, तुम सरनागत जनतैं भगौ ॥ १४२ ॥ भवदध षार वार दुख भरौ, तुम वड्वानल सम सो हरो। शिवपुर मग अघ तमकर भर्म, लूटै विषय चोर धन धर्म ॥ १४३ ॥ तुम निरविघन पुचावन जोर, सारथ वाहन दूजौ और। यातैं नमू सु वारंवार, हमहूकू प्रभु लीजै लार ॥ १४४ ॥ इम थुत कर फिर वस्त्र उतार, नगन रूप मुन मुद्रा धार। ता प्रभाव कर उपजो ज्ञान, मन परजय अरु रिद्धि महान ॥ १४५ ॥ और अनेक भए मुनराय, तिनमें केइक गणधर थाय। केई श्रावक केई सम्यक रथा, केई अर्जिका केई श्राविका ॥ १४६ ॥

सोरठा—निज निज कोठे मांहि, यथा जोग्य बैठे जु सब। तब सब मन ए चाह, धर्म देसना जिन करै ॥ १४७ ॥

चौपाई—परके मनकी जाननहार, मन परजय ज्ञानी गनधार। तिनमैं दत्त नाम है मुख्य, सो सब मनको जान सहक्ष ॥ १४८ ॥ जिन सनमुष ठाढो कर जोर, सीस न्याय कर प्रश्न निहोर। भो स्वामी त्रिभुवन घर मही, मिथ्या निस अंधियारी छई ॥ १४९ ॥ भूले जीव भ्रमै तामांहि, हित अनहित कछु

नहीं वहिं। तुम अखंड दीपक अविलोप, ताविन तहां उद्योत न होय ॥ १५० ॥ कलुष धूम्र कर्जित विन तेल, कुनयपवन एकांत धुठेल। पोनकुवादी मम्म न कदा, तुम बालार्क उदय सर्वदा ॥ १५१ ॥ तुम लख मिथ्यातम निस भगी, भव्य कवलकर आनंद जगी। मोह केत छादत नहीं रंच, ज्ञान दर्सना-वरनी संच ॥ १५२ ॥ सो घन तिन फुन अंतराय, तावत अस्त कदाच न थाय। ससि रव घरमें हो दुतिमन्द, राहु घन ग्रस के अस्त सम्बन्ध ॥१५३॥ इन कर वर्जित सदा अमंद, अद्वितीय दीपक स्वचन्द। तुम चन्द्रप्रभ वचन सुरम्म, ता विन किम हो वैतम मरम ॥ १५४ ॥ भव्य जीव खेती कुमलाय, तुम धुन वृष्ट विन जिनराय। मिथ्या वाणी वृष्ट चुमास, भव चात्रकको जाय न प्यास ॥ १५५ ॥ तुम धुन काया वानी विष्ट, भव सारंग पाय है पुष्ट। तातैं करुणानिध स्वयमेव, कर उपदेस अनुग्रह देव ॥ १५६ ॥

छन्द — आनन जोग कहा ग्रहन त्याग न क्या करिये, नरक पशु सुर मनुष जोनिमें क्यों अवतरिये। अन्ध बधिर विन घ्राण मूक पंगु हो अवतैं, द्रव्य वंत धनहीन लिंग तीनोंको विधतैं ॥ फुनि किहि विध गुर लघु थित भरै भोगहीन भोगी अमित। फुन सुखी दुखी सठ कोन विधि, पण्डित रोगी विना सुत ॥ १५७ ॥ विकल देह लहा, दुखी नीच कुल ऊंच कौन विध। किम भव थित विस्तरै छेद भव थित किम हो सिध ॥ अल्प विषै किम होय इन्द्र कैसे अहिमिंदर, चक्री हल भद्र

चक्रि समर किम हो तीर्थंकर। इम कर इत्यादिक प्रश्न सब, अवध्यो उत्तर सु जिनेन्द्र, प्रभु तुम वच सम संसै हरन, इम जुत मदलन दिनेंद ॥१५८॥ तब वानी विन अंक विमल गंभीर सु जिनमुख, खिरी मेघकी महा गर्ज सम करन जगत सुख। तालु होठ विन फर्स वक्र सुविकार विवर्जित, सब भाषामय मधुर श्री जिनकी धुन सर्जित। इम यथा मेघ जल पर नवै, नीव ईखादि कर समई। तिम तथा सर्व भाषा मई, श्री जिन-वानी पर नई ॥ १५९ ॥

श्री भगवानोवाच।

काव्य—छहौ दर्व पंचास्ति काय तत सप्त सुपद नव। जगमें जानन जोग येह जूं आय सु भ्रम सब ॥ सर्वोत्तम सिव वास फेर नहीं आवनोन जत। जो सिव कारन भाव तेई है ग्रह न जोग नित ॥ १६० ॥ जगत वास दुख रूप तहां भ्रमतै दुख पै है। जो कुभाव संसार वृद्ध ते सब है यह ॥ नर्कादिक जे दुष्ष पापको फल सब जानों। स्वर्गादिक जे सुष्ष पुन्य फल सो अंधकानों ॥ १६१ ॥

दोहा—यह विध प्रश्न समाजको, यह उत्तर सामान।
अब विशेष इनको लिखूं, यथासक्ति कछु जान ॥ १६२ ॥

सवैया ३१—मूल द्रव्य दोय सु विशेष वंत जीवाजीव इनिको फलाव सब त्रिलोक त्रिकालमें। चिद जीवाजीव कहे

सामान रूप कह्यो सब सत्य जिनमत अनेकांत ख्यालमें ॥ द्रव्य एक नया तम एक एक नय साथ भये बहु मतभेद उपाय जगालमें। ज्यूं जन्मांध जाने नांहि गज रूप सरवांग त्यों एकांती गह एकांग एक पक्ष जालमैं ॥ १६३ ॥

काव्य—स्यादवाद जिन वचन हरन सबता विरोधकौं। सत्यारथ सुख दैन हरन संसै विरोधको ॥ सप्त भंग सु सधै द्रव्य जावत जग मांही। सधै वस्तु निर्विघ्न दोस तब सर्व नसांही ॥ १६४ ॥

अथ सामान्य द्रव्यस्वरूप सप्तभंग सूं साधिए है।

सवैया ३१—अपने चतुष्टैकी अपेक्षा द्रव्य अस्तरूप पाकी अपेक्षा सोई नासत वखानिये। एक ही समै सो अस्त नासत स्वभाव धरै ज्यों हैं त्यों न कह्यो जाय अव्यक्तव्य मानियै ॥ अस्त कहे नास्तामात्र अस्त अव्यक्तव्य सोइ नास्त कहे अस्ता भाव नास्त अव्यक्तव्य है। एक वार अस्त नास्त कह्यो जाय कैसे तातै अस्त नास्त अव्यक्तव्य ऐसे करतव्य है ॥ १६५ ॥

सोरठा—जो कछु वस्तु सु द्रव्य है, है अवगाहन क्षेत्रसौं। तातन थितज मथव्य द्रव्य स्वरूप स्वभाव है ॥ १६६ ॥ यह विधिए एकांत पक्ष सु सात भंग भृगरूप मिथ्यात, स्याद्वाद धुज धरै। जैनमत तब मिथ्या भ्रम पक्ष नसात, स्याद छन्दको अर्थ कथंचित अह विष कुनय हरनको मंत्र। जूं रस करै कुधात कनक तूं, स्याद वाद नय सत्यन मन्त्र ॥ १६७ ॥

अथ सप्तभंगनयू जीव द्रव्य साधिये है तैसे ही सर्वद्रव्य साधि लेना ।

चौपाई–द्रव्य अपेक्षा अस्त सु जीव, देह अपेक्षा नास्त सदीव । जब जिय देह संगता धार, सो नय अस्त नास्त इकवार ॥ १६८ ॥ अस्त अपेक्षा नास्त अभाव, नास्त अपेक्षा अस्त अभाव । कथा कहे न जाय एक दर तेह, अव्यक्तव्य भंग है येह ॥ १६९ ॥ निहचै है फिर कह्यो न जाय, अस्त अव्यक्त अपेक्षा थाय । निहचै नास्त संग परजाय, कहे दोष लागै अधिकाय ॥ १७० ॥ तास अपेक्षा नास्त अव्यक्त, अस्त नास्त इकवर चिदव्यक्त । कहे दोष लागत है घना, अस्त नास्त अव्यक्तिम मना ॥ १७१ ॥ यों ही सप्तभंग सुदर्व, सधत भिन्न भिन्न जे सर्व । या विध स्याद्वाद नय छांह, साधो जीव जैनमत मांहि ॥ १७२ ॥ और भांति जे विकलप करै, तिनके मत दूसन विस्तरै । ता विवाद मेटनको राव, कहुं यथारथ द्रव्य सुभाव ॥ १७३ ॥

सवैया ३१–जोनसे पदारथको जगमें भाखे जु नाम सोई नाम निक्षेपा है । थापना दु भेदजू अन्य द्रव्य नाम लेय अन्य द्रव्यकूं सु थापै सोई है ॥ अतदाकार जान विन खेद जूं फुनिता मूरत कर थापिये सो तदाकार थापना निक्षेप ऐसे सुनि द्रव्य निक्षेपा । अगली सुपरजाय रूप आप परनवै सहज सुभाव ऐसो सोई द्रव्य निक्षेपा ॥ १७४ ॥

सोरठा–वस्तु तनो जु सुभाव, तालष प्रघट सु जानना। सो निक्षेपा भाव, सिद्धै द्रव्य इनतै जुहै ॥ १७५ ॥ बहु विचार पर वानतै, होय द्रव्य परवान। परंपरा लौकिक इक, श्रुत परविछनु मान ॥ १७६ ॥

पद्धड़ी–जो परंपरा भाखै पुमान, सो परंपरा लोकीक जान। जो ग्रंथ मांहि कथनी पवित्र, सो आगमो परवान मित्र ॥ १७७ ॥ जो प्रघट वस्तु सोई प्रतक्ष, फुन सुनो कहुं अर कहुं लक्ष। वा बिना सुनौ जानै सु कोय, निज ज्ञान मान अनुमान सोय ॥ १७८ ॥

दोहा–बहुरि वस्तु नयसै सधै, मूल भेद नय दोय।
उत्तर भेद सु सत कहे, ताइ कथन अवलोय ॥ १७९ ॥

अडिल–द्रव्यार्थक परजायारथक नय मूल दो, नैगम संग्रह जुग विवहार रुजु सूत्र दो। शब्द समभिरूढि अरु एवंभूतजी, उत्तर सप्त ए मूल मिलै न बहुतजी ॥ १८० ॥

चूलका छंद–नयको अंग सु लेयकर वस्तुकू बहु विकल्प लियं भाखै। सो उपनय त्रिय भेद धर सो विवहार विषै विधि राखै ॥ १८१ ॥

चौपाई–प्रथम नाम सद् भूत विवहार, दूजै असदभूत व्योहार। त्रि उपचरित्र सदभूत विवहार, इम उपनय त्रिय भेद निहार ॥ १८२ ॥ द्रव्यार्थिक नयके दस भेद, नाम अर्थ ताके बिन खेद। कहुं देख नय चक्र सिद्धांत, जाके सुनत मिटै बहु भ्रान्त ॥ १८३ ॥

काव्य–जिय कर्मादुपाध सैंपासों सुध सुमहिये । कहैं सिद्ध सम जेम जीव संसारी लहिये ॥ सो विघोपाध मृक्षेपे सुध द्रव्यार्थक कहिये । नय द्रव्यार्थक तनो प्रथम यह भेद सु लहिये ॥ १८४ ॥ गो नवयोत्पत सत्यरूप कर वस्तकु कहना । कह्यो जीव जूं नित्य दुतिय द्रव्यार्थिक गहना ॥ सोय वयोत्पत्त गौण सत्त सुधद्रव्यार्थिक ठन । भेद कलपना भिन्न सुध द्रव्य भेद सुकलपन ॥ १८५ ॥ जू भिन गुन परजायसे तिजिय अभिन सुकहणौ । सो निरपेक्ष सुध द्रव्यार्थिक तीजै गहणौ ॥ कर्मोंपाध सयुक्त जीवकू इम अनमवनो । क्रोधी मानी आदि आतमाको जु कहनो ॥ १८६ ॥ विधोपधसापेक्ष असुध द्रव्यार्थिक तुरियं । उत्पाद वय ध्रुव युक्त द्रव्यको जू अनभवियं ॥ एक समै मैं जीव तिहु कर युक्त जु संचम । सत्ता द्रवय सापेक्ष द्रव्यार्थिक सोई पंचम ॥ १८७ ॥ भेद कलपना युक्त वस्तुकू सत्त सु गहनौ । ज्ञान दर्स चारित्र युक्ति जो जियको कहनो ॥ भेद कलप सापेक्ष सुध द्रव्यार्थिक सो षट । गुण परजाय सुभाव जुक्त जूं द्रव्यनकू रट ॥ १८८ ॥

चौपाई–गुन परजाय लियै जू जीव, सोय अनय द्रव्यार्थक सीव । जो सुखभाव द्रव्यको ग्रहै, स्वै जु चतुष्टय जू जीय लहै ॥ १८९ ॥ सो स्वः द्रव्यार्थक ववचार, जं परद्रव्य सुग्रहै मवार । अब चतुष्टै जूं जिय व्यर्थ, सो परद्रव्य ग्राहक द्रव्यार्थ ॥ १९० ॥ सुध सरूपको जो अनुमाय, ज्ञानसरूपी जूं चिद्राय । परम भाव ग्राहक द्रव्यार्थ, ए दस भेद प्रथम नय सार्थ ॥ १९१ ॥

दोहा–पर्यार्थिक षट विधि, सुनो भेद जुत नाम।
अर्थ सहित बरनन करूं, यथाशक्ति थित ताम॥ १९२॥

काव्य–जो अनाद अरु नित्त वस्तु परजा अनुभविये। जूं पुद्गल परजाय नित्त मेरादिक लहिये॥ सो प्रथम अनाद नित परजायार्थक ठवनो। आद सहित पर नित्य पणे परजा अनुभवनो॥ १९३॥ जेम सिद्ध भगवान आद जुत अन्त न जाको। स्याद नित्य परजायार्थक जग कहियै ताको॥ जो सत्ता विन वयोत्पादयुत वस्तु अनुभवनो। जैसे जीव जु समय समय परजाय पलटनो॥ १९४॥ सो तत्गोण सुभाव नित सद परजायार्थिक। सद सुभावयुत अनित असुध परजा इम भाषिक॥ जूं चिद तीन सुभाव धरै इक समय मोहवरू। सो सत्ता जुत भाव नित अशुभ परजायरु॥ १९५॥ विधो पाधसू भिन्न अनित परजाय सुध है। जूं संसारी जिय प्रजायकी न्याय सुध है॥ विधोपाध विन नित्त सुध परजायार्थिक गन। वीधो पाध कर युक्त अनित असुध प्रजायन।१९६॥जूं संसारी जीव सु उपजन विनसन जोमन। त्रिधो पाध सापेक्ष नित सु असुध प्रजायन॥ यह षट विधि पर्जायार्थिक नय मूल सुजानौ। अब उत्तर नय सप्त त्रिय नैगम नय मानौ॥ १९७॥

छपै–जो अतीतमें हुई ताइ कह वर्तमान सम, असे तीज दिन कहै हार लियौ रिपम आज इम। काल भूत सो नैगम नयको प्रथम जान जूं, भावी जनमें होइ वस्तु है वर्तमान जूं॥ ॥१९८। जूं वाजमान अरिहंतजी, सो जिम कहिये सिद्ध। सो

होय अगाउ कालमें, भावी नैगम इम प्रसिद्ध ॥ १९९ ॥

पद्धड़ी—जो वस्तु करण लागो सु कोय, कछु निपजी निपजी लहै सोय। जूं भात पकावै पको नांह, पकनेकी त्यारी इम कहाइ ॥ २०० ॥ यह भात पक हुयो तयार, सो वर्त्तमान नैगम निहार। इम नैगम त्रिय संग्रह सु अव्व, जूं सेना जात विरोध सव्व ॥ २०१ ॥ यह आद भेद संग्रह सामान, फुन अन्न त्याग स्वै जात जान। जूं सर्व जीव चेतन सु भाव, यह लख विशेष संग्रह प्रभाव ॥२०२॥ इम द्वै संग्रह सुन द्वै विहार, सामान संग्रह विध विहार। जूं जीवाजीव सु कहे दव्व, दुति जो विसेख कर कहे सव्व ॥ २०३ ॥

अडिल्ल-है संसारी भी सु जीव फुन सिद्ध ही, जो वसेख संग्रह विवहार नय विद्धनी। इम संग्रह विवहार दोयरु ज्जु सूत्रजी, तुछ पणे द्रव ग्रह तुछ रुजुसूत्रजी ॥ २०४ ॥

सोरठा—जैसें जो परजाय, समय समय स्थायीक है। बहुर स्थूल कर राय, द्रवको संग्रह कीजियै ॥ २०५ ॥ जूनगाद परजाय, निज निज आयू प्रमाण है, स्थूल रुजु सूत्राय सो इम जुग रुजसूत्र है ॥ २०६ ॥ दोषरहित जो सुध-सब्द कहै सो शब्द नय। मूल तीन अविरुद्ध, उत्तर शब्द जितैं नय ॥२०७॥

दोहा—जे हैं जसीकर थापना, वस्तु छेपिये अन्न।
सो विन्नादिक नामधर, समभिरूढ़ नय मन्न ॥ २०८ ॥

चौपाई—सारथ शब्द नाम जित लेय, करइ सुराई सु इंद्र कहेय। सोई एवंभूत नयंत, सर्व आठ इस भेद कहंत ॥२०९॥

अब उपनयको सुन हो राय, सुध गुण सुध गुणी परजाय।
सुध परजाय सुध उपचार, सो सदभूत सुव विवहार ॥ २१०॥
जो असुधगुणी गुण असुध, असुध प्रजा परजाय असुध। सो
असुध सदभूत विवहार, यह ऐसे दो भेद निहार ॥ २११ ॥

कवित्त–जो सुजातमैं भेद करै जू पुदगल बहु परदेस
बखान। पुदगलकी परमाणु जसे मांहोमांहि सुजाती जान ॥
इक लक्षन सेती यो कहिये सो विव असद भूत विवहार। बहुरि
विजातीपणो असतार्थ मत ज्ञानावर्णादि विचार ॥ २१२ ॥
ह्यां ए पुदगल ज्ञान विजाती असदभूत विवहार। विजात ज्ञेय
विषैं जू ज्ञान महकसो असत्यारथ सुजात विजात ॥ ज्ञेय नाम
आतम अजीव पण तातैं आतम ज्ञेय सुजात। इम उपनय विधी
तीजी जानो असद भूत विवहार दुजात ॥ २१३ ॥

सवैया ३१–जैसे उपचार कर स्व जाति ग्रहण होय पै
असत्यारथ भासै जू पुत्रादि मेरे हैं। मैं हुं पुत्रादिक सो
पुत्रादिक जीव पना स्व जाती है मेरे मान्वै सोई झूठ ठेरे हैं ॥
उपचरित स्व जाती असदभूत व्योहार दूजे उपचार कर
विजाती कू हेरै है। जैसें वस्त्र भरणादिक सो अजीव विजाती
है मेरे मानें सोई झूठ झूठी आसा धरे है ॥ २१४ ॥

दोहा–सो. विजात उप चरित फुन, असद भूत विवहार।
जिय दुजात उपचरित कर, असत्यार्थ विव धार ॥२१५॥
छंदचाल–जू नगर देस जग मेरो, इत दोऊ विजाती हेरो।
सो झूंठा कहै सुमेरा, सु असत्यार्थ विव हेरा ॥ २१६ ॥ जुग

आतुप चरित सु जानो, सदभूत विवहार न मानो। इम तीन तीन है पहले, सब उपनय वसु विध गहले ॥ २०७ ॥

सोरठा–तत राम जीशद, दर्सनाद बहु भेद फुन। नय-नतै जो साध, सिद्ध होय सब दर्व ही ॥ २१८ ॥

अथ जीव निरूपण गाथा।

जीव नाम उपयोगी, करता हरता सुदेह पर मनं। अब सब रूप अरूपी उर्ध गत सुभाव नव भेदं ॥ २१९ ॥

अथ जीव प्रथमभेद वर्णनं।

चौपाई–च्यार भेद व्योहारी प्रान, निहचै एक चेतना जान। जो इनसूं नित जीवत रहै, सोई जीव जैन मत कहै ॥ २२० ॥ आयु अक्ष पण आण रूपाण, बल त्रिय मूल चार ए प्राण। उत्तर दस विध सैनी जिंत, दसों प्राण घर जीवै तीतै ॥ २२१ ॥ मन विन जीव प्रान नव ठाठ, श्रोत्र विना चो इंद्री आठ। द्रगविन धरै ति इंद्रा सात, षट विन प्राण वि इंद्री जात ॥ २२२ ॥

सोरठा–रसना वच विन चार, एकेन्द्री के प्रान ए। तीन लोक तिहुंकार, या विध जीवै जीव सब ॥ २२३ ॥ मुक्त जीवके प्रान, सुख सत्ता चित बोध मय। जीवपनो इम जान, दुतिय भेद उपयोग सुन ॥ २२४ ॥

अड़िल–दोय भेद उपयोग सुदरसन तुरि विधा, चक्षु अचक्षुर अवध रु केवल जिय लधा। दुतिय ज्ञान वसु भेद कुमत

श्रुत अव ऋजु, फुन त्रिय सुम मन परजय केवल लक्षजू ॥ २२५ ॥

दोहा—मत श्रुत एजु परोक्ष है, सुनौ भेद परवान।
जो सर्वारथ सिद्धमें, बाहर बंस पुरान ॥ २२६ ॥

अडिल—सुनो पंच विध नाम, प्रथम मत बोधजी। मति स्मृति संज्ञा चिंता भिन बोधजी. इंद्री मन संजोग बिना नही होतजी। सो त्रिय सत छतीस भेद उद्योतजी ॥ २२७ ॥

छंद चुळका—चख रु वस्त संयोग जुग, जमी पदारथ दरसन पावै। फिर ताको कछु ग्रह नही, सोय अवग्रह नाम कहावै ॥ २२८ ॥

दोहा—जेम दूरतै नेत्र कर, ग्रहिए यह कछु स्वेत।
इम लख वस्त स्वरूप, वाह सोय अवग्रह हेत ॥२२९॥

चौपाई—तिस वसेख सो जानौ चहै, यह सो रचे तप कि अहै। वग पंकत कि धुजा पंकती, ऐसो ग्रहन सुईहा मती ॥ २३० ॥ जानै वस्तु वसेख यथार्थ, यह बग पंकत ही सत्यार्थ पंख लह उड ऊंचै जाय, नीचै आवै धुज किह माय ॥ २३१ ॥ ऐसे ठीक ग्रहन आवाह, फुन कालांतर भूलै नांह। यह वग पंकत लखी प्रमात, इम धारणा मिली चव रूपात ॥ २३२ ॥ ए च्यारौ बारातै गुनों, तीन बाराको भेद जु सुनौ। बहु कहिए बहु वस्त सु जान, अबहु थोडेको परमान ॥ २३३ ॥ बहुविध कहिये द्रव्य अनेक, अबहु विध कहिये द्रव एक। क्षिप्रसु सीघ्र अक्षि अविलंब, ये षट नाम

अर्थ अवग्रह ॥ २३४ ॥ निश्रत निकसो पुद्गल नाम, अनि-श्रत अनि निकसो ग्राम। उक्त उक्त कहना इम जान, अवाय अनुक्त प्रमान ॥ २३५ ॥ ध्रुवसु यथारथ ग्रहन निरंत्र, अध्रुव अमद् ग्रहन इम मित्र। बहोत वस्तुका किंचित ज्ञान, बहुत अवग्रह ताको मान ॥ २३६ ॥ बहु सन्देह रूप जानना, सो बहु ईहा विध मानना। जो बहुको निश्चै जानियै, बहुत अवाइ सोइ मानियै ॥ २३७ ॥ कालांतर बहु भूलै नाह, सोय धारना बहोत कहाहि इम बारातै गुनकर लियै, अवग्रहादि अठतालिस भये ॥ २३८ ॥ बहु स्पर्शतैं जानै तुक्ष, सु बहु स्पर्श अवग्रह दक्ष। बहु स्पर्शतै लख संदेह, सो बहु स्पर्श ईहा गेह ॥२३९॥ बहु स्पर्शतैं जान यथार्थ, सो बहु स्पर्श अवाइ सु सार्थ। बहु स्पर्शते भूल न कहा, सो बहु स्पर्शन धारन यहा ॥ २४० ॥ इम पंच इन्द्रीय मनसु गनै, अठतालीस उत्तर जे मनै। सर्ब अठासी दोसै भए, बहुरि अवग्रह दो विध ठये ॥ २४१ ॥

दोहा- अचट अवग्रह होय जित, है कुछ द्रव्य सु एह।

ऐसा जहं कुछ ज्ञान है, अर्थावग्रह एह ॥२४२॥

होय अवग्रह अप्रगट, है कछु वस्तु जु एह।

ऐसो ज्ञान जहां नहीं, विजन विग्रह तेह ॥२४३॥

सवैया ३१-जैसे कोरे मृतकाके भाजनमैं जल बूंद एक दोय तीन डारै कछु नांह दर्सतै। फुर वापै बार बार पाणी पड़ गिला होय तैसै देह जिभ्या नासकान त्रिष फर्सतैं ॥ २४४ ॥

दोहा-मन इम केम परस विना, होत दूरतै ज्ञान।

यातै मन इनकै कह्यो, अर्थावग्रह ज्ञान ॥ २४५ ॥

चूलिकाछंद—तन रसना घ्राण, श्रवण सपरस बिना न ज्ञान इनोंके।
बिंजन विग्रह प्रथम ही, फिर अर्थावग्रह होय तिनके॥२४६॥

चौपाई—फुन फर्शादिक इंद्री चार, बहु आदिकतें गुण अठतार। पूर्व अठासी दोसै जोय, मिले तीनसै छत्तीस होय॥ २४७॥ यह मत ज्ञान तनो विस्तार, आगै कहैगे श्रुत निरधार। अवधादिक ऊपर लख लीव, इम उपयोग धरत है जीव॥ २४८॥

अथ कर्त्ता वर्णनं।

कल्पित असद् भूत व्योहार, तिस नय घटपटादि करतार। अनुपचरित अयथारथ रूप, ता नय कर्म करै चिद्रूप॥ २४९॥ जब असुध नेहश्च नय धरै, तब जिय राग दोषकूं करै। सुध निश्चै नय का यह जीव, सुध भाव करतार सदीव॥ २५०॥ जबमो प्रगटै सुध सुभाव, तब चेतन हो शिवको राव। जो सब नयतै साधै जीव, तो ईम कथन न आवै सीव॥ २५१॥

अथ भोक्ता वर्णनं।

प्रानी सुख दुख या जगमांहि, भुगतै निज तन विध फल लाइ। सो व्योहार कह्यो भगवान, निहचै सुख भुगतै शिव थान॥ २५२॥

अथ देह प्रमाण वर्णनं।

दोहा—देह मात्र व्योहार नय, कह्यो चंद जिनराय।
नेहचै नयकी दृष्टिसूं, लोकप्रदेसी थाय॥ २५३॥

दीरघ तन जब जिय धरै, तब विस्तार लहंत ।
सूछम देह लहै सु जब, तब संकोच गहंत ॥ २५४ ॥
जैसे दीप प्रकास अति, भाजन मित मरजात ।
समुद्घात बिन फुन सुनो, समुदघात अहलाद ॥ २५५ ॥

अथ समुद्घात वर्णनं ।

तैजस कारमानस जुत, बाहर जीव प्रदेस ।
निकसैं तन छोंडि नहीं, समुद्घात इम भेष ॥ २५६ ॥
चौपाई—सात भेद सु प्रथम वेदना, दुतिय कषाय त्रियकुर बना । मारिनांत तुरी तेजस पंच, हारक षट केवलि ससंच ॥ २५७ ॥

अथ वेदना समुद्घात वर्णनं ।

कवित्त—काहुके अत्यन्त आमय हो ताकी भेषज नांह नजीक । सो जीवनकी तजै आस निज होय आर बल अधिकसु टीक ॥ जहां होय भेषज तसु आमय सांत हेत तसु तास प्रदेस । निकस जीवके जाय रूपमैं सोय वेदना समुद सुभेस ॥ २५८ ॥

अथ कषाय वर्णनं ।

कोध अधिक सु निर्बल दीसत ताके होय कषाय प्रचंड । ता प्रदेस जब बाहर निकसै तब ही करै सत्रु सतखंड । अधिक बली जो होय सु तोभी हारै तापै लहै सुदंड ॥ दूजो समुद्घात है या विध नाम कषाय असुभ विध मंड ॥ २५९ ॥

अथ वैक्रियक नाम समुद्घात वर्णनं ।

दोय आद अर असंख्यात तक देह बनावै नाना रूप । जुदे मूल तनसैं जु मिश्रसो मूल शरीरमांहि चिद्रूप ॥ इम सुर

हारक करै वैक्रिया ऐसी शक्ति आतमा मांह। यही कुर्वना तीजी जानो भेद बखानो औगण नाह ॥ २६० ॥

अथ मारणांत समुद्घात वर्णनं।

जीव रहै याही तनमांहि मरती बार हमके अंस। निकस बाह्य परसै अगली गत बांधो जियनै जैसो बंस ॥ सो मरणांत चतुर्थी जानो पुन तेज पंचम विध होय। असुभ तथा शुभ होके मुनकै प्रथम असुभ विध सुनियै जोय ॥ २६१ ॥

अथ तेजससमुद्घात दोय रूपमैं प्रथमभेदवर्णनं।

मुनकै कछु कारन लह उपजै क्रोध न थाम्यो जाय लगार। यह औसर है तेजस तनको वाम कन्धसे निकसि विथार ॥ बारै जोजन लम्ब व्यास नव ज्वालमई जिम अरुन सिंदूर। वावत छिनमैं भस्म करै सब फिर मुन भस्म करै अघ पूर। २६२ ॥

अथ तेजससमुद्घात द्वितीयो वर्णनं।

दुरभिक्षादि रोग कर पीडित जगत जीव लख करुणाधार। तब मुन दक्षन करतै निकसैं सुभ आकृत पूरब वत सार ॥ रोग शोक भय दोष निवारै दुर्भिक्षादिक दहे सब कोय। फिर निज थान प्रवेस करत है पंचम समुद्घात है सोय ॥ २६३ ॥

अथ आहारक समुद्घात वर्णनं।

पदको अर्थ विचारत मुन जब मन संसै उपजै तेहवार। तब तहां चिंता करत तपोधन कैसे यह संसै निरवार ॥ भरत-क्षेत्र आदिक भू मांही अब यहां निकट केवली नांहि। तातै

करिये को उपाव अब बिन भगवान भरम किम जाय ॥२६४॥ तब ता मुन मस्तकसे निकसै आहारक पुतला है सोय। इक कर परमित स्फटिक वरन दुति तहां जाय जहां केवली होय ॥ करै विहार केवलि विध वसू पूतला सो मित थित कर रहै। ता मस्तकसे और पूतला निकसि मिश्र अहारक वहै ॥२६५। तहां जाय जहां जाय केवली दरसन करत मिटै सन्देह। आ पूतला पुतले मै मावे सो पुतला मावै मुन देह ॥ षष्टम समुदघात है या विध मुनकै होय छठे गुणथान। सप्तम होय केवली के फु। समुदघात सो सुनौ बखान ॥ २६६ ॥

अथ केवली समुद्घात वर्णनं।

वाह्य प्रदेस कटै संयोगी जिनकै अलख रूप समयाठ। पहले समय सु होय दंडवत राजू मित चौरस षट आठ॥ रंग द्वितीयमें फैले सो इम जू आगल सु कपाट कहाय। त्रितिये फल भरै कौने सब लोय प्रतर फुन लोक भराय॥२६७॥ पंचमलोक भरत संकोचै षष्टम प्रतर संकोचै सोय। सप्तम समय संकोचै आगल अष्टम दंड संकोचै जोय॥ वेदनि नाम गोत्र बहु बाकी आयु तुछ सो करै महान। असंख्यात गुनी होय निरजर प्रथम समयादिक आठो थान॥ २६८॥ नौमी समय मुक्तिकू जावै करै केवली या विध जान। मारनांत आहारक दोनो एक दिसा गत तिनकौ मान॥ बाकी पांच रहे सो सब ही दसौ दिसा गत कहे जिनेन्द्र। सो विध गोमट-सार विषै लख समुद्घात कहि नेम मुनेन्द्र॥ २६९॥

अथ संसारी जीव वर्णनं।

चौपाई—दुविध रास जगवासी जन्तु, थावर जंगम रूप कहंत। उपर थिर माषै विध पांच, चार जात जंगम सुन सांच ॥ २७० ॥ चलत फिरत दीखै सु थोक, संख सीप कोडी कृम जोक। दुचख इत्यादि तियन्द्री सुनों, चींटी डांस कुंथ घुन मनों ॥ २७१ ॥ माखी माछर भृंगी भृंग, चख इत्यादि चव सुनो पंचंग। सुरनर नारकि पशू किते्क, ए सब त्रस थावर विघटेक ॥ २७२ ॥ तिन जीवनकी संख्या सुनौ, वीर पुरान देखकर मनौ। असंख्यात पच इन्द्री पसू, सब गुने सु असैनी तिसू ॥ २७३ ॥ तैसै ही विकलत्रिय जान, फुनि त्यौं थावर चतुक प्रमान। वनस्पती प्रतेक है जिते, सब देवन सम संख्या तितै ॥ २७४ ॥

दोहा—तातैं नंत गुनै इतर, साधारन त्यौं नित्य।
जीव माघवी नर्कमें, सर्व संख पर मित ॥२७५॥

सोरठा—आगै छहो सुथानमें, संख संख गुने जान।
सनमूर्छन है संख मित, मानुष गति परवान ॥ २७६ ॥

काव्य—सात रु नव जुग दोय आठ इक षट जुगम पण। ऐक चार जुग षट चार त्रिय तीन सप्त पण ॥ नव त्रिय पण तुरि तीन नव रु पण नभ। त्रितुरित्रि षट इम गर्भज उनतीस अंक नर इकतिय जुगवद ॥ २७७ ॥

सोरठा—सब सुर चतुर न काय, इकसो ठावन अंक मित। कोडाकोड कहाय, द्वादस सार्द्ध पल अर्द्ध कय ॥ २७८ ॥

चौपाई—इम संसारी सब विध जोग, जगमें भूमत सदा दुख भोग। जो कोऊ जीव करै विध अंत, सो सिव थिर लहै सुख्ख अनंत ॥ २७९ ॥

अथ सिद्ध जीव वर्णनं ।

अडिल—अष्ट गुणातम रूप कर्म मल मुक्त है, थित उतपत्ति विनास धर्म संयुक्त है। चर्म देहसै कछुक हीन परदेस है, लोक अग्र पुर बसै परम परमेस है ॥ २८० ॥

अथ सिद्धौ विषै उत्पाद व्यय ध्रुव वर्णनं ।

सवैया ३१—अथिर अरथ परजाय हानि वृध रूप तिस नय सिद्धनमें वयोत्पाद ध्रुवधै । त्रिविध प्रणित धरै ज्ञेय ज्ञान तदाकार योंभी सिवपद मांहि वयोत्पाद ध्रुवधै ॥ तथा मो प्राणि तनसों भद्र सिध परजाय सुभाय अचल सदा योंभी तीन हु सधै । सिव नंतानंत सब ताके नंतानंत भाग अभव्यकी राशि एतो जगमांहि ध्रु लधै ॥ २८१ ॥

अथ अमूर्तीक वर्णनं ।

दोहा—पंच वरन रस पंच जुग, गंध फर्स वसु वीस ।
इनमें एक न जीवके, इम अमूर्त जगईस ॥ २८२ ॥
जगमें बंध संजोग सुं, छुटो न विध वसराच ।
असद्भूत व्योहार पक्ष, मूरतवंत कदाच ॥ २८३ ॥

अथ उर्धगमन वर्णनं ।

चौपाई—प्रकृति स्थित अनुभाग प्रदेस, इसी बंध विन

आतमदेस। करणत उर्ध सरल इक समय, लोक अंत थांहि जिय निवमय ॥ २८४ ॥ जु जल तुंब लेप बिन उर्ध, एरंडबीज खिल डोडो मूर्द्ध। तथा अग्नि सिखस सहज सुभाव, बंध रहित त्यौं जीव लखाव ॥ २८५ ॥ जबलौ चहुं विध बंधमें बंधो, सरल वक्र गत तबलौ सधो। विदिशामें नहीं जाय लगार, जीवत तई मनव अधिकार ॥ २८६ ॥

अथ अजीव तत्व वर्णनं ।

पुदूगल धर्म अधर्म अकास, जम सु अजीव तत्तपण भास। दो विध पुदूगल अनुस्कंध, ए रूपो चव रूप न गंध ॥२८७॥ छेद भेद विन अनु अविभाग, जलाग्नादसै सु पद्न त्याग। आद अंत विन सब्द न जाम, कारण भूत शब्द पपमास ॥२८८॥

छपै-भूजल पावक वाय सबनकूं हेत रूप वर। बहु विध कारन पाय पलट वरनाद तुरत धर ॥ वरन पंचमें पंच माह इक इक ही हो है। दोय गन्धमें एक फर्स वसुमें जुग जो है ॥ इक परमाणुमें पंच गुन। सात बंधमें जानिये ॥ सब वर्नादिक जे बीस हैं। ते गुन जात बखानिये ॥ २८९ ॥

चौपई-खण्ड किये न मिलै अति थूल, खण्ड किये मिल है सो थूल। देखत थूल ग्रह्यो नहीं जाय, इस विन विसय चवाक्ष सुभाय ॥ २९० ॥ समन पणाक्ष अग्र विष पिंड, इम पण षष्टम अणु अखण्ड। इम षट विध पुद्गल सुख मान, इम निरमास लोक विच ओव ॥ २९१ ॥ अब बशेष इन षटको भेद, धर्मादिक चारो विन खेद। उपर देख सु मान उचार, सो

[illegible] होय जब चार ॥ २९२ ॥ इक त्रिय पण अजीव घट दर्व, जम बिन काय पंचा[illegible] सर्व । जीव वृषा वृष देस त्रिजाव, असंख्यात सो लोक प्रमान ॥ २९३ ॥ नभ अनंत परदेस धरंत, पुद्गल संख असंख अनंत । कालाणु इक धरे प्रदेस, यातैं ताकै काय न लेस ॥ २९४ ॥

कवित्त—सिख पूछे बिन काय काल क्यौं । क्यौं पुद्गल परमाणु सकाय ॥ तस्योत्तर असंख्य कालाणु भिन्न २ जग मध बसाय । आपसमें न मिलैं सु कदाचित यूं तन वतन काल कहाय ॥ रूखे चिकने मिलै प्रदेस हो । पंचरूप पुद्गल सु सकाय ॥ २९५ ॥

अथ आकाश रूप तथा शक्ति वर्णनं ।

जितने मान एक अविभागी परमाणु रोकै आकास । ताको नाम प्रदेश कह्या है देय सर्व दर्शनको बास ॥ तहां एक कालाणु निवसै धर्म अधर्म प्रदेश निवास । रहै प्रदेस अनंत जीवके पुद्गल पंद लहै अवकास ॥ २९६ ॥ ह्यां प्रश्नोत्तर धर्म अधर्म रु जम चिद चार अरूपी आह । सो सब फुनरूपो पुद्गल बहु क्यों मावै नभ दे सके मांहि ॥ जू इक घरमें जोय दीप बहु सहस्र प्रकासन बाधा रंच । त्यौं इक नभ प्रदेसमें निवसैं निराबाध पुद्गल बहु संच ॥ २९७ ॥

अथ आस्रव वर्णनं ।

चौपाई—[illegible] आस्रव सो जान, द्वै विध भावत दर्वित मान । मिथ्या अव्रत जोग कषाय, जुत [illegible] भाव

चिद राव ॥ २९८ ॥ सो भावाश्रवके अनुसार, ढिग वरती पुद्गल तिह वार। आवै कर्म भावके योग, सो दर्वित आश्रव अमनोग ॥ २९९ ॥

अथ बंधतत्व वर्णनं।

पद्धड़ी—रागादि भावसैं बंधै जीव, सो भाव बंध जानो सदीव। छाये चिद्रूपै बहु विध पुग्गल, तिनसूं नये बंधै सु दर्व जान ॥ ३०० ॥

अथ संवरतत्त्व वर्णनं।

आश्रव सु विरोध न हेत भाव, सो ज्ञान भाव संवर सु भाव। जो दर्वित आश्रव रोध रूप, सो कह्यौ दरब संवर सरूप ॥ ३०१ ॥ शुभ वर्तीके वृत्तादि चर्न, पापाश्रव कारनको जु हर्न। शुधवर्तीके आचर्न एह, शुभ अशुभ युगमको हरन गेह ॥ ३०२ ॥

अथ निर्जरातत्त्व वर्णनं।

दोहा—तप बल विध थित लह तथा, जिन भावों रस देत।
खिरै भावसो निर्जरा, संवरादि शिव हेत ॥ ३०३ ॥
बंधै कर्म छुटै सु जब, दर्व निर्जरा होय।
यो लख जो सरधा करै, सम्यकुदृष्टी सोय ॥ ३०४ ॥

अथ मोक्षतत्त्व वर्णनं।

जो अभेद रतनत्रयै, भाव भावसो मोष।
जीव कर्मसूं रहत जब, दर्व मोष निर्दोष ॥ ३०५ ॥

चौपाई—ए विध सप्त तत्त्व वर्नये, पुन्य पाप मिल नव पद भए। दर्व भाव विध दो दो भेद, अरु ताको फल सुन विन खेद ॥ ३०६ ॥

पद्धड़ी—पूजादि विविध शुभ रूप भाव, सो भाव पुन्य विध जान राव। तिस रूप क्रिया जब करै कोय, सोई दर्वत विध पुन्य होय ॥ ३०७ ॥

चौपाई—जो संसार विषै सुख सार, नर सुरगत सुख सहज विचार। सो फल पुन्य कलपतरु सार, यातैं पुन्य करौ निरधार ॥ ३०८ ॥

पद्धड़ी—हिंस्यादि विविध अघरूप भाव, सो भाव पाप विधको प्रभाव। तिस रूप क्रिया जब करै जीव, सो दर्वत विध अघ तज सदीव ॥ ३०९ ॥

चौपाई—जो संसार विषै दुख जात, पशु नर्क गतमें बहु भांति। सो फल अघ बबूल तरु सूल। यातैं पाप करौ मत भूल ॥ ३१० ॥ पुन्य पाप आश्रव तत मांहि, यातैं तत्व सात ही कहांहि। सुर अरिहंत सुगुरु निरग्रंथ, दया धरम धर चलौ सुपंथ ॥ ३११ ॥ यह सम्यक व्यौहार सु जान, निहचै आप आपमें मान। पर पर जान सु त्याग करेह, सो सम्यकको भेद सुनेह ॥ ३१२ ॥

उक्तं च ।

दोहा—समकित उतपत चेहन गुन, भूसन दोस विनाश।
अतिचार जुत अष्ट विध, वरनूं विवरन तास ॥३१३॥

अथ सम्यक नाम यथा।

चौपाई–स्व प्रतीत अवस्था जास, दिन दिन रीत गहै सम तास। छिन छिन करै सातसै जुध, समकित नाम तुरिय अविरुध ॥ ३१४ ॥

उतपत यथा।

काललब्ध है बहु गतमांहि, सहज नियोग बहु गुरसहाइ। भव सैनीकै हों विध चार, लइ यह लब्धि मिथ्यात मंझार ॥३१५॥ चार लब्ध लहि बहुवर आप, कर्णलब्धि विन होन कदाप। सो है तीन प्रकार सु जान, अधो अपूरव अनिव्रित मान ॥३१६॥

अथ अधोकर्ण यथा।

कवित्त–समकित सनमुख होय जीव जब ता फिर भाव होय मिथ्यात। काक नेनवत जीव एक है दृग गोलकवत भाव दुभांत ॥ वाजैसैं जन आगै जावे पीछेको डर फिर फिर झांक। वा पिछलो अभ्यास याद रहै त्यौं ही अधो करणकूं ताक ॥३१७॥

अथ अपूर्वकरण यथा।

काल लब्ध लइ भाव अपूरव जन्मदलिद्रि जूं चक्री होय। तथारकं चिंतामण जैसे त्योंह अपूरव कर्ण सु जोय ॥ एकोदेस होय ऐठे यह संपूरन हो अष्टम थान। समय समय प्रति भाव धरत इम अग्नि संजोग यथा व्रण जान ॥ ३१८ ॥

अथ अनिविरतकरण यथा।

दरसन मोह करै उपसम जब तब अनि विरतकरन गह

सु जुहै । जैसे वैरी कोऊ बांधे मनमें अधिक प्रमोद गहै जु ॥
अथवा मोह रिपु कूंछय कर होय निश्चित बीच नृप ज्ञान ।
एकोदेस जु हो मिथ्यातमें निहचै हो नोमे गुन ठान ॥३१९॥
दोहा—अन्त महूरतमें श्रय, कर्न मांहि सुध भाव।
होय समय प्रति कथन यह, गोमटसार लखाव ॥३२०॥

चौपई—जो सम्यक् सम मुख अनुसरै, सो ए तीन प्रथम गुन करै। पुन रु अष्टम ठाणे गहै, सो दोऊ श्रेणी मग लहै ॥ ३२१ ॥ स्वयं परसर दह निसन्देह, विन छल सहज त्रिलछन एह । वात्सल दया सजन निज निंद, सम वैराग भक्ति वृष वृन्द ॥ ३२२ ॥ एवसु गुन सुन भूसन उक्त, चित प्रभावना भाव सयुक्त । हेय उपादे वांण सदष्ट, धीरज हर्ष प्रवीन सु षष्ट ॥ ३२३ ॥ दोष पचीस मल मद वसु अष्ट, त्रिमूढत अनायतन षष्ट। ज्ञान गर्व मत तुछ वच दुष्ट, रुद्र ध्यान आलस पण नष्ट ॥ ३२४ ॥ लोक हांस रुच भोग अपार, अग्र सोच निज आयु विचार । कुश्रुत भगत मिथ्याती सेव, तज अतिचार षष्ट विध एव ॥ ३२५ ॥ दर्स मोहनी चव नंतान, चर्ण मोहनी तीन मिथ्यात। प्रथम क्रोध मान छल लोभ, मिथ्या समय प्रकृत त्रिक छोभ ॥ ३२६ ॥ अनुक्रम कर इम सातौ हनी, सो सम्यक गुननो विध भनी। वेदक चार क्षयोपसम तीन, उपसम छायक इक इक चीन ॥ ३२७ ॥

पद्धड़ी—खिप चारो सम जुग एक वेद, सो प्रथम क्षयो-

पसम वेद भेद। छिय पांचों पसम इक इक सवेद, सो दुतीय क्षयोपसम वेद भेद ॥ ३२८ ॥

दोहा-खै षट एक उदै त्रियै, छायक वेदक सोय।
षट उपसम इक उदय तुरि, उपसम वेदक होय ॥३२९॥
चार खिपै त्रियै उपसमै, पण खय उपसम दोय।
षट खय उपसम एक ही, खय उपसम त्रिक होय ॥३३०॥
सातों ही उपसम करै, फुन सब छय कर तार।
उपसम छायक दोय इम, नो विध सम्यक धार ॥३३१॥

छपै-नाम चार विध उतपत धार सु तीन करण कर। त्रिय लक्षन गुन आठ षट भूषन शृङ्गार भर ॥ तजो दोष पच्चीस षष्ट अतिचार निवारो। होय नाम विध पंच तासकी पक्ष विहारो॥ तब नो प्रकार होवै सम्यक सकल विहतर भेद गिन ॥ यह निकट भव्यके होय झट, श्री चंद्रप्रभ एम भन ॥ ३३२ ॥

चौपाई-अब सुन प्रश्न मालको उत्र, सुभ मात करकै सर्वत्र। जा विध भाषो चंद्र जिनेन्द्र, सो उचरो गुणभद्र मुनेंद्र ॥ ३३३ ॥ जानन जोग सु जीवाजीव, आश्रव बंध सु तजो सदीव। संवर निरजर मोक्ष सु तीन, एही ग्रहन जोग परवीन ॥ ३३४ ॥

कवित्त-अनन्तानके उदय अदग रस युगी कृष्ण लेश्याके भाव। पंच पापमें हो प्रवृत्त अति विषयन लोलप वेर अथाव ॥ देव धरम गुरुमै सु भेद कर कुमत चलावै अति हरषाव। रौद्र ध्यान जुत मरन करै जो सोई जाय नरकमें राव ॥ ३३५ ॥

चाह भोग उपभोग वस्तु पर निज तन सुदृढ़ तनी कर आरत। अथवा वाद अपाद विचार न खान पानमें विवेक न धारत ॥ जुत परमाद दया विन वर्तन मायाचार बहुत विस्तारत। सो या भवमें पाय पशूतन यो भव ऐसै सु गुरु उचारत ॥३३६॥ सम्यक् धार भजै जिन तापस वंदन अस्तुत हर्ष करै हैं। वा तपसी लग है बहु संयम दीन दुखीपै दया धरै हैं ॥ चार प्रकार भव वैयाव्रत्त सुश्रुत भाप सुनै सु धरै है। सरल सुभाव अज्ञान तपा जुत सोमर सुर्ग विषै उधरै है ॥ ३३७ ॥ अल्पारंभ परिग्रह धारै सरल चित्त फुन रहै उदार। षट्कायाकी दया सु पालै दीन दुखी पर्षै अपरार ॥ जिन पूजै रु सुपात्र दान दे जग भयभीत रहै। सु विवेक विषय कषाय मंद सो मरकै नरभव पद पावै सु वसेक ॥ ३३८ ॥

काव्य–अनभवमें अनजीवनके दृग फोड़त दुख दय दुखित नैन वा अन्ध मुदित लख अन अनमोदय। हांसी कर बहकाय सु छल बलकर धनाद हर, इत्यादय अघ होय अन्ध अथवा त्रयाक्ष धर ॥ ३३९ ॥

छप्पै–विकथा सुन हरषन्त सत्तकूं असत कहै तक असत असत ही जान सत्त विसवाद उदय बक। सुन दुरजन दुरवचन कल्मको सरवस हरयो ॥ बधर जान दुर वचन भनै फुन हांस जु करवो वा न्याय वचन सुन असुनकर। वांछी प्रत उत्तर न दे। मानाद उदय जो एम कर, बधर हुहो चतुराक्ष दे ॥३४०॥

चौपई–परकी घ्रान वढ़ावै काट, लखन वटो मुद करै

सु माट। तसु पापोदित हो जिन भ्राम, ... आन॥ ३४१॥

छप्पै—पर मुख मूंद ...... मारे दुरवचन ...... क्रुध। अमत गिलंते कर बुरो न वर्जं मद वच सुन॥ रसना लोलप अमख मक्ष वा परके काठै मूख देख बहकाय हांस कर मारे लाठै॥ अरु अपक्षित्र दुर वचनमें गार देय समुझै नसो। अति मुद निज उदय समू कहो। फुन थावर हो मूष छहनसो॥३४२॥

काव्य—परभवमें अनजीवनके पग छेद करे हो। हरै वित्त वा पंगु देखि दुरवच उचरे हो॥ अन पग छेद देख मुदित कर हास मकायो। सो कर्मोदय पंगु होय वा थावर थायो॥३४३॥

चौपाई—निरधनकू वित्त दे मुद गहै, निरवित्तकै धन हेना चहै। निरधन धनी होय सुन खुसी, यौं धनवन्त हो अप्पू तुसी॥ ३४४॥

काव्य—परधन हरवा लूट ठगे छीनै छल बल कर। लख धनवन्त अभाव करै मुद निरधन लख कर॥ नाना निमित्त रु भाव चहै अन निरधन होना। सो सो निमित्त लहे वित छय हो रंकन मौना॥३४५॥

कवित्त—महला संग मला जानै फुन तिय सम चेष्टा कर मुद ठान। रह कामनिमें मोहित वस कर अगत गावका रूप सु जान॥ चाह काम जल सींचैं नित प्रत माया वेल प्रफुल्ल महान। इस्त्रोदय होवै परभवमें पराधीन तिय वेद प्रमान॥३४६॥

गीता छंद—हो काम चाह सु मंद ...... भाव सु मद

[illegible] वेद विसन कषाय धारै [illegible] तप अज गुर [illegible] ॥
जो त्रिय नपुंसक वेद [illegible] मन ना हो कदा । सो लहै
ताकै वेद पुरुष जु यो करो तुम भी सदा ॥ ३४७ ॥

सवैया ३१—नर नार रूप करै नारी नरको सुमरै । जन-
जनकूं सुमोहै स्वांग लप हरषै ॥ जब रीते षंड करै षंड कला
लख मुद षंड चेष्टाके जुभाव चित्र मांहि करषै । फुनि परनरनार
तिनको मिलाय कार सीलषेलको प्रहार रूप नग परषै ॥ षंडवेद
हिसकार ऐसो जीव दुरचार मरषंड वेदधार मन दुष मरषै ॥ ३४८॥

कवित्त—त्रस थावरकी दया सुपालैं दीन दुखीकूं दे चव
दान । तथा शक्ति विन भावत कोमल दुषी देषकै दुष मन आन ॥
चार संघकी भक्ति करैं अति जिन पूंजै थुत वंदन ठान । विषय
कषाय मंद वैरागी सो परभव लह आयु महान ॥ ३४९ ॥
त्रस थावरकूं हनै दया विन दुराचार जुत विषय कषाय ।
हिंसोपकर्म बनायरु वेंच कर उपदेसरु लख हरखाय ॥ क्रूर
प्रनाम कृष्नलेश्या जुत आर्तरौद्र हिरदां मैं थायु जो इत्यादिक
पाप करै अति सो परभौ मैल है तुछ आयु ॥ ३५० ॥
दीन दुषी लष देष दया कर वस्तभोग उपभोग अनेक । मुन
श्रावकको देय भक्त जुत भुक्त रसाढ़ जु सहत विवेक ॥ वृत्तिका
श्रावकनी श्रावककूं देय वर व्रतिन माफिक जान । सोई लहै
भोग उपभोग सु बहु प्रकार पुन्यकी खान ॥ ३५१ ॥ भोगुप-
भोग मिले उनकूं बहु ताकैं अन्तराय जो करैं । भोग सहत
फुन नाह सुहावै भोग तलक लख आनंद धरैं ॥ ना ग्रसे प्यासेकी

हांसी कर अनखाद अन्न ले आय । तास अघोदय हवी वस्तु घर भोग न सके देख दुख पाय ॥ ३५२ ॥

सवैया ३१—जीव मरते बचावे तथा बंधते छुटावे पाद पटदेय पोषै मृदु वच भासना । साता देय दुखिनको सुख चाहे अरप मृतु देखकै उदास होय तज विसवासना ॥ दीन दुखी जीवनकी रक्षा करै भाव सेती विषय कषाय मांही मंदता प्रकासना । ऐसो जीव मर परभवमें दीरघ आयु सुख नित प्रत दुखगन नासना ॥ ३५३ ॥ जीवनकी घात करै भूम खादे जल गाहै तरु छेदै अग्नि जालै दासका चलावना । विकल कलेन्द्री जीव इत्यादि संताए होय वहोत आरंभानंद जन्तुको सतावना ॥ दुखी रोगी रोवते कू देखिकै आनंद होय आप तथा अन्न परता बुरा करावना । इत्यादिक पापके उदयतै होय दीरघायु तक दुख नाना भांति पर भोगै पावना ॥ ३५४ ॥

छप्पै—पर चतुराई देख दोष दे हांस जो करवो, मांड कला लख हर्ष दोष पर देख उचरवो । अपने दूषन लोप कला निज प्रघट करै जग, पुरस रिझावैको परचा वेरीझ तास ठग । अरु पढ़त सुननमें अरुचि अति ॥ बन्धन श्रुत पढ़ा हरै, फुनि दोष लगा पंडित न हंस । सो मर मूरष अवतरै ॥ ३५५ ॥ पंडित लख मुद विनय करै श्रुत लिखै लिखावै । कांक्षा विन श्रुत दान देय हितसूं जु पढ़ावै ॥ ग्रंथ असुध सुध करै सु भग वंदन दे पूठा । सद श्रुतको अभ्यास करै मूरख थे रूठा ॥ जग जीव अज्ञानी है जीते तिन सबको निज ज्ञान सुख । जो हम

चन्छक पर भव विषै सो चतुरनमें होय मुख ॥ ३५६ ॥

कवित्त—भेष न देते वर्जे दया विन लख रोगी मुद करें गिलान । तथा हांस करकै बहकावे विन आमय लख दुखी महान ॥ तिनकै रोग सु वांछै नित प्रत वा आमय बधवारी हेत । दे भेषज ऐसे सुजीव जेते रोगी हो है दुख खेत ॥३५७॥ बहुत सुपात्र अंगमें आमय लख भोजनमें भेषज दई दीन दुखीपै करुना करके सो निरोग हो साता लई ॥ रोगी देख करी अनुकंपा हांस गिलान विना सुख चहै । विना रोग लख मुदित हसो जो, सो मरकै निरोग तन लहै ॥ ३५८ ॥

दोहा-पुत्र रहित जा पापतैं, जो सु होय जगमांहि ।
सो वानन ऊपर कह्यो, देख संघ पण ताह ॥३५९॥
परभवमें पर पुत्र लख, जनम्या सुन अनमोद ।
सुत कांक्षीकै सुत चहै, सो सुत लहै सुबोध ॥३६०॥

काव्य-जो बहु विध लखकै कुचाल पर सुतकी हरषै । सो कुपुत्रकों लहै दुख्ख तस्यो दित पावै ॥ ज्यो परसुतकी बहु सुचाल लखकै हरषावै । सो सुपुत्रकूं लहै सुख्ख तस्योदित पावै ॥ ३६१ ॥

चौपाई-आंगोपांग छेद जो करै, वा विकलांग लखानंद धरै । वा विकलांग हंसै बह काय, सो मरकै विकलांग लहाय ॥ ३६२ ॥ निज थुत पर निंदा जो बकै, निज औगुन परगुनको ढकै । ऊंच न रुचे नीच संग रुचै, सो तन लहै नीच तन मुचै ॥ ३६३ ॥

गीता छंद—अभिमान बिन निज गुन परोगन ढांक भाखै पलटकै। कर संघसेवा भजे जिन गुर दुराचार ज़ु सुलटकै॥ फुनि दीन पोषै बहुत तोषै मिष्ट वचन उचारिकै। बहु मान दे आदर करै सो ऊंच हो तन छारकै॥ ३६४॥

चौपाई—जिन दीक्षित जो मुनवर कोय, लख विभूत सुर नर पत सोय। या तपको फल हो मुझ इसो, इम निदान कर तन जम ग्रिसो॥ ३६५॥ तास तपस्याके परभाव, हो दिवमें सुर वासुर राव। तितसैं चय हो अघ चक्रीस, दोय प्रकार कह्यो मुन ईस॥ ३६६॥ ले परतग्या भंग जु करै, सो भव भ्रमत अधिक विस्तरै। जो पालै अभंग धर नेम, सो जग रहत लहै पुर खेम॥३६७॥ जो मुन नाना तप विध धार, सुध भाव जुत सल्ल विदार। सो हो नारक विषै निर्जरा, वा अहमिंद इंद्र अवतरा॥ ३६८॥ तितसै चय हो बल चक्रेस, ऋद्ध वृद्धि सुख लहै विसेस। लेहै रतननि कृत जो भोग, सो सब पुन्नतनो संजोग॥ ३६९॥ पालै ब्रह्मचर्य मन लाय, परकूं उपदेसै हरखाय। च्युत न होय बहु सह उपसर्ग, मुदित लखे सीलज्ञ सवर्ग॥ ३७०॥ अन्तराय बिन गह सुध भाव, मद मत्सर बिन जज जिनराव। निंदन करै सील लख हीन, सो मर होय मार परवीन॥ ३७१॥

दोहा—तीर्थंकर पद होनको, ऊपर कथन सु जान।
सपुनरुक्त दूसन थकी, फेर न कियो बखान॥३७२॥

सवैया ३१—नाना भांत दुख देख दुखी लख हरषाक

विसय कषाय वस तथा जु दिवा यहै। नानो भांति सुखिया सु देखके कषाय करै तथा अन्तराय करै और पै कराव है॥ सोई सोई तिस जात लहै अन्तराय जगतमें निंद होय सुगुरू भनि जियै। इन कर तब सेती उलट प्रवर्त जास उलटो सु फल पाय रुचै सोई कीजियै॥ २७३॥

दोहा—या विध प्रश्न सुभालको, यह उत्तर मकरंद।
भव्य भृंग मन लख रमत, लहत परम आनंद॥२७४॥
देवसैन सिष सिष्यनै, देव वचन मय भास।
मोहकम पुत्रात्म जयदा, भाषा माह प्रकास॥२७५॥

इतिश्री चन्द्रप्रभपुराणे जिनकेवलोत्पन्नसमोसर्नवर्निद रचित जिनधर्मोपदेशवर्णनो नाम चतुर्दशम् संधिः संपूर्णम्॥ १४॥
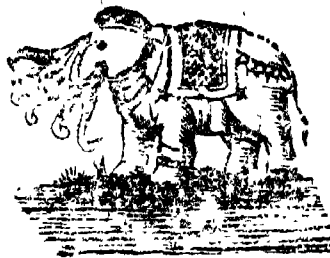
पंचदशम संधि।

कवित्त–समोसर्न वर्तुल मनो सखर इन्द्र नील मन भूलक देत। मानो नीर विषै नभ झलकै चमचमाट मनु लहरे लेत॥ बारै सभा चार मारग मिल षोडस दल जुत कुमद महान। ता मध अधर गगनमें शशि जिन शशि सम करत कुमुद प्रफुलान॥ १॥

दोहा–सोय कवलनी देख बहु, सुरनर अलि सम राच।
लह पराग जिम धुन मुदित, तिरपत हो न कदाच॥ २॥
ऐसैं चंद्र जिनेन्द्रकौ, गुर गुन भद्र नमंत।
तिन दोऊकू कवि नमें, गन गोतम भाषंत॥ ३॥

चौपाई–सुन श्रेनक आगे मन लाय, तुम समान श्रोता पत आय। मघवा नाम भूप पर–सिद्ध, आय नमो लख प्रभुकी रिद्ध॥ ४॥ पूजा कर पढ़ अस्तुत पाठ, चक्रि चित्त हुवो लख ठाठ। गणदत्तादिक अरु मुन सवै, विगत २ सबको बीवै॥ ५॥ मानुष कोठेमें थिर सोय, प्रश्न करो प्रभु सनमुख होय। महापुरुष जगमें प्रभु जिते, तिन चारित्र कहो हम प्रते॥ ६॥ प्रभुकी दिव्य धुन असरार, खिरी मेघ गर्जन उनहार। सर्व देस भाषामय सनी, सुन मुद भव सिख नाचै गुनी॥७॥ गन नायक श्रीदत्त उचार, सुन मघवा भूपत विस्तार। मन वच काय लाय हे भद्र, ठारै कोड़ाकोड़ समद्र॥८॥ भोगभूमि रह रीत अषंड, इसी भरतमें आरज षंड। ताही क्षेत्रतना व्याख्यान,

औरा को नाही परवान ॥ ९ ॥ जुगल मरे अरु जुगल हि होय, इत मीत मचाल न कोय। राव रंक ना स्वामी दास, चौर चुगल ना धरत वाम ॥ १० ॥ ठग लवाड़ ना राड कराहिं, सब संतोषी निज लछ माँहि। रोगी दुखी दीन नहीं जहां, पुन्योदिक सब सम सुख गहा ॥ ११ ॥ तहां न अहनिस तनी प्रवर्त्त, ताके अंत कर्म भू वर्त। तामै पुरष सलाका होय, भिन्न २ त्रेसठि सुन सोय ॥ १२ ॥ जिनवर रिषभ भरत चक्रवै, इनको कथनो पर लप सबै। लाख पचास कोड़ जब गये, अनक अजित सुजिन तब भये ॥ १३ ॥

सवैया—नृप जित सत्रु नार विजया गरभ धार जेठ कृष्न-मावसेंद्र वैजियन्त तजियो। जन्म माघ सित दसैं साढ़े चार सत धनु तन बहत्तर लाख पूर्वा युक गजयो॥ कारपनै चतुरां सविनेक त्रिगुनराज पूर्वांगक जादे जन्म दिन तप सजियो। छद्मस्त दोसत वर्स पोह सदि एकादस केवलोत्पन्न गनधर नव्वै भजियो॥ १४ ॥ नमूं मुन लाख गननी हजार तीस श्रावक त्रिलाष २ पाय श्रावका सबै। मासेक निरोध जोग उद्घाप्प मोक्ष गए चैत सुदी पांचै महा जक्ष भक्ति कर्तवै ज्वाल मालनी सो सुरी अयोरु समुदविजै भूप नार बाला सुतसागर चक्री जबै प्रभु सम काय रूप वंसपुर सिव थान सतर पूर्व लाख आयु धर सो फबै॥ १५ ॥

चौपाई—और भेद सुन भाषूं अबै, भए औघमै सो सुन सबै। रिषम अजित अभिनंदन सुम्त, भरत सगर चक्री जिन-

जंब ॥ १६ ॥ चंद्र सुविध सित पार्स सुपास, इस्त लाल पद्म जजवास स्याम नेम मुन सुव्रत एह, अरु सोलै कंचन सम देह ॥ १७ ॥ वृषभसैं अधर जोजन हीन, पावर ने मात सुचीन। या विध समोसरन विस्तार, तपतंतार केवल थित धार ॥१८॥ काश्यगोत्र सकल जिनधार, धर्मरु सांति कुंथ अर चार। कुरुवंसी इसमे त्रिये धीर, मुन सुव्रत नेमी अतिवीर ॥ १९ ॥ और इष्वाक वंस मरजाद, वास पूज नेमी वृष वाद। ए पद्मासनतैं सिव गये, अरु सब खड्गासनतैं भये ॥ २० ॥

दोहा—आदनाथ चौदे दिवस, दिन षट सन मत जान।
बाकी इक इक मास सब, जोग निरोध प्रमान ॥२१॥

चौपाई—वासपूज चंपापुर मोष, अरु गिरनार नेम निर्दोष। पावापुर सनमति निरवान, अरु समेदगिरतैं सब जान ॥ २२ ॥

सवैया ३१—दध तीस कोड लाख गए भये संभवेस साव त्रीस दढ़ रथ सेना देवो मामनी। तज ग्रीव फाग मितु आठै जन्म कार्तिकांत घोडाकं पूरव लाख साठ आयु पामनी ॥ कार चतुराग राज त्रिगुनेकवीना चार पूर्वांग अधिक तप जन्म दिन लामनी। छदमस्त वर्ष बारै कार्तिक किसन तुरी केवलोत्पन गन पांचके सतामनी ॥ २३ ॥ लाख मुन अरजका त्रिगुन श्रावक तेते श्रावकनी पंच लाख चार सत धनुचा। पंचमो कल्यान दिन वैसाख सुकल छठ गए शिवमांहि तनक पूरवलुचा ॥ यक्षे समुख नाम फुन व्रती यक्षनीरु दस कोड लाख दध कालगत जो हुचा। संवर भूपत बार सिद्धारथा

गर्भ चार बैसाख सुक्ल छठ वैजयंतसे सुचा ॥ २४ ॥ जनमे बारस माघ सुकल पचास लाख पुर्वायु तनु चचास साढे तीन सत है। अभिनंदनांक कप चतुरांस बाल काल त्रिगुन एक म अष्ट पूर्वांग नृपत है ॥ जन्म दिन तप बार छद्मस्त वर्स आठ पोह कृष्न मणोत्पन्न केवलेक सत है। तीन गन मुन गृही तीन अजियारु छ सत सहन तीस अधिक वसत है ॥ २५ ॥

दोहा-पांच लाख है श्रावका, सित बैसाख छठ सेत।

जक्षेसुर तिय सरस्वती, जिन सेवा नित चेत ॥ २६ ॥

सवैया ३१-नव लाख कोड दध गए सुमतेस औध भूप मेघ प्रम अग मंगला घरा। जयंत सावन चुत दूज ले जन्म चेत सित ग्यार त्रिस तुच धनु चक्का पापगा ॥ लाख पूर्व चालीसायु चतुरांस क्कार राज त्रिगुने कविन जादे पूर्वांग बारा धरा। नैत्रसाख सित तप वर्स वीस छद्मस्त जन्म दिन केवलि है संघ सब साधरा ॥ २७ ॥

काव्य-तीन लाख मुन वीस सहस। गन इकसो सोलै ॥ सहस तीस अजिया लाख त्रय ग्रही गुनोलै पांच लाख श्रावका नमू चैतांत मोख लह, सुर तुंवर कीतियै यक्षनी सेवत निस अह ॥ २८ ॥

सवैया ३१-उद्ध सहस नव्वै कोड पूर्व गए मए कोसंमी थान भूप सुसीमा गरभमें। माघ काली छठ चर्यै ग्रीवकरु ॥ जन्म स्याम तेरसि कार्तिक चिह्न पदम सुर भमे। दो सत्तार्ध कमसुक तनुमा सु तीस लाख पूर्व चतुरांस बालराज इकीस

वारे ॥ अधिक पूर्वांग सोलै तप कार्ति वदि छठि छदमस्त ॥ वर्ष नव चेतार्ध ज्ञानं पारे ॥ २९ ॥ एक सत दस गन तीन लाख तीस हज्जार मुन अजिया सहस बीस चार लक्ष है। सरावग तीन लाख श्रावगनी पंच लाख फागन भूमर चौथ शिव लही दक्ष है ॥ मातंगेस सुलोचना यक्ष यक्षनीस नाम समुद्र सहस कोड नव पूर्वगत है। वानारसि सुप्रतिष्ट भूप नार प्रथ्वी गर्भ भाद्र शुक्ल छठ चुत ग्रीवकको पक्ष है ॥ ३० ॥ जन्म जेठ सितवारै संखियाक दोसै चाप बीस लाख पूरवायु चतुरांसवार है। त्रिगुनेक घाट राज जाई पूरवांग बीस जन्म दिन तप वर्षनो छद्मस्तकार है ॥ फाग स्यामनै केवल छनवै गनेस मुन अजिया श्रावक लाख तीन त्रिप्रकार है। पांच लाख श्रावकनी फागवदि सातै सिव विजै सुर पूर्वासुरी दुखतै उभार है ॥ ३१ ॥

दोहा—नवसै केट गए सु जब, भए चन्द्रप्रभ वर्ण।
देख इसी श्रुतमें सकल, नव्वै कोट दप हर्ण ॥ ३२ ॥

छप्पै—काकंदीपुर ईस नाम सुग्रीव तियावर। रामागर्भलि फाग नवमि चय आरने सहर ॥ मृगसिर सित इक जन्म धनु सत एक तनोन्नत। पुर्वायु लाख जुगवाल तुरि नृप तुरि असोभित ॥ पुर्वांग अठाईस अधिक फुन तप तिथ जन्मरु वर्ष चव। छदमस्तरु कातिक सित दुतिया केवल लहि गण वाईस चव ॥ ३३ ॥

काव्य—अजिया सहस असी त्रिलाख मुनि दोय लाख तमु त्यों

श्रावग पण लाख श्रावका भाद्र कृष्ण वसु। गए मोष अजतेस जक्ष बहु रूपनीदेवी पुष्पदंत पद नमो त्रिजग मन वच तन सेती॥३४॥

दोहा—अन्तराल इन अन्तरें, पाव पल्ल वृष नास।

फिर सीतल जिन होहिंगे, तब हो धर्म प्रकास॥ ३५॥

मनहरन छंद— नव कोट गताठ्या भद्दल नगरी दृढ़रथ नृप धर नार भली सुसुनंद रली। चय अच्युतेंद्र कलि चत अष्टमी जन्म माघ अलि द्वादसली। अनुनव्व बली इक पूर्व लाख थित सुरतरु कपि सुधावराज। फुन दुगन कियो फेर जोग लियो तिय जन्म मस्त छंद वसे तीने अलि पोह सम्र जुग ज्ञान लियो केवल सुपयो॥ ३६॥ गणधर इक्यासी लाख एक मुन त्रिगुन अर्जिका ग्रह दुगुनी चव श्रावकनी। अश्वन सित आठै सिव वर ठाठै सुर ब्रह्मातिय सिया मनी सुन भूम धनी॥ दध कोट गए जम तत्र इते कमलाघ लुधा ... सहस भए छव्वीस लए। सिंहपुर विमले संतिय विमलादे जेठ वदी छठ गर्भ ठये पुष्पोत्र चये॥ ३७॥ लियो जन्म फागुन अलि ग्यारसि तन उच्च धनुस्सीमें झाकें वय लष्यार्क चौरासी वर्स फुन पाव बालपन दुगन राजगन जन्मांक तिथ तपसार्क। छदमस्त वसे षट केवलोतपन माघ अलि तिमततरगण सुसंघ खग्र॥ सव सहस चौरासी अजिया बारा जुगलख श्रावक तियें दुगुन समोष गवन्न॥ ३८॥

दोहा—श्रावन सित नोमी दिना, ईसुर सुर प्रभु भक्त।

वन्हिन नामातासुरी, धो श्री श्री निज सक्त॥ ३९॥

चौपाई—इनके समय भए हरबली, प्रतिहर कथा पुरानन चली। पथमें कछुक कहुं थल पाय, श्री जिनवानी सुगुरु सहाय ॥ ४० ॥ षग गिर अलकायु रपतईत्र, मोर कंठ सुत असुग्रीव। आयु चोरासी लाख तनूच, धनुअस्सी अगिन सबमूच ॥ ४१ ॥ तीन खण्ड पति प्रत हरगन्न, पोदनपुर परजाम नृप अन्न। नार जया सुत विजय सु आयु, लाख सतासि वर्ष सतकायु ॥ ४२ ॥ सो बल चार रतनको धनी, गदामाल हल मूसल गनी। मृगावती नृप दूजी तिया, सुत त्रिपिष्ट सु हरपद लिया ॥ ४३ ॥ आयु काय प्रतिहर सम स्याम, हल बसु सहस दुगुन बहु वाम। धनुष संख सक्ती असी चक्र, दंड गदा मण सातसु वक्र ॥ ४४ ॥ प्रतिहरको हर मारयौ जबै, सप्तम नर्क पहुंचो तबै। हर बीआयु अन्त तित जाय, विजय २ विधि सिवपुर पाय ॥ ४५ ॥

दोहा—नारद भीम भयौ तबै, आयु काय हर जेम।
चमनदष श्री ते गए, तज महाशुक्रसु एम ॥ ४६ ॥

छप्पै—चंपापुर वसुपूज भूप तिय जया गभ धर। छठ असाड कलि बहुर जनम चौदस फागन करि ॥ सत्तर धनु तन तुंग बहत्तर लंछ वर्मायु। सिसु चतुरांस जनम दिन तप इक वर्ष करायु ॥ सित माघ दून केवल लहो, गन छासठ जुग सहस मुन। इकलाख सहस षट आर्जिका, श्रही दुलख श्रहनी हुगन ॥ ४७ ॥

दोहा–सिव अनंत चौदस लियो, सुरकुमार सुनिसांक ।
मुक्त असोकनी सुरीकर, वासपूज महकांक ॥ ४८ ॥

कवित–इनके समय भोगवर्द्धनपुर श्रीधर सुत तारक वेस । सो प्रतिनारायण बलवंतो अब द्वार पुर ब्रह्म नरेस ॥ नार सुभद्रा पुत्र अचल बल दूजी पुत्र दुपिछकी माय । सत्तर चाप तिहु तन उन्नत लक्ष बहत्तर जुग हर आय ॥ ४९ ॥ लाख सतत्तर वरस आयु बल नारायन प्रतिहरको मार । हर मर आयु अंत दोऊ लह सप्तमनरक महा दुखकार ॥ लह परवंग बलभद्र सुतपतै अरु त्रिभून उपर निरधार । महाभीम नारद तब ऊपनौ आयु काय हरसम व्रम चार ॥ ५० ॥

सवैया ३१–तीस दस सार पुरकंप ले सकृत धर्म भूपतिय जयसेना तास उरमें बसे । जेठ कालिदस त्याग सहश्र जन्म माघ सित चोथ तन्मोन्नत मार धनुष लसे ॥ साठ लाख वर्ष आयु चतुराम बालराज दुगन जनम दिन तप वर्स त्रिलसे । केवल सुकल माघ छठ लहो पचपन गण मुन साठ सहस अघोघ देखे नसे ॥ ५१ ॥

पद्धरी–अजिया षट सहसरु एक लाख । जुग लाख ग्रही ग्रहनी दुलाख ॥ साठाष्ट कलि सित्रष्ट्रमसूर । लछमना सूरी विमल कसूर ॥ ५२ ॥ इन समय रतनपुरमें सु होय । मधुप्रतके अनु सुनो लोय ॥ पुर द्वारवती नृप रुद्र नाम । तसु भद्रा तिय सुत धर्म धाम ॥ ५३ ॥ सडसत वर्स लक्ष आयु झिड । दूजी तिय प्रथ्वी सुत स्वयंभु ॥ तिहु तन उन्नत है धनुष साठ ।

अरु हर प्रतिहर थित लछ साठ ॥ ५४ ॥ भयो रुद्रनाम नारद उदार। हर सम वय अति कलहकार ॥ हर प्रतिहर मर लह रोरवांत। बलि सिव पाई जीत्यौ कृतांत ॥ ५५ ॥

सवैया ३१—नवदध गए भये ओधपुर महा नृप सिधसेनकी सुभंदि गर्भ मांही आ लसो। चय अचुतेन्द्र सितकातिम एकम फुन जन्म जेठ सित एकैसे हीनता कालसो ॥ पंचास धनुष काय तीस लाख वर्ष आयु माहि सात लाख छार दुगन भूपाल सो। दिछादोछ। जेठ बदि छदमस्त दो बरस चित्रार्ध केवल पाय गन सौधे नालसो ॥ ५६ ॥ छासठ सहस मुन लाखेक सहस आठ अजिया श्रावग दोय लाख दुनी श्राविका। चैत्रार्ध लिखि यक्ष पाताल अंत बीजा इनके समै जो भयो बानारसी गानका। भूप मधुसुदन सु प्रति हरपद पाय और द्वारापुरी विषै सोमप्रभ रावका। नार जयावती सुत सुप्रभ हलीस दुजो नार मानापुत नाम पुरुषोत्तम आवका। ५७ ॥ लाख तीस हर दोउबै नारद महारुद्र चारौंकी उन्नत देह धनुष पचासकी। हलायुध तीस लाख वर्ष तरनौल सिव सप्तम नरक मांहि दोनो हर बासकी। फुन तीन दध गए नगर रतनपुर भानराय सुब्रताके गर्भवासकी। तज सर्वार्थ सिद्ध वैशाख भूमरु आवै जनम तेरसि माघ सित धर्म रासकी ॥ ५८ लक्षन वज्र दंड पैतालीस धनु तुंग दस लाख वर्ष आयु पाव बालपनमें। दून राज पत धार जन्म दिन वर्ष एक छदमस्त पोह शुक्ल चौदस आनमें ॥ केवल ले पैतालीस गनोत्र चौसठ-

सहस मुन सहस बासठ चोसत अर्जकानमें। दो लाख श्रावक दूनी श्रावका चौदस सित जेठ सु रक्षितापुरी शिखर सुरनमें ॥ ५९ ॥

छंद चाल—इन समय सुहरखु राई, प्रति हरनि सुभ सुखदाई। फुन चक्र नगर नृप भारी, वख्यात सुप्रभा नारी ॥ ६० ॥ तसु पुत्र सुदर्सन नामा, फुनि दुतिय अम्बका वामा। पंचम नरसिंह सु रेसो, तब काल सु नारद वेसो। ६१॥ तिहुं आयु लाख दस बर्ष, सतरै लख बल थित दर्स। पैतालीस धनु तिहुं काय, जुग हर सम्रा धोठाय ॥ ६२ ॥ बल तप कर शिवपुर पाई, पीछै चक्री उपजाई। पुर अवधि सु मित्र जुगाई, तसु नार सुभद्रा थाई ॥ ६३ ॥

दोहा—तासुत मघवा कनक दुत, वंस इक्ष्वाकमें दर्स।
इकसन सतार हस्त तन, पांच लाख थित वर्स ॥ ६४ ॥
विभो चक्र पद भोगिके, तपधर कर्म विनास।
केवलग्यान उपायके, लियो मुक्त परवास ॥ ६५ ॥
फुन ता पुरमैं नृप भयो, नाम अनंत सुवीर्य।
सहदेवी सुत उपनो, सनतकंवार सुधीर्य ॥ ६६ ॥
साढा इकतालीस धनु, तन थित लाख जु तीन।
कनक दुति चक्र विभो भुगत, तपकर शिवपुर लीन ॥ ६७॥

छप्पै—गजपुर विश्वसेन नृप तिय ऐरादेवी घर। गरभ भाद्र अलि सप्त त्याग सरवारथ सिधहर ॥ जन्म जेठ अलि चतुर्दशी मृगचिन्ह तनुमत। धनु चालीस लक्षायु पाव थित

चाल, पने, मत ॥ पद मंडलेषु त्यों [illegible] वसु, [illegible] चक्री पाद सित। [illegible] जन्मकाल छद्मस्त तप, [illegible] सोदश वृष मोक्ष कृत ॥ ६८ ॥ लहि केवल सित पौष दसैं छतीस गनधर मुन। बासठ सहस रु सहस साठि त्रियसत अजिया गन॥ श्रावक दो लख दुगुन श्रावका जनम दिवस सित। यक्ष किंपुरुष यक्षनीस संज्ञा वैरोचन इव। ये धर्म त्रियाऽन्तरगतपै भये जिन सोलम बारम मकर लह चक्रवर्त पंचम सुपद ॥ नमूं सांत जगमैं सुकर ॥ ६९ ॥

अडिल–गत पलार्ध तित सूरसेन नृप भये नरी। श्रीकांता धारार मदसैं श्रावन करी ॥ तज सर्वारथ सिद्ध जन्म सु वैसाखमें। सित इक धनु पैंतीस तनुच अजाकंभै ॥ ७० ॥ सहस पचनवै आयु पाव गत बालजी। तितने राज रु विजय षष्ट सत टालजी ॥ पाव चक्रि पद त्यागि जनम दिन तप धरो। सोलै वृष छद मौन केवल तप दिनवरो ॥ ७१ ॥ गनधर पैंतीस साठ सहस मुन अर्जिका। तितनी फुन सत होट ग्रही दुनि श्राविका ॥ लाख तिथादिसित गरुड अनेक सुरुपणी। यक्ष भक्त पद अनमूं कुंथ जग सिर मणी ॥ ७२ ॥

सवैया ३१–लाखो लाख वर्स घाट पल्ल गए भए तत्र भूप सु दर्सन मित्रसेना नार है। गर्भ फाग शुक्ल तीज त्याग सर्वारथ सिध जन्म सित मार्गशि चौदस अकार है ॥ तीस धनु तुंग आयु चौरासी सहस पाव बाल पांच मंडली सविजै [illegible] धार है। ता दिन चक्रीस पाव माघसित दसैं तप छदमस्त

बालपने मत ॥ पद मंडलेश त्यौं विजयवहु, अथ जिनपकी पाया थित । वह जन्मकाल छद्‌मस्त तप, घर षोडस वृष मौन वृत ॥ ६८ ॥ लहि केवल सित पौष दसैं छतीस गनधर मुन। बासठ सहस रु सहस साढि त्रियसत अजियागन ॥ श्रावक दोलख दुगन श्रावका जनम दिवस सिव। यक्ष किंपुरुष यक्षनी संज्ञा वैरोचन इव ॥ ये धर्म त्रिबाब्ध गतपै भये जिन सोळमवार मम कर लह चक्रवर्त पंचम सुपद। नमूं सांत जगमें सुकर ॥ ६९ ॥

अडिल–गत पलार्ध तित सूरसेन नृप भये नरी। श्रीकांता धर गरभ दसैं श्रावन करी ॥ तज सर्वारथ सिद्ध जन्म सु वैसाखमें। सित इक धनु पैतीस तनुच अजांकमें ॥ ७० ॥ सहस पचनवै आयु पाय गत बालजी। तितने राजरु विजय षट सत टालजी ॥ पाव चक्रि पदत्यागि जनम दिन तप धरो। सोलि वृष छद मौन केवल तप दि-वरो ॥ ७१ ॥ गनधर पैतीस साठ सहस मुन अर्जिका। तितनी फुन सतछोट ग्रही दुनि श्राविका ॥ लाख तिथा दमित्र गरूड अनेक सुरुपणी। यक्ष भक्त पद अनमूं कुंथ जग सिर मणी ॥ ७२ ॥

सवैया ३१–लाखों लाख वर्ष घाट पाव पल्ल गए भए तत्र भूप सुदर्सन मित्रसेना नार है। गर्भ फाग शुक्ल तीज त्याग सर्वारथ सिध जन्म सित मार्गशि चौदस अकार है ॥ तीस धनु तुंग आयु चौरासी सहस पाव बाल पांच मंडली सविजै सत चार है। ता विन चक्रीस पाव माघ सित दसैं तप छद्‌मस्त

सोलै वर्ष कार्त्त सित वार है ॥ ७३ ॥ केवल लहो लक्षार्ध मुनोघ गनेस तीस अजिया सहज साठ श्रावकेक लाखजी। सहस आठ श्राबगनी तीन लाख लीचैतार्ध मोख यक्ष गंधर चसुरी रएता आखजी ॥ ठारमें जिनेस चक्री सातमें दुगन मक्री वंदू अरे वारै नृप पुर औध राखजी। वंश इक्ष्वाक सहसबाहु तिया चित्रमती सुत सुभूप सहस सतसठ वर्ष भाखजी ॥ ७४ ॥ ठाईस धनुष तुंग कवार सहस पांच मंडलीस तेतो विजै पांच सत वरसं। आठमो चक्रीस होय वाकी थित राज मांहि मरक रोगांत ढाय और कथा सरसं॥ हरपुर प्रतिहार सो निसुमनाम वर और चक्र पुर पत वरसेन दरसं नार वैजियंता सुत मंदसेन हली आयु सतपठ सहस दुजी लक्ष नवतीरसं ॥ ७५ ॥ नार सुत पुंडरीक पैसठ सहस आयु हर प्रतिहर हल छत्तीस धनु तन। महाकाल नारद सुहर सम आयुकाय मर गए सुभूष्ट बल सिवपतनं ॥ लाखो लाख वर्ष गये भये मिथु-लेस कुंभ तिय प्रजावति गर्भ सित एकै चैतनं। तज अपराजतेंद्र जन्म अगहन सित ग्यारस सहस वर्ष पचपनु चैतनं ॥ ७६ ॥

छप्पै—पच्चीस कार्मुक एक शतक सिस जनम दिवस तप। वर्ष षट छद्मस्त पूप अलि दूज केवल थप ॥ गनधर टाईस संग मुनी चालीसहजार सब। अजियावय सम ग्रही लाख इक त्रय ग्रहनी फब ॥ लहि सिव फागन सित पंचमी जक्ष कुबेर रत भक्तमें। जिन सासन सुर हिमा सुरीवर मल्लनाथ पदके वनमें ॥ ७७ ॥

चौपई–पद्मनाम बानारसि ईस, रामापुत्र पद्म चक्रीस। वंश इक्ष्वाक कनक तन चाप, बाईस तीस सहस वृष आप ॥७८॥ पंच सहस वरस गत बाल, तावत मंडलीक विन साल। सतक रु विजय नवम चक्रीस, भोग भोग शिव जाय मुनीस ॥७९॥ ता पीछे खग गिरपै जान, हरपुर नृप पहलाद महान। सो प्रतिकेसव सुत अनरूप, नगर विनास अग्निसिख भूप ॥ ८० ॥ तिये जयंती सुत नंदेमित्त, केसवती त्रिय फुन सुतदत्त। सैतीस बत्तीस सहस वर्षायु, सुगुरु नाद हर सम वय कायु ॥ ८१ ॥ हर प्रतिहर चक्र धनुष बाईस, तप कर लहै वैकुंठ हलीस। हर प्रतिहर गत सप्तम धरा, प्रथमसु जिनवर जब सिव वरा ॥८२॥ फिर दूजे जिन जब शिव जाय, सो अंतरमें आव समाय। एही भेद जानै सब ठौर, आगे कथन सुनो मद छोर ॥ ८३ ॥ राजग्रही पुर भूप सुमित्र, सोमादेवी नार पवित्र। भ्रूण धरो श्रावण कलि दोज, प्राणतेंद्र तज आयो सोज ॥ ८४ ॥ वदि वैसाख दसै लह जन्म, वीस चाप सु कूरम चिन तन्म। चोवन लाखांतर अरे वर्ष, मांही तीस सहस थित दर्स ॥८५॥ पाव काल पन दुगुन सुराज, तपनौवर्स जनम दिन साज। नव वैसाख लिल हजोधांत, गणी अठारे मुन गुन पांत ॥ ८६ ॥ तीस सहस गननी लक्षाधे, त्रिय ग्रहनी इकग्रही गुनवाधे। फागुन कलि बारसि लह मोष, वंदू मुनिसुव्रत निरदोष ॥८७॥

दोहा-वरुण यक्ष सिद्धायको, और सुनो नृप बैन।
पद्मनाम नृप भोग पुर, एरा सुत हरषेन ॥ ८८॥

आठवंस धनु वीस तन, मुनिसुव्रत सम आय।
दसम विभो चक्री भुगत, भयौ अनुत्तर ठाय ॥ ८९ ॥
चौपाई—लंकापुर नृप रतन श्रवास, नारकेक पुत्र दसास।
सो प्रतिके सब राक्षस वंस, फुन कौसल पुरमें रघ वंस ॥ ९० ॥
दसरथ नृप कोसल्ला पुत्र, रामचंद्र फुन लछमन उत्र। सो सुतनार सुमित्रा तनौं, सोले धनुष तिहू तन बनौं ॥ ९१ ॥
ठारै सहस बरस रघु आय, तेरै सहस विष्नु जुग थाय। नरक तीसरे गत शित्रराम, नारद नाम महा मुख ताम ॥ ९२ ॥

सवैया ३१—छ लाख बरस गए मिथुला नगर ईस विजैनार प्रभा गर्भ धार क्वारद्वै अली। जन्म माढ वदि दसै कमलांक तन ऊंच चाप पदरै सहस दस वर्सकी ढली ॥ पाय बाल अर्द्ध-राज जन्म दिन तप छद्मस्त वर्स नव रुद्र अगहन अकली। गनमतरै रु संघ दो दस सहंस अर्जा पैंतालीक श्रद्धी त्रिय लाख श्रहनी मली ॥ ९३ ॥
दोहा—शिव वैसाख अलि चतुरदस, भृकुट नाम सुर यक्ष।
हंस वाहनी यक्षनी, सो नम मव जग रक्ष ॥ ९४ ॥
छपै—कोसंमी पुर ईस विजय तिय प्रभाकरी। सुत कन तनुंच धन पदरै फुन त्रिय सहस वरस थित। बाल मंडली सत २ विजय चक्रि चत्र। उन्नीस सतक तप करो त्याग तन लह्यो जयंतव अब सो ग्यारम चक्री जयौ ॥ पांच लाख गए वर्ष जब तब नगर द्वारकाके विखै। समुद विजय राजा सुफत्र ॥ ९५ ॥ सिवा तिय धर गर्भ कार्ति छठ हर जयंत नस।

तित सित आवन षष्ट जन्म सपोक धनुष दस ॥ सहस बरस थित तीन सतक गत बालकपनमें । व्याह सभै बैराग जनम तिथ छप्पन दिनमें ॥ लहि केवल असवन इकम सित गन रुद्र संघ उन्नीस । सहस २ चालीस अर्जका गृहनी त्रिइक लख गृहीस ॥ ९६ ॥

दोहा—लह सितअष्ट सित साढकी, गोमुख यक्ष प्रसिद्ध ।
सुरी अंबिका यक्षनी, सो नेमी द्यो रिद्ध ॥ ९७ ॥

चौपाई—समुदविजयको लहुर अनुज, वसुदेव रोहनी तनुज । पदम सुनाम चाम बलदेव, दुतिय देवकी तिय वसुदेव ॥९८॥ ता सुत कृष्ण सु नवमो हरी, मुख्य नाम नारद तिह धरी । हरि रिपु जरासिंध प्रति हरी, बलसत दुष्ट सहस व्रप धरी ॥९९॥ त्रिय आयु सब दस धनु देह, इनकी सकल रिद्धि सुन लेह । सोले सहस हर अघ हलनार, तिते नृप नमें मुकट सिर धार ॥ १०० ॥ तीन खंडके सुरनर खगा, ते सब सेवै चरनन लगा । सात हरी हलके मग चार, सहस सहस सुर रक्षाकार ॥ १०१ ॥ बलभर स्वर्ग सोलमें इंद्र, हर त्रिय नरक लहो दुख सिंध । ताही समय औं नपति ब्रह्म, तिय चूला सुत है दत्तब्रह्म ॥ १०२ ॥ तन धनु सात सतक थित सार, छओं खंड साधे बल धार । चर्मचक्रि सब बस करि आप, सप्तम नरक गयों कर पाप ॥ १०३ ॥

कवित्त—अस्वसेन कासीपति वामा गर्भ सित दूज वैशाख । आणतेंद्र जन्म पौष अलि रुद्र हस्त नव थित सत साख ॥ तिस

बाल विन जनम राज तिथ तप छद्मस्त वरस चव मास। चैत चौथ कलि केवलोत्पन्न गनधर दसमुन संघ जु राख ॥१०४॥ सोलै सहसरु अडतिस अजिया तीन लाख ग्रहनी इक ग्रही। श्रावग सित सप्तम सिवलह सुर पदमावति धरणेन्द्र जु सही॥ पास पास तोडो अब मोरी दीजे निज सुख औ निज मही। उरग लखन सुचरनमें सुंदर अढाई सत गत कही ॥ १०५॥

सवैया ३१-विदेह सु नाम देश नगर कुंडलपुर सिद्धारथ भूप नार प्रियकारनी वरा। पुष्पोत्तर जान तज गर्भ साढ सुदी छठ जनम तेरसि चैत सिंह चिह्न धारा॥ सप्त हस्त देह आयु बहत्तर वर्ष तीस कार व्याह राजदिन परिग्रह छारना। अगहन स्यामु दसैं छद्मस्त बारे वर्ष दसमी वैशाख स्याम घातिश उपारना॥ १०६॥ अतीत वरत भावी चराचर जुगपत तत्त सब झलके है केवल मुकरमें। ग्यारै गनधर मुन सहस चौदे छत्तीस वृतन श्रावक लाख एक तीन घरमें॥ कातकमावस मोख जक्ष नाम मातंगरु, अपराजित सुरीसो सोप धर करमें। ऐसे महावीर पदकमल जुग लहद और सोमा सारी रद नमत अमरमें॥ १०७॥

काव्य-तीन सतक छियत्तर वारम तीन तीन सत, अरे पारस चव सहस रिषम फुन सहस २ अति। भए भूप मुनि मिल२ सब संघ जनेसुर, निज भावन अनुसार लही गति कही महेसुर॥ १०८॥ जती सात विध सतक चार दस त्रय बगन धर, संघ अठाईस लाख सहस अठतालीस मुनवर।

सैंतिस सहस सतक नव चालीस पूरव धारी, वीसलाख सत पंच रु पचपन शिष्य निहारी ॥ १०९ ॥ इकलाख सहस सत्ताईस छस्सै अवध सहस मुन, वसु सत पौणदुलाख केवली मनपरजय सुन। इकलाख पैंतालिस सहस शतक नव पंच प्रवानो। दुलक्ष सहस पैंतीस शतक नव वैक्रिय जानो ॥ ११० ॥ इक लाख सहस चौवीस तीन शतवादी मुनवर, संघ सात इम भेद कह्यौ चौवीसों जिनवर। लाख चवालिस सहस चुण्णवै षट सतार्द्ध मित, अजिया अठतालीस लाख ग्रह ग्रहनी दुन तित ॥ १११ ॥ तेरै सतक रु आठ जान अनु बंध केवली, ग्यारै सतक बयासी है संतत सु केवली। चौवीस लक्ष चौसठि हजार सत चव मुन शिवगत, द्वैलक्ष सहस सत्तर वसु सतलहनुत्तर गत ॥ ११२ ॥

दोहा—इकलाख पंचहजार फुन, आठ सतक मुन जान।
सो धर्माद अनुत्र गत, लह सब जिनसम थान ॥११३॥
एक एक जिनकैं समय, दस दस मुनवर जान।
अंतक्रित केवलि भए, त्यौं उपसर्गी मान ॥११४॥
फुन तावत उपसर्ग सह, अन्त सुकृत मुनि और।
सौधर्माद अनुभृगत, लही सो कर्म मरोर ॥ ११५ ॥

सवैय, ३१—तीनसै चौवीस पद्म पांचसत सुपारस छस्सै एक पास पूज सात सत अनंत। आठसैरु नव धर्म नवमत सात मल्ल सत पांच २ छत्ती नेम संग गिनंत। छतीस पारसनाथ संग मुन सिव पाई बाकी सब संग मुन भिन्न २ मनंत ॥

बास सहस मुन संग सब मोक्ष गए ऐसे सब जीनजीको हम जुग ठनंत ॥ ११६ ॥

छप्पै–बाहुबल अमृत सुतेज श्रीधर जसभद्र फुनि असेन ससि चंद्र वर्णबासन्दर मुक्तर। मनतकुमार श्रीवछ कनक प्रभ मेघवरन गन ॥ सांतकुथ अरे विजयराज श्रीचंद्ररु नल मन। फुन हनुमान बलराज नृप वासदेव प्रद्यम्न अहि। कवर सुदरसन जंबु मुन शिव चुवीप इन समर लइ ॥ ११७ ॥

चौपाई–रुद्र भीम बल जीत रिपु मल्ल, विश्वानल सुप्रतिष्ट अचल्ल। पदम जितधर अरु जितनम प्रोष्टल, क्रोधानल ए साम ॥ ११८ ॥ महावीर जब शिवपुर लहै, तीन वरस सतरै पश्च रहै। चोथे काल विषै ए जान, तापाछै पंचम जम आन ॥ ११९ ॥ तब नर आयु वीस सत वर्ष, सात हाथ उन्नत तन दर्स। काया रुक्ष विरूप अधीर, विषय कषाय विखै रतवीर ॥ १२० ॥ असन त्रिकाल करै हित लाय, सुरत असक्त रहै अधिकाय। अन्न दोष जे फुन अधिकार, ते सब काल दोषतैं धार ॥ १२१ ॥ ऐसे पाप करम कर तार, होय हजारों अघ अनुसार। नृप जथोक्तको होय अभाव, होसी संकर वरन जुगाव ॥१२२॥ इकीस सहंस वर्स जम एह, तामैं होय कलंकी जेह। सहस सहंस वरस प्रति एक, आद अंतको कहुं विसेक ॥१२३॥

सवैया ३१–पटने सहर मांहि सिसुपाल भूप नार प्रथवी चातुरमुख सुत पापी मोर है। सो कलंकी दुखदाय सत्तर वरस आय चालीस वरस राज करै न्याव तो रहै ॥ सेवै सब पाखंडकू

तब नृप कब करै तिन पै अखंड अज्ञा मनावै सजोर है । एक दिन सेवक बुलाय पूछे तिन सेती मेरी अज्ञा लोकमांहि हैक कोऊ मोर है ॥ १२४ ॥ तब मंत्रीयौं उचार जेहैं निरग्रंथ धार रहै बनके मझार अह काज तजकै । पुरमें असन हेत आवै इकबार येत इम सुन क्रोध केत पापी माम सजकै ॥ आप जाय दाता घर प्रथम गिरास के उठाय मुन कर पतै अत रजकै । साधुके अहार मांहि पडियो सुअंतराय वही सुवन मांहि गए मुक्त तजकै ॥ १२५ ॥ तब नागाधिप पीठ हालत अवधि दीठ आनकै धरम नास समदृष्टी आइयौ । न्यायवंत बलवान सहै न सकै अन्याय गदा सेती मारौ अधोगत सो सिधाईयौ ॥ कल्की नार जो अकाली सुत अजितजै नाम निज मातसंग सोय सुर सर्ण आइयौ । जैन धर्मको प्रकाश सब जन देखौ इम तब सब जन नित जैन धर्म ध्याईयौ ॥ १२६ ॥

चौपाई–इम विध जैन धर्म उद्योत, नित यौं वृध दोज ससि जोत । सहंस बरस गत कर इक वारे, ऐसे होवै बीस बहोर ॥ १२७ ॥ जैन धर्मके द्रोही जान, इकीसमेको सुनो बखान । जल मंथन सब नृपमें मुख्य, पापी अधिक अज्ञानी रूख्य ॥ १२८ ॥

दोहा–इन्द्राचार्य तनो जु सिष, वीरांगद मुन नाम ।
सर्वश्री अजिया अग्निल, फाल्गुनसेना वाम ॥ १२९ ॥
सो दुखमा कालांतमैं, होय जीव ये चार ।
तीन बरस बसु पख अरध, सेस काल रह्यो सार ॥ १३० ॥

चौपाई–तब वीरांगद आदिक चार, अंतराय इन मुक्त मंझार। कर सन्यास सुरग चव जात, कातिक अर्ध स्वाति शिव प्रात ॥ १३१ ॥ भूप नास मध्यान मंझार, सध्या अन्न अगन सब छार। अरु षट कर्म धर्म आचार, जासी मूल थकी ततकार ॥ १३२ ॥

दोहा–इनके मध मधके विषै, हो अध कलकी और।
तेमी इकीस जान दुख, परजाकूं दे घोर ॥१३३॥

चौपाई–ए सब दुष्यम काल सुरीत, अब सुन अति दुष्यमकी मीत। वीस वरस थितकर तन सवा, अवर्ति मुक्त दोऊ गत गवा ॥ १३४ ॥ केतेक दिनमें पटन सयाद, तब पात्रा दिनतें तब छाद। सो वीनसेरु नामे फिरै, वनमैं कपवत फल भख करै ॥ १३५ ॥ अतिदुखमामैं वरषा अल्प, आय कायबल जन्मै सुल्प। क्षीन भयौ इम अंजुलि तोय, कालदोपतै जानो सोय ॥ १३६ ॥ षोडस वरस एक कर देह, काल अन्त जन जानौ एह। अथिर सुभाव कृष्ण तन रुक्ष, दुरभग दुषमल चित दुरलक्ष ॥ १३७ ॥ विकटा त्रितरद वक्र असंत, दुरबल गडानन दग तंत। चिपटी घ्रान रहत आचार, क्षुधा प्यास पीडा अधिकार ॥ १३८ ॥

औरस रोगी रहत इलाज, दुख्य स्वाद क्षायक बिनलाज। इस विध काल गंवावें सबै, अति दुख्यमके अंत सु तबै ॥१३९॥ घटत घटत सब घट है वरा, नीरमूख सबी हो धरा। थल २ पटै रुद्र मही अंत, कछु न बाकी सबी नसंत ॥ १४० ॥ और

कहा अधिकीमें भणूं, जित तित प्रलय सुजीवण तणो। इक जोजन भूदग्ध सु होय, अधो अग्नि कारन अवलोय ॥ १४१ ॥
गंगा सिंधु नदीको पार, छिद्र बिले जिह थान निहार। और वेदका खग गिर तनी, तेजु भग अति निरभय मनी ॥१४२॥
जुगल बहत्तर मानुष तना, कुल जु बहत्तरका उपजना। तिनै लेय खग तितले धरै, तेउ तरू छुवक जमगम कर ॥ १४३ ॥
अरु सरिता उपजे कछु मीन, मेंडुक आदिक भक्षन कीन। दीन अनाचारी इस रीत, रहसी अब सुनो मम मीत ॥ १४४ ॥

दोहा—वर्षा होवै सात जब, सप्त सप्त दिन एक।
प्रथम सप्त दिन बात अति, सात निरस जल टेक ॥१४५॥
फिर खारी जल जहर फुन, अगन रु रज जुगजान।
फुन अग पुंज जु धुम्र जुत, इम सब अंत प्रमान ॥१४६॥
इम अब सर्पणी कालतैं, घटत घटत घट जात।
चित्रा प्रथ्वी प्रगट हो, आगैं सुन सु विख्यात ॥१४७॥
अति दुखमा फुन काल यह, थितबल बुध सुख गात।
अब सब बधती जायगी, उत्सर्पणीमें बात ॥१४८॥
अब सर्पणीको प्रथम क्रम, छठेकाल समपेख।
तामैं वर्षा सात फुन, सप्त सप्त दिन एक ॥१४९॥

चौपाई—जल वर्षा तैं हो भू सांत, पय वर्षा तैं मृदु कशांत। घृत वर्षा तैं भू चीकनी, विष्ट इक्षु रस मिष्टापनी ॥ १५० ॥
सुधा विष्टतैं सुधा समान, फिर भू होय सुगंध महान। हर दुरगंध सु सीतल होय, मिट आताप प्रमित दिन सोय ॥ १५१ ॥

साकर दूध वह फल फूल, होई नाना विध अंकुर। फैले महक अधिक तिह जोय, तब गंगादि विलनतैं सोय ॥ १५२ ॥ जुगल बहत्तर जुग नर पसु, नाना जुगल रूप है लसु। तब सब आरज सरल सुभाव, जानन धर्म कर्म परभाव ॥ १५३ ॥ आयु रु काय काल थित जान, छट्टे सम इस आद प्रमान। फुन पंचम सम दूजो होय, तामें अंतमें कुलकर जोय ॥१५४॥

फिर चौथे सम तीजो काल, तामैं त्रेसठि पुरुष विसाल। होवै चक्री हरजुग हली, तीर्थंकर सुन नामावली ॥ १५५ ॥ महापदम पद्मानन एव, सूरदेव तेवं हरदेव। देह सुपाम सुपार्श्व सुवास, स्वयंप्रभु स्वयंप्रभ भास ॥ १५६ ॥ जय सर्वात्मभूतसु निहार, देवपुत्र जगसुत सम पार। जिनकुल नाथ नमैं सुर साथ, वसुम उदंगनाथ मुननाथ ॥ १५७ ॥ प्रश्नकीर्ति प्रश्नोत्तर देव, जयकीरत कीरतगुन गेह। मुन सव्रत सुव्रत दातार, अरे अरिनास किये सव छार ॥ १५८ ॥ जय निष्पाप सु पाप हरंत, निष्कषाय सकषाय हनत। विपुल त्रिपुल गुण ज्ञान समोह, निरमल निरमल धीकर मोह ॥ १५९ ॥ चित्रगुप्त त्रियगुप्तसु धार, धरै समाध गुप्त सु अहार। स्वयंबुध सु स्वयंभु भए, जगत अनिविरत होय व्रत लिये ॥ १६० ॥ जयवंतो जय नाथ इकीस, विमल विमल पद दीजै ईस। देवपाल सब जन प्रतिपाल, धर्मोमत वीर्य गुनमाल ॥ १६१ ॥

दोहा—होनहार भावी सु येह, तीर्थंकर चौवीस।
देव सु जिन गुणसेन धर, लाल निवावत सीस ॥ १६२ ॥

चक्री हल धर जुगहरी, हो त्रेसठ ए जोर।
दुख सुखमा तीजैं सु जम, इकदव कोडा कोर ॥१६३॥
फिर दो तीनरु चार दव, कोरा कोरी काल।
जघिन मधम उत्कृष्ट त्रिय, भोग भूम हो हाल ॥१६४॥
काल तनी इम फिरन है, आरज खंड मंझार।
म्लेछ पंचरु पांद्र पै, प्रलय न होय निहार ॥१६५॥
सतक वीस ब्रम स्रप कर, आयु काय घटनांह।
कोट पूर्व सत पंच धनु, बढै न नर तिह ठांह ॥१६६॥

चौपाई–आगे इम आरज पंडदर्स, भए सलाक त्रिसठ पुर्स। चक्रवर्त बलदेव मुरार, जिन चौवीस नाम उर धार ॥१६७॥ जो निर्मंच देत निर्वान, सागर भवसागरको जान। महा साधु साधू निरग्रंथ, विमल २ कर प्रघट सुपंथ ॥१६८॥ सुद्ध भाव करहै सुभ भाव, श्रीधर समोसरन युत राव। दाता श्री श्रीदत्त जिनेस, करहै अमल अमलप्रभ वेस ॥ १६९ ॥ आय इधर प्रभ और निहार, अग्नि अग्नि कर्मधन जार। प्रभ-संयम संयम दातार। कुसमांजलि कुसमांग निवार ॥ १७० ॥ शिवगुण जिन शिवके गुण देत, प्रभु उत्साह उत्साह करेत। ज्ञाननेत्र ज्ञानाक्ष सुकरही, परमेसुर परमेसुर तुही ॥ १७१ ॥ विमलेस्वर वंदै विमलेस, भास यथार्थ यथार्थ जिनेस। सुप्रभु यसोधर यसोधर नाद, हरप्रभ कृष्ण कृष्न लेस्याद ॥ १७२ ॥ मत ज्ञानादि देह मत ज्ञान, कर विसुध मन कुबुध सु हान। प्रभु श्रीभद्र भद्र गुन नमैं, सांत सांतकर भवदुख हमैं ॥१७३॥

दोहा—यही चुवीसी तित नमै, देव सु जिन गुनसेन।
सो मघवा तुझको करौ, उज्जल मंगल चैन ॥१७४॥

चौपाई—पुरुष सलाका कथन विचार, ग्रन्थ बधनतैं मैं न उचार। दत्त नाम गणधर इम भनो, सुन मघवाद हरख कर घनो ॥ १७५ ॥ अब श्रीदत्त देऊ उपदेश, सुनो सभा सब मुदित वसेस। विन मरजाद काल बीतयो, तामैं जीव दुखी अति भयो ॥ १७६ ॥ विषयन वश कर राग विषाद, तावस भूमो विना मरजाद। सोई विमय ज्ञान पंचक्ष, प्रथम फस वस्तु विषय प्रतक्ष ॥ १७७ ॥

कवित—विस्तारादि मृदु नाव द्रव्य सुफर्श राग जानै राग जानै जो अरी। विषमिश्रित सैवै सुदावत कता फर्सत मृतु होत ॥ सुवरी मुदगण भूमनाद कठन अति फर्सत वज्रकणी अतिभरै। भूमन चूमै देहमैं बहु विधि सो दुख राग तनै वस मरै ॥ १७८ ॥ कुंकुम बहुते लादि सुगंध सुना फर्सत बहु जन लइ चैन। इम कोइ ज्ञान मंत्र पढ़ पढ़वै दाइ सु वस कर है बव मैन ॥ कस्तूरी द्रव अंजन सिंदूर बहु फर्सत आनंद लहै अमान। तावस ज्ञान करै तंत्रादिक ताके साथ सुनिज वस ठान ॥ १७९ ॥ सत्तु तेल रु अंजनादमैं विष मिलाय दे डारै मार। इलैचो फस विसय वस आतैं कोच फलीको रुंवा डार ॥ अर्कतूल आदिक बहु हरवै जाइ फस सुख लइ वस राग। भारी भूसनाद फर्सत तसु सुख दुख उपर लख बड भाग ॥१८०॥ उष्ण द्रव्य जो महक धूंवा मण कंवल मोगु मोग अपार।

हिम रितुमें सुखदायक सब ही, ग्रीषममें दुखदाय अपार ॥ वाहिम कर मृजाद विन जो अतिता वस उष्म वस्तकूं खाय। ततछिन दाह ज्वरादिक हो है पट घरमें लुक दम घुट जाय ॥ १८१ ॥ ग्रीषम रितुमें पोन जलादिक अति सीतल फर्सन धर राग। ततछिन दे दुख वे मृजाद ही हिम रितुमें दुखदायक लाग ॥ इह आठां पे मंत्र तंत्र अरु जंत्र चलै पर बस हो नचै। जूं वाजी गिर गह कपि फेरै वाके दोमद्ध जूं जन मचै ॥१८२॥

चौपाई—सुखदायक मिलने तैं राग, मिले विनाकर दोष अभाग। जो दुखदाय मिलै कर दोष, विना मिले अति ही सुख पोष ॥ १८३ ॥ देखो वारन रहै सु छंद, वनमें लीला करै अनंद। महावंम विजियादिक मांहि, उपजोन्नत तन उन्न भय दाहि ॥ १८४ ॥ काल वरन मनु जम भय दाय, जासुन शब्द सिंह भग जाय। ऐसे गजकूं ओ वस करै, सो नर चतुराई विस्तरै ॥ १८५ ॥ करै विव करनी कीजोय, ताकूं जर घर सनमुख सोय। दंती देख विषय बस फास, आवै मुद मदांध लख ताम ॥ १८६ ॥ दाव पाय तसु चोट चुकाय, गजार्थीभि सिर बैठे जाय। अति फिराय मद रहित सु करै, बांध जंजीर रच वस अनुसरै ॥ १८७ ॥

देखो नाग महाबल भरो, फास विसय बस बंधमें परो। मुन जन यावस तप छिटकाय, तो अन दीनन कही वपाय ॥ १८८ ॥ कोई मीठेकू अति चहे, मिले सुरूप अनमिल दुख लहै। मिले लुब्ध खावे जो घना, सोई दुख पावे अति घना

॥ १८९ ॥ त्यौंही षट रस विसय सुभाव, कटुक कीस आदिक रस मान। पुंगी एला लोंग तंबोर, वस्तु इत्यादिक लायक छोर ॥ १९० ॥ तीखा लवन मिरच कर युक्त, जामैं राग मिले अति भुक्त। तो दुख लहै तथा विन मिले, सो दुख लहै प्रमित वत मिले ॥ १९१ ॥ यापै मंत्र यंत्र अरु तंत्र, चाले नाना गुन उचरंत। खाय विसय वस करन विचार, परवस दुख लह बात न छार ॥ १९२ ॥

जलमें मछली केल करंत, काहुसैं न विरोध धरंत। मांप लोलपी कीर सुआय, जलमै देवै जाल विछाय ॥ १९३ ॥ कंट वा लोह बंधो ता मांहि, तामुख चून पिंड गह्यो छांह। रसना लोलप झख तिह आय, चाढै ताहि महा दुख पाय ॥ १९४ ॥ इक तनवर खैचै झट तांह, कंठ वामीन कंठ चुभ जाइ। सो तडफत ही छोडै प्रान, रसना वस दुख भयो महान ॥ १९५ ॥ फुनि त्यौं जान सुगंध दुरगंध, राग दोष करहै मद अंध। हिम रितुमें भूपाद महान, अगर धूत्रादिक घरमें ठान ॥ १९६ ॥ निसमें सोवै धूंआ रोक, कंटकअसर लह दुख धोक। ऐसे गंध लोलपी घने, प्रतिछ और दिष्टांतिक भने ॥ १९७ ॥

गंध लोलपी पंपै भृंग, सूर्योदय आतिष्ट उमंग। लेत लेत गंध तृप्त न भयो, एतेमें दिनकर छिप गयो ॥१९८॥ मुद्रित भयो कमलमें भृंग, कंटक चूभ रु भिचो सरवंग। तडफत ही तिन छोडे प्रान, घ्रान विषय वस ए दुख जान ॥ १९९ ॥ नेत्रहु विषय मूल पण नाम, सेत रु रक्त पीत हरि स्याम।

देखत मरै दृष्टिविष सर्प्प, नार लखे उपजै तब दर्प्प ॥ २०० ॥
चाह एक इकको जो धरै, मिले राम अमिल दुख भरै । देखो
सारंग देख पतंग, त्रिभुवनैक बिलोक अभंग ॥ २०१ ॥ मुदित
जाय दीपगमैं परै, सहै दुष्य ततछिन जल मरै । नैन विसय
ऐसो दुखदाय, यातैं जान तजो बुध राय ॥ २०२ ॥ श्रोत्र
विसय सुगसु सुर दुस्सुरो, यह प्रतिक्ष मोह निमंतगे । सुनते
जाग पुरुष जो कोय, सोई तुरत ताहि वश होय ॥ २०३ ॥
केई पुद्गल राग बजाय, दीपकसैं दीपक बल जाय । राग मलार
लाय घन घेर, बिन रितु जल बरसावे हेर ॥२०४॥ इत्यादिक
पुद्गल बस घने, तो जीवन गन ना को गनै । उरग कान वस
परवस थाय, तथा शिकारी बनमैं जाय ॥ २०५ ॥ गन सारंग
अदम हो देख, गावै पंचम राग बसेख । कूदन फिरत हिरन
गन सुनो, जित तित थके सुमृग्त मनो ॥ २०६ ॥ थक मयंक
तब देख मृगार, मृगया करै चांप मर छार । लगत सु तीर
घोर मृग सहै, तरफ प्रान तज परगत लहै ॥ २०७ ॥ राज
तने वस जो को होय, ते ऐसी गत पावै सोय । इम इक एक
विसय वस भए, ऐसे ऐसे दुख तिन लिये ॥ २०८ ॥
जे पंचाक्ष विसय वस होन, ते दोऊ भवमैं दुख लीन । बृष
मग विन भोवनमैं फिरै, सो कुगांध निगोदमैं परै ॥ २०९ ॥
फुन कषाय सब ही दुखदाय, पहलीवार नरक ले जाय । पाह
नरेश क्रोध नहीं घटै, मरन प्रजंत जीव नित रटै ॥ २१० ॥
आठा थंभ समान सु मान । मुडै नहीं वा जावो प्रान ।

मायावश बिडावत जान, सरल रंच नहीं करे बखान ॥२११॥ लोभ लाखके रंग समंग, कपडा फटे कटै नही रंग। अपने रंचक स्वारथ हेत, परको बुरो महा कर देत ॥ २१२ ॥ फुन अप्रत्याख्यानी चार, तिनको धारै जीव अपार। समय पाप समझाए छार, सोले तिर जग गत अवतार ॥ २१३ ॥ क्रोध रेख हल थंभ मानस्त, मेष भृङ्गवत मायाग्रस्त। गाडी धुरा मैल सम लोभ, अब इन कथन सुनौ तज्ञ क्षोभ ॥२१४॥ यही दीपमें पुव्व विदेह, पुषलावंती देस सनेह। उत्पल खेट नगरको भूप, वज्रजंघ नामा बुधि कूप ॥ २१५ ॥

श्रीमती राय तनी पट नार, एक दिना पाई यह सार। पुंडरीकपुर और अनूप, वज्रदंत चक्री तिंहु भूप ॥ २१६ ॥ श्रीमति पिता सुधर बैराग, अमिततेज सुतकूं कर राग। कह्यौ राज करसो नही लेय, सम विष भुक्त सुधी लख हेय ॥२१७॥ पुंडरीक पोतेकू देय, आर आतमा काज्ञ करेय। सो सिसु पेन राज सब थंभै, वज्रजंघसु बुलायौ तबै ॥ २१८ ॥ इम चाके सुन वज्र सु बैन, ततछिन चलौं करन सिसु चैन। मगमें सर्प सरोवर तीर, डेरा तहां करो धर धीर ॥२१९॥ नृपके भोजन हुवो तयार, तब मनमें इम कियो विचार। जो मुनको भोजन दे भखें, तो निज जनम सफल अब लखै ॥ २२० ॥

तित चारन जुग आए मुनी, दमवर सागरसेन जु गुनी। तिननै यही प्रतग्या धार, आज विपनमें लेय अहार ॥२२१॥ पूरब पुन्य उदयतै भई, दातृ पात्र विध सब मिल गई। दपति

नौधाभक्ति सु करै, सप्त सुगुन दाताके धरै ॥ २२२ ॥ विध-पूर्वक मुन भोजन घटो, तब सुर पंचाश्चर्य सु ठटो। ले अहार ले अहार मुन गए एकांत, गुर लख चार जीव भए सांत ॥ २२३ ॥ फिर नृपतिन दर्सनको गयो, मुन लख हस्त जोर सिर नयो। धर्मबृद्ध दे वृष उपदेस, सुनो धार आनंद महेस ॥ २२४ ॥ फिर निज भव पूछे मुननपै, सुन अतीत भवगुर इम अख। प्रथम दीपमें अपर विदेह, गंधलदेस सिंहपुर जेह ॥ २२५ ॥

तहां श्री ब्रह्मा राजकंवार, बालकपनमें मुनव्रत धार। खग विभूत लख करो निदान, प्राण त्याग तित धग गिर थान ॥२२६॥ उत्तरदिस अलकापुर भूप, हुवो महाबल खग गुन रूप। श्रावक व्रत पाले बड़भाग, प्रान समाध मरन कर त्याग ॥ २२७ ॥ दुतिय सुरगुमें श्रीप्रभ जान, भयो देव ललितांग महान। सो चय वज्रजंघ तू भयो, फुन भावी भव सुन मुन चयो ॥२२८॥ मरन लहै निमघरमें जान, लह भूभोग पात्र फल दान। उत्तर कुरु उत्तम सब भोग विविध लहै सो पुन्न नियोग ॥ २२९ ॥ तितसूं चय ईसान दिव मांहि, श्रीधर देव होय सक नांहि। श्रीब्रह्मातै भोग सुमंत, श्रीमति तुम तिय भई गुनवंत ॥२३०॥

फुन तिय लिंग छेद सुर होय, सो तुम कनै सयंप्रभ जोय। श्रीधर चुत जंबू दीपेस, पूर्व विदेह महाकछ देस ॥ २३१ ॥ होय सुबुध सुसीमापुरी, एक समय नृप दीक्षा धरी। कर समाध हो चरम सुरेंद्र, पुण्डरीकपुरमें चय इन्द्र ॥ २३२ ॥

होय सु वज्र नाम चक्रीस, फिरत परिग्रह होय मुनीस। शुद्ध भाव तन धार नरिंद्र, सरवारथ सिद्धमें अहमिंद्र ॥ २३३ ॥ तितस चयकर प्रथम जिनेस, भरतक्षेत्रमें होय महेस। इम नृप भव सुन हर्ष प्रकाश, चार जीव बैठे मुन पास ॥ २३४ ॥ नोल सिंह कपि सूकर एह, सुनत आय शांत भए जेह। लख संसै कर नृप पूछंत, शांत भए किम कारन संत ॥ २३५ ॥ फल भक्षी अरु क्रूर सुभाव, इन हिंसकको भेद बताव। तब मुन कहैं सुनौ भूमेस, यही देशमें गजपुर वेस ॥ २३६ ॥ सागरदत्त तिया धनवती, नृप कोठारी सुत दुरमती। उग्रसैन कर चोरी सदा, घृत तंदुल नृपके ले पदा ॥ २३७ ॥

दोहा—वेप देख निज पुत्र इम, नित समझावै तास।

सो नहीं मानै रंच भी, कर निसंक मुद ताय ॥ २३८ ॥

चौपाई—वेस्यानै दे गहतल रक्ष, बांध छुरी विष मारो दक्ष। जो मैं भी होतो बलवंत, नृपकूं दुख देतो सु अनंत ॥ २३९ ॥ प्रत्याख्यान क्रोध इम धरो, सो मर सारदूल अवतरो। विजयपुरीमें नृप महानंद, तिय वसन्तसेना गुणवृन्द ॥ २४० ॥ ता सुत हरवाहन जुत मान, मात तातको विनै न ठान। इक दिन आज्ञा लोय सु भजो, लगो ठमक गिरियो दुख सजो ॥ २४१ ॥ मस्तग सिल लग फूटो जेह, सूर मान जुत मर भयो एह। धान्यकपुरमें वनक कुबेर, नागदत्त सुत छल जुत हेर ॥ २४२ ॥ दुहिता ब्याह निमित्त वित जुदा, यातैं गाडहाटमें मुदा। नागदत्त बहु छलबल संच, याके हाथ न आयो रंच ॥ २४३ ॥

सो ताको आरत कर मरो, यह मायावस कप अवतरो। प्रतिष्ठत पट्टणमें वैस, धनलोमी लुब्धक नामैस ॥ २४४ ॥ करे कन्दोई पण बुध धरै, एक समय नृप जिनगृह करै। ढोवै ईट मजूर सु हुवा, इक ईट दे नित पुवा ॥ २४५ ॥

फोड ईट कनकमय जान, लगो लोभ ताकूं अधिकान। इक दिन निज पुत्रीपुर गयो, अंगजकूं ऐसे कह दियो ॥२४६॥ लावै ईंट मजूर सु तिनै, पुवा दे ले ईटमि मनै। ऐसे कहर गयो ग्राम, सुतन कियो पीछै इक काम ॥ २४७ ॥ ईंट जिनालेकी कनमई, लेको विध बाँधै अधिकई। आय पूछ सुतसूं कर कोप, लष्ट उपरु कर मारो रोप ॥ २४८ ॥ फुनि निज पग तोरे कर लोभ, सुन नृप दण्ड दियो कर छोभ। सो मर भयो नोल यह आय, इम नृपसूं माख्यो मुनराय ॥ २४९ ॥ जाती सुमरन भयो इम राय, तुमरो दान देख हरषाय। अनमोदन कर ता परसाद, भोगभूमि ए चव जिय लाध ॥ २५० ॥

अबसैं अष्टम भवके मांहि, तुम जिनवर ए सुत उपजांहि। देव सयंप्रभ चर श्रीमती, हासी नृप लह तुम सम गती ॥२५१॥ तुम जिन पात्र दात्र सो भूप, तब जुग प्रघट करो जुग रूप। तुम भव सिवपुर जावो यथा, यह कषायकी पूरन कथा ॥२५२॥ फुन चव प्रत्याख्यानी जान, क्रोध लीक रथ काष्ठिव मान। छल गोमुत्र लोभ तन मैल, इनको तुछ उदै नरगैल ॥२५३॥ फुन सज्वल क्रोध जल रेख, मानवैत छल चमर परेख। लोभ हलदसम सुनकै उदै, ऐ चो सुर पद दे सिव मुदै ॥ २५४ ॥

अंध हुए अपंगु कुबरा, गहला मूक रोगकर भरा। उनकी हांस करे वह काय, सो मर तास महो दुख पाय ॥ २५५ ॥

जो परपीडे कर अति हांस, सो लहै नरक निगोद कुवास। या विध हांस करम दुखदाय, ऐसी जान तजो भो राय ॥ २५६ ॥ भोग और उपभोग जु दर्व, दस विध बाह्य परिग्रह सर्व। पूरव पुन्योदित जो पाय, तिनमें एकमेक हो जाय ॥ २५७ ॥ सो रत कर्मोदय बस मरै, तो फिर दुर्गतमें अवतरै। वा अघ उदय मिलै विषयुक्त, ताग्रह तडफ तडफ तन मुक्त ॥ २५८ ॥ इन सब दर्व विखे जो राच, पूरव एन उदै सुक दाच। तामै तै कोई नस जाय, तब अति आरत कर दुख पाय ॥२५९॥ ता आरतमें छुटै प्रान, सो दुरगत दुख लहै निदान। अथवा सोक उदैसु कोय, करै पुकार सु रोय सु रोय ॥२६०॥ सिर छाती कूटै अकुलाय, वा तिस सोक विषै मर जाय। दुरगत जाय सहै दुख घना, जानै कोन केवली विना ॥२६१॥ ऊपर कहे सात भय जान, ताकै उदै सु छूटै प्रान। सोवी भव वनमें बहु भ्रमै, सुगुरु सीष विन किम शिव गमै ॥ २६२ ॥ असुचि द्रव्य नाना विध पेख, रोग ग्रसत काहु जिय देख। घ्रान मोर थूकै कर ग्लानि, हो भव भवमें तास समान ॥२६३॥ कारन मिलै नकारज होय, दोनौमें जिह एक न कोय। मनमें नरके त्रियकी चाह, नारी मनमें नर उछाह ॥ २६४ ॥ होय नपुंसकके दोऊ चाह, वा तिहु भाव इकिक थाह। ताही भाव उदै जो मरै, सो मर नरक निगोदे परै ॥ २६५ ॥

कथा कुमावती सुन एक, सिंधु रमन समुद्र विसेख। तामें राघो मछ महान, लंबो जोजन सहस प्रमान॥ २६६ ॥ सो मुख फाड पडो जल मांहि, ता मुखमें जिय आवै जांहि। सो काहूको कुछ नहीं करै, भूख लगै जब उदर सुभरै ॥२६७॥ जब तौ हिंस्या करहै सही, और समय मनमें हूं नही। ता दगमें तंदुल लघु मछ, सो सब देख झुरै निज अक्ष॥ २६८ ॥ जो ऐसो तन मुखमें धरूं, तो सबहीको भक्षन करूं। ऐसे भावनके परभाय, सो मर नरक सातवें जाय॥ २६९ ॥ इम लख छांडो विमग्र कषाय, कह्या दत्त गनधर ए भाय। सुन सब सुरनर मुद गुन रास, विषय कषायसु भए उदास॥ २७० ॥

फुन भाषै गनधर सुन राय, षट लेस्या जियकूं दुखदाय। कृष्न नील कापोत रुपीत, पद्म सुकल गह तज विपरीत॥२७१॥ सुन इनको दिष्टान्त अबार, षट जन रहै इक नगर मझार। एक समै ते क्रीडा हेत, चले विपनमें हर्ष समेत॥ २७२ ॥ तित तिन लखी सफलित सहकार, निज लेस्या सम भाव विथार। याको जडसे काटो यार, तब सब फल मख हैं निरधार॥२७३॥ इर लेस्या धारीके वैन, सुन दुतिय बोलो फिर ऐन। याकी साषा छेदो सब्ब, हम तुम फल चाखेंगे सब्ब॥ २७४ ॥ फिर तीजो कह फल जुत डाल, लघु छेद पारो दरहाल। चौथो कहै अब सब हरो, ताको मारखो और क्या करो॥ २७५ ॥

पंचम कहै पक्क फल चूंट, चूषो अरु सब तरुफल छूट। षष्टम कहै पडे भू मांहि, भखन जोग इन बिन अन नांहि॥२७६॥

निज निज लेश्याके परभाव, भए भाव तिनके तिह ठाव । छहो विषै खाये नहि किनै, तिन भावनवस अघकर सनै ॥ २७७ ॥ वाफल नर्क निगोद मंझार, सहै दुख नाना परकार । इम सुन लेश्या केतेक अत, असुभ त्याग सुभ ग्रहन करंत ॥ २७८ ॥
दोहा—फिर गनधर कहै सबनकू, सात विसन द्यो छार ।

जूत मांस मद नगर तिय, खेट चोरि परनार ॥ २७९ ॥

गीताछंद—अघदूत सब संकेत आपद हेत अजस सु खेत है । अरु दालिद्रा करि झटकी धुज विसनराज परे तहै ॥ फुन सख बडाई सुजस धन विश्वास चन्द्रकु ग्रहनए । सो तजो बुधजन विसन सात सु सात नर्क निस नए ॥ २८० ॥ फुन भूमि तरु गिरतै न उपजै असुच अति घिन रासको । जेकर सुदीनन पशु हिस्या दुष्ट इम भख मांसको ॥ अब देख अपराधन हिया नहि मया तन मन वै नए । सो तजो बुधजन विसन सात सु सात नर्क निस नए ॥ २८१ ॥

कृमरासि निषध कुवास मदिरा जाय सुच ता धुवत ही । सो पिये तन दह जाय सुध मुखमें कुकर जुत चुवत ही ॥ तब जननी तिय सम जान गह लावत भनै दुरवै नए । सो तजो बुधजन विसन सात सु सात नर्क निसै नए ॥ २८२ ॥ धन हेत प्रीत पीलत गुडजू करै नाइन तूरजू । अरु खाय फल मद नीच मुष लव फरस गंडक सूरजं ॥ अत कूर भावरु नर्क दूती भोजणनकामें नए । सो तजो बुध जन विसन सात सु सात नर्क निसै नए ॥ २८३ ॥ हिस्या न अस तन धन त्रिया [illegible] हरन

मद वेस्या रमें। अर दूत कर धन नशा बिन वनमें फिरै भ्रम मुख पमें॥ इम मृगी दीनपे दया बिन दुठ खेट कर अघमै नए। सो तजो बुधजन बिसन सात सु सात नर्क निस नए॥२८४॥ भय जुत चु कायल रहै नित त्रित हरै डरना मरनकौं। मारै धनी लख घने दुर्जन तब गहै किह सरनकौं॥ नृप तो परो पउ डाय सुत चोरी अमित अघै नए सो तजो बुधजन बिसन सात सु सात नर्क निसै नए॥२८५॥ दुत दीपसम परनार तज लख कुजन पडत पतंगसे। सो सहै दुख निज दहै तन तज शीघ्र मार मतंग्रसे॥ इम लख सु अदन विसय वसकर अनीत नसै नए। सो तजो बुधजन बिसन सात सु सात नर्क निसै नए॥ २८६॥

चौपाई—इम सुन मघवादिक बहु जने, रगागत भए बिसन अघ सने। कहै दत्त गनधर फिर इव, दुखमें सुख मानत जग जीव॥ २८६॥ ताको सुन दिष्टांत विशेक, भूलि भ्रमें वनमें जन एक। भरन थाइ नहि दगारन कही, दन्ती सुपंथी देखो तही॥ २८८॥

सोरठा—गज लागो ता पूठ, पथिक करी लख आवतो। मगो न यामें झूठ, चितवै काकी सरन अब॥ २८९॥

कवित—क्षुधा तृषा अरु उष्न पीड अति मगको खेद भयौ अतरार। भगत भगत इक वट तरु देखौ जम सम पृष्ट लगो सु डार॥ ता तरु तल इक अंध कूपके अंत पडा अजगर मुख फार। मय चौ दिश भ्रममें चौफन धर तित इक सर जड

लटक निहार ॥ २९० ॥ ताकूं अलि सित मूषक काटे इम निरखत सो आयो तत्र। गज मय सर जड गह तित लूंबो हालतके अह आदि सर्वत्र ॥ मक्ष म्हाल थोवट साखा पर ता गह सूंड हलावै करी। मक्ष आय तनकू काटे सहत बूंद इक दो मुख परी ॥ २९१ ॥ तब एक खग नम मगमें जातो इम लख दुखी दया मन आन। या ढिग आय कहै इम नमचर अहो भद्र तू बैठ विमान ॥ तब यह भनै बूंद इक मधुकी जो अरु मो मुख परै महान। तब उस स्वाद लेय कर चालू जब फिर पडी बूंद इक आन ॥ २९२ ॥ खग कहै लेय चुको रस अब चल क्यों नाना दुख सहै इत भांत। पंथी कहै और इक आवै ताइ स्वाद कर चलहु साथ ॥ इम विद्याधर बहु समझायो समझो रंच न सही असात। ऐसे सब जगवासी जनकी गेत जानियो तुम भो भ्रात ॥ २९३ ॥ भव वनमें पंथी सम प्रानी रोग सोग सम भूख रु प्यास। चिंता सम है पीड उसनकी नाना क्लेष खेद मग मास ॥ काल करी सम पीछै लागो आयु सरकडा जड गह लूंब। निस दिन ऊंदर सम नित काटे चौगत सम अह जरा सम कूव ॥ २९४ ॥ तक निगोद सम अजगर पर जन माखी सम तन धन सम खाय। पुत्रादिक सम स्वाद बूंद मधु अब चाह सम दुख विसराय ॥ इम दुखमें लख दुखी दया कर गुरु विद्याधर टेरत आय। कहक एक बूंद अनस्वादू फिर गुर कह अब तो चल भाय ॥ २८५ ॥

चौपाई—ऐसे सुगुरु दया उपजाय, कहोत बार ताकूं

समझाय। समझो नांहि रंच सुख हेत, सो नाना विध दुख सहेत ॥ २९६ ॥ इम गुर तो उपगार ही करै, समझै नहीं तु फिर क्या करै। यातै लख तुम समझो भाय, तजो कुमारग जो दुखदाय ॥ २९७ ॥ इम मघवादि घने नर सुरा, तिरग इख सुन तन मन धरा। काचित मुनिव्रत काचित गृही, केतांन जिय सम्यक् धर ही ॥ २९८ ॥ फिरकर प्रश्न जु मध भूपती, जिनवानीकी संख्या किती। कहै दत्त सुनिये नर नांह, जिनवानी दध अगम अथाह ॥ २९९ ॥ निज निजमत भाजन भर सवै, कहै प्रमान सु तावत फवै। पण श्रुतकी जो संख्या सार, वृषभसेन गणधर उचार ॥ ३०० ॥ वृषभदेवकी धुन अनुसार, त्यौं चन्द्रप्रभ धुन विस्तार। ता समभैं रचि करतो कहुं, अक्षर भेद प्रथम वरनहु ॥ ३०१ ॥ अ इ उ ऋ ऌ ए ऐ ओ औ, ह्रस्व दीर्घ प्लुत कर सहु। ए सत्ताईस अंक प्रमान, विंजनते तीस बच मय जान ॥३०२॥ क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म, य र ल व श स ष ह।

दोहा—अं अनुसार विसर्ग अ, जिभ्या मूलेपु ध्यान।
　　दोऊ समस्या ता लखो, चौसठ अंक प्रमान ॥ ३०३ ॥
　　कोई संसै धर कहै, ए ऐ ओ औ चार।
　　कहो कैसे ऐ लघु भए, सुन उत्तर निरधार ॥ ३०४ ॥
　　सहंस्कृतमैं दीर्घ ए, पराकिरतमैं ह्रस्व।
　　वा भाषा बहु देसमें, तहां ह्रस्व सर्वस्व ॥ ३०५ ॥

चौपाई—अष्ट थानतैं उपजै एह, ताको भेद सुनो धर नेह।
कंठोत्पत सुर जुग रुक वर्ग, वसु महकार रु नवम सर्ग ॥३०६॥
फिर जुग सुरयम पंचम पांत, तालूतरत रसना फर्स सांत। फिर
जुगसुर पवर्ग मिल सात, ए जुग होट सपर्शोत्पात ॥ ३०७ ॥
फिर जुग सुर टवर्ग रख नोय, उर्धोत्पत मुर्धनि कह लोय।
तालूपर रसना फरसंत, तस्या ग्रोलट झट उचरंत ॥ ३०८ ॥
जिभ्या मूली रसनाकार, फिर जुग सुर रु तवर्ग सकार। रद
रसना फर्सोष्ट निसांक, क च ट त प पण वर्गा तांक ॥३०९॥
ए अनुस्वार रच थल अरु घ्रान, तिन दोऊपै उत्पति जान।
वर्णोपर जा हुअनुसार, सो इक नासातैं उचार ॥ ३१० ॥ ए
ऐ कंठ तालूपै कहै, ओ औ कंठ होठमै लहै। दंतोष्टोत्पत एक
वकार, इय वर लय उरतैं उच्चार ॥ ३११ ॥

दोहा—आदिमु विंजनके विषै, मिलै प्रथम सुर आय।
तब वो व्यंजन ह्रस्व हो, फुन सुर मिल गुर थाय ॥३१२॥
पहले सोलै स्वर कहे, ऋ ॠ ऌ ॡ ढार।
सेस दुषट व्यंजन मिले, बारै रूप निहार ॥ ३१३॥
संयोगी इत्यादि फुनि, मिलै परस्पर अंक।
सो संयोगी कहत अरु, सम मिल दुत्त कहंक ॥३१४॥
रेफ ऊर्ध्वे जल तुम्ब वत, भाषामें लघु दीह।
कहु संयोगी रेफ दुत्त, लखे सुबुद्धि जोह ॥३१५॥
विंजन लघु गुर रेफ फुन, युक्ता संस्कृत मांहि।
लहु गुर दुत्त प्राकृतमें, इम त्रिय वर्ण लखांहि ॥३१६॥

चौपाई- इन अंकन करिके पद होय, सो सब विषमकथामें जोय। मध्यम पदसैं संख्या जान, द्वादशांग रचना परवान ॥ ३१७ ॥ सीस करा दाष्टांग जु नरा, त्यौं श्रुत द्वादशांग मित भरा। सुना चार जुत आचारंग, सहस अठारै पद सरवंग ॥ ३१८ ॥ जामें स्वः पर समय बखान, सूत्र कृतांग दुगुन सु जान। त्रिय ठानांग वियालीस सहस, गिनत इकाद दसांत लखेस ॥ ३१९ ॥ जामें द्रव्य क्षेत्र यम भाव, हो समानता कथन अथाव। संवायांग तुर्य पद जान, चौसठ सहस लाख इक मान ॥ ३२० ॥ जामें किए सो प्रश्न विसेस, परमित साठ हजार गिनेस। जानन जियकु सु बाध्य प्रगसि ठाइस सहस लाख जुग लिस ॥ ३२१ ॥ जामैं जिन हर चक्री आद, धर्म कथा सो कथन अगाध। ज्ञात्र कथांग षट मयद भार, पंच लाख छप्पन हज्जार ॥ ३२२ ॥ जामै श्रावक वृष सर्वांग, सप्तम उपासका ध्येनांग। सत्तर सहस रुद्र लख पदे, ठाईस सहस तेईस लक्ष जुदे ॥ ३२३ ॥ लहि थितांत केवल निरवान, सो केवली अन्तकृत जान। दस दस इक इक जिनके समै, हो दसांग अन्तकृत पमैं ॥ ३२४ ॥ फुन मुन ता सम लहै अनुत्र, इनको कथन जहां सरवत्र। नुत्तुरपाद दसांग पदष्य, सहसं चवालीस वणवै लष्य ॥ ३२५ ॥ त्रिय नर पसु त्रिजुग सुर अष्ट, निज तन निज तनकूं दे कष्ट। नवचेतन पुद्गल कृत दसों, सहै उपसग सुध मुन ऐसो ॥ ३२६ ॥

छप्पै- जामैं सुविध प्रश्न वात खोई छिप करमें। चिक

लाभ अलाभ धान्य धन फुन दुख सुखमें ॥ जीवन मरन इत्यादि तीत भावी फुन वरतत। काल सम्बन्धी भण यथार्थ अपाय रूप अति ॥ अरु अक्षेपनि आदिक चतुर। होय कथा जामै संकर ॥ पद सोल सहस तिर नव लख। कहै प्रश्न व्याकरन वर ॥ ३२७ ॥

चौपाई–जेह कर्मोदय तीन प्रकार, सो द्रव्याद अपेक्षा चार। जामैं सो विपाक सूत्राय, पद इक कोड चौरासी लाख ॥ ३२८ ॥

अडिल्ल–पद प्रमान ग्यारै अंगनको सुन अबै, दो हजार चव कोट लाख पंदरै सबै। दृष्टिवाद पद इकसो आठ करोडजी, छप्पन सहस लाख अठसठ पण औरजी ॥ ३२९ ॥

दोहा–तीन सतक त्रेसठ सकल, कथन कुवादी अत्र।
मूल भेद तिनके चतुर, सुनो मित्र सर्वत्र ॥३३०॥
क्रियवादी इकसत असी, अक्रियवादी चुरासि।
सत सठ वादकु ज्ञान मित, विनय बतीस प्रकासि ॥३३१॥

छप्पै–वस्तु स्वभाव नेहचै इक दोय समय त्रिय पूर्व विधो। दयतुर्य पं में उद्यम धर जिय ॥ हार नित्या नित्य गुनै चव सेहु बीसवर। नव पदार्थ सु गुनै फे इकसत अस्सी कर ॥ एक्रियावाद सुन अक्रिया। रचै परतैं तवान गुनै ॥ फिर पहले पांचनतै गुनो। इम सत्तर ए अरु सुनो ॥३३२॥

दोहा–फिर नेहचै अरु कालसु, गुनै तबै दस चार।
हो सत्तर सु मिलाय फिर, चौरासी निरधार ॥३३३॥

जो पदार्थ सब मंगल, गुने तरेसठ जान।
कोई कहै सद्भाव पछ, केई असद हठ ठान ॥३३४॥
कोई सत्य असत्य पछ, कोई अवक्तव्य धार।
सब मिल सतसठ ए भए, ते अज्ञान निरधार ॥३३५॥
मात तात नृप देवि सिसु, वृद्ध तपस्वी जात।
ए वसु मन वच दान तन, चवगुन बत्तीस भांत। ३१६॥
विनै करै तिनकी विविध, विनय सु वादी जान।
पण अज्ञान मत पक्षतैं, करै न सो परमान ॥३३७॥

कवित्त—ज वदया विन क्रिया घनेरी, करै मूढ हिंसा अधिकार। ऐसे क्रियावादी जानौ, निज निज पक्ष धरै हंकार॥ क्रिया रहित फुनि उदय महारत, उद्यम विन सु अक्रियावाद। ज्ञान मांहि बहु तर्क करत है, एकएक सुपक्ष परसाद ॥३३८॥ सो अज्ञानवाद अति मूरख, सुन अब विनयवाद विस्तार। विनय मूल है जैनधर्मको, पणवे विन विवेक सविकार॥ निज निज पक्ष धार हठकर है, आप सम मी कहै गार। तौ जिन मतमें कैसे मिलहै तिन सिरमें दीजे रज डार ॥३३९॥ विनय भेद नहीं लखै जथारथ, मूर्त्त मात्रकूं जानै देव। पत्र मात्रकूं जान शास्त्र फुन भेष मात्रकू गुरु कर सेव॥ नीर मात्रको तीरथ मानै, इक नय पक्ष अंगको ग्रहै। सो सब व्रथा ताम्र रूपी सम, मूरख गह पंडित क्यों चहै ॥ ३४० ॥

चौपाई—दृष्टवादमें कथन इत्यादि, ताके भेद पांच कहै साद।
प्रथम प्रकर्म सूत्र अनुयोग, पूरवगत चूलका योग ॥३४१॥

कवित्त—जो जगमें प्रसिद्ध गतनके अंक इकादिक सब

परजंत । ए तो ऊपर तल श्रेणीक्त फुन पंक्तको हूम विसंत ॥ इक दस सतक सहस इक इक नभ धरे होहि दस गुणो महंत । इम वा मीठ नभ परपाटी फुन कर्माष्टक मन भगवन्त ॥३४२॥

छप्पै–श्रेणी बंध अंक जोडै संकलन कहै तसु । घटै जोडमें अरु रहै बाकी विरल नल सु ॥ पाटी आदि फलाव जगतमें सो गुनकार । रास मांहि कर भाग जितो सो भाग रजु हार ॥ समरास परस्पर जो गुनै । सो वर्ग दुगादु चार ॥ इम फुन सम रासि त्रिवार गुन । सो धन चव चोसठ कार ॥ ३४३ ॥

दोहा–चवचव गुन सोले वरग, मूल चार वर्ग मूल ।
फुन चौसठि घनको सुधी, करै चार घन मूल ॥३४४॥
लंब व्यास चव विलसत्यों, उन्नतके कर खण्ड ।
विलस विलस सम त्रिविधि कर, सव चोसठ जनमंड ॥३४५॥
जामै इत्यादिक प्रमित, क्रम कर कह्यौ विधान ।
बयासी लाख रु कोट इक, सहस पंच पद जान ॥३४६॥

चौपाई–जामै ग्रहन उदय वध यदा, ससिके भोगादिक सपदा । वरनन चन्द्र प्रज्ञप्ति सार, छतीस लाख पद पंच हजार ॥ ३४७ ॥ जामैं सूर विमव उदयाद, तिथ भोगादिक कथन अगाद पंच लाख पद तीन हजार, सो आदित प्रज्ञप्ती सार ॥ ३४८ ॥ सवासु तीन लाख पद लिप्त, कथन सु जंबू दीप प्रज्ञप्ति । सव दध दीप प्रज्ञप्ती सार, बावन लाख छतीस हजार ॥३४९॥ जामैं पुद्गल इक जुत रूप, अरु जीवादिक पंच अरूप । जीवाजीव भव्य जुग भेद, षटद्रव्यन विस्तार अखेद ॥३५०॥

दोहा—जामैं यह वरनन सकल, व्याख्या प्रज्ञप्ती तेह ।
सहंस छतीस चुरासि लख, पदपर कमे सु एह ॥३५१॥

छपै—दृष्टवादमें दुतिय सूत्र है सोचौ विधि चिन । जीव अबंध स्वपर परकाशक करत मुक्त विन ॥ ३५२ ॥ निगुन अस्त नास्त इम पहलो नाम अबंधा । धुन केवलि श्रुत समृत वचन गनधर कृत बंधा ॥ मुनि वच पुरान तिहु मिलि भए श्रुत समृत सुपुरान उन । फुनि नयतैं त्रय निश्चै कथन सहंस पांच पद जोग ॥ ३५३ ॥ भेद तुरीय अंतांगमें पूरव गत दस चार । एक सतक पचाणवै इनमें वस्तु निहार ॥ ३५४ ॥

अडिल—दस चौदे वसु ठारै बारै बार है, सोलै विस रु तीस पंद्रै दस धार हैं । दस दस मिलि भई एकस पचानवै, वीस वीस सब मांहि यहांचड़ जानमैं ॥ ३५५ ॥

दोहा—उंगालिस सै सबनको, भइ यहां वड सार ।
प्रथम नाम उतपाद है, तामैं दस अधिकार ॥ ३५६ ॥
जीवादिक जे वस्तु हैं, बहु नय पेक्षा भाव ।
उतपाद वय ध्रुव आठकर, त्रिय तिहु जग गुन लाव॥ ३५७॥
भए भेद नव एकके, इम सब भेद अनेक ।
नवमें भिन भिन इम कहै, तसु करोड पद एक ॥ ३५८ ॥

छपै—फुनि अग्रायन दुतय पूर्वके छनवै लाख पद । तामैं चौदै वस्तु सुनत हो सकल पाप रद ॥ पूर्वांत अपरांत ध्रुव अचवन लब्ध । अध्रुवंस पणि ल्पात कल्प अष्टम अर्थक लब्ध ॥

मोमावय रु सर्वार्थ कलप निर्वान अतीतानाम। फुनि सिद्ध उपाधि चतुर्दस एव वस्तु कहे अध्याय ॥ ३५९ ॥

चौपाई—तामें पंचम अचवन लब्ध, तहां यहां वह विसत अब्ध। कर्म प्रकृति यहां चउ तुरी, चौवीप जोग द्वार नित धरी ॥ ३६० ॥

छप्पै—कृत वेदना स्पर्श कर्म प्रकृत बंधन षट। निबंधन प्रकृतमें उपकृत उदय मोक्ष संक्रमघट ॥ लेश्या लेस्यरु कर्म बहुर लेस्या सुनाम पर। साता सात रु दीर्घ ह्रस्व बहु धारन फुन कर ॥ पुद्गलातम निधता नितध सुन कांचित अनिकांचितरु। फुनि कर्म स्थित कर कंध सब अल्प बहुत इम कथन करु ॥ ३६१ ॥

चौपाई—ऐसे भेद अन्य सर्वत्र, ग्रंथ बढन भय कहे न अत्र। और महा सिद्धांत मझार, ताको देख करो निरधार ॥ ३६२ ॥ जहां आतम पर जुग क्षत्राद, वीर्य कथन सु वीर्यानुवाद। सत्तरलाख सुपद चौ कथा, साठिलाख सु अस्तनास्तथा ॥ ३६३ ॥ जहां ज्ञान पणतीन कुज्ञान, पंचमज्ञान प्रवान सुवाद। एक घाट पद एक करोर, सत प्रवाद षष्टम इककोर ॥ ३६४ ॥

छप्पै-तहां प्रचव चवत्कार कारण हृदांय जिन। इक स्थान जो कंठ हृदादिक प्रथम ोय मन ॥ फुनि प्रयत्न पणभेद सोय सुन तन तन फर्सत। वरन उचारै सोय स्पृष्टता किंचित फर्सत ॥ मण वर्ण सुइषत्स्पष्टता तन उघाड़ कह विव्रता। किंचित उघाड़ मन तुर्य इम सोई इषत विवृता ॥ ३६५ ॥

चौपाई—तनतैं तन ढक मणसं वंतत, यह परिचय तम जान मनत। वचन प्रयोग दोष विधि जान। श्रेष्ठ भला दुठ बुरा वखान ॥ ३६६ ॥ फुन भाषा बारें पाकार, अभ्याख्यान प्रथम निरधार। को करता को अकरता भव्य, तिन तट मन हिंस्या कर्तव्य ॥ ३६७ ॥ दुतियै कलह वचन उच्चरै, जा सुन कलह परस्पर करै। त्रिय वचनपै सुन्न अनिष्ट, करै दोष चुगली पर पिष्ट ॥ ३६८ ॥ तुरीय अवधि प्रलाप जु मनै, वचन धर्मार्थादिक विन घनै। पंचम रत उतपाद उचार, अक्षन विसय उपावनहार ॥ ३६९ ॥ इत्यादिक वहु राग अगाद, षष्टम अरत उतपाद विषाद। प्रणवोपध सप्तम वच त्यक्त, असद परिग्रह विरधा सक्त ॥ ३७० ॥ वसु निकृत वच ठगने रूप, सुन अप्रणित नवम वच भूप। दर्सनाद चव परमेष्टीष्ट, तिनकी विनै न करै न किष्ट ॥ ३७१ ॥

दोहा—दसम मोष वचके सुने, चौरी मांहि प्रवर्त।
ग्यारम सम्यक दरस वच, सुन जिय सम्यकवर्त ॥३७२॥
बारम मिथ्या वर्ण वच, सुनत गहै मिथ्यात।
चारैं विध भाषा यही, सुन दस सत्य विख्यात ॥३७३॥

चौपाई—कवलनैन नाम हग हीन, मनै नाम सत्यादिक चीन। काहु नैन रजाज चित्राम, लख भए रूप सत्यजुग ताम ॥ ३७४ ॥ वस्तु छती अछती निरधार, ताइ थपै निस्कार सकार। त्रितिय स्थापन सत्य सुगहै, विन देखी देषी सम कहै ॥३७५॥ प्रतनुस्वार चारद वखान, सो प्रतीत सत्य तुरि जान ॥

नाना बाजे सब्द सुनृत्य, मुख्य नाम कह संभृत सत्य ॥ ३७६ ॥ जित अजीव जीव भेदैन, संजोजन सतपट जूं सैन। जनपद नाम देसका पाम, जिह जिहवस्त जिसो कह नाम ॥ ३७७ ॥ सोई जनपद सत सातमैं, ग्राम नगरमैं नृप मुन गमैं। उनके बचमैं वृप न्यायाद, अष्टोपदेस दे सत्य अगाद ॥ ३७८ ॥

छप्पै–जो द्रव्यनका ज्ञान यथारथ केवलिको है। छदमस्तनकू नाह ज्ञान मंदित इम सोहै ॥ तेभी केवल वचनुस्वार प्रासुक अप्रासुकता निश्चै कर भखै सुपासुकन अप्रासुक। उन भावनमैं परतीत यह अन्यथान केवलि वचन सो भाव सत्य नवमैं गिरा, समय सत्य दसमो चान ॥ ३७९ ॥

काव्य–षट द्रव्यनको वासुभाव परजाय भेद सब। वक्ता ताहि यथार्थ जैन आगम ही है अब ॥ तहां कह्या सो सत्य इसी जिन वच प्रतीत दृढ़। ए दस विध सत वचन सत्य परखो रू विषै मिढ़ ॥ ३८० ॥

चौपाई–जिह कर तत्त्व और भुग तत्त्व, अरु नितत्त्व वा फुनि अनितत्त्व। नंत स्वभाव इत्यादिक जीव, नय निश्चयायुक्त सदीव ॥ ३८१ ॥ कथन छबीस कोर पद पमा, आत्म प्रवाद पूर्व सातमा। कर्म प्रवाद कर्म बंधाख, एक कोडपद अस्सी लाख ॥ ३८२ ॥ दवे भाव संवर जिह मांह, जतो व्रतीकी वृद्ध अथाह। प्रत्याख्यान नवम पूर्वाख, ताके पद चौरासी लाख ॥ ३८३ ॥ विद्यालघु अंगुष्टसे नाद, सात सतक गुर रोहंण्याद। पंच सतक विद्याको कथन, मंत्र यंत्र साधन बहु

कथन ॥ ३८३ ॥ विद्यानुवाद पूर्व दस भाख, एक कोड फुन पद दस लाख। जामैं जो तिथिनक विचार, अर्कादिक नवग्रह विस्तार ॥ ३८५ ॥ वारै रासि कही मेषादि, ठाईस निषत मन अमजदाद। रासिन पै ग्रह धार लखीव, काल दुकाल सुभाव सुभ जीव ॥ ३८६ ॥ ग्रहन होन फल वरनन चली, तीर्थंकर चक्री हर बली। इंद्रादिक फुन पण कल्याण, फुनि अष्टांग निमित्त वखाण ॥ ३८७ ॥ इम कल्यानवाद ग्यारमें, पद छवीस कोड पूरवमें। जामैं काय चिकित्सा आदि, अष्ट भेद वैदक मरजाद ॥३८८॥ इडा पिंगला सुर सुषमना, साधन पवनाभ्या जु गिना। भू अप तेज वायु आकास, पंच तत्त्व इनका परकास ॥३८९॥ प्राणवाद पद तेरा कोर, तेरम क्रिया विसाल बहोर। छन्द रु सब्द शास्त्र व्याख्यान, ताको भेद सुनौ बुधवान ॥ ३९० ॥

दोहा—वरन छन्दके बन्धमें, तीन वरन गन जान।

मन मय सतजर स्वामिफल, रूप अष्ट इम मान ॥३९१॥

कवित्त—मगन त्रिगुर भू स्वामि लक्ष देन गन त्रिलघु दिव स्वामि वृधायु। भय गुण दिससि स्वामि कीर्त्त फल बुध स्वामि जल ह्रस्वादायु ॥ स्वामि वायु सगनात गुरु मय फल भ्रमनम नृप लहु तगनांत। जय मध गुरु स्वामि रव फल गदरय मध ह्रस्व स्वामि अगनांत ॥ ३९२ ॥

दोहा—मात्र वर्ण विभेद कर, दो विध छन्द सुजान।

भिन्न भिन्न संख्या कहु, प्रथम मात्र वाख्यान ॥३९३॥

अडिल्ल—एक मात्रको एक, दोयके दोय है। तीन मात्रके तीन, चार पण होय है॥ पंच मात्रके अष्ट, षष्टके तेयरै। सप्त मात्र इकीस अष्ट चव तीयरै॥ ३९४॥

दोहा—षष्ट सप्त मात्रा तने, तेरे इकीस छंद।
दोनों मिल चोंतीसही, अष्ट मात्र पर बन्द॥ ३९५॥
ए दोनों मिल अंतके, छंदन जो परमान।
एक मात्र आगै बधे, तामै एते जान॥ ३९६॥
अब पुन अंकन छंदको, जो प्रस्तार प्रमान।
एक अंकके छंद जुग, दोके चार सुजान॥ ३९७॥
एक२ अक्षर बधे, दूने दूने छन्द।
इम अंकनके छन्दको, जानो सब पर बन्द॥ ३९८॥
इम सम मात्रा अक्षरनके, छंदनको प्रस्तार।
बहुरि विषम मात्राक छंद, नाना विध निरधार॥ ३९९॥
एक येक ही छंदकी, जात अनेक प्रकार।
एक एक फुन छन्दके, नाम अनेक निहार॥ ४००॥

कवित्त—फुन संगीत सप्त सुर संजुत ताल मूर्छे नान रास आद। अलंकार नाना विध यामै कला बहत्तर नर मरजाद॥ फुन चौसठि गुन इत नारीके नाना विधि चतुराई लाद। गर्भाधान आदि चौरासी किरीयाकी यामैं विध साद॥४०१॥

दोहा—सम्यक् दरसनकी क्रिया, इकसो अठिस जान।
देव वंदनाकी क्रिया, पचीस फुन इत मान॥ ४०२॥

सवैया ३१—फुनि व्याकरन मांहि सब्द अनेकयाके नह

नारि खंड लिम रूप तीन करे है। संधि और घातुनमै अंकमें तैं अंक काढ नाना विध अरथ सपष्टता उचरे है॥ फुन याही पूर्व मांहि सल्पी आद नाना कला जगत प्रवर्त्त सव गणी विसतरे है। जामै ए कथन सब क्रिरिया विसाल नाम तेरमो पूरव पद नव कोड धरे है॥ ४०३॥

दोहा—तीन लोकको कथन सब, फुनि परिकर्म छवीस।
आठ विवहाररु वीस चव, सिव सुख कथन प्रनीस॥४०४॥
फुन सिवकारन भूत क्रिय, सिव सरूप वाखान।
बारै कोड पचास लख, लोक बिंदु पद जान॥४०५॥
या विध चौदै पूर्वको, कथन कह्यौ विन खेद।
वहुर बामें अंगमें, सुनो पंचमो भेद॥४०६॥
नाम चूलका तासके, पांच भेद विस्तार।
जलपैथलवत चलन विधि, सो जलगत निरधार॥४०७॥
थल पै जलवत चुविकि विध, थलगत दूजी एह।
खगवत नभमें चलन विधि, नभगत त्रिय गिनेह॥४०८॥
रूप प्रवर्त्तन बहुत विधि, तुर्य रूपगत जान।
इंद्रजाल किरिया विविध, सो माया गत मान॥४०९॥

छपै—दोय कोड नव लाख नवासी सहंस दोय सत। एक एक पद प्रमित पंचको इकठे सुन इत॥ सहंस उनासी लछ उनीस दस कोड सकल पद। सब श्रुत सुन बारण कथन पद कोड करी हद सब इकसौ बारै कोडपर। लाख तिरासी सहस चार अट्ठावन उपर पंच पद। इम संख्या मनधार उपर॥४१०॥

चौपई–इक पदके अवलोक निहार, क्यावन कोड लाख बहु धार । सहंस चुरासी षट सत जान, साडे इकीस इम परवान ॥ ४११ ॥ अंग बाह्य परकीर्णक मांहि, चोदै नाम कथन सुन ताह । समता आदि भाव विस्तार, सो सामायक प्रथम निहार ॥ ४१२ ॥ चौविस जिनगुन सुमरन यत्र, कर फर करै तवन दुति यत्र । इक जिनको अवलवंन लेह, चैत वंदना तीजै एह ॥ ४१३ ॥ फुन प्रतिक्रमण सात परकार, किये दोषका जिह परिहार । जो दिनमें काऊ लागो दोष, टारै स्याम सामायक जोष ॥ ४१४ ॥ सोय देवसिक पहलो जान, नियको दोस हरै अपराह्न । सोय रात्र फुन पक्ष निहार, पदरै दिन कृत दोष निवार ॥ ४१५ ॥ फुन चव पलमें दोष जु लगे, सो तुर्य मास जोय कर ठगे । फुन इक वर्स दोष लिय जोय, कर प्रहार सवन्सर सोय ॥ ४१६ ॥ लगो दोष चलते सुनिहार, सो इर्यापथ षष्टम टार। सब परजाय संबंधी दोस, सो विचार टारै गुनकोस ॥ ४१७ ॥ उत्तमार्थ सप्तम मरजाद, छित मर्याद काल दुखमाद । षट संघनन जुक्त थिर अथिर, इम प्रेमाद प्रतिक्रम सुकर ॥ ४१८ ॥

दोहा–ज्ञानदर्स चारित्र तप, फुन उपचार सु पंच ।

तासविनयको कथन जिह, विनय प्रकीर्णक संच ॥४१९॥

कवित–जिह अरिहंत सिद्ध आचारज उपाध्याय मुन फुन जिनधर्म। जिनबानी जिन[illegible] जिनप्रतिमा ता वंदन फुन निज आश्रय धर्म ॥ त्रिपावर्त दोनुव जिन भूलणचरनुन सिर निवाय

कार जोर । तामें आवर्तन इत्यादिक नित नैमित्तक क्रिया वहोर ॥ ४२० ॥

चौपाई—सो कृत कर्म प्रकीर्णक षष्ट, फुन आचार विवहार स्पष्ट । शुक्क शुद्धता लक्षन लिय, सो दस वैकाल कहे सत ॥ ४२१ ॥ जिह चोविधको कहे उपसर्ग, अरु सहत निजजु परिसह वर्ग । तसु विधानता फल प्रश्नोत्र, सोय उत्तराधैन अष्टोत्र ॥ ४२२ ॥ जह मुन योगाचर्ण विधान, सोय अयोग सुपाश्रितदान । कल्प विवहार प्रकीर्णक नवै, द्रव्य क्षेत्र जन भाव जु फवै ॥ ४२३ ॥ मुनकूं योग अयोग सु एह, कल्पा-कल्प दसममै तेह । महाकल्प पाकीर्णक रुद्र, तामै कथन जु सुन अब भद्र ॥ ४२४ ॥

सवैया—जिनकल्पी मुननकै उतक्रिष्ट संघनन जोग द्रव्य क्षेत्र कालभावमैं प्रवर्त्तना । विषमम आतापन धारहै त्रिकाल योग इत्यादिक फुन मुन स्थिवर निवर्तना ॥ ताको दिक्षा सिक्षा जोग संघको पोषन तन समाधान सल्लेखना अघको आवर्तना । बहोर भवनत्रिक होनको कारन दान पूजा तप समकित संयममैं वर्त्तना ॥ ४२५ ॥

चौपाई—फुनि अकाम निर्जरा मर्ग, तिह नानाविध विभो सुवर्ण । जहां कथन यह सो वामें, पुंडरीक पाकीर्णक पर्मै ॥ ४२६ ॥ इंद्र प्रतेंद्र अहमिंद्राद, कारन होन तपश्चाणाद । महापुंडरीकमैं एह, सब वर्नन तेरम गुन गेह ॥ ४२७ ॥ जो प्रमादवश लागै दोष, निराकरण तसु प्राश्चित पोष । जामै इम

... बहु भेत, सो निबद्ध परकीर्णक अंत ॥ ४२८ ॥ अंग बाह्य परकीर्णक एह, चौदनके अक्षर सुन लेह। आठकोड़ इक लाख हजार, वसु इक सतक पिछत्तर धार ॥ ४२९ ॥

दोहा—सब श्रुतके अक्षर सु इम, बीस अंक परमान।
तिन अंकनके नाम सब, कहुं भिन्न पहचान ॥ ४३० ॥
इक वसु चार चव षट सपत, चव चव नभसपत्रेन।
सात सुन्न नव पंच पण, इक षट इक पण गेन ॥ ४३१ ॥
इक पदकू स्याही किती, लगै सुहेत विचार।
कहुं तोल या देसकी, वर्त्तमान निरधार ॥ ४३२ ॥

सवैया ३१—उत्तम मधम तुच्छ कर्मभूम बाल लीक तिलरु तंदुल गुंजा मासा आठ ठेक है। गुनेको प्रधान जान दस मासो टंक एक बारा मासे तोला पांच तोलेका छटांक है॥ षोडस छटाक सेर चालीसका मन एक चोतीस मन आठ सेर तोलके। चोतीस तोलेरु मासे चार रती पांच एती स्याही द्वादशांग पदेकको धोलके ॥ ४३३ ॥

दोहा—सहंस त्रिलोक कूटंक जुग, स्याही लगे प्रमान।
इम फलाव करके सुधी, द्वादसांग पद जान ॥४३४॥

चौपाई—नंतानंत कल्प जम विखै, भए सु जिन सब योंही अखै। तातैं आदर हित जुत आदि, आधीस्वर करता पन सांच ॥ ४३५ ॥ नंतानंत कल्प जम विखै, होय सु जिनते भी इम अखै। तातैं अंत रहित ए ग्रंथ। पेक्षा अंत लसै जिनपंथ ॥४३६॥ या विध भरत ऐरावत मांहि, अक्षर अर्थ शब्द इम आह।

केवल ज्ञान धराधर जान, पढ़त सुनत फल केवल ज्ञान ॥४३७॥
इम सुनकर मघवा भूपती, अरु नर सुर सुर सब हर्षोत्पती ।
इम सब समासु आनंद रूप, सुधा सिंच मनु देह अनूप ॥४३८॥
दोहा—या विध वर्णन बहु कह्यो, श्री जिन धुन अनुसार ।
त्यों गुणभद्राचार्य भन, श्री सुत नुत विस्तार ॥४३९॥

इतिश्री चन्द्रप्रभपुराण मघवेमघवानृपश्रअदत्तगणोत्रसथाद्वादशांग-रचनावर्णनोनाम पंचदशम संधिः संपूर्णम् ॥ १५ ॥

षोडश संधि ।

दोहा—शुद्धातम मारग प्रणमि, प्रति गुणभद्रादेष ।
अब विवहार वरनन कहूं, पय थल पाय विशेष ॥ १ ॥

चौपाई—अब सुरिंद्र उठ विनती करी, जोडि कराञ्जुलि जुग सिरधरी । भो जग नायक जग आधार, तीन भवन जन तारनहार ॥ २ ॥ यह विवहार औसर सुवनेस, कहिये देव दया धरनेस । भुवमैं भव्य खेती कुमलाय । मिथ्या रव तप तेज बसाय ॥ ३ ॥ भो परमेस अनुग्रह करो, धुन घन जल सिंचो तप हरो । सिवपुरके तुम सारथवाह, सरनागतको निरभय दाय ॥४॥ तुम सहायतै भव सिव लेय, आवागवन जलांजलि देय ॥५॥

मघवो अनिच्छा गमन जिनेस, भव जीवनके भाग विसेस ।

ताकी महिमा को कवि गिने, पयथल पाय कछुयक भने ॥ ६ ॥ प्रथ्वी दरपनवत दुतिवंत, ज्यूं तिय पिय लखकर विहसंत। अरु षट रितु फल फूल विथार, हर्षाश्रु मुन वांम निकार ॥ ७ ॥ चरनकवल तल कवल लसत, कनमय सहस पत्र दुतिवंत। पंद्रहकी पंकति चहुं वोर, दोय सतक पच्चीस सब जोर ॥ ८ ॥ देव रचित मनू भू आभर्न, नाना रतन चित्रयुत धर्न। अंजन कुंकम गंध सिंदूर, ताकर लिप्त मनु तन भूर ॥ ९ ॥ इंद्र सची सुर सुरनर त्रिया, जिनपदाब्ज भ्रमम अलि प्रिया। भक्तिरूप मकरंद सुपान, करत तृप्त नही होत महान ॥ १० ॥ मरुतदेव कृत मंद सुगंध, चलै पवनजन आनंदकंद। जिनगुणामनी इव पतिव्रता, निज पत पाय हर्ष मनु कृता ॥ ११ ॥ हर आज्ञातै सुर वसु जात, सो वस भक्त असैं उचरात। तुम जैवन्ते कृपा करेय, जग हितकी वेला यह देव ॥ १२ ॥

कवित्त—तुम जगके हित विषै उद्यमी तुमको सुरनर नमैं गुन भोन। तुम समस्त विधिके वेत्ता प्रम कल्याणार्थ विश्वके गोन ॥ अग्र अग्र वृषचक्र चलत है सहसकोर जुत किरार्णव सूर। गमनैं श्री विस्तरी त्रिजगजन हर्ष भयो सबकै उर भूर ॥ १३ ॥

पद्धरी—अगावन जोग बाजे बजंत, ढोलादि जेम घन रव गजंत। नाना विध मंगल सब्द होत, केइ गान करै कहु कथा होत ॥ १४ ॥ केई हांस करै गर्जत कोय, कहुं नाना विध कारण होय। किन्नरी नृत करहै अपार, कहूं सुरांगना नृतत्त्व वंवपार ॥ १५ ॥ गंधर्व देव वादित्र तार, केई मंगलीक कथुक

कर उचार । केई दरव भाव सुध कर जजंत, केई न्याय सीसकर जुग धरंत ॥ १६ ॥ केई जै जै जै जै धुन रटंत, नाना विध सुर नर गांन टंत । जित जित जिन पद धारत चलंत, तित तित सुमंगला चारनंत ॥ १७ ॥ दिग्पाल दिसनको सवाधान, जुत सेवा करत चले सुजान । प्रभुकी सेवा कल्याण अर्थ, निज निज अधिकार सुकर समर्थ ॥ १८ ॥ दोरे दोरे सुर फिरे कतान, सु चलावै माफ करीत वान । सुर जोरि करांजुलि सीस न्याय, मणयुक्त बडे दुति रही छाय ॥ १९ ॥ मनु कोटक कमलन युक्त भूम, प्रभुकी पूजा कर है सु झूम फुन लोकपाल कग अग्र गछ, वेलोके स्वरके चर प्रतक्ष ॥ २० ॥ मानो प्रभु तनकी क्रांतनंत, हो मूर्त्तवंत आगे चलंत । वैरक नाना सुर ले चलग्र, इम नम सरव फूले सग्र ॥ २१ ॥ पुनि पद्मा सरस्वति आदि जोय, करमे धर मंगल दर्व सोय चल अग्र मनो भगवंत क्रांत, मूरत धर अग्र चली इभ्रांत ॥ २२ ॥ परदक्षण देकर नमस्कार, इर चले जोर कर इम उचार । हे देव दयाकर जग उधार, नृप देस देसके त्यौं निहार ॥ २३ ॥ इम विहरत इस त्रिलोकि नाथ, नर त्रिजग सुरासुर नमैं माथ । सेवकतरू लोक उद्धार अर्थि, आरज छितमें सुविहार करते ॥ २४ ॥ हे नाथ स्वयंभू जगत ज्येष्ट, जयवंत पितामह जगत श्रेष्ट । अविनासी देव सुगुन अनंत, जीवनदयाल जयवंत संत ॥ २५ ॥ हे जगबांधव हे धर्मनाथ, सबको सरणागत कर सनाथ । तुम हो पवित्र उत्तम श्री युक्त, तुम जयवंते हो स्वरस युक्त ॥ २६ ॥

चौपाई—ज ै धुन अरु दुंदभि नाद, अति कोलाहल धुम आनाद। पूर दिगांतर सुंदर एह, मनु दध धुन वा आनंद मेह ॥ २७॥ पतिव्रता स्त्री अनुगामनी, कमदुत मणि मर्ण इत्यनी। समोसरण श्री प्रभु आधीन, अरु चोगिरद पवन सुर चीन। २८॥

काव्य—सेवामें जन सवाधानतै साध धृत सम। रज कंटक विन कर्तै भूम सुध दर्पण छव सम॥ धनकवार सुर करत विष्ट गंधोदक की जित। जोजनांत दैदीपमान तित बिजली चमकित ॥ २९॥ सुर तरु पुप्पसु विष्ट होत मंदार आद बहु। तिन परि अलि गुंजार करत मनु, जयति कहत सहु॥ इम लख ईस बिहार करत देवाढ्य प्रसंसा। कन मन रज भूयुक्त दिपै इम नभ जुत हंसा॥ ३०॥ बहु प्रकारके पत्र तिन्है सुर कुंक लिप्त कर। श्री वज्राम्रनंगिके लिए लाखार करवर॥ दाडिम पुंगी दुतर्फ फले इत्यादिक तरुवर। त्यौं सब रितु बहु फूल धान्य सब फले एकवर॥ ३१॥ मनमें ठिग ठिग महल सुभग तिनमें देवी सुर। अरु नर नारी करै गान जुत नृत हरष उर॥ जिन विहारको मार्ग इमो यह कर्मभूम सब। सामग्री कर पूर सु जीती भोगभूम अब॥ ३२॥ दो दो कोस दुतर्फ सीम विस्तार जान मग। सो तोरन कर जुक्त दान सुरचित करत तग॥ ठोर ठोर मग विखै दान साला इछत मन। दे जाचक प्रति मनो दानकी सक्ति वही गन॥ ३३॥ तिन तोरनके मध्य पुष्प मंडफ अति सुंदर। रोक रस्मव ऐसो बनो वनवास पुरंदर॥ बहु विध वनके पुष्प मंजरी युक्त सु महकत। सघन छाह अति त्वंग सुजा कदलीकी लहकत॥ ३४॥

चौपाई-मण चित्राम बेल अरु भीत, क्रांति अधिक ससि रव भाजीत। मानो पुन्य पुंज आकार, लहु गुरघटन धुन विस्तार ॥ ३५ ॥ खेंचै अलि निज महक बसाय, मूर्छित मनो प्रभू जस थाय। स्वंग थंभ जुत चार दुवार, स्थुल मुक्त झल्लर जुत सार ॥ ३६ ॥ ता मधि दयामूत्त जितराग, संयमम सिम्रू बहु-भाग। सब लोकनाथ हेत कर गोन, पाछै भामंडल भामौन ॥ ३७ ॥ उपरोपर त्रिय छत्र लसंत, त्रिजगनाथ इव प्रगट करंत। प्रभुपर ढोरत चवर समूह, जू खग गिरपै हंसन ब्रूह ॥ ३८ ॥ इउनागें पुन प्रभुकी लार, अरु नित तित सुर सेन निहार। हरखे द्वारपाल सुर युक्त, सेवत अग्र चले सचि युक्त ॥३९॥ श्रीकेवली प्रगट जिन भाम, मंगलको मगल सुखराम॥ ताके आगे मंगल दर्व, लियै हस्तमें जा सुर सर्व ॥४०॥ संख पद्म नामा निध दोग, तिन कर दान मनक्षित होय। सुण रितनकी वर्षा होत, अह सुर मौल मणन उद्योत ॥ ४१ ॥ दीपक सम मनु ज्ञान सु दियौ, अनिलकवार धूप घट लियौ। तिन पराग ऊर्द्धकूं जाय, मनु जिनांग सुगन्ध फैलाय ॥४२॥

कवित-प्रभुके भक्त सभामें भाजुत गोदर्पण ले मंगल द्रव्य। रोध अताप रत्नमय उज्जल छत्र प्रभो पर फेर सुरव्य॥ सुरगन करमें झण्डे फरकत मनु मिथ्यातीको तृस्कार। करकै जीतनचें अथवा मनु प्रभुकी दया मूर्त आकार ॥ ४३ ॥

सोरठ-विमबी विजया दोय, बहुरि वैजयंती सुरी। इत्यादिक वन होय, आगै आगै आयवे ॥ ४४ ॥

चौपई—प्रम ससिकांत चंद्रकांतक, जिनका नैन सु कुमुद प्रफुलंत । चतुरन काय सुरी सुर सात, दुद अंचल रस प्रघट कगात ॥ ४५ ॥ धुन गंमीर मधुर दुंदमी, घनधुन जीत ताड सुर तमी । धर्म सुचक्र अग्र ले गछ, सुरमण क्रांत समूह प्रतक्ष ॥ ४६ ॥ अरु सुर करै घोषना एह, यह लोकेश सु इक विहरेह । सो सब आय नमन तुम करो, अभयघोष इम भय परहरो ॥४७॥ इम भगवंत विहार निहार, प्रथ्वी अद्भुत सोभा धार । जाजा देश प्रभु विहरंत, ताहि देस जिय चित हरंत ॥४८॥ जीव वद्ध नहि होय लगार, होय परस्पर प्रीत विथार । ना उपसर्ग रुद्रादि निहार, सबके अद्भुत मंगलचार ॥४९॥ भय विभ्र मात ईत फुनि यदा, काहुकें को होय न कदा । जन्म अंधके दृग खुल जाय, पंच वरन निरखें विहमाय ॥ ५० ॥ बधिर सुनै जिन अतिसय येह, मूक करै जलपन गुन गेह । पंगु चढै नग खेद न लहै, जिनागमन जन सुख मुद गहै ॥ ५१ ॥

दोहा—ना अति उष्ण न सीत अति, रात दिवस नहीं भेद ।
अशुभ कर्म निरवर्त सब, शुभकी वृद्ध अखेद ॥५२॥
अहन कुलादिक जीव जे, जात विरोधी और ।
ते सब वैर निवारिके, करै प्रीत तजि खोर ॥५३॥

चौपाई—दिग् क्वारी जुत रतना धर्न, प्रभा पुंज मनु इक वे धर्म । सुमन कल्प तरु लया जिन जजै, जो रिक राजुलि मनमें रजै ॥५४॥ निरमल नभमें तारे दीठ, जू हिमरितु मासमें पईठ । ये भगवत अद्भुत अपसार, बहु भी नमन करत है

आय ॥ ५५ ॥ दर्शनके अभिलाषी जेह, सुर नर तिरजंच संघट तेह। मैं आगे मैं आगे जाऊं, ऐसे आपसमें बतराऊं ॥ ५६ ॥ प्रभुके दरसनके परभाय, भूख प्यास औरनकी जाय। तो प्रभु कैसे हार करंत, कवलाहार रहत भगवंत ॥ ५७ ॥ चार ज्ञान धारी गणराय, ते भी प्रभुके सेवैं पाय। इनसे अधिकन सुधि अग जेह, सब विद्याके ईस्वर एह ॥ ५८ ॥ नख अरु केस बढे न कदाच, केवलज्ञान विषै जद राच। पलक पलकसु लागै नाह, तन सम फटिक न होवै छांह ॥ ५९ ॥

दोहा—मागध सुरगण धुन मिली, प्रभुकी दिव धुन होय।
अर्धमागधी भाख इम, भाखा पंडित लोय। ६०॥
जैसे गावै भांड इक, बहु सुर लापत अंग।
तैसे जिन धुनमैं मिलि, मागध सुर धुन चंग ॥६१॥
दर्स अनंतानंत है, ज्ञान अनंतानंत।
सुख्य अनंतानंत जुत, वीर्य अनंतानंत ॥ ६२ ॥
केई दुठ ऐसे कहैं, करै केवली हार।
हार विना कैसे जीवै, अरु ऐसैं उचार ॥ ६३ ॥
चौपाई—देव करावै अतिसय अंत, चर्म दृष्टमू दोखन संत।
ताको कहिय तहैं मुन मात, न्याय विचारत जो पछतात ॥६४॥
दोहा—अंतराय जो हारकी, कैसे टरै विचार।
नर्कादिक जे असुच भव, ज्ञानके ग्यान मझार ॥ ६५ ॥
जो प्रभुके होवै क्षुधा तृषा क्षुधातैं लाग।
दोष होय इन विन मिलि, मिले होय अनुराग ॥ ६६ ॥

चौपाई—जगदधतैं तारन सुसमर्थ, रत्नत्रये भावसो तीर्थ। प्रगट कियो सोइ वरतंत, जूं कियो प्रथम वृषभ भगवंत ॥८६॥ तीन भवनहित कारक धर्म, ताइ सुदृढ़ करके जिनधर्म। सीझे बहु भवि बोध सुपाय, धरम तीरथ इव पर वरताय ॥ ८७ ॥ विहरत आए गिर सम्मेद, कूट ललित वट थित निरखेद। जूं उदयाचलपै मार्तण्ड, वा कैलास रिषभ थित मंड ॥ ८८ ॥ अहतैं वरतमान जिन षष्ट, और अनंत मुनी संघष्ट। कर्म शत्रु हनि शिवपुर गए, जिन अनंत तीत जम भए ॥ ८९ ॥ मास आय जब बाकी रही, जोग निरोध करो तब सही। समोसरन श्री तब विघटत, वानी खिरत नहीं भगवत ॥ ९० ॥ बारै सभा करांजुलि जोर, विनयवंत निरखै जिनवोर। हलन रु चलन वचन बिन मनो, लंकारांकित चित्र सु बनौ ॥ ९१ ॥ रतन सिलापर सो खडगासन, स्फटिक बिंब वत् अचल समासम। फाल्गुन सित सप्तम अपरान्ह, ज्येष्ठा रिषमें सोलम ध्यान ॥ ९२ ॥ थित ठानात लघु क्षर पंच तित दो भाग कर्मगण मुंच। आयु रु नाम गोत वेदनी, प्रथम बहत्तर तेरह हनी ॥९३॥

दोहा—तूंबी मृतका लेप जुत, जलमैं डूबी सोय।
लेप विघट ऊरध गई, अगन सिखा इम जोय ॥ ९४ ॥
अथवा बीज अरंडको, खिलत उरधको गच्छ।
त्यौंही कर्म सूं रहित जिन, जाय उर्द्ध परतक्ष ॥ ९५ ॥

चौपाई—ताते अंबर लाधी मुक्त, एक समयमें वसु गुन जुक्त। कर्म काय बिन सिवपुर गए, सिद्ध अष्ट गुन मंडित भये ॥९६॥

दोहा-मोह रिपु हरकै लियौ, गुन छायक सम्यक्त।
ज्ञानावर्नी हर भए, ज्ञान अनंता जुक्त ॥ ९७ ॥
जीत दर्सनावर्न रिपु, लह अनंत गुन दर्स।
अंतरायको हानिकै, बल अनंत गुन फर्स ॥ ९८ ॥
नाम कर्मको खय कियो, तब सूक्ष्म गुन प्राप्त।
आयु कर्मको नास कर, अवगाहन गुन आप्त ॥ ९९ ॥
प्रबल वेदनी नास कर, अगुरु लघु गुन धार।
गोत कर्म कर नास गुन, अव्याबाध निहार ॥ १००॥

चौपाई—इम विध्हार निश्चै रु असंक, जै श्रीचंद्र भए निकलंक। पंचकल्यानक पाय जिनेस, जगत जीव उद्धार विसेस ॥१०१॥ भए पूज परमातम देव, जै चन्द्राभ तनी कर सेव। तीन लोक नर सुर सब जिते, तीन काल सबंधी तिते ॥१०२॥ तिनको पंचइंद्री सुख सबै, ताइ अनंत गुनौकर अबै। जो सुख एक समय सिध लहै, ताहि अनंत भाग नहीं वहै ॥ १०३ ॥ जिनके सुख अरु ग्यान जु तनी, उपमा नाहि जगतमैं बनी। थिर सुख पिंड जोतमय रूप, इंद्रीगोचर नाहि अनूप ॥१०४॥ भाग भारा जो अष्टम धरा, लोक सीसपै सो विस्तरा। इक राजू पूर्वापर व्यास, लंब सप्त दक्षोत्तर भास ॥ १०५ ॥

वसु जोजन मोटी मध सार, ससिदुति सिला गोल आकार। तामैं सिद्ध अनंतानंत, एक सिद्धमैं सिद्ध अनंत ॥ १०६ ॥ पुरुषाकार सकल भिन्न भिन्न, ताको सुन दिष्टांत सुचिन्न। जैसे एक प्रदेस अकास, तामैं पंचदरवको वास ॥ १०७ ॥ पुद्गल

जीव रु धर्म अधर्म, कालसु भिन्न २ विन सर्म। फुन दृष्टांत सिद्ध आकार, ताको सुन रु करौं निरधार ॥ १०८ ॥ कागद त्रिवसु पुरुषाकार, मध्य पोल अरु कछु न निहार। तामैं गगन सुन्न जड़रूप, त्यौंही शिवमैं चेतन भूप ॥ १०९ ॥ ज्ञानपुंज कागद सम तुचा, ता सम रहत सिद्ध इव सुचा। या विध परम ब्रह्मको रूप, निराकार साकार सरूप ॥ ११० ॥ चरम देहसैं किंचित ऊन, याह अपेक्षा कहत गुरून। पूरववत सुरधर भए चिन्ह, अवधज्ञानतैं जान सवन्न ॥ १११ ॥ देव चतुर्विध संघ समेत, आए शिव कल्यानक हेत। निज निज वाहन जुत पर-वार। विभवयुक्त नृतादि विथार ॥ ११२ ॥ अगनसिखा सम जिन शिव पाय, तव प्रकास सम काय नसाय। रहे धुम्र सम नख अरु केस, जान पवित्र सुरासुर वेस ॥ ११३ ॥ प्रथम नमन कर लिये उठाय, ता युत हर जिनदेह बनाय। मणमय शिवकापै सो थाप, सक्र भक्त जुत पूजै आप ॥ ११४ ॥ अष्ट सुदर्व लेय जल आद, बहुर सुरासुर भक्ति अगाद। चंदन अगर कपूर मंगाय, सर उतंग कीनो अधिकाय ॥ ११५ ॥

ताहि चितामैं जिन तन धरौ, जो हर मायामय विस्तरौ। अगनकुवार प्रनाम सु करो, कर जुग जोर सीस निज धरो ॥ ११६ ॥ उठी मुकट ज्वाला मण तणी, अति विकराल अगनिकी घनी। भस्मीकृत फैलो मकरंद दसमें दिव लो परमानंद ॥ ११७ ॥ सब सुर जैजकार सु करै, परमानंद भक्ति उर धरै। जोरि करांजुलि निज सिर न्याय, प्रथम इन्द्र

उत्ति हर्ष उछाव ॥ ११८ ॥ चिता चतुर्दिस फिरत नमंत, नमैं च[illegible]विंब सुर हरषंत। एते अगनि भई जलछार, प्रथम इन्द्र निज मस्तग धार ॥ ११९ ॥ नेत्र कंठ उरके फुन लाय, फिर लाई सुरगन तिह भाय। भस्मिको नहि पायौं खोज, फिर पूजाको कीनौ सोज ॥ १२० ॥

तब हर तिन नामाकि सिला, करो सुगान नृत जुत कला। देवन सहित परम उछाह, अधिक अधिक कीनो सुरराय ॥ १२१ ॥ तिनके गुन चिंतत मनमांहि, निज निज थान गए सुर नांह। सुन संक्षेप भवांतर रूप, पहले भव श्री ब्रह्मा भूप ॥ १२२ ॥ फिर सौधर्म स्वर्गमें भयो, श्री प्रभदेव दुतिय भव भयो। तीजे खंड धातकी मांहि, अजितसेन चक्री पद लाह ॥ १२३ ॥ अच्युतेन्द्र चौथे भव भयौ, पंचम पदमनाभ नृप थयो। षष्टम वैजयंतसु विमान, सप्तम भए चन्द्र प्रभ आन ॥ १२४ ॥

पद्धड़ी—नव्वै केवलि अनुबंध जान, सतंत केवलि चव असी मान। चौतीस सहस दो लाख साध, एते तासमय सु मोष लाध ॥ १२५ ॥ सु अनुत्तराद्धि सर्वार्थसिद्ध, बारै हजार मित लही रिध फुन, चार सतक मुन और जान। सोधर्मादिक बासो विमान ॥ १२६ ॥

चौपाई—गिर समेदसो सिवगए, तिनकू हात जोड हम नये। यह निर्वान क्षेत्र सुभ थान, भव जिय पातक हरन महान ॥ १२७ ॥ और चौरासी कोडाकोड, मुनी बहत्तर कोड सुजोड। सहस चौरासी अस्सी लाख, पांच सतक पचपन गुर

माख ॥ १२८ ॥ और गए एते निर्वान, ताही ललित कूटके आन। एकबार बंदन जो करै, मन वच काय शुधता धरै ॥१२९॥ सोलै कोड बुतन फल होय, नर्क तिर्यंच कटै गति दोय। ऐसे सुन फुन श्रेनिक भूप, गनधरसै कर प्रश्न अनूप ॥१३०॥ बंदन कर किहने फल लियो, ताकी कथा प्रभु अब कहो। मत पुरसनकी कथा कर जिनै, उपजो है कोतूहल तिनै ॥१३१॥ ऐसे श्री गोतम गन मुनी, बोले कहुं सुनो भू धनी। अोधदेस सोरीपुर बसै, ललितदत्त भूपति तिह लसै ॥ १३२ ॥

दत्तसेना महकी जुतराज, एक समै वनक्रीडा काज। चले आनमैं मुनि अवलोह, चारनरिद्ध सहित अनमोह ॥१३३॥ देय प्रदक्षना प्रनमो तास, हर्षवंत नृप बैठो पास। राजा पूछे सीस नवाय, चारनरिद्ध मिलै किम भाय ॥१३४॥ प्रश्न पाय तब गुरु उच्चरो, सम्मेदाचल यात्रा करो। तो चारन रिध पावो सही, ऐसी विध मुनवरने कही॥१३५॥ ए सुन नर बै हर्षितवंत, सम्मे-दाचल गयो तुरंत। एक करोड छियालीस लाख, एते मनुष संग गुरु साथ ॥ १३६ ॥ यात्रा करी जाय वड़भाग, कछु कारण लख भयो वैराग। राज त्यागकै भयो मुनिंद, नानाविध तप कर गुन वृन्द ॥ १३७ ॥ चारणादि रिध पाई घनी, फिर केवल उपजायो मुनी। संग बहोत मुन मुक्ती लही, मैं भी अब बंदूं बह मही ॥ १३८ ॥

गीता छंद—जो लही नाना रिध शिवगत प्रवज्ञा पर-भावसुं। गिर भक्ति महिमा किम कहो हम प्रश्नोत्र सुन अब-

चावड़ ॥ भारथ विषै सुभचन्द्र गुर मन सवरनै इक टीलपे । गुर द्रोण लष फिर मोन गुर कर टील सो गुर सम थपे ॥१३९॥ अष्टांग जुत श्रुत भक्त तैं जजता सरज लेषी लही। माल हग उर कंठ बाहु लाय नित विनई लही ॥ धी हेत धुन वेधी सिषे, तब चांप सरतज तानजी । सो भई टील प्रमाव त्यों नग भक्ति शिवदा जानजी ॥ १४० ॥

काव्य—अब सुन फल मिथ्यात तनो श्रेनिक मन वच तन । जो मरीच नग हो भृमो तस्योदित जगवन ॥ सातों अवनी-मांहि सह्यो दुष अतच काल ही । त्रस थावर भटकाय कोन कह सहवालही ॥ १४१ ॥ अब उपसांत भयो त्रिपिष्ट नारायन पहलो । फिर नर्कादिक मांह पसू गतमैं दुष सहलो ॥ आय भये वीर प्रतिक्ष जग चर्म जिनेसर । ये मिथ्यात फल तुछ कह्या अरु जान वसेसर ॥ १४२ ॥

दोहा—हाथ जोड़ श्रेणक नृपति, पूछत सीस नवाय ।
 कौन पुन्न पूरब कियौ, भयौ भूप मैं आय ॥ १४३ ॥

चौपाई—इन्द्रभूत कह सुन मग्धेन्द्र, जूं दिव धुनकर कह्यो जिनेन्द्र । यही भरतमें आरज षंड, विंध्याचल तट अति बन षंड ॥ १४४ ॥ बहु रिसालतैं हरहत किरांत, मास अहारी जिय कर घात ॥ इक दिन पुन्योदय मुनराय, नमो समाध गुमको जाय ॥ १४५ ॥ मुननैं धर्मवृति सु दई, उन पूछो वृष विधै किम सही । त्रिमकार तजि पालै दया, इम वृष दिव सिवदे गुर चया ॥ १४६ ॥ यही हार हमैरै किम छुटै, फिर मुन कहै

तजो जो छुटे। सब ही कहै सुन जो पल काक, गहूं न आयां तक लोभांक॥ १४७॥ मुनको नमकर निज घर आय, इक दिन पाचोदय अति थाय। भयो सुरोग वैद इम भनै, पाय काक पल गदजद हनै॥ १४८॥ तब परजन कहै ल्यावै वेग, रोगी सुन मन जुत उदवेग। तजो काक पल ना आचरूं, प्रान जाउ वृत भंग न करूं॥ १४९॥

दोहा–या विध परियन जन सुनो, सूर वीर अन नाम।
भगनीपत या खबरकूं, आवै थो गुन धाम॥ १५०॥
मारगमें इक तरु तलै, कांचीदेवी रोय।
ताह देख पूछत भयो, रोवै कारन कोय॥१५१॥
सुरी कहै इस बनसुरी, मैं पत कारन रोय।
काम अगन तनकं दहै, ताकी विधि सुन सोय॥१५२॥

पद्धड़ी–जो खदरिसाल तुझ नार भ्रात, तिन तजो काक पल रोग गात। उपजो भन वैद सु वही खाय, तो रोग शांत हो इम बताय॥ १५३॥ थित अल्प सुमर हो कंथ आय, जो खाय काक फल नर्क जाय। सा हेत खडी रोऊं अवार, सुन सवर चलो निहचै निहार॥१५४॥ लख सालो गद जुत कपट धार, खावो किन जो वैदन उचार। क्यों सहै वृथा दुख मरन होय, जो जीवो फिर वृत गहो सोय॥ १५५॥

दोहा–ता वच सुन सो यों कहै, तुम जोग यह नांह।
व्रत भंग अति निंद भर, पहुंचै नर्क सु मांह॥१५६॥
नरन निकट आयो अबै, किंचित धर्म सुनेह।

परभव सुखदा क्यों तजूं, इम दृढता लख येह ॥१५७॥
कही कथा देवी तनी, एक नेम फल एह।
उर वैराग बैठायकै, मन फल तज धर नेह ॥१५८॥
पंच परमेष्टी सुमर कर, युत समाध कर मर्न।
प्रथम सुरगमें सुर भयौ, रिध जुक्त मन हर्न ॥१५९॥

चौपाई–चलौ भील निज घरकूं फेर, रोवत मगमें फिरै वेहेर। सूरवीर कह अब क्यूं रोय, कहै सुरांतैं मोपत खोय ॥ १६० ॥ औ मर भयौ सुरग सौधर्म, रोऊं पति बिन दुख भयो पर्म। इम सुन धर्म विषै धर राग, भोग सुरग सुख दोदध त्याग ॥ १६१ ॥ पुण्योदय चय तू भयो अत्र, उपश्रेणक तिय श्रीमति पुत्र। सुरवीर सुन फल व्रत गह्यौ, प्रथम सुर्ग सुख भोग सु चयौ ॥ १६२ ॥ अभैकवर तुझ सुत भयौ आय, वो देवी चय चेलन थाय। जैनधर्म तुझ कुल क्रम आइ, बालपनै तुझ पिता कढाइ ॥ १६३ ॥ बोधमतीके भोजन लह्यौ, तब तैं बोध धर्म संग्रह्यो। फिर आकर पायो निज राज, एक समै वन-क्रीड़ा काज ॥ १६४ ॥ गयौ विपनमें मुनी निहार, मृतक नाग ता गलमें डार। तबतैं नर्क निकांक्षित बन्ध, तैनै करो राग सनबन्ध ॥ १६५ ॥

नार वचन सुन दया उपाय, तीजै दिन काढौ अहि जाय। आवे रागदोष बिन मुनी, तब जिनमतकी सरधा ठनी ॥१६६॥ वीर मुखोदित तत्त्व विचार, ताकर छाइक समकित धार। बांधो शुभ तीर्थंकर गोत, जो उत्तम त्रिभुवन धर जोत ॥१६६॥ तो

उन छिद्रो निकांछित बंध, प्रथम सु नर्क सहो दुख द्वंद ।
तितसैं चयकर आयो ह्यांहि, प्रथम तीर्थ उतसर्पिनि मांह ॥१६८॥
धर्म तीर्थंकर सिव गत होय, यह संक्षेप भवावलि तोय । सुन
राजा अति हर्षित भयो, वंदन कर निज घरकूं गयो ॥१६९॥
वीर जिनेसुर कियो विहार, धर्मवृष्टि मनु मादोकार । बहु भव
बोध भवोदध तार, पावापुर आए निरधार ॥ १७० ॥

सुकल ध्यान वसि सिवपुर गये, पीछे तीन केवली भए ।
तीन वरस सतरै पछ रहे, तुर्य कालमें इम मुन कहे ॥ १७१ ॥
गोतमस्वामि सुधर्माचार्ज, अंतम जंबूस्वामी आर्ज । चौथे काल
विषै उपजये, पंचममैं ते सिवपुर गये ॥ १७२ ॥ बांसठ वर्ष
यथावत ज्ञान, रह्यो केवली भाषित जान । तापीछै सतवर्ष मंझार
भए पंच श्रुत केवलि सार ॥ १७३ ॥ प्रथम विष्नु नाम इम
चीन, नंदा मित्र अपराजित तीन । गोवर्द्धन फुन भद्र सु बाहु,
चौदे पूरव ज्ञान पढाऊं ॥ १७४ ॥ फिर एकादस मुन अवतार,
इकसठ त्रासी वर्स मझार । दस पूरव ग्यारांग सुज्ञान, ता धारक
इम नाम प्रमान ॥१७५॥ विसाषा प्रोष्टल क्षेत्रार्थ, जया नागसेन
सिद्धार्थ, श्री धृतसेन विजय बुध लिंग । देव सुधर्माचार्य
सुलिंग ॥१७६॥ तिन पीछै मुन पंच प्रसिद्ध, ग्यारा अंग धरै
ते रिद्ध । दोसै वीस वरसमें भए, निक्षत्र औरु जै पालुप जये
॥ १७७ ॥ पांडव अरु धृतसेन रु कंस, तिन पीछै मुन चव
अघटंस । इकसौ ठारै वर्स मझार, एक ही आचारंग सुधार१७८॥
प्रथम सुभद्र दुतिय जयभद्र, जसोभद्र तिय ज्ञान समुद्र ।

लोहाचार्य चतुर्थम जान, ह्यांतक रह्यो अंगको ज्ञान ॥ १७९ ॥
दोहा—अंगासरू पुर्वांश धरुं, विनयंधर श्रीदत्त।

मित्रदत्त रु अर्हद्दत्त चव, भए कछुक दिन गत्त ॥१८०॥

चौपाई—तिन पीछे सु कुछक दिन मांहि, भए पुष्पदन्त मुन नाह। पहले श्रुत रच सित पण ज्येष्ट, तवतै प्रगटे ग्रन्थ जु श्रेष्ट ॥ १८१ ॥ तिन पीछे अंगन विन मुनी, रहे महा ज्ञानके घनी। व्रत कर जुक्त तपस्वी महा, तिनके नाम कछुक सुनह्यां ॥ १८२ ॥ नयंधर रिष श्रुत रिष गुप्त. फुन शिवगुप्त अर्हद्बल गुप्त। मंद रु मित्र वीर बलदेव, फुन बल मित्र सिंहबलदेव॥१८३॥

कवित्त—पद्मसेन पद्मगुन बारम गुना ग्रनी जित दंड मुनिंद्र। नंदसेन अरु दीपसेन फुन श्रीधरसेन वृपसेन जतेन्द्र॥ सिधसैनसु सुनंदसैन फुन ध्रु सेन अरु अमयसैन। भीमसेन जिनसेन जतीसुर सांतसेन जयसेन मुनैन ॥ १८४ ॥

चौपाई—सिष्य अमितसेन इक कह्यो, कीर्त्तसेन दूजो सरदह्यो। ताको मुख्य सिष्य जिनसेन, तिन आरंभो ग्रंथ सुजैन ॥ १८५ ॥ त्रिषष्टी जन महापुरान, प्रथम ही पडो अगणइक आण। मृत्यु जोग ताकूं लषि रिषि, अपने सिषतैं ऐसे अषी ॥ १८६ ॥ यह पुरान पूरन नहीं होय, पय इन करैं भक्त वस होय। जब भए दस हजार अश्लोक, तब जिनसेन भए परलोक ॥ १८७ ॥ ताको मुख्य शिष्य गुणभद्र, तिन यह पूराण कियो समुद्र। दस हजार अश्लोकनमांह, कहक उन सम बुध मुझ नांह ॥ १८८ ॥ मैं उन मरम कछु नहि लह्यो, कौन कथन

उन रखधन चहो। उन परतग्या पूरन काज, कथन रच्यो निज बुद्ध समाज ॥ १८९ ॥ सो प्राचीन श्रुतन अनुसार, सक्तिहीन वस भक्त विथार। चौविस श्री जिनवर धर ध्यान, चक्रीहर वली व्याख्यान ॥ १९० ॥ जो प्रमाद वस भूलो कहुं, सब्द अर्थ वर्नादिक सहुं। पद मात्रा स्वर रेफ रु संधि, पंडित सोधो लष संबंध ॥ १९१ ॥ एक केवली ही भगवान, ते चूकै न कदाचित जान। नाह यथावत बुध छदमस्त, जो भूलै तो अचरज नस्त ॥ १९२ ॥ कित यह महापुरान समुद्र, कितमो बुद्ध छुद्रतैं छुद्र। जिन गुन श्रुत यामैं अधिकान, सो पुन्योत्पत कारन जान ॥ १९३ ॥ ताही वांछा कामैं करी, कीर्त्त कामना मन नहि धरी। काव्य गर्म ईर्षा नहीं धार, केवल इक जिन भक्ति विथार ॥ १९४ ॥

दोहा—तामैं वारै सहस मित, आद पुरान बखान।
आठ सहस मैं दूसरो, उत्तर नाम पुरान ॥ १९५ ॥
सात सतक कछु अधिक ही, संवत सर पहचान।
तब यह श्रुत पूरन भयो, मो बुधके उनमान ॥ १९६ ॥

चौपाई—शब्द अर्थ अक्षर जड़ रूप, मैं चेतन तिहुंकाल अनूप। मैं इन ग्याता दृष्टा जोय। चेतन जड़ करता किम होय ॥ १९७ ॥ यह अनादको सहज नियोग, कर्तापन मानै सठ लोग। शब्द अर्थ अक्षर मिल जाय, होनहार कारन वस पाय ॥१९८॥ निश्चै श्रीजिन सिवपुर जाय, पण दिक्षा बिन कबहुं नांह। दिक्षा कारन कार्य पवर्ग, यातैं आन मिलो यह वर्ग

॥ १९९ ॥ जिनसेना जो मुन मण्डली, ता सिव सुगुन सकल बुधरली । तिन क॰ रचित परंपर थाय, सर्व संघको मंगलदाय ॥ ॥२००॥ ताकी भाषा करी सु स्याल, ताकूं देखी हीरालाल । चन्द चरित लख कियो विचार, जो यह कुछक होय विस्तार ॥२०१॥ भव्यजीव बांचै अरु सुनै, पढ़ै ज्ञान सब हो अघ हनै । जे तैं करत लगैं बहु काल, तेतें पुन्य वृद्ध दरहाल ॥ २०२ ॥ किम गुणभद्र नाम उच्चार, इम प्रश्नोत्तर उद्ध निहार । यातैं संधि सधि प्रति ठाउं, गुरु गुणभद्र धरो इम नाउं ॥ २०३ ॥ वीरनंदि मुनि ता प्रति देख, करी चन्द्रप्रभ काव्य विसेष । तिन दोऊ मत लख व्याख्यान, कवि दामोदर रचो पुरान ॥२०४॥ दोहा—पूछि और · अर्थ इन, कह्यौ कथन विस्तार ।

यातैं भी गुणभद्र गुर, धरो नाम निरधार ॥ २०५ ॥

गीता छन्द—वर वज्र मन जू वज्र वीधो सहज तब तसु पाईयो । सो रेसमी गुनके विषै तब हार सुदर सोहियो ॥ वर पंडितनकी सभा मंडफता स्वयंवरके विषै तित ग्यान नृप दुहिता सुबुध ना कण्ठमें धर वरनषै ॥ २०६ ॥ सो संग ले शिव सदन जाकर निरन्तर सख भोग है । तब सर्व जगके दुख्य छूटे सो अतिंद्री सुख गहै ॥ दुख चूर भूर समन्तभद्रसं पूर तीर्थंकरको । तिम करो हमकों सुख्य ससि जिन हरो भव भय दुंदको॥२०७॥

चौपाई—यह श्रीचन्द्र प्रभू पुरान, तामें नाना विध व्याख्यान । धर्म अर्थ काम अरु मोष, चार पदारथ साधन पोष ॥ २०८ ॥ यह पुरान मिस जिन थुत करी, ताकर पुन्य मंडारी

मरी। ताको फल मोको हो यहै, भव्यजीव याकू सर दहै ॥२०९॥ ताके होय सकल अघ नास, पंडित याह समामै भाम। मोक्षांजुली कथा कर पान, काहों अमास भाजन दान ॥२१०॥ यह पुरान वाचै वा सुनै, तिनके सकल पाप चिर हनै। जिनवर हेत करो व्याख्यान, निज पर तारक जान पुरान॥२११॥ जिनके नाम ग्रहन परताप, नवग्रह पीडा होय न कदाप। या पुरानकी महिमा सुनो, थोडीसीमै बहुती गुनो ॥ २१२ ॥

कवित्त–मंगलके अर्थी जे जन है, तिनको मंगल कारन जान। धन अर्थीकूं धनकी प्रापत निमतीकूं यह निमत महान॥ महोपसर्ग विषै सुमरन यह सात करन दुष हरन वखान॥ प्रश्नीकूं यह शकुन ग्रंथ अति सुम सूचक जानों बुधवान॥२१३॥ ध्यानार्थीकूं ध्यानसु कारन जोगार्थीको जोग सरूप। पुत्रार्थीकूं पुत्र सुदाता भोगार्थीकू भोग अनूप। विजयार्थीकू विजयसु दायक सुष अर्थीकू सुष विस्तार। सर्व वस्तु दाता यह जगमैं श्री चन्द्राभ पुरान निहार ॥ २१४ ॥ चोवीस जिनकी महाभक्ति सुरि सासन चक्रेसुरा सु धीर सम्यकदृष्ट निर्ग्रंथाश्रित सब नित जिन धर्म वृषातम तीर। नवगृह भूत पिसाच असुर ग्रह ए पुरसन हिनमें कर विघ्न तव सु। जिनसासन सुरग नमान करै ते छुद्र सुगध्र ॥ २१५ ॥ जो पुरान पढ़ै भक्त करिता मनवांछित हो विनषेद। इम काम रु धर्मार्थ मोक्ष लह ताते कपट रहित सदवेद ॥ आर्जे पुर्भ पूजा युत श्रुतको भुत विरजोरी ईर्षाछार। माया और लोभ तिन सम हो बार बार

वो रहस निहार ॥ २१६ ॥ वा भव्यनमूं येह प्रारथना कीन अर्थ वे सहद्र सुपात्र। वांचे सुनै विचारे इमे जून मथन जैल फिर धा भूलावें॥ यह पुरान गंगासम निर्मल, अलसम शुध्द नको चौवाह। दो नय तटसम फैल दर्शावक. बहुजन सेवो हर्ष बढाह ॥ २१७ ॥ वै जिन देव वस्तके द्रष्टा दुरमन सेवत सो जयवंत। परजाकूं अति सांति सुदायक निद्राविन केवल दृगवंत ॥ प्रजा कुशल सुर होईत विन धरमातम राज निवसंत। परंपराय धर्म जिन भाषित जयवंतो मंगल सु करंत ॥ २१८ ॥

छप्पे-जयो चंद्र प्रभचंद्रका ज्ञान प्रकाशी जयो चंद्रप्रभ चंद्र जगत निम भ्रम तम नाशी। जयो चंद्र प्रभचंद्र भव्य कुम-दाढ्य प्रकाशत ॥ जयो चंद्र प्रभचंद्र श्रवत वचनामृत हितमित। ता लगत मिटै भवताप जग विमल दोष राहाद् विन सित सुजस सु त्रिभुवन विस्तरो ॥ सो जयो अपूरव चंद्र जिन ॥ २१९ ॥ जयो चंद्र जिन सूर सूर, मिथ्यातम नाशक। जयो चंद्र जिन सूर भूर जित्याब्ज प्रकाशक॥ जयो चंद्र जिनसूर भूर सिव मग दरसावत, जयो चंद्र जिन सूर दूर भव उलून लखा-वत जै तेजपुज विनताप जिन निमघन केशादिक रहत। सो जयो चन्द्र प्रभ अपर दिन. नाथ कृपा सब सुख लहत ॥२२०॥ जा विन लखन स्वभाव वस्तु जिय भववन हंडे। सम कलंक समुक्त पवन वादी नहीं खंडै ॥ जयो चन्द्रप्रभ दीप अखर कुल त्रिभुवन घरमें। गुनमय पूर प्रकाश नाश तम अघ जग भरमें ॥ हम देख तुमें जे दोष सब, मान धरो मत. अधिक यह। तुमकू

सु छांडकर किह चप, जे कुदेव तिन सरन गह ॥ २२१ ॥
जयो चन्द्र प्रभनाम मंत्र आधार सु जिनके। नाग वाघ वस होय सुरासुर सेवक तिनके ॥ जिन सासनवर भक्त यक्ष संज्ञासु अजित लसु। चन्द्रमालनी सुरी भक्तजन भक्तवने वस तिन आय वहोत कष्टकोष जो ॥ हो सक्र मनसु भक्तवें, सो जयो चन्द परसीद कर। जिनसेन सिष्य नुत भक्तवें ॥२२२॥

दोहा-सोलै कारन भावना, तासम सुख करतार।
सोलै संधि समाप्त श्रुत, भव जन मंगलकार ॥ २२३ ॥

इतिश्री चन्द्रप्रभपुराणे गुणभद्राचार्यवणीतानुसारे भगवत्चन्द्रप्रभ-मोक्षकल्याणकवर्णनो नाम षोडश संधिः संपूर्णम् ॥ १६ ॥

सप्तदशम संधिः।

दोहा–बंदो जिनवर पार्श्व पद, सारद सुगुरु प्रनाम।
ग्रन्थ होन कारन सुनो, कवि कुल नगर सु नाम ॥ १ ॥
जो कवि ग्रंथ बनाय है, नाम न अपनो धार।
सो पंडित जनको बहुरि, श्रुतको चोर निहार ॥ २ ॥
सोरठा–ऐसा हेत विचार, मान बढ़ाई ईरषा।
ए नहीं मनमें धार, कहुं वंश मैं आपनो ॥ ३ ॥
चौपाई–जम्बूदीप भरतवर जान, आरज खंड मनोहर थान।
तामें कुर जांगल वर देस, धनधानादिक भरो विसेस ॥ ४ ॥
तहां फले जीरनके षेत, सांटन बांड महा छवि देत। सोफे घणो वाडीरु कसूत्र, रितु रितुमें फल फूल सुलुंब ॥ ५ ॥
निरत चुनै तिनको पांगना, तिन छब लख थक सुर अंगना।
कंठ कोकिला पंचम राग, गावत सुन कुरंग थक भाग ॥ ६ ॥
गान सुनत अरु रूप लखंत, पंथी रहे लुभाय अत्यंत। महकी प्रिष्ट होय असवार, गावत पंचम राग गवार ॥ ७ ॥ मुरली धुन जुत देखत सुरी, मोहित होय पथिक नरनरी। सुर कुर सम भोग कर महा, सत कुरुजांगल जनपद कहा ॥ ८ ॥ तित सुरपुर सम गजपुर जान, प्रथम सोमनृप भए महान। वसे देस कुरु इम कुरुवंस, सोम भूपतै सोम सुवंस ॥ ९ ॥ तहां वंश परपाटो विषै, भए बहोत नृप कहांतक अषै। एते पदवीधारक वीन, सांत कुंथ अर जिनवर तीन ॥ १० ॥

तित श्री श्री कल्याणक भरा, इंद्रसु आय महोछव करा।
सब अतिशय छिनमें यह सिरे, पूजा नुतकर पातिग हरे ॥११॥
साल साल प्रति उत्सव होय, संघ सहित आवै भवि लोय।
वात्सलयुत मुन विष्नुकुवांर, तिनका जस जगमें विस्तार ॥१२॥
पांडुवाद बहु नृप शिवलीन, हथनापुरतें पश्चिम चीन। पुर
"बडौत" सोहै सुखवास, कालंद्री तनुजा वह पास ॥१३॥
क्षीर नीर मधु सुधा समान सुर विमान सम किरती जान।
तट तरुवे ऽ फूल फल अंत, थल नभचर पसु मिष्ट भनंत ॥१४॥
परखा ओंडी साल उतंग, पंचानन सम पण दरसंग।
सघन वसै अति सोभा रास, तहां सु जिनके दोय
अवास ॥ १५ ॥

चित्रन चित्रत नूतन काम, देषत मोहै सुरनर वाम।
पासं रिषभ प्रतिक्ष जिनतनी, नायक समारु प्रतिमा घनी ॥१६॥
जिन न्हवनाद जज्ञ भव करै, श्रुत वषान चरचा नितरै। कोय
पढ़ै कोई सुने पुरान, को सिद्धांत सुनै मग आन ॥ १७ ॥
दान यथावत करै है सर्व, सप्त क्षेत्रमें खरचै दर्व। अग्रवाल सब
जैनी जोर, जाति चुरासी मैना ओर ॥ १८ ॥ भयो अग्र नृपके
कुरुवंश, नामांकित पुरस्थ सरहंस। सो कुल नभमें ससि
सम अबै, गोयल गोत गरग सम त्रिषै ॥ १९ ॥ जै जिनदास
महोकमसिंह, ता सुत जैकवार घनसिंह। रामसहाय रामजस
च्यार, घनसिंह सुत हीरा सु निहार ॥ २० ॥

ठंडीराम पंडित बुधवंत, गोमटसार पठन सिद्धन्त। तिनके तटकर अछराभ्यास, भाषाको भयो बोध प्रकास ॥२१॥ भाषा ग्रंथ लिषे दो चार, सहंस्कृतको नाहि विचार। छन्द अर्थ पद पिंगुल ज्ञान, मात्रा वर्न तनी न पिछान ॥ २२ ॥ देव शास्त्र गुरुके परमाद, सब पंचन सहाय कर याद। नृप अंग्रेज राजके मांहि, पूरन ग्रंथ चैनसै थाइ ॥ २३ ॥ श्रुतगण बाग समान अतुल, नाना कथन रंगके फूल। चुन चुन छंद सुगुनमैं पोय, सुन्दर हार ग्रन्थ यह होय ॥ २४ ॥

दोहा—धरै सुबुधी कंठ जब, तब श्रुत शोभा धार।
पद वच लपै जल बूंद जूं, मुक्ताफल उनहार ॥२५॥
श्रुतदध कथन सु मथन कर, चोज पोज घृत लीन।
यह पुरान संग्रह कियो, जूं भाषी मधु चीन ॥ २६ ॥
अल्प काज नर वो गिने, अल्प बुध यह रीत।
जूं पपील कन ले चली, किधो चली गढ़ जीत ॥२७॥
षष्ट वर्ष कछु अधिकमें, पूरन भयो पुरान।
सर्व संघ मंगल करन, जैवन्तो सु महान ॥२८॥

सोरठा—जब लग शशि अरु भान। तब लग जगमें विस्तरो ॥ नृप अरु परजा मान। सबहीको मंगल करो ॥२९॥

दोहा—यह पुराण भिम थुत करी, सिरी चंद्रप्रभ सोहि।
भव भवमें निज भक्ति द्यो, जब लग शिवगति होय ॥३०॥

उनीसमैं तेरसमै, तेरस भाद्रव स्याम।
गुरु दिन पुष रिष प्रात ही, पूरन ग्रंथ प्रमान ॥३१॥
छन्द बन्ध सब श्रुत प्रमित, तीन सहस सत चार।
देख सतत्तर सुधी जन, भूलि निवार सु धार ॥३२॥
ज्यूं जिनमा सुपनीत गज, निज मुखमें मम देख।
त्यूं षोडश संघातमें, चहु सतरमी पेख ॥ ३३ ॥

राग प्रभात—यही मंगलचार हमरैं यही। अरिहंत मंगल-सिद्ध मंगल सुगुरु मंगलकार ॥ केवली भाखित धर्मवर। सु मंगल करतार ॥ ३४ ॥ यही उत्तम जग मांही, चार सब अघ हार ॥ सरन इनहीकी सु हीरालाल। भवदध तार ॥३५॥

इति श्री चन्द्रप्रभपुराणे कविकुलनामग्राम वर्णनो नाम
सप्तदशम संधिः सम्पूर्णम् ॥ १७ ॥

संवत् १९१६ श्रावण कृष्णा तृतीया चन्द्रदिने ग्रन्थ पूर्णकृतं लिखितम्।
मिश्र रूपरामः बडवत (बडौत) मध्ये लिखापितं, साधर्मी लाला
रामनाथ तस्यात्मज लाला लमेरचंद, नगरे जिनचैत्यालये
स्थापितम्। शुभ मंगलं ॥ श्री श्री श्री ॥